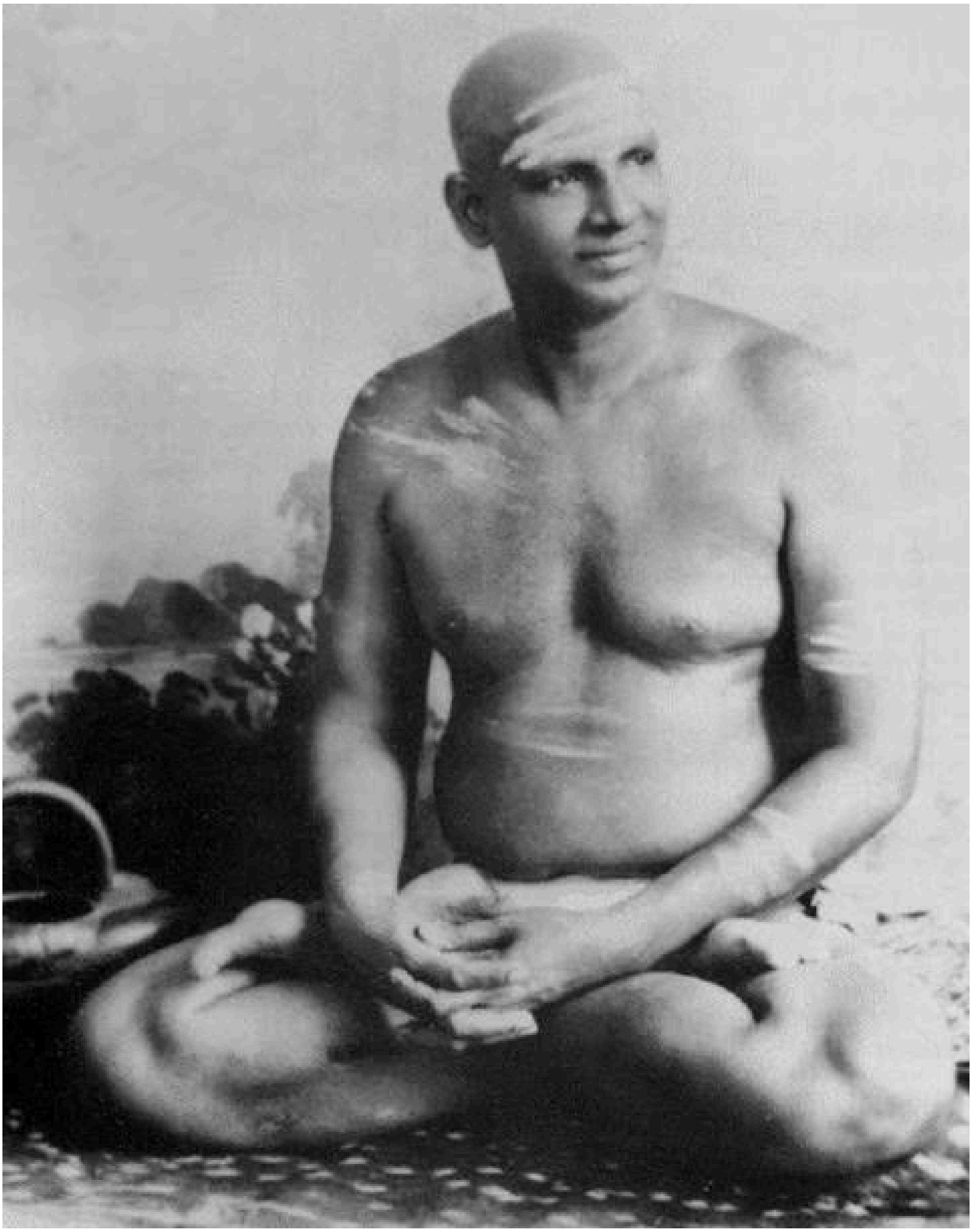
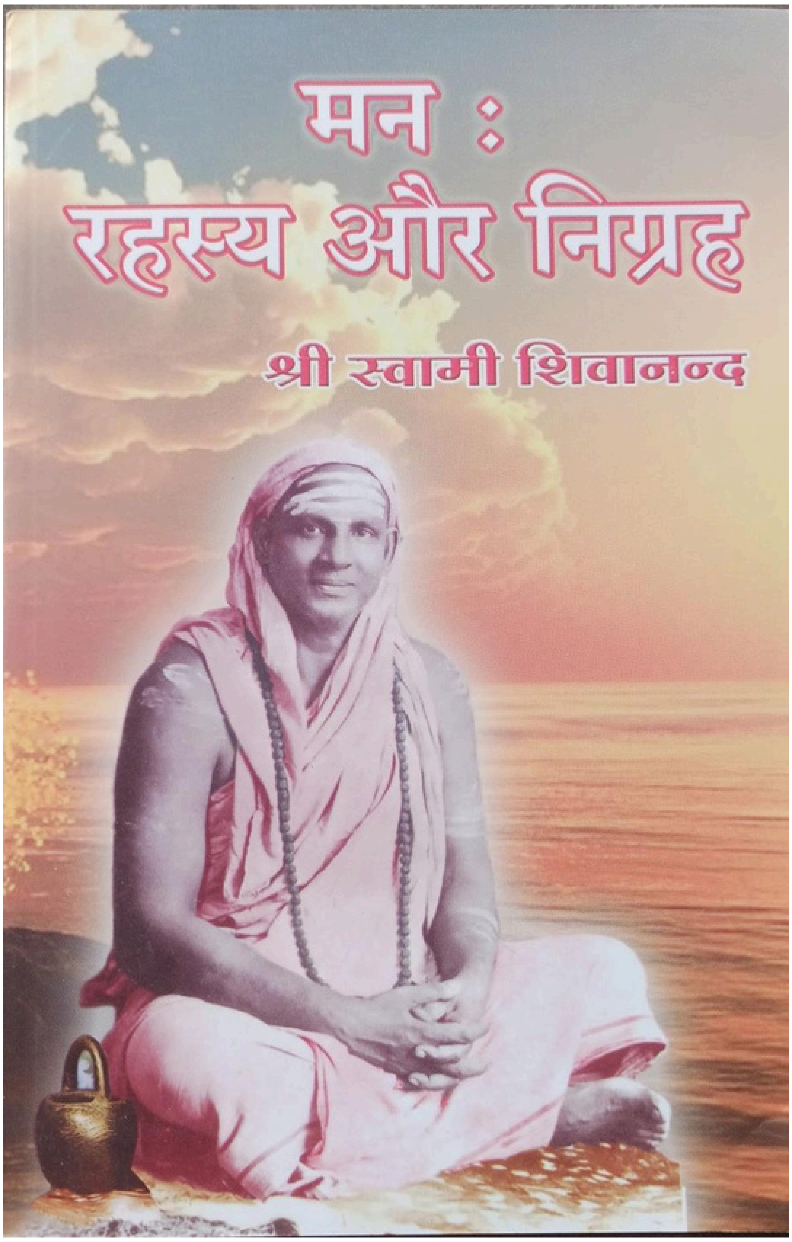



मन :
रहस्य और निग्रह
श्री स्वामी शिवानन्द

मन : रहस्य और ननग्रह

MIND-ITS MYSTERIES AND CONTROL
का नहन्दी अनुवाद

लेखक

श्री स्वामी निवानन्द सरस्वती

SERVE LOVE MEDITATE REALIZE
THE DIVINELIFE SOCIETY

प्रकिाक

द निवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : निवानन्दनगर- २४९१९२

निला: नटहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड (नहमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dishq.org

चतुर्थ नहन्दी संस्करण : २००५ :

पंचम नहन्दी संस्करण २०१८

(१,००० प्रनतयां)

ISBN 81-7052-063-0 HS 97

PRICE : ₹ 205/-

'द निवाइन लाइफ सोसायटी, निवानन्दनगर' के नलए स्वामी पद्मनाभानन्द
द्वारा प्रकानित तर्ा उन्ीं ंके द्वारा 'योग वेदान्त फारेस्ट एकिोमी प्ेरेस,
पो. निवनन्दनगर- २४९ १९२, निला नटहरी गढ़वाल,
उत्तराखण्ड' में मुनित ।
For online orders and Catalogue visit: disbooks.org

पत्र

ॐ

१ ़ुलाई १९४६

नप्रय धीरेन्द्र

भयभीत न हों।ं ननिःसन्देह मन अतीव दुदाथन्त है। बार-बार के प्रयास से आप इसे पूणथतया वि में कर सकते हैं।

आप मन के स्वामी हैं। अभ्यास तरा् वैराग्य द्वारा अपने प्रभुत्व की दृढ़तापूवथक घोषणा करें पूणथ आत्मनविय से ननष्पन्न होने वाले अनधकार, आनन्द तरा् वैभव का अनुभव करें।

मन का ननष्ठुरता से ननरोध करें। वासनाओं ंका उनूमूलन करें। वासनाओं ंके समाप्त होते ही मन आपका दास बन िायेगा। ननष्काम बनें और नवियी हों।ं

आप अपनी आनदम स्वतन्त्रता में नवश्राम करें!

-स्वामी शिवानन्द

प्रार्थना

हे दृग्गोचर! हे आराध्यदेव ! हे परम तत्त्व! आप अनन्त आकाि से ले कर मेरे पैरों ंमेरे के नीचे की घास की नन्ीं ंपत्ती तक इस नविाल ब्रह्माण्ड में व्याप्त तरा् अन्तिः प्रनवष्ट हैं। आप इन समस्त नाम-रूपों ंके आधार हैं। आप मेरे नेत्रों ंके तारे, मेरे हृदय के प्राण, मेरे िीवन के िीवन, मेरी आत्मा की आत्मा, मेरी बुद्धि तरा् इद्धन्द्रयों ंके प्रकाक, के मधुर अनाहत संगीत तरा् मेरे स्रूल, सूक्ष्म तरा् कारण िरीरों ंके सारतत्त्व हैं।

मैं आपको ही इस ब्रह्माण्ड का महान् िासक तर्ा अपने िरीर-त्रय का अन्तयाथमी मानता हूँ। हे प्रभो! मैं आपको बारम्बार साष्टांग प्रणाम करता हूँ। आप ही मेरे एकमात्र िरण हैं। हे करुणा और प्रे्रेम के सागर! मैं आप पर ही नवश्वास रखता हूँ। मेरा उिार करें, मुझे प्रबुि करें, मेरा पर्-प्रदिथन करें तर्ा मेरी रक्षा करें। मेरे आध्याद्धत्मक पर् के अवरोधों ंको दूर करें। हे िगद्गुरु! अज्ञानावरण को हटायें। अब मैं और अनधक, एक क्षण के नलए भी इस िरीर इस िीवन के क्लेिों ंको सहन नहीं ंकर सकता। मुझे िीघ्र दिथन दें। हे प्रभो! मैं लालानवत हो रहा हूँ। मैं िनवत हो रहा हूँ। मेरी भद्धिमयी आन्तररक प्रार्थना पर ध्यान दें, ध्यान दें। हे प्रभो ! ननष्ठुर न बनें। आप दीन बन्धु हैं। आप अधम-उिारक हैं। आप पनततपावन हैं।

ॐ िान्तिः िान्तिः िान्तिः ।

प्रकािक का विव्य

यद्यनप परम पूज्य श्री स्वामी निवानन्द िी महारािा की सभी पुस्तकें लोकनप्रय है; नकन्तु 'Mind Its Mysteries and Control' नामक पुस्तक सवाथनधक लोकनप्रय है। यही कारण है नक अंगरेिी में इसके अनेक संस्करण प्रकानित होने पर भी इसकी माँग बराबर बनी हुई है। हमें खेद है नक नहन्दी िनता के हानदथक अनुरोध के होते हुए भी बहुत नदनों ंसे इसका नहन्दी-संस्करण प्रकानित नहीं ंहो सका। यह सन्तोष का नवषय है नक इसका नवीन संस्करण अपने नवीन रूप में सुधी िनता की सेवा में प्रस्तुत नकया िा रहा है। इसका प्रर्म संस्करण दो भागों ंमें प्रकानित हुआ र्ा निससे एक ही प्रकार का नवषय कई स्र्ानों ंपर नबखर गया र्ा। नवीन संस्करण में सभी सम्बि नवषयों ंको एक ही िीषथक के अन्तगथत लाने का प्रयास नकया गया है। आिा है नक इससे यह संस्करण पूवाथपेक्षा अनधक उपयोगी नसि होगा।

प्रसुतुत पुस्तक में अनेक आध्याद्धत्मक ग्रन्ों ्के प्रणेता, अध्यात्मनवद्या-नविारद योगीरिा श्री स्वामी निवानन्द सरस्वती िी नै मन की रचना, उसकी कायथनवनध, उसकी अलौनकक ि्द्धियूाँ तर्ा उनके समुनचत प्रयोग द्वारा नदव्यानन्द की प्राद्धप्त का वणथन बडे नवसूतृत, सुबोध और सरल ढंग से नकया है। संक्षेप में यह पुस्तक मन की नफलासफी पर एक छोटा-सा नवश्व ज्ञानकिो है निसमें नवद्वान् लेखक ने अपने गम्भीर अध्ययन और यौनगक आत्मानुभव के आधार पर मन के समस्त रहस्यों ्का उद्घाटन नकया है। इस संसार में नितने भी उच्च कोनट के साधक तर्ा सन्त-महात्मा हुए हैं, उनका कहना है नक यह संसार मन का खेल है। मन ही मनुष्ों ्के बन्धन और मोक्ष का कारण बनता है। यनद आप नवश्व नविय प्राप्त करना चाहते हैं, तो सबसे पहले मन को नवनित करें। मन की - नविय के उपरान्त संसार की नकसी अन्य वसुतु के नविय की आवश्यकता नहीं ्रहती। मन का साम्राज्य ही सच्चा साम्राज्य है। निसने श्रवण, मनन और नननदध्यासन के सतत अभ्यास से मन को वि में कर नलया है, िो धारणा, ध्यान और समानध के नदव्यानन्द की सररता में गोते लगा चुका है, उस महापुरुष के नलए रािानधरािों ्का नसंहासन भी तुच्छ और ननमूथल्य है। सत्यं निवं, सुन्दरम् के पुनीत ध्येय की ओर अग्रसर होने वाले निज्ञासु साधक के नलए िहाूँ यह पुस्तक परम उपयोगी है, वहाूँ साधारण संसारी पुरुषों ्के नलए भी इस पुस्तक का कम महत्व नहीं ्है। साधारण गृहस्र् इस पुस्तक के श्रिापूवथक अध्ययन और तदनुकूल आचरण से अपने दैननक िीवन और सांसाररक व्यवहारों ्में क्राद्धन्तकारी पररवतथन ला सकते हैं। इस पुस्तक में अनेक नवीन नवषयों ्का समावेि नकया गया है िो साधना के नलए सवथर्ा अनूठी वसुतु है।

पुस्तक के नहन्दी अनुवाद की भाषा अत्यन्त सरल, सुबोध, सरस और माधुयथ से भरी हुई है। कहीं–कहीं ्कनवता की धारा स्वच्छन्द, मस्त सररता की तरह बहती चली िाती है। पुस्तक के कई अंि इतने प्रभाविाली हैं नक पुस्तक पढ़ते ही हृदय-सागर में अननवथचनीय आनन्द की उत्ताल तरंगें उठने लगती हैं। पुस्तक की भाषा हृदयस्पिी है और उसमें इतनी ताकत मौिूद है नक वह नदलों ्को नहला सके, नदमागों ्में पररवतथन कर सके।

आिा है, प्रेमी पाठक प्रसुतुत पुस्तक से लाभ उठायेंगे; इसी में हमारे प्रयास की मफलता है।

- द शिवाइन लाइफ सोसायटी

प्रस्तावना

हममें से प्रत्येक व्यद्धि सुख की खोि में संलग्न है; नकनुतु इस आनन्द की प्राद्धप्त के नलए हमने निस उपाय का अवलम्बन नकया है, वह ठीक नहीं ्है। प्रसुतुत आनन्द प्राद्धप्त - की खोि के मागथ में हम भटक गये हैं। हम िीवन भर तो सांसाररक कामों ्में अनुरि रहते हैं। बालपन से ले कर वृिावस्र्ा तक यह मोह हमारे पीछे लगा ही रहता है। बचपन में माता की स्नेहमयी गोद, खेल-द्धखलौने, युवक होने पर ढेर-की-ढेर पुस्तकें और नवश्वनवद्यालय की उपानधयाूँ, संसार में प्रवेि के समय पत्नी प्रेम और धन कमाने की अतृप्त लालसा, सन्तान की इच्छा अनभमान और झूठे गौरव के नवचार आनद के मोह में हम नलप्त रहते हैं।

नकनुतु इस संसार में पुत्र, दारा और प्राण से भी बढ़ कर एक वसुतु है िो आत्मा या पुरुष के रूप में आपके अन्तस्तल या हृदयदेि में नछपी हुई है। हम सांसाररक नवषयों ्से मन को हटा कर, इद्धन्द्रयों ्पर नविय प्राप्त कर, ध्यान, तपस्या, समानध और योग-साधना द्वारा ही अपने अन्दर नछपी हुई इस नदव्य िद्धि को प्राप्त कर सकते हैं।

मनुष् अनवद्या की तीन ग्रद्धन्यों ्अज्ञान, इच्छा और कमथ के कारण िन्म, मृतुयु और रोग की ननरन्तर बहने वाली धारा में नगरता रहता है। बाह्य पदार्ों को देखने और इहलौनकक आनन्दोपभोग की ओर मन की स्वाभानवक प्रवृनत्त आत्म-साक्षात्कार में बाधक है। वह परब्रह्म, अन्तिः ननयन्त्रक, नवनश्वर पदार्ों में अनवनािी, अननत्यों ्में ननत्य

और अचेतनों ंमें चेतन भगवान् सब प्रानणयों ंके हृदय मद्धन्दर में नवरािमान है िो उस भगवान् के दिथन कर लेता है, वह िाश्वत िाद्धन्त और नदव्यानन्द प्राप्त करता है। िरा,

यह सच है नक आत्मा या ब्रह्म प्रते्येक प्राणी में नछपा हुआ है; परनु्तु वही इसके दिथन कर पाता है निसका मन िि्ु, पनवत्र और उसके पूणथ ननयन्त्रण में है।

मन और इद्धन्द्रयों ंपर ननयन्त्रण प्राप्त करने के नलए हमें प्रकृनत नवज्ञान की पूरी िानकारी और कनठन मनोननग्रह की आवश्यकता है; क्ोंनक िैसा ऊपर कहा गया है, मानस-तत्त्व का पूणथ ज्ञान तर्ा मन और इद्धन्द्रयों ं पर पूणथ ननयन्त्रण करके ही हम आत्मा या सचे्चे सुख को प्राप्त कर सकते हैं।

निसने मन के स्वभाव और नक्रया-पिनत को पूणथतया समझ नलया है, उसके नलए मनोननग्रह बडा सरल है। समू्पणथ साधना का लक्ष्य मनिोय है निससे आत्म-ज्ञान नमलता है और िीव िन्म-मरण के बन्धन से छुटकारा पा लेता है।

मन को विीभूत कर रियोगी दिथन, ध्यान और समानध प्राप्त करते हैं। इसी की सहायता से वेदाद्धन्तयों ं को श्रवण, मनन और ननननदध्यासन की आद्धत्मक िद्धियाूँ सुलभ हो िाती हैं। इसी से भिगण भगवान के चरणारनवन्दों ंके ध्यान में लीन हो िाते हैं। यह सब मनोननग्रह के महत्व का ही प्रसाद है।
मन के दृढ़ ननयन्त्रण का नाम योग है। योग एकता है। योग भगवान् के सार् समरसता है। िब पाूँचों ं इद्धन्द्रयों ंसनहत मन िान्त हो िाता है, तभी परमानन्द, अनन्त ज्ञान, अमरता और परम िाद्धन्त की उपलद्धि होती है। निसका मन पर पूणथ ननयन्त्रण है, वह अपने िीवन के लक्ष्य को सुगमता से प्राप्त कर लेता है; क्ोंनक इस रीर रर् को खींचंने वाली इद्धन्द्रयाूँ उसके नलए अचे्छे घोडों ंकी तरह अपना कायथ सम्पादन करती है।

इस पुस्तक में मन को ननयद्धन्त्रत करने के कुछ नक्रयात्मक उपाय बतलाये गये हैं। इसनलए यह आत्म-साक्षात्कार के पर् पर चलने वाले साधकों ंके नलए बडी सहायक नसि होगी। इसमें मन को ननयद्धन्त्रत करने के योग के नवनभन्न उपायों ंका सरल, सुबोध भाषा में वणथन नकया गया है। यह पुस्तक ननरन्तर तीव्र अध्ययन के नलए है; क्ोंनक इसमें योग के साधकों ंके नलए नक्रयात्मक अनुभव, ननदेि और सुझाव हैं। यनद कोई भी पाठक इस पुस्तक के अध्ययन से सत्य और आत्म-साक्षात्कार के पर् पर आरूढ़ हो सका, , तो मैं अपने प्रयत्नों ंको सफल समझूूँगा।

मेरी िुभ कामना है नक परमात्मा आपको आत्मबल प्रदान करें निससे आप अपने मन पर नविय प्राप्त कर सकें, आपके िीवन में नचरस्र्ायी िाद्धन्त और आत्मानन्द की प्राद्धप्त हो! आप कैवल्य प्राप्त करें, यही परम प्रभु से नवनय है।

-स्वामी शिवानन्द

शवषय-सूची

मन : रहस्य और ननग्रह

परररचे्छेद- १

मन क्या है?

"यो ह वा आयतनों वेदायतनों ह स्वानाों भवशत मनो ह वा आयतनम्"
ि—ो आयतन को िानता है, वह स्विानतयों ंका आयतन *(आश्रय)* होता है। ननश्चय मन ही आयतन है।

(छान्दोग्य उपननषद् ५-१-५)

ि आपको ईश्वर से पृर्क् करता है, वह मन है। इस मन को ओंकार-नचन्तन या भद्धि के द्वारा हटा दें, तो आपको ईश्वर का दिथन हो िायेगा।

मन : एक रहस्य

अनधकांि मनुष् मन के अद्धस्तत्व और इसकी नक्रयाओं ंसे अवगत नहीं ंहैं। तर्ाकनर्त निनक्षत लोगों ंको भी मन तर्ा इसके स्वभाव और कायों के नवषय में बहुत स्वल्प िानकारी है। उन्ोंने केवल सुन रखा है नक मन होता है।

पाश्चात्य मनोवैज्ञाननकों ंको इसकी नंकंनचत् िानकारी है।

पाश्चात्य नचनकत्सक केवल आंनिक रूप से ही मन को िानते हैं। अनभवाही चेताएँ पररणाह अर्वा मेक-रज्जु के अयांगों ंसे संवेदनाएं लाती हैं। नफर ये संवेदनाएँ वहाँ से निर के पश्च भाग, मद्धस्तष्क-पुच्छ में, िहाँ चेता-तनुतु व्यत्यस्त होते हैं, पहुँचती हैं और वहाँ से वे उत्तरवती पुरोभागीय संवेल्लक अर्वा ललाट में, िो बुद्धि अर्वा मन का स्र्ान माना िाता है, मद्धस्तष्क के ऊर्ध्थवती पुरोभागीय संवेल्लक में पहुँचती हैं। मन संवेदनाओं ंको अनुभव करता है तर्ा अनभवाही चेताओं ंके द्वारा हार्, पैर आनद अग्रांगों ंको प्ेरेरक प्रणोदन प्ेरेनषत करता है। उन लोगों ंके नलए यह सब केवल मद्धस्तष्क का कायथ है। उनके मत से िैसे नपत्त यकृत का उत्सिथन है, वैसे ही मन भी मद्धस्तष्क का उत्सिथन है। वे नचनकत्सक अब भी ननपट अन्धकार में ही भटक रहे हैं। उनके मन में नहन्दू-दिथननक नवचारों ंको प्रवेि कराने के नलए उनको (मन का) प्रचुर पररमािथन करने की आवश्यकता है।

केवल योगी िन अर्वा वे लोग िो ध्यान तर्ा आत्म-ननरीक्षण का अभ्यास करते हैं, मन के अद्धस्तत्व, इसके स्वभाव तर्ा व्यवहार, इसकी िनटल नक्रयानवनध आनद के नवषय में िानते हैं वे इसको वि में करने के अनेक उपाय भी िानते हैं।

मन आष्ट प्रकृनतयों ंमें से एक है:

भूशमरापोऽनलो वायुः खों मनो बुन्रिव च।
अहोंकार इतीयों मे शभन्ना प्रकृशतरष्टधा ।।

-- पृथ्वी, िल, अनग्न, वायु, आकाि, मन, बुद्धि और अहंकार- यह मेरी आठ प्रकार की प्रकृनत है ।
(गीता : ७-४) ।

मन आत्म–द्धि है। नवश्राम (ननिा) की आवश्यकता मद्धस्तष्क को होती है, मन को नहीं।ं निस योगी ने मन का ननग्रह कर नलया है, वह कभी नहीं ंसोता। उसे ध्यान से ही नवश्राम प्राप्त हो िाता है।

मन का अशधष्ठान

मन आत्म–द्धि है। मन के द्वारा ब्रह्म अनेक प्रकार की सृनष्ट में प्रकट होता है। ऐतरेय उपननषद् में बताया िाता है नक सृनष्ट के आनदकाल में ब्रह्म ने सोचा :

“स ईक्षतेमे नु लोका लोकपालानुनु सृजा इशत । सोऽद्भ्य एव पुरुषों समुद्धृत्यामूर्छयत्।।”
"तमभ्यतपत्तस्याशभतप्तस्य... हृदयों शनरशभद्यत हृदयान्मनो मनसश्चिमा ।”

ये तो हुए लोक, अब मुझे लोकपालों ्की भी रचना करनी चानहए। तब उसने िल में से पुरुष (नहरण्यगभथ) को ननकाल कर मूनतथमान नकया तर्ा उसे ध्यान की अनग्न से तपाया। इस प्रकार तपाये िाने से उसका हृदय प्रकट हुआ। हृदय से मन का आनवभाथव हुआ और मन से उसका अनधष्ठातृ देवता चन्द्रमा उत्पन्न हुआ। (मन का अनधष्ठान हृदय है, इसनलए मन हृदय में से ननकला। समानध-काल में मन अपने अनधष्ठान हृदय में प्रवेि कर िाता है । सुषुद्धप्त अवस्र्ा में भी यह हृदय में प्रवेि करता है। तब मन और ब्रह्म के बीच में अज्ञान का आवरण होता है) (ऐतरेयोपननषद् १-१-३, ४) ।

वैश्य मन और व्यशष्ट मन

नहरण्यगभथ अर्वा कायथ ब्रह्म अर्वा समूभूनत ही वैश्व मन है वह सारे मनों ्की समनष्ट है। व्यद्धि का मन वैश्व मन से सम्बन्ध रखता है। वैश्व मन, नहरण्यगभथ, अनतचेतन मन, असीम मन अर्वा नवराट् मन पयाथयवाची िब्द हैं। नभन्न-नभन्न लेखकों ्ने नभन्न-नभन्न िब्दों ्का प्रयोग नकया है। इनसे भ्रम में न पडें। इनमें न उलझें यह केवल िब्द-भेद है।

नहरण्यगभथ वैश्व प्राण भी है। वह सूत्रात्मा है। वह नवश्व का नवद्युत् गृह है। अनेक िीव भाँनत-भाँनत के छोटे-छोटे लह है। नवद्युत्गृह से नवद्युत् िद्धि का संचार ताम्र-तनुतुओं ्द्वारा लिुओं ्में होता है। इसी भाँनत नहरण्यगभथ से िद्धि का संचार िीवों ्में होता है।

यद्यनप मद्धस्तष्क नभन्न-नभन्न होते हैं, तर्ानप मन के अनत सूक्ष्म होने के कारण एक - मनुष् का मन दूसरों ् के मन के ननकट सानन्नध्य अर्वा सम्पकथ में रहता है। िैसे-िैसे मन की उन्ननत होती िाती है, माननसक प्रवाहों ्से या ननकट तर्ा दूर के िीनवत अर्वा मृतक अन्य पुरुषों ्के मन से आपका सचेत सम्पकथ होता है। 'अ' का व्यनष्ट मन यद्यनप अन्य पुरुषों ्के मन से अनत सूक्ष्म पदार्थ के पतले से परदे के द्वारा पृर्क् होता है; परनुतु वास्तव में वह अपने अंिी नहरण्यगभथ के तर्ा अन्य व्यद्धियों ्के प्रतीयमानतः पृर्क् मन के संसगथ में रहता है।

यनद श्याम राम का नमत्र है तो उनके मन का परस्पर सम्बन्ध है। श्याम के नमत्रों,् सम्बद्धन्धयों ्और भाइयों ् के मन का सम्बन्ध श्याम के मन से है। इसी प्रकार राम के मन में भी कई मन सम्बि हैं। राम के सम्बद्धन्धयों ्के मन धीरे-धीरे श्याम के सम्बद्धन्धयों ्के मन से सम्बि हो िाते हैं। इस प्रकार एक व्यद्धि का मन समस्त संसार के मन से सम्बन्ध बना लेता है। यह रियोग का मन के नवभु होने का नसिान्त है।

साोंख्य-दिछन में मन

सांख्य दिथन में वैश्व मन को महत् कहा गया है। अव्यि से यह प्रर्म तत्त्व प्रकट होता है। यह अव्यि से व्यि होने वाला प्रर्म तत्त्व है। छकडे के पनहये का आधार उसके अरे होते हैं। अरे नानभ में नटके हुए होते हैं। इसी प्रकार मन प्रकृनत पर और प्रकृनत ब्रह्म पर आनश्रत होती है।

महत् से अहंकार प्रकट होता है। साद्धत्त्वक अहंकार से मन, रािनसक अहंकार से प्राण और तामनसक अहंकार से तन्मात्राएँ प्रकट होती हैं। तन्मात्राओं ्से महाभूत और पंचमहाभूतों ्से स्थूल िगत् प्रकट होता है।

अहंकार, अहंभाव के अनतररि मन और कुछ नहीं ंहै। इस अहंभाव से बचना बहुत कनठन है। मन सदा नकसी स्रूल पदार्थ से संसि होता है। यह अकेला नहीं ंठहर सकता। यह मन ही िरीर में 'मैं' की घोषणा करता है।

मन रूपी वृक्ष का बिी अहंभाव है। इस अहंकार के बिी से बुद्धि रूपी कॉपल ननकलती है। इसी में संकल्प-रूपी िाखाएँ- प्रिाखाएँ उद्‌भूत होती हैं।

शलोंग िरीर और अतवाछह िरीर

मन नलंग िरीर का सबसे मुख्य तत्त्व है। नलंग िरीर या सूक्ष्म िरीर स्रूल प्राण के द्वारा स्रूल िरीर से संयुि होता है। मृत्यु-काल में यह स्रूल िरीर से पृर्क् हो कर स्वगथ-गमन करता है। यह सूक्ष्म िरीर ही कमथफल से सुख या दुिःख भोगता है। यह िरीर ही आवागमन करता रहता है। नवदेह मुद्धि होने पर सूक्ष्म िरीर लय हो िाता है।

नलंग िरीर और अन्तवाथह िरीर में भेद है। नलंग िरीर सतरह तत्त्वों ंवाला सूक्ष्म िरीर है। पाँच कमेद्धन्द्रय, पाँच ज्ञानेद्धन्द्रय, पाँच प्राण, मन और बुद्धि-ये सतरह तत्त्व हैं। अन्तवाथह िरीर अत्यन्त िुि होता है। यह सत्य से पूणथ तर् रिगुण और तमोगुण से रनहत होता है। इस िरीर के द्वारा योगी परकाय प्रवेि करता है। भगवती सरस्वती की कृपा से, लीला ने इसी अन्तवाथह िरीर के द्वारा स्रूल देह से ननकल कर, ऊर्ध्व लोकों ंमें गमन नकया र्ा। आपको यह योगवार में नमलेगा। श्री िंकराचायथ, रािा नवक्रमानदत्य, हस्तामलक और नतरुमूलार के अन्तवाथह िरीर रे्। इस प्रकार के नविेष िुि िरीर की सहायता से वे अन्य पुरुषों ंकी देह में प्रवेि करते रे्। अन्तवाथह िरीर वाले योगी का सत्संकल्प या िुि संकल्प होता है।

मन सूक्ष्म पदार्छ है

मन कोई स्रूल पदार्थ नहीं ंहै, िो देखा या स्पिथ नकया िा सके। इसका अद्धस्तत्व कहीं ंभी नहीं ंदेखा िाता। इसका पररमाण (नाप-तौल) भी नहीं ंबतलाया िा सकता है। इसके रहने के नलए स्रान की भी आवश्यकता नहीं ंहै।

मन और पदार्थ एक ही पररपूणथ ब्रह्म के दो रूप हैं। ब्रह्म दोनों ंमें से एक भी नहीं ंहै, अनपतु दोनों ंही उसके अन्तगथत हैं। मन पदार्ों से पहले बनता है। यह वेदान्त का नसिान्त है। नवज्ञान का नसिान्त यह है नक पदार्थ मन से पहले बने हैं।

मन को इस भाव से अपानर्थव कहा िा सकता है नक उसमें अन्य पदार्ों की सी नहीं ंहै निसे इद्धन्द्रयों ंद्वारा ग्रहण नकया िा सके; परन्तु निस भाव से ब्रह्म पानर्थव (अपदार्थनीय) कहा िाता है, उस भाव से मन अपानर्थव नहीं ं है। मन स्रूल पदार्थ का सूक्ष्म रूप है, इसनलए यह िरीर का प्ेरेरक भी है। मन सूक्ष्म साद्धत्त्वक अपंचीकृत तन्मात्राओं ंसे बना है। मन नवद्युत् िद्धि है। छान्दोग्य उपननषद् के मत से मन भोिन के सूक्ष्मतम अंि ंसे बनता है।

मन पदार्थमय है। यह सूक्ष्म पदार्थ है। यह भेद इस नसिान्त पर नकया िाता है नक ज्ञान का स्रोत केवल आत्मा में है। यह (आत्मा) स्वयंनसि है, स्वयं-प्रकाि है; परन्तु मन और इद्धन्द्रयाँ अपना िीवन और नक्रया–िद्धि आत्मा से प्राप्त करते हैं। वे अकेले आप ही ननिीव (िड) हैं। इसनलए आत्मा सदा कताथ ही रहता है, कायथ नहीं।ं मन आत्मा का कायथ हो सकता है। और, यह वेदान्त का मुख्य नसिान्त है नक िो पदार्थ नकसी दूसरे का कायथ होता है, वह

डि होता है। अहंकार तत्त्व (अहं प्रत्यक् नवषयत्व) भी िड है; क्ोंनंक इसकी पृर्क् सत्ता नहीं ंहै। यह आत्मा के अनभबोध का कायथ है।

मनोमय िरीर

निस प्रकार स्रूल िरीर ठोस, िव तर्ा वातीय पदार्ों से बना हुआ है, इसी प्रकार मन नभन्न-नभन्न सघनता की श्रेणी और कम्पन की गनत वाले सूक्ष्म िव्यों ंसे बना हुआ है। रियोग उग्र साधना के द्वारा मन के नभन्न-नभन्न स्तरों ंका भेदन कर देता है।

नभन्न-नभन्न मनुष्ों ंमें नभन्न-नभन्न मनोमय िरीर होता है। निसके अन्दर चैतन्य नितना अनधक या कम अनभव्यि होता है, उतने ही स्रूल या सूक्ष्म पदार्थ से उसका मनोमय िरीर बना हुआ होता है। निनक्षत मनुष्ों ंमें यह चेतना नक्रयािील तर्ा अनधक प्रकट होती है तर्ा अनवकनसत लोगों ंमें यह धुंधली और कम प्रकट होती है।

निस प्रकार नविेष नवचारों ंके नलए मद्धस्तष्क में अनेक खाने बने हुए होते हैं, उसी प्रकार मनोमय िरीर में भी नभन्न-नभन्न क्षेत्र या खण्ड बने होते हैं। तीव्र क्रोध के आवेि में सम्पूणथ मन द्वेष तर्ा दुभाथव के काले बादलों ंसे नघर िाता है और उनमें से क्रोध के अनमय बाग ननकलते हैं िो उन भूत पदार्ों को आहत कर देते हैं निनके प्रनत क्रोध रहता है।

मन के प्रकार

प्रत्येक मनुष् का अपना माननसक संसार ननराला ही होता है। प्रत्येक मनुष् नवचार िैली, स्वभाव, रुनच, मनोवृनत्त, िारीररक लक्षण आनद में दूसरे से नभन्न होता है। िारीररक दृनष्ट से भी मनुष् एक-दूसरे से नभन्न होता है, भले ही उनमें र्ोडी-सी समानता हो। नभन्न-नभन्न मनुष्ों ंके नानसका, कान, ओष्ठ, नेत्र, भृकुनटयाँ, दन्त-नवन्यास, स्कन्ध, हार्, उँगनलयों,ं अंगूठों,ं दृनष्ट, स्वर, गनत, बातचीत के ढंग आनद को ध्यानपूवथक देखें। आपको नकन्ीं ंभी दो
व्यद्धियों ंमें बहुत बडा अन्तर नमलेगा। हर्ेनलयों ंकी रेखाएँ भी नभन्न होती हैं। कोई दो पनत्तयाँ भी एक समान नहीं ं होतीं।ं नवनवधता ही सृनष्ट का सौन्दयथ है।
मन के अनेक प्रकार होते हैं। बंगाली मन भावुक होता है और कला तर्ा भद्धि के उपयुि होता है।
मिासी मन बौद्धिक तर्ा गनणत में ननपुण होता है। पंिाबी और महाराष्टरीय मन वीर और साहसी होता है। बंगाल ने श्री गौरांग महाप्रभु श्री रामकृष्ण परमहंसदेव आनद भावप्रवण सन्तों ंको िन्म नदया है। मिास में श्री रामानुिाचायथ और श्री िंकराचायथ–िैसे प्रनतभािाली दािथननक हुए हैं। पंिाब में श्री गुरुगोनवन्दनसंह िैसे वीर उत्पन्न हुए हैं।
साधना और योगपर् मन के प्रकार, स्वभाव और िद्धि के अनुकूल पृर्क्-पृर्क् हुआ करता है। रुनचयाँ भी नभन्न-नभन्न होती हैं। मछली देख कर बंगाली को अत्यन्त हषथ होता है। इमली और नमचथ देख कर मिासी के मुँह में पानी भर आता है। ताड के फल को देख कर लंका के िाफना तानमल बहुत प्रसन्न होते हैं। मांस देख कर मांसाहारी को नविेष प्रसन्नता होती है। क्ा यह रहस्य की बात नहीं ंहै नक एक वस्तु बाहर पडी रहे और उसे देख कर ही मुँह में पानी भर आये? अपने दैनद्धन्दन िीवन में आपको ननत्य ही यह अनुभव होता है, अतः आप इस बात को महत्त्व नहीं ं देते। मन बडा रहस्यमय है और ऐसी ही माया भी है।

अत्यन्त उन्नत मनुष् का मन भी मन ही रहता है, अर्ाथत् साधारण मनुष् के मन की भाँनत वह भी अपने गुण और धमथ को नहीं ंछोडता।

मनोमय िरीर का आकार

न्याय दिथन के मत से मन अणु है, महनषथ पतंनिल के मत से यह नवभु (नवश्वव्यापी)है और वेदान्त मत से वह सारे िरीर में व्याप्त है।

मनोमय प्रभा

मन की प्रभा नदव्य हुआ करती है। प्रभा मन से ननकलने वाला ति अर्वा दीद्धप्त है। निनके मन पररपक्व हो गये हैं, उनकी प्रभा अतीव प्रकािमान होती है। इसकी गनत दूर तक हो सकती है और बहुत से मनुष्ों ंको वह अपने प्रभाव से लाभ पहुँचा सकती है। आद्धत्मक प्रर्ा माननसक वा प्राणमय प्रभा से भी अनधक िद्धििाली होती है।

बलवान् मन का दुबछल मन पर प्रभाव

बलवान् मन दुबथल मन पर अपना प्रभाव िालता है। िद्धि-युि मन वाला सम्मोहक व्यद्धि (hypnotist) दुबथल मन वाले बालकों ंके पूरे समूह या मण्डली को सम्मोनहत कर देता है। हममें से ऐसे मनुष् भी हैं निनकी िरीर रचना दूसरों ंकी अपेक्षा बहुत अनधक संवेदनिील होती है। अवयवी के रूप में उनके िरीर अनधक सूक्ष्म तर्ा अनधक संवेदी नननमथत होते हैं। साधारणतया ऐसे लोग निन लोगों ंके संग में रहते या निनके संसगथ में आते हैं, उनकी मनोवृनत्त से सदा प्रभानवत होते हैं।

निसने अपने मन को पनवत्र कर नलया है, वह िद्धि का केन्द्र बन िाता है। समस्त दुबथल, अपनवत्र और हीन मन अनिाने ही िुि तर्ा महत्तर मन की ओर द्धखंचे आते हैं; क्ोंनक उन्ें ऐसे िुि और उन्नत मन से िाद्धन्त, िद्धि और बल प्राप्त होते हैं।

देद्धखए, पूणथ नवकनसत मन का अल्प नवकनसत मन पर कैसे प्रभाव पडता है! समर्थ पुरुषों ंके समुमुख रहने में मन पर क्ा प्रभाव पडता है, इसका वणथन करना असम्भव है। चाहे वे कुछ भी न कहें, नफर भी उनके सामने बैठने में बडा आनन्द होता है; क्ोंनक मन को नयी प्ेरेरणा नमलती है। यह बडा असाधारण अनुभव होता है।

यनद आप नल से पानी पीना चाहें, तो आपको अपना िरीर झुकाना पडेगा। इसी प्रकार ननम्नतर मन यनद पररपक्व मन के सद्ग्गुण ग्रहण करना चाहता है, तो उसे उसके समुमुख झुकना पडेगा अर्ाथत् नवनीत होना पडेगा। नवचार को ही िान्त तर्ा अकुषि होना चानहए, तभी आपको प्ेरेरणा प्राप्त हो सकेगी। ऐसी दिा में ही उच्च मन अपना नहतकर प्रभाव ननम्न मन पर िाल सकेगा। ऐसी िान्त माननसक द्धस्र्नत में आप ईश्वर के सार् संसगथ रख सकेंगे। यिोना बनाना, क्रोध और नवषाद की मनोदिा — ये सब ही मन में उदे्वेग उत्पन्न करते और ईश्वर प्राद्धप्त में बाधक बनते हैं।

मन सतत पररवतछनील है

मन संस्कारों ंका समूह है। यह स्वभावों ं(आदतों)ं की पोटली है। अनेक पदार्ों के संग से उत्पन्न हुई इच्छाओं ंका समुच्चय मन है। सांसाररक नचन्ताओं ंसे उत्पन्न होने वाली भावनाओं ंका समूह मन है। यह नवनवध पदार्ों से संग्रहीत नवचारों ंका समूह है। ये इच्छाएँ, नवचार और अनुभव ननरन्तर पररवनतथत होते रहते हैं। कुछ

पुराने नवचार, इच्छाएँ और अनुभव मन रूपी भण्डार गृह से ननकलते रहते हैं और नये-नये उनका स्ान लेते रहते हैं।

परन्तु यह ननरन्तर होने वाला पररवतथन माननसक नक्रयाओं ंकी सुव्यवस्ा में नकसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं ंकरता। पुराने नवचारों, ं इच्छाओं ंऔर अनुभवों ंमें से कुछ र्ोडे से ही बाहर िाते हैं और िो रह िाते हैं, वे नये आने वाले नवचारों ंके सार् सहयोग और सामंस्यि से काम करते हैं। नये नवचारों ंपर पुराने नवचारों ंका बडा प्रभाव पडता है। ये दोनों ंमेल से कायथ करते हैं और इसनलए मन की सत्ता की सारूप्यता बनी रहती है।

मन न केवल प्रनतनदन बनता है, अनपतु सवथदा बनता है। यह नगरनगट की भाँनत प्रनतक्षण अपना रंग-रूप बदलता रहता है। "यह अत्यन्त चंचल और अद्धस्र है" (गीता : ६-२६) । मन बराबर बदलता रहता है। आप ननत्य नये-नये अनुभव प्राप्त करते रहते हैं। आपकी िो धारणाएँ, अन्तिःकरण और नववेक-बुद्धि आि है, वह कल बदल िायेगी। अनुभव के द्वारा मन नवकनसत होता है। संसार सवोत्तम निक्षक अर्वा गुरु है।

मनुष् की चेतना (conscience) उसके ज्ञान के अनुसार बनती है, कालान्तर में नया ज्ञान प्राप्त होने पर िैसे-िैसे उसके नवचारों ंया दृनष्टकोणों ंमें संिोधन होता है, वैसे-वैसे उसकी चेतना पररवनतथत होती रहती है। सहि ज्ञान अर्वा तकथणा से मनुष् िो दृढ धारणाएं बना लेता है, वहीं ंचेतना कहलाती है। बच्चे की या बबथर मनुष् की चेतना पूणथ पररपक्व सभ्य मनुष् की चेतना से नभन्न होती है और सभ्य मनुष्ों ंमें भी ज्ञान का अन्तर इतना होता है नक उनकी अपनी-अपनी चेतनाएँ नभन्न नभन्न नक्रया-पिनत का - ननदेि करती है। साद्धत्त्वक मनुष् की चेतना रािसी मनुष् की चेतना से बहुत ही नभन्न होती है। साद्धत्त्वक मनुष् की चेतना अत्यनधक ननमथल और िुि होती है।

अतिःकरण चतुष्टय (चार प्रकार के मन)

वेदान्ती अन्तिःकरण में मन, बुद्धि, नचत्त और अहंकार का समावेि करते हैं। व्यापक भाव में इसका अर्थ है आन्तररक उपकरण (अन्तिः - आन्तररक, करण उपकरण) । यह एक ऐसा आन्तररक यन्त्र है निससे आप बोध, अनुभव, नवचार तर्ा ननश्चय कर सकते हैं। यह बाह्य करण अर्ाथत् इद्धन्द्रयों ंसे नभन्न है।

तन्मात्राएँ सूक्ष्म भूत हैं। पांचों ंस्ूल भूत तन्मात्राओं ंसे बने हैं। अहंकार पृथ्वी- तन्मात्रा से, नचत्त िल-तन्मात्रा से, बुद्धि अनग्न-तन्मात्रा से मन वायु तन्मात्रा से तर्ा हृदय आकाि- तन्मात्रा से बनता है।

मन इद्धन्द्रयों ंकी तुलना में चेतन है और बुद्धि की तुलना में िड है। सांख्य योग में इच्छा–िद्धि और बुद्धि (नववेक िद्धि) को नमला कर बुद्धि कहते हैं। कोई-कोई नचत्त को मन के अन्तगथत और अहंकार को बुद्धि के अन्तगथत बताते हैं।

मन, बुद्धि, नचत्त और अहंकार केवल वृनत्त-भेद या मन के कायाथत्मक रूप हैं। मन के कायथ सारे पदार्थ होते हैं और यह भूत, वतथमान तर्ा भनवष् तीनों ंकालों ंमें व्यापता है। यह एक ही है; परन्तु नक्रयाएँ अनेक करता है। िब आप न्यायालय में अपने न्याय के अनधकार का उपयोग करते हैं, तब आप न्यायाधीि बनते हैं, िब आप रसोईघर में काम करते हैं, तब आप रसोइया कहलाते हैं और िब आप नकसी संस्ा के अध्यक्ष के आसन पर बैठते हैं तो अध्यक्ष कहलाते हैं। आप एक ही मनुष् हैं; परन्तु िब–िब िो–िो कायथ करते हैं, उसके अनुसार वैसे ही नाम से आप पुकारे िाते हैं। इसी प्रकार मन िब संकल्प-नवकल्प करता है तब इसका नाम मन होता है, िब नववेक से ननश्चय करता है। तो बुद्धि कहलाता है, िब अहंभाव प्रस्तुत करता है तो अहंकार कहलाता है और िब संस्कारों ंका भण्डार तर्ा स्मृनत का अनधष्ठान बनता है एवं धारणा और अनुसन्धान करता है तब नचत्त कहलाता है।

लि में िीतलता, अनग्न में ति और वायु में गनत नकसने प्रदान की? यह इनके स्वभाव हैं। ऐसे ही मन का स्वभाव वसुतुओं ंकी ओर भागना, बुद्धि का स्वभाव ननश्चयिः करना, अहंकार का स्वभाव स्वाग्रह और नचत्त का स्वभाव अहंकार द्वारा अनभज्ञात नवषयों ंकी सूमृनत है।

बि मन काम करता है, तब बुद्धि और अहंकार सार्-सार् काम करते हैं। मन, बुद्धि तर्ा अहंकार परस्पर स्वस् सहयोग से कायथ करते हैं। मन संकल्प-नवकल्प करता है। यह पदार्ों की अच्छाई और बुराई सोचता है। बुद्धि ननश्चय तर्ा नवषय का नववेचन करती है (ननश्चयाद्धत्मका, व्यवसायाद्धत्मका)।

मन का स्वरूप नवचार है। मन संकल्प-नवकल्पात्मक है। िब यह बुद्धि के ननणथयों ंबुद्धि के सने्दिों ंके ननष्पादन के नलए उनें् कमेद्धन्द्रयों ंके आगे प्रसुतुत का देता है तो व्याकरणात्मक हो िाता है। मन पसन्द करता, ध्यान देता और अस्वीकार करता है।

मन के कायछ

संवेदन, नवचार और संकल्प —— ये मन के नत्रनवध कायथ हैं। संज्ञान, इच्छा तर्ा संकल्प — ये तीन माननसक प्रक्रम हैं।

मन की तीन अवस्र्ाएँ होती हैं—सनक्रय, ननद्धिय तर्ा तटस्। मन को सदैव अनेकरूपता तर्ा नयी-नयी संवेदनाएँ पसन्द हैं। एकरसता से यह ऊब िाता है।

साहचवथ-ननयम, सातत्य ननयम और सापेक्षता ननयम ये मन के तीन मुख्य ननयम है।

मन के ये स्वभाव है पररणाम, चेष्टा, ननरोध, िद्धि, िीवन और धमथ ।

नवचार करना, यिोना बनाना, अनुभव करना और िानना ये नक्रयाएँ मन में सदा चलती रहती हैं। कभी यिोना बनाते हैं, कभी आप अनुभव करते हैं, कभी िानने का प्रयास करते हैं, कभी गम्भीरतापूवथक सोचते हैं और कभी इच्छा करते हैं। इच्छा से मन की सारी िद्धियाँ सनक्रय हो िाती है। आत्मननरीक्षण के द्वारा आपको यह िान सकने में समर्थ होना चानहए नक नभन्न-नभन्न समय पर आपके मन में क्ा हो रहा है?

मन के स्वरूप

अचेतन मन अर्वा नवषयपरक मन, अवचेतन मन अर्वा आत्मपरक मन या नचत्त और अनतचेतन मन मन के तीन रूप है। आप नवषयपरक मन (सचेतन मन) के द्वारा देखते, सुनने तर्ा पढ़ते हैं।

पाश्चात्य वैज्ञाननकों ंके वगीकरण के अनुसार संवेदनात्मक मन, तकथणापरक मन और अन्तज्ञाथनी मन—ये मन के तीन स्वरूप है।

मन का स्र्ान

प्राण, मन, अहंकार और आत्मा — इन चारों ंतत्त्वों ंका स्र्ान हृदय है। वेदान्त के अनुसार मन का स्र्ान हृदय है। िाग्रित अवस्र्ा में यह मद्धस्तष्क में रहता है। हठयोग के मत से अस्र्ायी रूप से मन का स्र्ान आज्ञा चक्र है िो दो कमलों ंके आकार का है और निसका स्र्ान दोनों ंभृकुनटयों ंके बीच में है।

मन की अनेक िद्धियाँ और केन्द्र होते हैं। वह मद्धस्तष्क में स्रूल िरीर के तत्सम्बन्धी केन्द्रों ंके द्वारा काम करता है। मन, बुद्धि तरा नववेक नलंग िरीर में हैं; परन्तु वे भौनतक मद्धस्तष्क में तत्सम्बन्धी केन्द्रों ंके द्वारा ही कायथ करते हैं। मद्धस्तष्क मन नहीं ंहै। िैसा नक पाश्चात्य नवद्वानों ंका मत है। मन का स्रान भौनतक मद्धस्तष्क में है।

वह इस भौनतक िगत् की अनुभूनत मद्धस्तष्क के कम्पन द्वारा करता है।

यद्यनप अपने समूपूणथ दि पर रािा का एकानधकार होता है, सारा राज्य उसका ही होता है; नफर भी उसके ननवास के नलए नविेष स्रान होते हैं। एक नविाल रािप्रासाद रािधानी में होता है और ग्रीष्मऋतु के नलए एक सुन्दर भव्य भवन मसूरी या आबू पवथत पर बना होता है। इसी प्रकार, मन यद्यनप सारे िरीर में व्यापक है; नकन्तु िाग्रत, स्वप्न और सुषुद्धप्त – इन तीनों ंअवस्राओं ंमें इसके नलए तीन स्रान ननयत हैं। सुषुद्धप्त में मन का स्रान हृदय, स्वप्न में कण्ठ तरा िाग्रनत में दनक्षण नेत्र या आज्ञा चक्र होता है। देद्धखए, आलोचना के समय आप क्ा करते हैं? आप नचमुबुक पर उँगली रख कर, ग्रीवा दाय ओर को झुकाते हुए दृनष्ट को भ्रूरू-मध्य में द्धस्रत करके अपनी समस्या पर नवचार करते हैं। इससे प्रतीत होता है नक मन का स्रान आज्ञा चक्र है।

मन आत्मा नही ंहै

पाश्चात्य मनोवैज्ञाननक ऐसा कहने में बडी भारी भूल करते हैं नक चेतना मन की एक नक्रया और उपानध है। नचत्त या आत्मा ही स्वयं िुि चेतना है। मन आत्मा से ही समय-समय पर अपना प्रकाि प्राप्त करता है और रोडे काल तक चेतना की भाँनत वैसे ही चमकता है िैसे पीतल पर सोने का मुलम्मा चमकता है। आत्मा ही प्रकाि का स्रोत तरा ज्योनतयों ंकी ज्योनत और सूयो का सूयथ है। िैसे लौहि–लाका अपनी उष्णता तरा प्रकाि अनग्न से प्राप्त करती है, वैसे ही मन अपनी ज्योनत और िद्धि ब्रह्म से प्राप्त करता है। मन िड है। िैसे धूप में रखा हुआ िल सूयथ के ताप से उष्ण हो िाता है, वैसे ही यह िड मन ब्रह्म से प्रकाि प्राप्त करके बुद्धियुि-सा हो िाता है।

मन एक समय में एक ही कायथ कर सकता है। यह पररद्धच्छन्न है, िड है और सत्वगुण का कायथ है। यह नविािी तरा चंचल है। यह नवचारों,ं संस्कारों,ं स्वभावों,ं प्रेरणाओं ंतरा भावनाओं ंकी एक पोटली है। यह अपने अनधष्ठान ब्रह्म से प्रकाि प्राप्त करता है। आप मन पर ननयन्त्रण कर सकते हैं। नवचार करने वाला नवचार से नभन्न होता है। प्रगाढ़ ननद्रा में मन की नक्रया बन्द हो िाती है। आप सदा 'मेरा मन' कहा करते हैं। इसका अनभप्राय यह हुआ नक मन भी छतरी या छडी–सा आपका एक उपकरण है, इसनलए मन स्वयं-प्रकाि आत्मा नहीं ंहै।

मूच्छाथ की अवस्रा में, माननसक नक्रयाओं ंके स्तद्धम्भत होने और स्मृनत के पूणथतः अर्वा अंितः नष्ट होने पर भी व्यद्धि का अद्धस्तत्व रह िाता है—'मैं' बना रहता है **'अहमन्'** मन आपसे बाहर रहते हुए भी आपकी उसी प्रकार सम्पनत्त है, िैसे | आपके स्रूल िरीर के दूसरे अंग, आपके पहनने के वस्त्र या आपके रहने का घर आपसे बाहर रहते हुए भी आपकी सम्पनत्त है। इसनलए मन इस 'मैं' से नभन्न है।

मन अन्धकार में टटोलता है। यह प्रनतपल भूलता तरा प्रनतक्षण बदलता रहता है। यनद कुछ नदन तक आहार न नमले, तो यह सुचारु रूप से नवचार भी नहीं ंकर सकता। सुषुद्धप्त — प्रगाढ़ ननद्रा में मन की नक्रया नहीं ं होती। मन मल, वासनाओं ंऔर तृष्णाओं ंसे पररपूणथ है। क्रोध आने पर यह मोह को प्राप्त होता है, भय होने पर इसे कम्प होता है. और प्रघात लगने पर यह मरणासन्न-सा हो िाता है। नफर, आप मन को िुि आत्मा कैसे मान सकते हैं?

मन संवेदन और नवचार का एक साधन है। यह उपकरण उसके ननयन्त्रण में होना चानहए िो इसका उपयोग करता है। िीव मन का ननदेिक नहीं ंहै; क्ोंनक हम देखते हैं नक सामान्य व्यद्धि अपने मन को वि में नहीं ंरख सकते। वे तुच्छ राग-द्वेष, आवेग, भय आनद से सहि ही इधर-उधर दोलायमान होते रहते हैं। इसनलए

यह नननश्चत है नक कोई ऐसी सत्ता अवश्य है ि◌ो मन की ननदिक है। यहाँ प्रश्न उठता है, वह कौन है ? वह है मनसस्पनत, अन्तयाथमी, कूटस्‌ ब्रह्म ।

आप ि◌ैसे अपने सामने वृक्ष को देखते हैं, इसी प्रकार ि◌ीवों ◌ंके मन में क्‌ा हो रहा है, इस सबको देखने तर्‌ा ि◌ानने के नलए भी कोई न कोई होना चानहए। वह कूटस्‌ है। - उसी को ब्रह्म कहते हैं। आपके सामने एक पात्र रखा है। पात्र अपने-आपको देख नहीं ◌ंसकता है। उसे देखने के नलए एक ि◌ष्टा और देखने का करण अर्‌ाथत्‌ नेत्र की आवश्यकता होती है। यनद आप कहें नक पात्र अपने आपको देख सकता है तो इसमें तकथिास्त्र के कमथ-कतृथत्व-भाव का नवरोध होगा। तकाथनुसार यह एक असंगनत है। इसनलए आपको मानना पडेगा नक मन का एक मूक साक्षी है ि◌ो अनानद, अनन्त, अपररवतथनील और ननत्य ज्ञाता है। वह ि◌ीवों ◌ंके मन में उठने वाले भावों ◌ंऔर नवकारों ◌ंको देखता है।

ईश्वर या सगुण ब्रह्म को ननगुथण ब्रह्म की पूणथ चेतना होती है। यह उसका स्वरूप लक्षण है। सार्‌-ही-सार्‌ उसे पूणथ वैश्व चेतना भी होती है। वह ि◌ानता है नक प्रत्येक मन में क्‌ा-क्‌ा हो रहा है।

स्वाभानवक चेतना अर्वा ननरपेक्ष चेतना सबमें समान होती है। यह ि◌ुि चेतना एक ही होती है। यह कूटस्‌ चैतन्य है। मन की सारी नक्रयाएँ और सभी लोगों ◌ंके मन में उठने वाले नवकार उस एक सामान्य चेतना के समक्ष प्रस्तुुत नकये ि◌ाते हैं ि◌ो नक मन की सारी वृनत्तयों ◌ंकी साक्षी है। यद्यनप चेतना एक ही होती है तो भी ि◌ब राम को नबचूछू ि◌ंक मारता है तो केवल राम को ही पीडा होती है। उसके पास खडा उसका नमत्र कृष्ण इस पीडा को अनुभव नहीं ◌ंकरता। प्रत्येक व्यद्धि का अन्तिःकरण नभन्न होता है। वास्तव में तो मनुष्‌ और परमात्मा में कोई भेद नहीं ◌ंहोता, परनुतु यह अन्तिःकरण ही मनुष्‌ को सीमाबि रखता है। ि◌ब अनवद्या का आवरण हट ि◌ाता है, तो इस अभेद का साक्षात्कार होता है।

ब्रह्म के नलए मन ज्ञान की वस्तुु है। मन के सारे प्रपंचों,◌ं ि◌ैसे-इच्छा, कल्पना, ि◌ंका, नवश्वास, अनवश्वास, लज्जा, चातुयथ, भय आनद को आत्मा अपरोक्ष रूप से देखता है; परनुतु वह सवथव्यापी आकाि या नवनवध रंगों ◌ंवाले पदार्थ को प्रनतनबद्धम्बत करने वाले स्फनटक अर्वा सूयथ की भाँनत उनसे सवथर्‌ा अनासि तर्‌ा अप्रभानवत रहता है।

आत्मा मन का स्रोत है

यह मन ि◌ो संकल्प-नवकल्प के द्वारा वृद्धि को प्राप्त होता है, अपने कारणभूत ब्रह्म से उत्पन्न होता है। अनन्त रूप आत्मा संकल्प के द्वारा ि◌ो रूप धारण करता है, वह मन है। पहले इसने नववेक से पीठ मोडी और इसनलए पदार्‌ों की वासनाओं ◌ंकी ि◌द्धि के लपेट में आ गया। मन का मूलाधार, अनधष्ठान तर्‌ा मूल स्रोत आत्मा, ब्रह्म अर्वा ि◌ुि चैतन्य है। सारी ि◌द्धियों ◌ंकी ि◌द्धि ि◌ो मन को ि◌द्धि देती है, सारी ज्योनतयों ◌ंकी ज्योनत ि◌ो मन को प्रकाि देती है, सारे ि◌ाओं ◌ंका ि◌ष्टा ि◌ो मन के ओय और कायों का साक्षी है. सारे आधारों ◌ंका आधार निसमें सुषुद्धप्त में मन नवश्राम करता है, ब्रह्म है।

"ॐ केनेशषतों पतशत पे्रेशषतों मनिः" अर्‌ाथत्‌ नकसके द्वारा सूफूनतथ पा कर और संचानलत हो कर मन अपने नवषयों ◌ं तक पहुँचता है (केनोपननषद्‌) मैं उस सवथिद्धिमान्‌ को हार्‌ ि◌ोड कर प्रणाम करता है। वह ि◌द्धियों ◌ंकी ि◌द्धि में है- **"सोऽहम्‌, शिवोऽहम्‌।"**

वह अनद्वतीय परमात्मा ि◌ो आपके हृदय-प्रकोष्ठ में अन्तयाथमी, सूत्रधार, साक्षी अर्वा परमात्मा के रूप में ननवास करता है; ि◌ो आनद, मध्य और अन्त-रनहत है; ि◌ो इस संसार का, वेदों ◌ंका तर्‌ा ि◌रीर, मन, इद्धन्द्रयों ◌ंऔर प्राणों ◌ंका स्रोत है; ि◌ो सवथव्यापक, ननननवथकार है ि◌ो सदा एकरस है; ि◌ो सवथकाल में नवद्यमान रहता है तर्‌ा ि◌ो

स्वयमूभू,है; स्वतन्त्र और स्वयं ज्योनत है; वही ईश्वर है, आत्मा है, ब्रह्म है, पुरुष है, चैतन्य है, भगवान् या पुरुषोत्तम है।

स्वप्न में आप अत्यन्त तेिोमय प्रकाि देखते हैं। यह कहाँ से आता है ? आत्मा से। स्वप्न में प्रकट होने वाला प्रकाि आत्मा के स्वयं ज्योनत अर्वा स्वयं-प्रकाि होने का स्पष्ट द्योतक है।

ईश्वर सत्य, प्ेरेम, ज्योनतयों ंकी ज्योनत, िाद्धन्त, ज्ञान तर्ा आनन्दनवग्रह है। वह सद्धच्चदानन्द, अनन्त, अमृत तर्ा असीम है। वह अनवनािी, परम वस्ुतु तर्ा सवथव्यापी तत्त्व है। ईश्वर ही सार वस्ुतु और अनन्त सौन्दयथ है।

भगवान् ईश्वर िब्द का पयाथय है। निसमें ज्ञान, वैराग्य, यि, ऐश्वयथ, श्री और धमथये ष्ग्ुण अपने पूणथ रूप में नवद्यमान हों, ं वह भगवान् है।

वायुपुराण के अनुसार सवथज्ञता, सन्तोष, अनन्त ज्ञान, स्वतन्त्रता, सवथदा िद्धिमत्ता और असीम िद्धिमत्ता —ये छह लक्षण परमात्मा के बताये गये हैं।

सवथज्ञत्व, सवेश्वरत्व, सवाथन्तयाथनमत्व, सवथकारणत्व, सवथननयनूतृत्व, सवथकतृथत्व, सवथिद्धिमत्व और स्वतन्त्रत्व-ये आठ लक्षण ईश्वर के हैं।

ज्ञान, ननष्कामता, संयमि-द्धि, तप, सत्य, क्षमा, नतनतक्षा, सिथन, आत्मज्ञान और समस्त नक्रयाओं ंकी आधार भूनम होना—वे दि अव्यय लक्षण सवथसुखमूल परमात्मा में सदा ननवास करते हैं।

सृनष्ट, द्धस्र्नत, संहार, नतरोधान और अनुग्रह-ये ईश्वर के पंच कृत्य है।

ईश्वर ननयामक, अन्तयाथमी और प्ेरेरक भी है। वह स्वप्न, अन्तवाथणी, ननत्य की बातचीत में दूसरों ंके मुख द्वारा, नमत्रों ंके परामिथ आनद द्वारा अनेक प्रकार से साधकों ंकी सहायता करता है।

ननत्य सुख, परम िाद्धन्त, ननत्य तृद्धप्त, अनन्त आनन्द तर्ा अखण्ड सुख केवल ईश्वर में ही प्राप्त हो सकते हैं। इस भागवत-चेतना, आत्म-साक्षात्कार या भगवद्-दिथन को अनन्य भद्धि या नवचार द्वारा प्राप्त करें। यही िीवन का लक्ष्य है। यही आपका परम धमथ है; अन्य सारे धमथ गौण हैं।

इद्धन्द्रयों ंका सार मन है; मन का सार बुद्धि है; बुद्धि का सार अहंकार है तर्ा अहंकार का सार िीव है। ब्रह्म या िुि चैतन्य प्रत्ेयेक वस्ुतु की योनन या गभथ अर्वा उसका अनधष्ठान है। वह प्रत्ेयेक वस्ुतु का साक्षी है।

आत्मा इस नविाल माननसक कायाथलय का स्वामी है, बुद्धि प्रबन्धक तर्ा मन मुख्य नलनपक है। मुख्य नलनपक को दो कायथ करने पडते हैं उसे सीधे प्रबन्धक से आदेि प्राप्त करना पडता है और श्रनमकों ंके कायथ का पयथवेक्षण करना होता है। इसी प्रकार मन को दो कायथ करने पडते हैं। इसका सम्बन्ध बुद्धि-रूपी प्रबन्धक और कमेद्धन्द्रय-रूपी श्रनमकों ंसे होता है।

मन वाणी से अनधक आन्तररक है, बुद्धि मन से अनधक आन्तररक है, अहंकार बुद्धि से अनधक आन्तररक है, िीव-चैतन्य अहंकार से अनधक आन्तररक है तर्ा आत्मा या कूटस्र् िीव- चैतन्य से अनधक आन्तररक है। आत्मा से अनधक आन्तररक अन्य कोई वस्ुतु नहीं ंहै। यह पररपूणथ है।

िब अपने मन का नवश्ेलेषण करके आप नकसी ऐसे तत्त्व के समुमुख होंगें िो अनवनािी है और स्वभाव से ही ननमथल, पूणथ, स्वयं-प्रकाि और अनवकारी है, तब आप कभी द्धखन्न नहीं ंहोंगें, दुिःखी नहीं ंहोंगें।

केवल एक ही तत्त्व है। वह **'एकमेवाशितीयों ब्रह्म'** है। वह अनन्त ननष्कलंक, ननत्य ििु और पररपूणथ है। मन को द्धरूर करके उसी का ध्यान करें और मन की सच्ची िाद्धन्त प्राप्त करके सारे दुि:खों ंसे मुि हो िायें।

मन के अन्त्वि का प्रमाण

आत्मा और ब्रह्म का स्वरूप क्ा है? आत्मा सद्धच्चदानन्द है, व्यापक है। नफर िीवात्मा की दृनष्ट को कौन पररद्धच्छन्न बनाता है? मन इस तथ्य से एक अन्तरंग अवयव (मन) की सत्ता का प्रमाण नमलता है।

बृहदारण्यक के भाष् में श्री िंकराचायथ ने मन की सत्ता के दो प्रमाण नदये हैं। एक तो यह है नक इद्धन्द्रयों ं द्वारा संवेदन को प्राप्त करना मन का ही कायथ है। यह सवथ कमथ नवषय- योग कहलाता है। मन और ज्ञानेद्धन्द्रयों ंके संसगथ से इद्धन्द्रयिन्य ज्ञान संवेदन प्राप्त होता है। इसीनलए अनेक इद्धन्द्रयों ंद्वारा प्राप्त होने वाले संवेदन एक ही समय में एक-सार् नहीं ंव्यापते। मनुष् कहा करते हैं नक मेरा मन अन्यत्र र्ा, मैंने उसे नहीं ंदेखा। इस समकालीन संवेदन की असम्भवता से भी मन की सत्ता का प्रमाण नमलता है।

अन्तिःकरण (मन) की सत्ता के नलए युद्धि यह है। आत्मा अव्यय तत्त्व है। आत्मा और ज्ञानेद्धन्द्रयों ंके बीच में एक संयिोक की आवश्यकता है। हमें एक आन्तररक अवयव (मन) की सत्ता माननी पडेगी निसके अवधान तर्ा अनवधान से पदार्ों का प्रत्यक्ष दिथन होता है। यनद हम इस आन्तररक अवयव की सत्ता को स्वीकार नहीं ं करते तो, या तो सदा दिथन ही होता रहेगा या अदिथन ही — िब आत्मा, इद्धन्द्रय और नवषय का संयिोन होगा तो दिथन ही होगा; क्ोंनक ये ही तीनों ंदिथन के कारण हैं और यनद इन तीनों ंके संयिोन से दिथन नहीं ंप्राप्त होता तो सदा अदिथन ही बना रहेगा। परन्तु वास्तव में इन दोनों ंबातों ंमें से एक भी सत्य नहीं ंहै। इसनलए हमें एक आन्तररक अवयव की सत्ता माननी पडती है। निसके अवधान और अनवधान के फल स्वरूप पदार्थ का दिथन या अदिथन प्राप्त होता है।

दूसरा प्रमाण हमारी ननश्चयात्मक क्षमता है। कोई मनुष् निसे हम नहीं ंदेख सकते, हमें स्पिथ करता है और हम उसका अनुमान कर लेते हैं। केवल स्पिथ से ही हमें इसका ज्ञान नहीं ंहो सकता। निस िुद्धि के द्वारा हम ऐसा अनुमान करते हैं, वह मन है।

मनुष्य और पिु में शभन्नता बताने वाला शविेष ज्ञान

पिु स्वयं अपने को नहीं ंिान सकता। उसको केवल िारीररक चेतना होती है। उसको आत्म-चेतना का अनुभव नहीं ंहोता। पिु को असुनवधा और पीडा की संवेदना होती है। वह अपनी मनोदिाओं ंका नवश्लेषण नहीं ं कर सकता। मनुष् केवल िानता ही नहीं,ं अनपतु उसे यह भी ज्ञान होता है नक वह िानता है। यह उच्च मानननसक चेतना या आत्म चेतना है। मनुष् केवल संवेदन और भावना ही नहीं ंकरता, अनपतु अपनी भावनाओं ंऔर संवेदनों ंको अनभव्यि करने को उसके पास िब्द भी हैं। वह अपनी भावनाओं ंका नविद वणथन कर सकता है। वह अपने आपको अनुभव करता हुआ िान सकता है तर्ा अपने को उस संवेदन या भाव से पृर्क् भी कर सकता है। वह सोच सकता है, 'मैं स्पिथ करता हूँ, मैं देखता हूँ, मैं सुनता हूँ, मैं सूँघता हूँ, मैं स्वाद लेता हूँ, मैं कामना करता हूँ, मैं भोगता हूँ।'

मैं इस पुस्तक को िानता हूँ। मैं यह भी िानता हूँ नक मैं इस पुस्तक को िानता हूँ। यह आत्म-चेतना कहलाती है, िो केवल मनुष्ों ंकी नवनिष्टता है।

पुनलस चौकी पर चपरासी दि का घण्टा बिाता है। वह िब्द मनुष्ों ंऔर पिुओं ंके कानों ंमें िाता है। पिु भी घण्टे की ध्वनन दि बार सुनते हैं; परन्तु मनुष् उनको नगनते हैं और बुद्धि के द्वारा िान लेते हैं नक अब दि बि गये। मनुष् में यह नविेष ज्ञान होता है। और पिुओं ंमें सामान्य ज्ञान होता है। यह नविेष ज्ञान ही मनुष् और पिुओं ंमें भेद करता है। आहार, ननिा, भय और मैरुन दोनों ंमें समान हैं। इस नविेष ज्ञान के द्वारा मनुष् भलाई-बुराई, उनचत-अनुनचत, कतथव्याकतथव्य की पहचान करता है।

ज्ञान के चार स्रोत

प्ेरेरणा, उद्घाटन, अन्तदृथनष्ट, सहि प्रवृनत्त, हषीक, नदव्य दृनष्ट और परमानन्द-ये ज्ञान के सात स्तर हैं। ज्ञान के चार स्रोत हैं : सहि प्रवृनत्त, नववेक, अन्तिःप्रज्ञा और ब्रह्मज्ञान ।

सहज प्रवृशत्त

बि आपकी दानहनी भुिा पर चींटी रेंगती है, तो बायीं ंभुिा उसे हटाने के नलए दानहनी भुिा की ओर स्वयं ही उठ िाती है, इसके नलए मन को तकथ-नवतकथ नहीं ंकरना पडता। िब आप अपने पैर के सामने नबचूछू को देखते हैं तो आप स्वतिः ही पैर हटा लेते हैं। यह सहि प्रवृनत्त की अर्वा अनववेनचत नक्रयाएँ हैं। सडक पार करते मोटरगानडयों ंसे आप अपने िरीर को इस सहि प्रवृनत्त के द्वारा कैसे बचा लेते हैं? ऐसी याद्धन्त्रक गनत में कोई वृनत्त काम नहीं ंकरती।

सहि प्रवृनत्त पिुओं ंऔर पनक्षयों ंमें पायी िाती हैं। पनक्षयों ंके अन्दर का अहंकार नदव्य प्रवाह अर्वा नदव्य लीला में हस्तक्ेषेप नहीं ंकरता। इसनलए उनका सहि प्रवृनत्त से नकया हुआ कायथ मनुष्ों ंके कायथ से भी अनधक पूणथ होता है। पनक्षयों ंके उतूकृष्ट घोंसंले ननमाथण करने के सुन्दर कायथ को क्ा आपने नहीं ंदेखा है।

शववेक

नववेक सहि प्रवृनत्त से उच्चतर वसुतु है और केवल मनुष्ों ंमें ही पाया िाता है। नववेक बहुत-सी बातों ंको इकट्ठा करके उनमें से समान धमथ का ननयम ननकाल देता है, कारण से कायथ तक और कायथ से कारण तक युद्धि सोचता है तर्ा आधार वाक्ों ंसे ननष्कषथ तक, प्रनतज्ञद्धप्त से उपपनत्त तक युद्धि करता है। यह ननष्कषथ ननकालता, ननश्चय करता तर्ा ननणथय देता है। यह आपको सुरनक्षत रूप से अन्तिःप्रज्ञा के द्वार तक पहुँचाता है।

नवश्वास, तकथ, ज्ञान और श्रिा – ये चार महत्त्वपूणथ माननसक नक्रयाएँ हैं। पहले आपको नकसी नचनकत्सक में नवश्वास होता है और आप उसके पास रोग ननदान तर्ा नचनकत्सा के नलए िाते हैं। वह आपकी भली-भाँनत परीक्षा करके कुछ औषनध नननश्चत करता है। आप औषनध का सेवन करते हैं और तकथ करते हैं नक 'अमुक रोग है। िाक्टर ने लौह और िम्बेय (आयोिाइि) नदया है। लोहे से रि में वृद्धि होगी और िम्बेय (आयोिाइि) लसीकाओं ंको उद्दीप्त तर्ा यकृत के स्राव तर्ा वृद्धि का अविोषण करेगा। अतिः मुझे औषनध लेनी चानहए।' इन औषनधयों ंका क्रम पूरा करने से रोग एक माह में दूर हो िाता है, तब आपको उस औषनध की क्षमता तर्ा नचनकत्सक की ननपुणता का ज्ञान होता है, आपकी उसमें पूणथ श्रिा हो िाती है और आप अपने नमत्रों ंको भी उसी नचनकत्सक तर्ा उसकी औषनध की अनुिंसा करते हैं।

अतिःप्रज्ञा

अन्तिःप्रज्ञा आध्याद्धत्मक अनुभव होता है। कारण िरीर की नक्रयाओं ंद्वारा प्राप्त हुआ ज्ञान अन्तिःप्रज्ञा है। श्री अरनवन्द इसे अनतमाननसक चेतना कहते हैं। वहाँ आपको समानध में सत्य का अपरोक्ष ज्ञान होता है। आपको एक ही झलक में पदार्थ का ज्ञान हो। िाता है। प्रोफेसर वगथसन ने फ्ांस में अन्तिःप्रज्ञा का प्रचार नकया तानक लोग समझ

ाियें। नक बुद्धि के अनतररि भी ज्ञान का अन्य उच्च स्रोत है। अन्तिःप्रज्ञा में तकथ-नवनध नहीं ंहोती। यह प्रत्यक्ष होता है। अन्तिः प्रज्ञा नववेक से अतीत होती है; परनुतु इसका खण्डन नहीं ंकरती। बुद्धि मनुष् को अन्तिःप्रज्ञा की ड्योढ़ी तक पहुँचा कर लौट ि ाती है।

अन्तिःप्रज्ञा नदव्य दृनष्ट या ज्ञान चकुषु है। अन्तिः प्रज्ञा के द्वारा सत्य की कौंधं तऱ् झलक आया करती है। पे्रेरणा, प्रकटन और आध्याद्धत्मक अन्तदृथनष्ट —ये सब अन्तिःप्रज्ञा के द्वारा प्राप्त होते हैं।

आत्म-ज्ञान

आत्म-ज्ञान अन्तिः प्रज्ञा से ऊपर है। यह कारण ि रीर का भी अनतक्रमण कर ि ाता है। यह ज्ञान का उच्चतमस्वरूप है। एकमात्र सत्य यही है।

परररचे्छेद- २

मन और ि रीर

रीर मन के उपभोग के शलए एक साँचा है

इद्धन्द्रयों ंसनहत िरीर मन के अनतररि और कुछ नहीं ंहै। स्रूल िरीर मन की बाह्य अनभव्यद्धि है। मन इस स्रूल रीर का सूक्ष्म रूप है। िरीर का ध्यान करते-करते मन स्वयं िरीर बन िाता है और इसमें फूँस कर दुिःख भोगता है। समस्त िरीरों ंका स्रान मन में ही होता है। यनद मन िद्धिहीन हो िाता है, तो िरीर भी बुद्धि के कायथ प्रकट नहीं करता। क्ा नबना पानी के उद्यान बना रह सकता है? मन ही सारे कायथ करता है और िरीरों ंमें
श्रेष्ठतम है। माननसक नक्रयाएँ ही वास्तनवक नक्रयाएँ होती हैं। नलंग िरीर में मन बडी िुत गनत से सारे कायथ करता है
और इसी से अद्धस्रर रहता है; परनु्तु स्रूल िरीर कुछ भी नहीं ंिानता और ननद्धिय रहता है। स्रूल िरीर के नाि हो िाने पर मन अपनी रुनच के अनुसार िीघ्र ही नवीन िरीर धारण कर लेता है। ऐसा लगता है नक मन ने अपने उपयोग के नलए तरा अपनी िद्धि को प्रकट करने के नलए और उसके द्वारा पाँचों ंज्ञानेद्धन्द्रयों ंके मागथ से संसार के
नाना प्रकार के अनुभव प्राप्त करने के नलए भौनतक िरीर का एक साँचा सा बनाया हुआ है।

शवचार िरीर को बनाते हैं

वसु्तुतिः केवल मन के कमथ ही कमथ हैं, िरीर के नहीं।ं हमारे अपने नवचार, मनोदिाएँ, नवश्वास और मनोभावनाएँ ही नवषयीकृत हो कर हमारे िरीर बनते हैं और नेत्रों ंको दृनष्टगोचर होते हैं। यह ध्यान देने योग्य बात है नक िैसा नवचार मन में प्रवेि करता है, उसी के अनुसार िरीर का प्रत्येक कोिाणु वृद्धि या हास को प्राप्त होता है, िीवन या मृतु्यु का प्रणोदन प्राप्त करता है; क्ोंनक निस नवषय का आप अनधक नचन्तन नकया करते हैं, उसकी ही प्रनतकृनत आप बनते िाते हैं।

िब मन नकसी नवचार-नविेष की ओर मुडता है और उसमें देर तक संलग्न रहता है, तो पदार्थ का एक स्पन्दन-नविेष चलता है और नितनी बार यह स्पन्दन होता रहता है, वह स्वभाव का रूप लेने के नलए, स्वयंचानलत बनने के नलए उतना ही अनधक अपनी पुनरावृनत्त करता है। िरीर मन का अनुगामी होता है और इसके पररवतथनों ं का अनुकरण करता है। यनद आप अपने नवचार संकेद्धन्द्रत करते हैं तो नेत्र ननश्चल हो िाते हैं।

नवचार के प्रेरक पररवतथन से आपके मनोमय िरीर में स्पन्दन होता है और िब यह स्पन्दन स्रूल िरीर में पहुँचता है तो मद्धस्तष्क के स्नायनवक िव्य में नक्रया-संचालन करता है। इस नक्रया से नानडयों ंके कोिाणुओं ंमें अनेक वैद्युत और रासायननक पररवतथन होते हैं। नवचार-नक्रया से ही ये सब पररवतथन हुआ करते हैं।

मुख मन का अशभसूचक है

मन इस स्रूल िरीर का सूक्ष्म रूप है। स्रूल िरीर मन की बाह्य अनभव्यद्धि है। इसनलए िब मन रुक्ष हो िाता है, तो िरीर भी रुक्ष हो िाता है। िैसे रुक्ष रूप-रंग वाला व्यद्धि दूसरों ंके अन्दर दया और प्रेम उत्पन्न नहीं ं कर सकता, ऐसे ही रुक्षमनस्क मनुष् भी अन्य मनुष्ों ंमें दया और प्रेम पैदा नहीं ंकर सकता मन अपनी अनेक अवस्राओं ंकी छाया मुख पर नविेष रूप से प्रकट करता है, निसको एक बुद्धिमान् मनुष् बडी सुगमता से पहचान लेता है िैसे निह्वा उदर की अनभसूचक है, वैसे ही मुख मन का अनभसूचक है।

रीर मन का अनुगामी है। यनद मन में ऊंचाई से नगरने का नवचार उत्पन्न होता है, तो िरीर तुरन्त ही इसके नलए तैयार हो िाता है और बाहरी नचह्न प्रकट करता है। भय, नचन्ता, िोक, प्रसन्नता, हषथ, क्रोध — ये सब ही मुख पर अपने-अपने नवनवध नचह्न अंनकत कर देते हैं।

नेत्र आत्मा के वातायन रूप हैं, ो मनोदिा तर्ा मनिःद्धस्र्नत बताते हैं। आूँखों ंमें एक तार यन्त्र होता है ो नवश्वासघात, धूतथता, धोखा, ि्ु प्ेरम, दया, भद्धि, उदासी, ोक, घृणा, प्रसाद, ाद्धन्त, एकरसता, स्वास्थ्य, ि्द्धि, बल और सौन्दयथ का सन्ेदि बाहर समे्प्रेनषत करता है।

यनद आपमें अन्य व्यद्धियों ंकी दृनष्ट पहचानने की कला है तो आप तुरन्त उनके मन का हाल भी ान सकते हैं। यनद आप नकसी मनुष् की मुख-मुिा, वाणी और आचरण को सतकथ हो कर देखें, तो आप उसके मन के प्रमुख नवचार को ान सकते हैं। इसके नलए र्ोडा-सा साहस, चातुयथ, बुद्धि और अनुभव की आवश्यकता है।

आपके नवचार और भाव मुख पर अपना गहरा प्रभाव उत्पन्न करते हैं। मन के अन्दर क्ा हो रहा है, उसको बताने के नलए मुख नवज्ञापन-पट के समान है। आप अपने नवचारों ंको मुख से कनठनता से नछपा सकते हैं आप मूखथताविे भले ही सोचते रहें नक आपने नवचारों ंको गुप्त रखा हुआ है। कामुकता, लोभ, ईष्ाथ, क्रोध, प्रनतकार, घृणा आनद के नवचार तत्काल ही आपके मुख पर अपनी गहरी छाप प्रकट करते हैं। मुख बहुत नवश्वासपात्र लेख-पत्र - रक्षक और बहुत सूक्ष्म-ग्राही ननबन्धक-यन्त्र है, ो आपके मन में गनतमान नवचारों ंको ननबि करता है। नकसी नविेष समय में मन तर्ा उसकी अन्तवथसुतु के स्वरूप को प्रकट करने के नलए मुख एक पररमानिथत दपथण है।

ो यह समझता है नक वह अपने नवचारों ंको नछपा सकता है, वह प्रर्म श्ेरेणी का मूखथ है। उसकी दिा उस ुतुरमुगथ ैसी है ो निकाररयों ंसे पीछा नकये ाने पर रेत के नीचे अपना निर नछपा लेता है और सोचता है नक उसे कोई देख नहीं ंसकता।

आपका मुख ग्रामोफोन रेकािथ के समान है ो कुछ आप नवचार करते हैं, वह तत्काल आपके मुख पर अंनकत हो ाता है। प्रत्ेयेक दूनषत नवचार मन के भाव को मुख-मण्डल पर अंनकत करने के नलए छेनी या सूई का काम करता है। घृणा, क्रोध, कामवासना, ईष्ाथ, प्रनतकार आनद दूनषत नवचारों ंद्धारा नकये हुए व्रणों ंऔर व्रण नचह्नों ं-से आपका मुख आच्छानदत है। आपके मुख पर के व्रण-नचह्नों ंके लक्षणों ंसे मैं आपके मन की दिा को तुरन्त पहचान सकता हूँ। मैं आपके मन के रोग का तुरन्त ननदान कर सकता हूँ।

मन और ि रीर का पारस्पररक प्रभाव

मन और िरीर का अनत घननष्ठ सम्बन्ध है। मन िरीर पर प्रभाव िालता है तर्ा - िरीर मन पर प्रनतनक्रया करता है। मन का प्रभाव िरीर पर होता है। िि्ु स्वस् मन हो तो िरीर भी स्वस् होता है। मन में नववाद होने से िरीर दुबथल हो िाता है। ऐसे ही िरीर का प्रभाव मन पर होता है। स्वस् तर्ा सबल िरीर हो तो मन भी स्वस् तर्ा सबल होता है। यनद िरीर रुग्ण है तो मन भी रूग्ण होता है। पेट में ददथ हो तो मन पर उदासी छा िाती है।

बुरे शवचार रोगो ोंके मुख्य कारण हैं

िरीर को आक्रान्त करने वाले रोगों ंका मुख्य कारण दुनवथचार होता है। ो कुछ आपके मन में होगा, वही आपके स्रूल िरीर में प्रकट हो ायेगा। यनद नकसी मनुष् के प्रनत कोई भी दुभाथवना या कटुता हो तो वह िरीर पर तत्काल अपना प्रभाव िालती है और उसमें नकसी-न-नकसी प्रकार का रोग पैदा कर देती है। तीव्र भावाविे, घृणा, दीघथकालीन कटु ईष्ाथ, क्षयकारी नचन्ता और क्रोध के आविे से िरीर के कोिाणु नष्ट होते हैं और हृदय, यकृत, वृक्क (गुरदा), नतल्ली और पेट के रोग उत्पन्न हो ाते हैं। क्रोध के तीव्र आविे मद्धस्तष्क के कोिाणुओं ंके नलए नविेष हाननकारक होते हैं, रि में नवषैले रासायननक पदार्थ पैदा कर देते हैं, एक व्यापक आघात पहुूँचाते

और उदासी पैदा करते हैं, अन्ननाल में आमिय-रस, नपत्त और अन्य पाचक रसों ंके स्राव को दबा देते हैं, आपकी ाद्धि और ओौद्धस्वता का िोषण करते, असामनयक ही वृावस्ा उत्पन्न करते और िीवन का हास करते हैं।

बि मन में उदे्वेग हो तो िरीर भी अनद्धग्न हो िाता है। मन और िरीर का सदा सार् है। िब दोनों ंमें उदे्वेग पैदा होता है तो प्राण की गनत गलत नदिा में हो िाती है। उस समय यह सारे िरीर में ननरन्तर तरा् समान रूप से चलने की िगह नवषम गनत से चलता है। तब भोिन भी ठीक-ठीक नहीं ंपचता निससे रोग पैदा हो िाते हैं। यनद मुख्य कारण को हटा नदया िाये तो सारे रोग स्वयं ही नमट िायेंगे।

ारीररक रोग तो गौण रोग कहलाते हैं, िब नक मन को प्रभानवत करने वाली वासनाएँ माननसक अर्वा मुख्य रोग कहलाती है। यनद कुनवचारों ंको नष्ट कर नदया िाये तो िरीर के सभी रोग िाते रहेंगे। मन के ननमथल होने से िरीर स्वस् होता है। इसनलए अपनी नवचार-नक्रया और नवचारों ंके चुनाव में सावधान रहें। सदा उन्नत, सौम्य, पे्रमपूणथ और कृपापूणथ नवचार बनाये रहें। आपको एकरसता, स्वास्थ्य और सौन्दयथ नमलेंगे।

ाचिनीय व्यवहार

यह बडे खेद का नवषय है नक संसार के अनधसंख्य नचनकत्सक अपने रोनगयों ंको लाभ पहुँचाने के स्ान पर हानन ही अनधक करते हैं। वे अपने रोनगयों ंसे उनके रोग के स्वरूप को बढ़ा-चढ़ा कर बताते हैं। वे उनके मन में सब प्रकार से काल्पननक भय भर देते हैं। वे संकेतों ंकी िद्धि और रोनगयों ंके मन पर उसके प्रभाव को नहीं ंानिते। उनके मन में लोभ भरा हुआ होता है, धनवान् बन िाने की वासना मूलबि होती है, वे रोनगयों ंसे यरा्-सम्भव अनधक-से-अनधक धन प्राप्त करने का पूरा प्रयत्न करते हैं। यनद वे रोगी को कहें, 'यह रोग तो कुछ भी नहीं ंहै, मैं आपको र्ोडे से घण्टों ंमें ही स्वस् कर दूँगा' तो उनको अनधक पैसा कौन देगा? वे रोनगयों ंको झूठे संकेत देते हैं—'यह बडा भयानक रोग है, असाध्य रोग है। तुम्हारे फेफडों ंमें खतरनाक नवष या रोगाणु नछपा हुआ है।' नचनकत्सक द्वारा नदये गये झूठे संकेत से उत्पन्न इन काल्पननक भय के कारण बेचारा रोगी ननिा रनहत रानत्रयाँ नबताता है। वह प्रनतक्षण सोचता है- "मैं नकसी भी क्षण मर िाऊँगा। िाक्टर ने कहा है नक मेरा रोग भयानक और असाध्य है।" वह द्धखन्न िीवन घसीटता है। नचन्ता और भय ननत्य ही रि में लाल कीटाणु लाखों ंकी संख्या में नष्ट कर देते हैं। िाक्टर ऐसे झूठे संकेत व्यवसाय में अपना कौिल और ननपुणता नदखाने के नलए भी नदया करते हैं।

सब अशनष्टो ोंका मूल

यह नमथ्या कल्पना ही नक आप िरीर हैं, सब अननष्टों ंका मूल है। गलत नवचार करने के कारण आप अपने को िरीर मानते हैं, निससे देहाध्यास पैदा होता है। आप िरीर में आसि हो िाते हैं। यह अनभमान है। नफर ममता आती है। आप अपने को पत्नी, पुत्र तरा् घर से अनभन्न समझने लगते हैं। यह तादात्म्यता अर्वा आसद्धि बन्धन, दुि:ख और संकट लाती है। िब युि में लाखों ंिमथन मारे गये तो आप कभी नहीं ंरोये। क्ों?ं क्ोंनंक उनमें आपकी एकात्मता या आसद्धि नहीं ंर्ी। परनुतु िब आपका पुत्र मर िाता है, तो आसद्धि या ममता के कारण आप बडी कातरता से रोते हैं। 'मेरा' िब्द से मन में बडा नवनचत्र प्रभाव होता है। 'घोडा मर गया' और 'मेरा घोडा मर गया' – इन दोनों ंवाक्ों ंको सुन कर मन पर दो प्रकार का प्रभाव होता है। इनके भेद को अच्छी तरह समझ लेना चानहए।

दुि:ख केवल मन में है

बि तक आप अपने मन से अपना सम्बन्ध रखते हैं, तभी तक दुि:ख नमलता है। नीदं में वेदना नहीं ंरहती। यनद आपकी पीठ पर तीव्र पीडायुि सूिन हो तो रानत्र में सो िाने के पश्चात् आपको वेदना का अनुभव नहीं ंहोता।

केवल उसी समय िब नक मन नानडयों ंऔर नचन्तन द्वारा पीनडत अंग के सार् सम्बि होता है, आपको वेदना का अनुभव प्राप्त होता है। िब क्लोरोफामथ आनद के प्रयोग से मन का सम्बन्ध िरीर से नहीं ंरहता तो वेदना का अनुभव नहीं ंहोता। अत्यन्त हषथ की घनडयों ंमें तीव्र वेदना नबलकुल बन्द हो िाती है, क्ोंनक मन दुिःख के स्र्ान, रीर से हटा नलया िाता है। यनद आप सचेत हो कर इच्छापूवथक मन को ईश्वर या नकसी अन्य आकषथक पदार्थ पर लगा कर पीनडत अंग से हटा सकें तो िाग्रत अवस्र्ा में भी आपको वेदना का अनुभव नहीं ंहोगा। यनद आपकी दृढ़ इच्छा–द्धि या बलवती नतनतक्षा होगी, तो भी आपको वेदना का अनुभव नहीं ंहोगा। नकसी दुिःख या रोग का ननरन्तर नचन्तन करते रहने से आप अपने दुिःख को बढ़ाते ही हैं। दुिःख तो मन में होता है। आत्मा आनन्दस्वरूप है।

रीर पर शनयन्त्रण हेतु मन पर शवजय

अनधकतर मनुष्ों ंके मन पर िरीर का प्रभुत्व अनधक होता है। उनका मन पररपक्व नहीं ंहोता, इसनलए अन्नमय कोि में ही रहता है। नवज्ञानमय कोि (बुद्धि) की वृद्धि करें और इसके द्वारा मनोमय-कोि (मन) का ननग्रह करें। नवज्ञानमय कोि की वृद्धि और पुनष्ट गूढ़ नवचार तर्ा तकथ, सुव्यवद्धस्र्त ध्यान-नक्रया, ब्रह्म-नचन्तन तर्ा उपननषदों,ं योगवानसष्ठ और ब्रह्मसूत्रों ंके स्वाध्याय द्वारा होती है।

मन का संयम करने से िरीर का भी पूणथ संयम हो िाता है। िरीर मन की छाया है। यह मन का तैयार नकया हुआ साँचा है निसमें वह अपने को अनभव्यि करता है। िब आप मन को िीत लेते हैं, तब िरीर आपका दास हो िाता है।

पररच्छेद- ३

मन, प्राण और कुण्डशलनी

प्राण : मन का ओवरकोट

संसार में दो मुख्य तत्त्व है मन और प्राण िब–ब प्राण की गनत होती है, तभी मन की गनत होती है। नानिका के बाहर श्वास िाने पर भी मन श्वास के सार् बाहर ननकलता है। प्राण मन का ओवरकोट है। प्राण अन्न को पचाता, इसको रस और रि में बदलता और उसे मद्धस्तष्क तर्ा मन में भेिता है। ऐसा होने पर ही मन सोच सकता और ब्रह्म-नवचार कर सकता है। मन का िीवन नवचार-ननमाथण करने वाले सूक्ष्म आद्धत्मक प्राण के स्पन्दन से ही बना रहता है।

प्राण स्थूल है। मन सूक्ष्म है। मन पाँचों ंतन्मात्राओं ंके साद्धत्त्वक अंि के पंचीकृत रूप से बना है। प्राण इनके रािनसक अंि के पंचीकृत रूप से बना है। यही कारण है नक मन प्राण से भी अनधक सूक्ष्म है।

प्राणमय कोि स्थूल िरीर से अनधक सूक्ष्म है। यह अन्नमय कोि को आच्छानदत करता है और उससे अनधक नवसूतृत है। मनोमय कोि प्राणमय कोि से भी अनधक सूक्ष्म और नवसूतृत है। नकसी मनुष् पर भौनतक प्रभाव डालने के नलए आपको उसके िरीर का स्पिथ करना पडता है; परन्तु उसे अपना प्राण आप दूर खडे रह कर भी केवल 'पासों' ं के द्वारा ही दे सकते हैं; क्ोंनक प्राण स्थूल िरीर से अनधक सूक्ष्म है। आप नवचार–िद्धि द्वारा नकसी मनुष् पर माननसक प्रभाव डाल सकते हैं, चाहे वह आपसे हिारों ंमील दूर रहता हो; क्ोंनक माननसक िद्धि प्राण से सूक्ष्मतर है ।।

प्राण और मन अन्योन्याशित हैं

प्राण और मन का सम्बन्ध आधार और आधेय का है। इन दोनों ंका सम्बन्ध ऐसा है, िैसा सुगद्धन्ध और फूल का या तेल और नतलों ंका। यनद दोनों ंमें से एक भी नष्ट हो िाये तो दूसरे का अद्धस्तत्व नहीं ंरहेगा। यनद मन और प्राण का अद्धस्तत्व न रहे तो नवचार उत्पन्न ही नहीं ंहोंगें। दोनों ंके नाि से मोक्ष की प्राद्धप्त हो िायेगी।

एकाग्रता और ननरोध मन की दो अवस्र्ाएँ हैं। स्पन्द और ननरोध प्राण की दो अवस्र्ाएँ हैं। िब मन एकाग्र हो िाता है तो प्राण की स्पन्दावस्र्ा स्वयं ही हो िाती है। यनद िुि सत्त्वगुण के द्वारा मन को ननमथल कर नदया िाये तो सारे िरीर में प्राण की गनत स्वच्छन्द हो िाती है और भोिन भली प्रकार पच िाता है।

मन, प्राणऔर वीयछ

मन, प्राण और वीयथ एक ही सम्बन्ध-सूत्र में बँधे हैं। यनद इनमें से एक का भी संयम हो िाता है तो िेष दोनों ंका संयम बडी सुगमता से हो िाता है। हठयोगी प्राण का ननग्रह करने का प्रयत्न करते हैं और राियोगी मन का संयम करते हैं। ज्ञानयोनगयों ंकी साधना बुद्धि और इच्छा–िद्धि से आरम्भ होती है।

प्राणायाम के लाभ

प्राणायाम से आप मनोबल को बढ़ा सकते हैं और नवचार-ननग्रह तर्ा नवचार-संसूकृनत का नवकास भी कर सकते हैं। इससे धारणा और ध्यान में सहायता नमलती है, मन द्धस्र्र हो िाता है तर्ा रािोगुण और तमोगुण दूर हो िाते हैं। वह मन के कमल को द्धखला देता है।

प्राणायाम द्वारा मन स्रूल पदार्ों से सूक्ष्म की ओर िाता है; इसनलए काम वासना का ननग्रह करने के नलए प्राणायाम को अच्छा ननयन्त्रक माना गया है। िब कभी भी कोई दूनषत नवचार आपके मन को िुि करे तो तुरन्त पद्मासन या नसिासन में बैठ िायें और प्राणायाम करने लगें। कुनवचार आपको तुरन्त ही छोड देगा।

मन से प्राण की वररष्ठता

दृनष्ट वाणी से अनधक आन्तररक होती है; क्ोंनक साधारणतया दृनष्ट नबना नकसी नवरोध के सूचना देती है। इसी प्रकार श्रवण िद्धि दृनष्ट से अनधक आन्तररक है, क्ोंनक आँख भले ही धोखा दे िाये (िैसे—सीपी को चाँदी देखना), परनुतु कान अद्धस्तत्वहीन िब्द कभी नहीं ंसुनता। इसी प्रकार कान भी मन के अवधान की सहायता से नक्रया करता है और मन प्राण के ऊपर आनश्रत रहता है। इसनलए प्राण सबसे आन्तररक है; वही ब्रह्म है।

छान्दोग्योपननषद् में एक दृिन्त नदया हुआ है निससे इस बात को समझने में आसानी होगी। “तत्पश्चात् मन ने उत्क्रमण नकया। उसने एक वषथ प्रवास करने के अनन्तर नफर लौट कर इद्धन्द्रयों ंसे पूछा- 'मेरे नबना तुम कैसे िीनवत रह सकी?' उन्ोंनें कहा- 'निस प्रकार बचे्चे, निनका नक मन नवकनसत नहीं ंहोता, प्राण से प्राणन-नक्रया करते, वाणी से बोलते, नेत्र से देखते और कान से सुनते हुए िीनवत रहते हैं। उसी प्रकार हम भी िीनवत रहे।' यह सुन कर मन ने िरीर में प्रवेि नकया। तदनन्तर प्राण से मन ने कहा—'मैं िो आयतन हूँ, सो तुम्हीं ंआयतन हो। लोक में इद्धन्द्रय को मन नहीं ंकहते, परनुतु 'प्राण' ऐसा कहते हैं; क्ोंनक वह प्राण ही है” (छान्दोग्योपननषद् : ५-१-११,१४,१५) । इस दृष्टान्त से यह प्रकट होता है नक प्राण मन तरा् अन्य इद्धन्द्रयों ंसे श्रे्ष्ठ है। वसुतुतिः नकसी प्रकार का नववाद नहीं ंरा्।

मन और कुण्डशलनी

कुण्डनलनी िद्धि, पृष्ठवंि के अन्त में मूलाधार चक्र के अन्दर नीचे को मुख कर साढ़े तीन बल नदये सनपथणी के रूप में प्रसुप्त पडी रहती है। यह कुण्डनलनी प्राण से सम्बि है और प्राण का मन से सम्बन्ध है। एक वेदान्ती भी कुण्डनलनी िद्धि को िाग्रत करके ही ज्ञान-ननष्ठा प्राप्त कर सकता है। चाहे रियोग हो, भद्धियोग हो अर्वा ज्ञानयोग हो, इस आद्य िद्धि को िाग्रत नकये नबना अनतचेतनावस्ा् या समानध सम्भव नहीं ंहै।

कुण्डनलनी िद्धि तभी िाग्रत हो सकती है, िब मन वास्तव में कामनाओं ंतरा् वासनाओं ंसे मुि हो िाता है। िद्धि-चालन या अनश्वनी मुिा, ताडन और प्रचारण- ये सब कुण्डनलनी को िाग्रत करने में सहायक होते हैं। महावेध कुण्डनलनी को और ऊपर ले िाने में सहायक होता है। िब कुण्डनलनी िद्धि िाग्रत हो िाती है तो मन प्राण और िीव के सार् सुषुम्ना में प्रवेि कर िाता है और सारा प्रत्यक्ष दिथन नचदाकाि में ही होता है। कुण्डनलनी के िाग्रत होने पर मन प्राण और अनग्न के सनहत मेरुरजुजु में द्धस्र्त सुषुम्ना नाडी अर्वा ब्रह्म-नाडी के द्वारा ऊपर को िाने लगता है। योगी भौनतक (स्रूल) चेतना से मुि हो िाता है। उसके बाह्य स्रूल अनुभव बन्द हो िाते हैं। कुण्डनलनी िब प्रर्म बार िाग्रत होती है तो योगी को छह प्रकार के अल्पकानलक अनुभव होते हैं अरा्थत् आनन्द, कम्पन, उद्भव (िरीर का पृथ्वी के ऊपर उठ िाना), घूणाथ (नदव्योन्माद में िरीर का झूमना), ननिा और मूच्छाथ। कुण्डनलनी को िाग्रत करके उसे कपाल में सहस्रार चक्र में ले िाना होता है।

िब कुण्डनलनी एक चक्र से दूसरे चक्र में िाती है तो मन की परतें एक के बाद एक खुलती िाती हैं। योगी प्रत्ेयेक नये चक्र पर पृर्क् प्रकार का आनन्द अनुभव करता है। उसे भाँनत-भाँनत के अनुभव और िद्धियाँ प्राप्त होते हैं तरा् पाँच तत्त्वों ंपर वश्यता प्राप्त होती है। वह संसार को सूक्ष्म रूप में देखता है तरा् सूक्ष्म िगत् के

अनेक प्रकार के प्रारूपों ंका पूणथ ज्ञान प्राप्त करता है। िब कुण्डनलनी सहस्रार चक्र में प्रवि‍े करती है तो योगी नचदाकािमें रहता है।

परर‍चे्छेद-४

मन और आहार

आहाशिुी सत्त्विुन्िः ।
सत्त्विुौ धुवा ृशतः ।
शतलाभे सवछग्रन्थीनाों शवप्रमोक्षिः ।।

- आहारिुद्धि होने पर अन्तःकरण की िुद्धि होती है*;* अन्तःकरण की िुद्धि होने पर ननश्चल स्मृनत होती है तरा स्मृनत की प्राद्धप्त होने पर समूपूणथ ग्रद्धन्यों ंकी ननवृनत्त हो िाती है। *(*छान्दोग्योपननषद् *:* ७-२६-२ *)*

मन भोजन से बना है

िो भोिन हम करते हैं, उससे मन बनता है। आहार का सूक्ष्मतम अंि हृदय में पहुँचता है और वहाँ से नहता-नाडी में प्रवि‍े करके वाक्-इद्धन्द्रय-समूह को बनाता है। इस प्रकार आहार से वनधथत मन भौनतक है और िैसा वैिेनषक मानते हैं, ननत्य नहीं ंहै।

उपननषद्-वेत्ता िास्त्रज्ञों ंका नवश्वास रा नक मन की बनावट आहार पर ननभथर रहती है। “खाया हुआ अन्न तीन प्रकार का हो िाता है। उसका िो अत्यन्त स्थूल भाग होता है वह मल हो िाता है, िो मध्यम भाग है वह मांस हो िाता है, और िो अत्यन्त सूक्ष्म भाग होता है वह मन हो िाता है” (छान्दोग्योपननषद् : ६-५-१) ।

"मरे् िाते हुए दही का िो सूक्ष्मतम भाग होता है वह ऊपर इकट्ठा होता है, वह नवनीत होता है। उसी प्रकार खाये हुए अन्न का िो सूक्ष्मतम अंि होता है, वह सम्यक् प्रकार से ऊपर आ िाता है, वह मन होता है" (छान्दोग्योपननषद् : ६-६-१,२) । हमें पता लगता है नक परवती भगवद्गीता-काल में भी साद्धत्त्वक, रािस और तामस — तीनों ंप्रकार के स्वभावों ंके कारण तीनों ंनभन्न-नभन्न प्रकार का भोिन ही समझा िाता रा (भगवद्गीता १७८ तरा १०) ।

मन की कोशट भोजन की कोशट पर शनभछर करती है

भिोन का मन के सार् सीधा तर्ा घननष्ठ सम्बन्ध है तर्ा मन के गठन में यह महत्त्वपूणथ भूनमका ननभाता है। साद्धत्त्वक आहार से मन िान्त होता है तर्ा रािसक भिोन से मन में उत्तेिना होती है। मांसाहारी िेर और दुवाथ चुगने वाली गाय के स्वभावों के भेद देद्धखए आप ननत्य स्पष्ट रूप से देखते हैं नक भिोन का मन पर कैसा महत्त्वपूणथ प्रभाव होता है। भारी, रािसी और अपाच्य भिोन करने पर मन का ननग्रह बडा कनठन हो िाता है। मन भागता, नवचरण करता तर्ा बन्दर की भाँनत सदा उछल-कूद करता रहता है। मनदरा मन के अन्दर अत्यनधक उत्तेिना उत्पन्न करती है।

ध्यान में भिोन की महत्त्वपूणथ भूनमका होती है। ध्यान के नलए भिोन हलका, साद्धत्वक और पुनष्टकारक होना चानहए। िरीर अन्नमय है। इसी अन्नमय कोि में भैरवी चक्र है। भैरवी चक्र माया का नाम है। दूध, फल आनद हलका साद्धत्त्वक भिोन मन को नवष्णु चक्र की ओर, और नफर वहाँ से बडी सुगमता से ननर्विकल्प समानध की ओर ले िाता है।

िब मन का स्वरूप हमारे भिोन के स्वरूप पर ननभथर करता है तो ध्यान-परायण िीवन-यापन करने वाले साधकों तर्ा संसार में रह कर आध्याद्धत्मक िीवन यापन में प्रयत्निील गृहस्र्ों के नहत में िुद्ध साद्धत्त्वक भिोन-िैली पर िोर देना समुन्नत नैनतकता के नलए स्वाभानवक ही है। इसीनलए श्रीय सनतुकुमार ने नारद का मल घुल िाने के बाद ही उनको मोक्ष मागथ बताया र्ा। अन्धकार से परे ले िाने वाले मागथ की खोि भिोन की िुद्धि में ही करनी चानहए; क्योंनक आहारिुद्धि से मन की िुद्धि स्वतः ही हो िाती है।

हाशनकारक भोजन

नभन्न-नभन्न भिोन मद्धस्तष्क के नाना नवभागों में नभन्न-नभन्न प्रभाव उत्पन्न करते हैं। मसालेदार पकवान, खट्टे पदार्थ, उडद, प्याि, लहसुन, चाय, िराब, मछली, मांस, राई, तेल इत्यानद कामवधथक हैं; अतः ये त्याज्य हैं। साधकों को ये पदार्थ प्रत्येक अवस्र्ा में त्यागने चानहए। निज्ञासु को मांस, मछली और मद्य का ननतान्त त्याग कर देना चानहए; क्योंनक ये पदार्थ मन को स्र्ूल बनाते हैं और उसमें उत्तेिना उत्पन्न करते हैं। भारी भिोन से तन्द्रा और आलस्य आता है। चाय छोड देनी चानहए; क्योंनक इससे वीयथ नष्ट होता है। चीनी सामान्य पररमाण में खानी चानहए। यनद नबलकुल छोड दी िाये तो अच्छा है।

साधना में सहायक भोजन

दूध, फल, बादाम, नमश्री, मक्खन, तािी िई, रात में नभगोई हुई नचनाई, रोटी आनद भिोन ध्यान करने में सहायक है। तेड एक प्रकार का कन्दमूल, िो ब्रह्मपुरी, बनहगुहा और नहमालय के अन्य भागों में बहुत नमलता है बडा साद्धत्वक भिोन है। इससे ध्यान में सहायता नमलती है मेरे नमत्र स्वामी पुरुषोत्तमानन्द िी ऋनषकेि से चौदह मील दूर प्रनसि वनसष्ठगुहा में रह कर कुछ नदनों तक वहाँ इस पर ही ननवाथह करते र्े। साधकों के नलए सोंठ का सेवन अच्छा होता है। इसका सेवन दूध के सार् नकया िा सकता है। इससे मन में तािगी रहती है और पाचन-नक्रया को सहायता नमलती है। योगी इसका सेवन प्रायः करते हैं। नत्रफला का िल भी योगी नपया करते हैं। इससे कोष्ठबद्धता और स्वप्नदोष दूर हो कर िरीर को िीतलता नमलती है। हरीतकी भी चबायी िा सकती है। इससे वीयथ की रक्षा और स्वप्न-दोष का ननग्रह होता है। उबाले या भूने हुए नबना नमक के आलू भी अच्छे होते हैं।

चेतावनी

आकद्धस्मक पररवतथन की अपेक्षा क्रनमक सुधार अच्छा होता है। नकसी बात में, नविेषकर भोिन में कोई पररवतथन एकाएक नहीं ंकरना चानहए। धीरे-धीरे पररवतथन करें। आपका िरीर पररवतथन को नबना नकसी रुकावट के अपना लेगा। "प्रकृनत में सहसा कोई पररवतथन नहीं ंहुआ करता।"

िो हठयोगी मन का संयम करना चाहता है, उसको नवलानसता और तीव्र तामनसक तप दोनों ंही अनतयों ं से बचना चानहए। अनधक उपवास करने से अत्यनधक दुबथलता बढ़ती है। आप कुछ भी साधना नहीं ंकर सकते। आप नवचार नहीं ंकर सकते। आप युद्धि नहीं ंसोच सकते। िो भी भोिन आपके अनुकूल हो, वही खायें। इसके नलए अनधक सोच-नवचार न करें। िो भी आहार सुगमता से प्राप्य और आपके िरीर के अनुकूल हो, वही हाननरनहत है।

भोजन कब छोड़ा जा सकता है ?

भोिन केवल िद्धि का समूह है िल और वायु से भी िद्धि नमलती है। नबना भोिन के कई नदनों ंतक िीनवत रहा िा सकता है; परन्तु वायु के नबना छोड़ी देर भी िीनवत नहीं ंरहा िा सकता। ऑक्सीिन इससे भी अनधक आवश्यक है। िरीर धारण करने के नलए िद्धि की आवश्यकता है। यनद इस िद्धि को आप नकसी और स्रोत से प्राप्त कर सकें, तो आप भोिन नबलकुल ही छोड सकते हैं। योगी लोग ब्रह्मरन्ध्र में से स्रनवत अमृत का पान करते हैं और इस प्रकार नबना भोिन के िरीर धारण करते हैं। ज्ञानी को अपनी िद्धि और दृढ इच्छािद्धि से वह िद्धि नमलती है और नबना भोिन के िरीर धारण कर सकता है। यनद आप नवश्व िद्धि अर्वा सूयथ मण्डल की िद्धि से बल ग्रहण करने की नक्रया िानते हैं तो आप इस िद्धि के आधार पर चाहे नितने काल तक नबना भोिन के िरीर धारण कर सकते हैं।

मधुकरी शभक्षा का रहस्य

मन भोिन के सूक्ष्म सार से बनता है। इसनलए निन मनुष्यों ंसे भोिन प्राप्त होता है, उनसे मन आसि हो िाता है। यनद आप कुछ महीनों ंतक अपने नकसी नमत्र के सार् रहें और उसी का भोिन करें तो उस अन्नदाता नमत्र में आपका मन आसि हो िायेगा। यही कारण है नक संन्यानसयों ंको तीन या पाँच घरों ंसे मधुकरी नभक्षा पर ननवाथह करने का ननयम है। वह आसद्धि से बचता है तर्ा एक गाँव से दूसरे गाँव में नफरता है। पररव्रािक- िीवन में उसे एक ग्राम में एक नदन से अनधक ठहरने का ननषेध है। िो परमहंस इस प्रकार की नभक्षा पर रहता है, उसका मन गंगािल के समान ननमथल हो िाता है और वह सब प्रकार की आसद्धियों ंसे मुि रहता है। आसद्धि बन्धन लाती है। आसद्धि मृत्यु है। आसद्धि सारी बुराइयों ंकी िड है।

पररच्छेद-५

अवस्था - त्रय

मन की तीन अवस्थाएँ होती है— जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्त ।

जाग्रत अवस्ा्

ीवि िब तक मन के नवकारों ंद्वारा नवनभन्न बाह्य पदार्ों से सम्बि रहता है तब तक वह िाग्रत कहलाता है। यह इन पदार्ों को समझता है तर्ा अपने को स्रूल देह से अनभन्न मानता है; िो उन बाह्य पदार्ों में से एक है। िाग्रत अवस्ा् में मन मद्धस्तष्क में ननवास - करता है।

स्वप्न- अवस्ा्

बि मन नहता नाडी में प्रविे करता है, िो नक हृदय में से ननकल कर इसके चारों ंओर बडी नझल्ली को घेरे हुए है और बाल के सहस्रांि के समान सूक्ष्म है और सफेद, काले, पीले और लाल रंगों ंके सूक्ष्म अंिि ंसे पूणथ है, उस समय िीव स्वप्नावस्ा् को भोगता है।

स्वप्न में इद्धन्द्रयाँ वैसे ही अलग फेंक दी िाती हैं िैसे आप सोने से पूवथ अपने भारी वस्त्रों ंको उतार फेंकते हैं। स्वप्नावस्ा् में इद्धन्द्रयाँ िान्त होती हैं और मन में लीन हो िाती हैं। स्वप्न में केवल मन ही नक्रया करता है, स्वतन्त्र और अबाध गनत से कायथ करता है। स्वप्न में पृथ्वी, समिु, घोडा और हार्ी कुछ भी नहीं ंरहता; परन्तुु मन अपने ही रीर में से िाग्रत अवस्ा् में प्राप्त हुई सामग्री से सब पदार्थ बना लेता है। मन स्वयं ही मधु मनक्षका, पुष्प, पवथत, हार्ी, घोडा, नदी आनद के रूप में बन िाता है। यही कताथ है - और यही पदार्थ भी बन िाता है। िष्टा और दृश्य दोनों ंएक होते हैं।

िाग्रत अवस्ा् में प्राप्त हुए आकार ही स्वप्नावस्ा् के पदार्थ बन िाते हैं और केवल स्वप्न के िष्टा के नलए उनका बाहरी तत्त्व रहता है। िब बाह्य पदार्ों के संस्कारों ंसे नवकार होता है, तो िीव स्वप्न देखता है। स्वप्न-दिथन एक आन्तररक अंग से होता है। निसे 'मनस्' कहते हैं। इसीनलए इसे माननसक दिथन कहते हैं।

प्रत्येक मनुष् का अपना न्यारा ही माननसक संसार और न्यारे ही स्वप्न के पदार्थ होते हैं। युवती स्त्री के स्वप्न के पदार्थ उसका पनत और नवाित िनिु होते हैं। उसके मन में से ही दो दृढ मूनतथयाँ बनी रहती है। ननरन्तर नवचार करते रहने से इन मूनतथयों ंकी प्रबलता बढ़ िाती है। िाक्टर के स्वप्न के पदार्थ उसके रोगी और बैरररस्टर (नवनधवेत्ता) के स्वप्न के पदार्थ उसके मुवद्धक्कल होते हैं।

मनुष्ों ंमें स्वभाव का भेद हुआ करता है। कुछ को स्वप्न बहुत कम आते हैं। आत्म ज्ञानी को कभी स्वप्न नहीं ंहोता।

जाग्रत तर्ा स्वप्न अवस्ाओ ोंमें भेद

िाग्रत और स्वप्न अवस्ा् का अन्तर यह है नक िाग्रत अवस्ा् में मन बाह्य पदार्ों के अंगों ंका आश्रय लेता है और स्वप्नावस्ा् में यह अपने ही अंक (रूपरेखा) बनाता है और उनको भोगता है; परन्तुु ननश्चय ही इसके नलए भी िाग्रत काल से सामग्री लेता है।

िाग्रत अवस्ा् में मन से स्वतन्त्र रूप से पदार्ों की द्धस्ननत रहती है। इसीनलए सो कर उठते ही आप प्रनतनदन वही पदार्थ देखते हैं, परन्तुु स्वप्न में पदार्ों की द्धस्ननत उतने ही काल तक रहती है िब तक मन वहाँ रहता है, िब तक स्वप्न नटका रहता है; क्ोंनक स्वप्न के पदार्थ मन की कल्पना से बने हैं। मन अपने ही िरीर में से िाग्रत अवस्ा् में प्राप्त हुई सामग्री से सब पदार्थ बना लेता है। िब मन िाग्रत अवस्ा् में आता है तो स्वप्न के सारे पदार्थ तुम हो िाते हैं।

जाग्रत अवस्ा एक दीर्छ स्वप्न ही है

आप स्वप्न देखते हैं नक आप रािा है, आप सारे रािोनचत ऐश्वयों का उपभोग करते हैं। ज्यों ंही आप ागिते हैं, सब कुछ लुप्त हो िाता है। परनु्तु आप इस हानन से दुि:ख नहीं ंमानते; क्ोंनक आप िानते हैं नक स्वप्न के सारे पदार्थ नमथ्या होते हैं। िाग्रत अवस्ा में भी यनद आपकी इसी भाव में ननष्ठा हो िाये नक संसार एक नमथ्या भ्रम है तो आपको दुि:ख का अनुभव नहीं ंहोगा। िब आप परम तत्त्व (ब्रह्म) को िान लेंगे तो िाग्रत- -चेतना भी स्वप्न के समान नमथ्या प्रतीत होने लगेगी। िाग्रत अवस्ा दीघथ स्वप्न ही है। िाग्रत अवस्ा की चेतना स्वप्न या सुषुद्धप्त में नहीं ं रहती; इसनलए यह भ्रममूलक है। तत्त्व पदार्थ सारी अवस्ाओं ंमें वतथमान रहता है। मेरे बचे्चे िागो और ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त करो!

स्वप्न- जाग्रत

मनोराज्य (मनसूबे गढ़ना), स्वप्न के पदार्ों और घटनाओं ंको याद करना, सुदूर िाग्रत अवस्ा की सूमृनत – ये सब स्वप्न - िाग्रत (अर्ाथत् िाग्रत अवस्ा में स्वप्न देखने के समान) हैं।

सुषुप्तअवस्ा

िब मन पुरीतत्-नाडी में प्रविे करता है तो सुषुद्धप्त-अवस्ा होती है। दृढ सुषुद्धप्त में अनुभवमूलक चेतना रुक िाती है। इस अवस्ा में मन की नक्रया भी नहीं ंरहती और राग-दे्वेष भी नहीं ंरहते। मन अपने अनधष्ठान में लय हो िाता है। यह मनोलय कहलाता है। इद्धन्द्रयों ंकी भी नक्रया नहीं ंरहती।

यह दृढ सुषुद्धप्त की अवस्ा अनतिय अभाव की दिा नहीं ंहै; क्ोंनक यनद ऐसा मान नलया िाये तो िागने पर सुखपूणथ ननिा की सूमृनत कैसे हो सकती है? आत्मा की सत्ता रहती है और उसमें कोई अनुभव नहीं ंरहता। चेतना अनवरल (धारावाही) रहती है। िागने पर आप िानते हैं नक आपका अद्धस्तत्व सुषुद्धप्त में भी बना रहता है। आप समझते हैं नक आप सवथदा नवद्यमान रहते हैं। वेदान्ती अपना िास्त्र-ननमाथण इस सुषुद्धप्त अवस्ा के ही चारों ं ओर करते हैं। यह अवस्ा उनकी अदै्वैत दिा का संकेत देती है। वेदान्त को भली प्रकार समझ लेने के वासे्ते ाग्रित, स्वप्न और सुषुद्धप्त इन तीनों ंअवस्ाओं ंको भली प्रकार िानना चानहए।

बृहदारण्यक उपननषद् (२-१-१६) में अिाततुरु ने गाग्यथ को समझाते हुए कहा है- "वह िो नवज्ञानमय पुरुष है, िब सोया हुआ र्ा, तब कहीं ंर्ा? यह िो नवज्ञानमय पुरुष है, िब यह सोया हुआ र्ा, उस समय यह नवज्ञान के द्वारा इन इद्धन्द्रयों ंकी ज्ञानि–द्धि को ग्रहण कर यह िो हृदय के भीतर आकाि है, उसमें ियन करता है। निस समय यह ज्ञानि–द्धियों ंको ग्रहण कर लेता है, उस समय इस पुरुष का 'स्वनपनत' नाम होता है। उस समय घ्राणेद्धन्द्रय लीन रहती है, वाणी लीन रहती है, चकु्षु लीन रहता है, श्रोत्र लीन रहता है और मन भी लीन रहता है।"

िब स्रूल िरीर, सूक्ष्म िरीर और तद्धव नवकारों ंके पृर्क् हो िाने पर यह मन आत्मा में लीन हो कर सुषुप्तावस्ा में रहता है, भासता है तो इसको सोया हुआ कहते हैं। "निस अवस्ा में यह पुरुष 'सोता है' ऐसा कहा िाता है; उस समय सौम्य ! यह सत् से सम्पन्न हो िाता है—यह अपने स्वरूप को प्राप्त हो िाता है। इसी से इसे 'स्वनपनत' ऐसा कहते हैं; क्ोंनक उस समय यह स्व-अपने को ही प्राप्त हो िाता है" (छान्दोग्योपननषद् : ६-८-१) ।

किराचायथ कहते हैं नक मन की नक्रया से उत्पन्न द्वैत-भाव केवल ाग्रत और स्वप्न अवस्ा में ही रहते हैं; सुषुद्धप्त-काल में नहीं ंरहते। ाग्रत और स्वप्न दोनों ंअवस्ाओं ंमें नवचार, नाम और रूप सार्-ही-सार् आते हैं; अतिः संसार भी प्रकट होता है। स्वप्न-रनहत सुषुद्धप्त में कुछ भी भाव नहीं ंरहते और इसनलए संसार भी नहीं ंरहता। मन ही भेद, पार्थक् और द्वैत-भाव उत्पन्न नकया करता है। यनद सत्त्व की वृद्धि करके और अहंग्रह - उपासना द्वारा इस िुि मन का नाि कर नदया ाये तो आपको सवाथत्म भाव का अनुभव होने लगेगा। इसके नलए साधक को दृढ़ और सतत प्रयत्न करना चानहए।

तीनो ोंअवस्ाओ ोंमेंचेतना की िेशणयााँ

ननिा में आपके मनोमय या प्राणमय िरीर में सदा कुछ-न-कुछ नक्रया चलती रहती है। वही नक्रया ाग्रत अवस्ा में भी प्रकट हो ाती है। उदाहरणार्थ कोई-कोई अपने को पूणथ बनाने को बहुत उतुसुक रहते हैं और इसके नलए नदन में बडा प्रयत्न करते हैं। वे रात को सो ाते हैं और ि ब अगले नदन ागते हैं तो पूवथ-नदन के प्रयत्नों ंके लाभ का उन्ें कोई नचह्न नहीं ंनमलता। उन्ें उतना ही प्रयत्न नफर प्रारम्भ से करना पडता है। इसका तात्पयथ यह हुआ नक ो 1-कुछ प्रयत्न और सफलता प्राप्त हुई री, वह ीव की ाग्रत अवस्ा से ही सम्बन्ध रखती री, सूक्ष्म तरा प्रसुप्त अवयवों ंतक तो उसका प्रभाव पहुँचा ही नहीं ंरा। ननिा में वे इन सूक्ष्म अवयवों ंके वि में पड गये और

कठोर श्रम से ो कुछ सफलता ाग्रत अवस्ा में प्राप्त की री, वह सब इन अज्ञात सूक्ष्म अवयवों ंने हडप ली। सचेत रहें। नदन में और रानत्र में भी सदा चेत रखें। पहले चेतना प्राप्त करनी होगी। उसके बाद वश्यता प्राप्त होगी। आप लोगों ंमें से निनको स्वप्न की बात याद रहती है, उन्ें ऐसा अनुभव भी हुआ होगा नक कभी-कभी स्वप्न देखते हुए भी आपको यही मालूम होता है नक यह स्वप्न ही है। आप ानते हैं नक यह अनुभव स्ूल गत् से सम्बन्ध नहीं ंरखता। यनद एक बार आपको मालूम हो ाये तो आप वहाँ भौनतक गत् का सा व्यवहार कर सकते हैं। स्वप्नावस्ा में भी आप अपनी चैतन्य इच्छाि-द्धि का प्रयोग करके अपने स्वप्नानुभव की गनत बदल सकते हैं और ैसेि-से आप नविेष रूप से चैतन्य होते ायेंगे, आप अपने ऊपर उतना ही संयम रानत्र में भी रख सकेंगे नितना नदन में, ायद रानत्र में ज्यादा संयम रख सकेंगे, क्ोंनंक रानत्र में आप िरीर के बन्धन से मुि रहते हैं। िरीर-सम्बन्धी चेतन नक्रयाओं ंका संयम करना अनधक कनठन होता है; क्ोंनंक ये नक्रयाएँ मन और प्राण की नक्रयाओं ंसे अनधक दृढ़ और अपररवतथनील होती हैं। रानत्र में आपके प्राण-सम्बन्धी और माननसक नवभाग नविेष नक्रयिील होते हैं। नदन में उन पर नविेष प्रनतबन्ध लगा होता है; क्ोंनंक स्ूल िरीर की चेतना माननसक और प्राणाम चेतना का स्ान स्वतिः ले लेती है । सुषुद्धप्त में यह प्रनतबन्ध हट ाता है और माननसक तरा प्राणमय नक्रयाएँ नविेष रूप से प्रकट हो ाती हैं।

सुषुन्प्त और अिैत-शनष्ठा में प्रभेद

"सुषुनम में मन सूक्ष्म दिा में रहता है। वृनत्तयों ंकी भी सूक्ष्म दिा हो ाती है। परनुतु अद्वैत-ननष्ठा में मन होता ही नहीं,ं संसार नहीं ंरहता तरा संसार ब्रह्म में लीन प्रपंचोपिमम्) रहता है" (माणूडूक्ोपननषद् ७) ।

तीनो ोंअवस्ाओ ोंमें परमात्मा के शवशवध रूप

समस्त प्राननणयों ंके अन्दर रहने वाले परमात्मा के चार रूप हैं ो नवश्व, तैिस्, प्राज्ञ और तुरीय बहलाते हैं। नवश्व का ननवास दनक्षण नेत्र, तैिसू का मन ('मनस्यन्तसुतुतैिसिः 'माणूडूक्ोपननषद् पर गौपाद काररका) और प्राज्ञ

का नवकिा है। इनके भोग्य-पदार्थ तीन प्रकार के स्रूल, सूक्ष्म और आनन्द तर्ा इनकी तृद्धप्त भी तीन प्रकार की हैं- **"भोगान्धिा तृन्प्तन्धिा ।"**

"जागररतस्र्ानो बशहष्प्रज्ञिः सप्ताोंग एकोनशवोंशितमुखिः स्रूलभुग्वैश्वानरिः प्रर्मिः पादिः । " ओंकार का प्रर्म चरण वैश्वानर है-निसका स्र्ान िाग्रत अवस्र्ा है, निसकी प्रिा वसुतुननह है, निसके सात अंग और उन्नीस मुख हैं और िो स्रूल पदार्ों को भोगता है माणुडुक्ोपननषद् ३) वसुतुननष्ठ मन िाग्रत अवस्र्ा में काम करता है।

सात अंग ये हैं—द्युलोक निर है, सूयथ नेत्र है, वायु श्वास है, आकाि कमर है, िल िंघा है, अनन मुख है और पृथ्वी उसके चरण हैं।

उन्नीस मुख ये हैं-पाँच ज्ञानेद्धन्द्रयाँ, पाँच कमेद्धन्द्रयाँ, पाँच प्राण तर्ा अन्तिःकरण चतुष्टय अर्ाथत् मन, नचत्त, बुद्धि और अहंकार।

"स्वप्नस्र्ानोऽन्तिःप्रज्ञिः सप्तांग एकोननवंनितमुखिः प्रनवनविमुक् तैिसो नद्वतीयिः पादिः । " ओंकार का दूसरा चरण तैि है, निसका स्र्ान स्वप्नावस्र्ा है, निसकी प्रज्ञा आत्मननष्ठ है, निसके सात अंग हैं, उन्नीस मुख हैं और िो सूक्ष्म पदार्ों को भोगता है (माणूडूक्ोपननषद् ४) स्वप्नावस्र्ा से सम्बि चैतन्य तैिस कहलाता है। यह सूक्ष्म िगत् का भोिा है। आत्मननष्ठ मन और नमथ्या अहंकार स्वप्न में काम करते हैं।

"यत्र सुप्तो न कोंचन कामों कामयते न कोंचन स्वप्नों पश्यशत ततुसुषुप्तम् । सुषुप्तस्र्ान एकीभूतिः प्रज्ञानर्न एवानन्दमयो ह्यानन्दभुक्चेतोमुखिः प्राज्ञिृतीयिः पादिः।" ओंकार का तीसरा पद प्राज्ञ है निसका स्र्ान सुषुद्धप्त है, निसमें सारे भेद एकरूप हो िाते हैं, िो प्रज्ञानघन, आनन्दमय, आनन्द का भोगने वाला और चेतना का द्वार है। यह सुषुद्धप्त अवस्र्ा है निसमें सोने वाले को नकसी वसुतु की इच्छा नहीं ंरहती और न कोई स्वप्न देखता है (माणूडूक्ोपननषद् : ५)। अपनी वासनाओं ंसनहत मन सुषुद्धप्त-अवस्र्ा में हृदयावद्धस्र्त मुख्य प्राण में नवश्राम लेता है। सारी वृनत्तयों ंकी सूक्ष्मावस्र्ा हो िाती है।

परररचे्छेद- ६

गुण- त्रय

गुण तर्ा वृशत्तयााँ

सत्त्वगुण, रिोगुण और तमोगुण—ये मन के तीन गुण हैं। इन तीनों ंगुणों ंके अनुरूप ही मन की तीन वृनत्तयाँ होती हैं—सत्त्वगुण से उत्पन होने वाली िान्त-वृनत्त, रिोगुण से उत्पन्न होने वाली घोर-वृनत्त और तमोगुण से

उत्पन्न होने वाली मूढ-वृनत्त । साम्यावस्ा िान्त-वृनत्त है, क्रोध घोर-वृनत्त है तरा आलस्य, प्रमाद और तन्द्रा मूढ़-वृनत्तयाँ हैं।

सत्त्वगुण के लक्षण

सत्त्वगुण पनवत्रता है, प्रकाि है। सत्त्वगुण मोक्ष-प्राद्धप्त के नलए अनुकूल िद्धि है। दैवी सम्पत् अराथत् अभय, िौच, नचत्त-िुद्धि आनद गुण आपको मोक्ष नदला सकते हैं। सत्त्वगुण का फल ब्रह्म-नवचार अराथत् सत्य की खोि, सत् और असत् का नववेक होता है।

साद्धत्त्वक मन सदा द्धस्र रहता है। उसको अन्दर से ही आनन्द नमलता है। वह अननननश्चत काल तक एक ही स्ान पर रह सकता है, व्यद्धियों से दीघथ काल तक नमत्रता रख सकता है, अनेक नदनों तक गीता और योगवानसष्ठ पढ़ सकता है तरा नबना निकायत नकये लगातार वषों तक दाल-रोटी खा कर रह सकता है।

साद्धत्त्वक क्षणों में िब मन में िुि साद्धत्त्वकता की प्रधानता होती है तो मन मुकुर के ननमथल होने के कारण आप नदव्यात्मा से सम्पकथ में होते हैं। आपको प्ेरेरणा नमलती है। आप सुन्दर कनवताएँ भी करते हैं। उन रचनाओं को सँभाल कर रखें। उन्ें अपनी नोट- बुक में नलख लें।

सत्त्वापनत्त मन की वह दिा होती है निसमें मन सत्त्वगुण से पूणथ हो िाता है। इसमें भाव-संिुद्धि और सत्त्वसंिुद्धि हो िाती है। यह ज्ञान की चतुर्थ भूनमका है।

रजोगुण के लक्षण

रिोगुण प्रनतकूल िद्धि है िो आपको संसार में नीचे घसीट लेती है। आसुरी सम्पत् अराथत् दम्भ, दपथ, क्रोध आनद दुगुथण आपको नरक में घसीट सकते हैं। साद्धत्त्वक मन मनुष् को िान्त और प्रवृनत्त रनहत बना देता है। रािनसक मन से मनुष् अिान्त रहता है। यह उसे ननश्चल न रहने दे कर काम करने के नलए बाध्य करता है।

रािनसक मन सदा नये भोग और नवनवधता चाहता है। अभी यह नकन्ीं मनुष्ों, पदार्ों और स्ानों को पसन्द करता है और रोडे काल पीछे वह उनसे ऊब िाता है और नये-नये पुरुषों का संग, खाने को नये-नये िाक, पढ़ने को नयी-नयी पुस्तकें और देखने को नये-नये स्ान चाहता है।

रािनसक मन सदा संगनत और बातचीत चाहता है। ये दो दोष हैं िो मन को अपने लक्ष्य से बहुत दूर हटाते हैं। लोगों की संगनत से बच कर अकेले रहना चानहए और मौन व्रत का पालन करना चानहए। मौन रहने से आपको िाद्धन्त नमलेगी। बहुत-सा दु:ख कुसंगनत से नमलता है। अपने सारी बनाने में सावधान रहें। आपको अच्छे और सच्चे नमत्र बहुत कम नमलेंगे। नकसी नमत्र को दीघथ काल तक परीक्षा नकये नबना अपना नवश्वासपात्र न बनायें। ब्रह्म में कोई संगनत और कोई वाताथ नहीं है। वह असंग और अिब्द है।

रािनसक मन में दूसरों के दोष देखने की प्रवृनत्त होती है। यह उनके नकये हुए बुरे कमों और अपराधों को भी स्मरण रखता है और उनके अच्छे कमों को सहि में भूल िाता है। यह दोनों प्रवृनत्तयाँ द्वेष को बढ़ाती हैं और मन में ननरन्तर उद्वेग उत्पन्न करती है।

सत्त्वगुण से हीन मन ऐसा साधुवृत्त नहीं होता नक वह दूसरों की प्रसन्नता को अपना आनन्द माने; इसनलए सदा घूमता रहता है और क्ोंनक इस मन में दूसरों के सद्गुणों से प्रसन्न होने का सौिन्य नहीं होता इसनलए

आन्तररक सन्तोष नहीं ंहोता और क्ोंनंक यह दूसरों ंके दुिःखों ंको अपना दुिःख नहीं ंमानता; इसनलए ऐसे मन में दया, संवेदना और सहानुभूनत नहीं ंहोती।

रािनसक मन वस्तुओं ंमें भेद करके भ्रम-कपट द्वारा नानात्व नदखाता है। सूयथ एक है। चन्द्रमा एक है। आकाि एक है। भाषा के पीछे नवचार एक है। सत्यता का भाव एक है। कुछ अन्तबाथह्य नहीं ंहै। पनत और पत्नी हृदय में एक है। सच्चे नमत्र हृदय में एक होते हैं। िड पदार्थ एक है। िक्ति एक है। साक्तत्त्वक मन एक है। यह नमलाता है। नवश्व - महत् एक है। कमथ एक है। धमथ एक है। सत्य एक है। ब्रह्म एक है – "एकमेवानद्वतीयं ब्रह्म ।"

अनत-तीव्र रािगुण साक्तत्त्वकता में बदल िाता है। िाकू रत्नाकर महनषथ वाल्मीनक बन गया। िगाई और मधाई िो अत्यनधक रािनसक रे् और श्री गौरांग महाप्रभु पर पत्थर फेंका करते रे्, वे ही उनके सवथप्रर्म निष् बन गये।

सत्त्वगुण का महत्त्व

सच्ची माननसक िाक्तन्त बाहर से नहीं ंआती। िब मन का संयम हो िाता है और इसके नवचारों ंका ननग्रह नकया िाता है, तब यह मन में ही उत्पन्न होती है। अपनी इच्छाओं ंऔर कामनाओं ंको रोकने के नलए आपको भारी प्रयत्न करना चानहए। तभी आपकी कायथ की प्रवृनत्त दनमत होगी, आपके नवचार िान्त होंगे तर्ा आपको िाक्तन्त नमलेगी। इसनलए िप, नवचार, ध्यान, सत्संग, लघु साक्तत्त्वक आहार, तप और स्वाध्याय के द्वारा सत्त्वगुण की वृक्ति करें।

साधारण संसारी मन वाला मनुष् आत्मा की आन्तररक पुकार को कदानचत ही सुन सके। उसको आत्म-नवचार-सम्बन्धी िुि नवचार भी प्राप्त नहीं ंहो सकते। प्रत्येक साक्तत्त्वक नवचार साक्तत्त्वक बुक्ति से उत्पन्न होता है संसारी िनों ंके सारे नवचार मन में ही उपिते हैं। िो ननष्काम कमथयोग का अभ्यास करता है और निसका मन िुि होता है, उसे ही ईश्वर-सम्बन्धी नवचार और ध्यान प्राप्त होने लगते हैं। साधारणतिः मन अनेक प्रकार के नवलक्षण नवचार पैदा कर देता है। यह सबको भ्रम में िाल देता है। यह नवचार करने का बहाना भी करता है; परन्तु िब नक्रयात्मक अभ्यास की बात आती है तो यह कुछ नहीं ंकरता। यनद आपमें धारणा और ध्यान के अभ्यास का दृढ़ ननश्चय हो, इसको क्रूरता से कई महीने तक नक्रयात्मक अभ्यास में िाल दें और यनद ईश्वर दिथन की इच्छा तीव्र हो, तभी आप समनझए नक ये सब प्रकार के नवचार आपकी साक्तत्त्वक बुक्ति से ही प्रकट हुए हैं।

सारी साधनाओं ंका ध्येय सत्त्वगुण की वृक्ति और िुि अप्रनतरोध्य इच्छा–िक्ति प्राप्त करना होता है। इसी इच्छा िक्ति से अनवद्या की ननवृनत्त और परमानन्द की प्राक्तप्त होती है। ईश्वर प्राक्तप्त का मागथ सत्वगुण की वृक्ति और दृढ़ तर्ा िुि इच्छा–िक्ति के द्वारा बहुत सुगम हो िाता है।

संसार में भी कुछ र्ोडे-से साक्तत्त्वक गुणों ंवाले पुरुष होते हैं, निनमें सन्तोष, उदारता, क्षमा आनद सद्गुण होते हैं;परन्तु आध्याक्तत्मक साधक तो सारे साक्तत्त्वक सद्गुणों ंको प्राप्त करने के नलए मन को समग्र रूप से उन्नत करने काप्रयत्न करता है।

परररचे्छेद-७

मानशसक अवस्र्ाएँ

अकेले कमरे में मौन बैठ ि◌ायें और मन में घटने वाली नवनवध घटनाओं,◌ं माननसक अवस्र्ाओं,◌ं मनोदिाओं,◌ं प्रणोदों,◌ं आवेगों,◌ं तरंगों ◌ंतर्ा कल्पनाओं ◌ंका ननरीक्षण करते रहें। आन्तररक मनोगत् की सूक्ष्म द्धस्र्नतयों ◌ंका ननरीक्षण बडा ही नचत्ताकषथक होता है।

सहज प्रवृशत्तयाँ

मनुष्ों ◌ंमें और पिुओं ◌ंमें भी दो प्रबल सहि प्रवृनत्तयाँ हुआ करती हैं। वे हैं— आत्म-पररररक्षण की सहि प्रवृनत्त और प्रिनन की सहि प्रवृनत्त । कुषुधा आत्म-परररक्षण की सहि प्रवृनत्त की अनभव्यद्धि है। कामवासना (मैर्ुन) प्रिनन की सहि प्रवृनत्त की अनभव्यद्धि है। सहि प्रवृनत्त कमथ के नलए अनैद्धच्छक प्रेरणा को कहते हैं।

अहंकार-यिु ि◌ीव अनधकार, नाम और यि चाहता है। यह चाह आत्म-नववधथन के नलए होती है। स्वार्थ साधन (ि◌ोषण) लोभ है। यह स्वार्थपूणथ उद्देश्य के नलए उपयोग करना है। ननरंकुिता अहंकारपूवथक ि◌ासन करना कहलाता है। ि◌ीव दूसरों ◌ंपर अनधकार प्रयोग करना चाहता है। यह ि◌ीव-भावना कहलाती है। उद्योग-धन्धा, व्यवसाय, वानणज्य आनद का मूल कारण लोभ और आत्म-संरक्षण होता है। यनद आप ननरन्तर ब्रह्म-भावना रखना चाहते हैं तो आपको ि◌ोषण और ननरंकुिता छोड देनी चानहए।

एक तृतीय सहि प्रवृनत्त भी होती है— यूर् - वृनत्त । द्धस्त्रयाँ पुरुषों ◌ंके संग रह कर प्रसन्न रहती हैं। पुरुष द्धस्त्रयों ◌ंके संग रह कर हनषथत होते हैं। इसका मूल कारण प्रिनन की प्रवृनत्त है। एक और भी कारण है। बलवान् पुरुष के संग रह कर दुबथल मनुष् भी बल प्राप्त कर लेता है। नकन्तु ि◌ो मनुष् ईश्वर को प्राप्त करना चाहता है, उसे संगनत से, नविेषकर द्धस्त्रयों ◌ंऔर संसारी मनुष्ों ◌ंके संग से बचना चानहए। उसे अकेला रहना चानहए। इससे वह बहुत बलवान् और दृढ़ हो ि◌ायेगा। उसका व्यद्धित्व बहुत ि◌द्धििाली हो ि◌ायेगा। प्रारम्भ में तो अकेले रहने में कनठनाई प्रतीत होती है, भय मालूम होता है। यनद आप अमृतत्व प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको एक-एक करके सारी कनठनाइयों ◌ंपर नविय पानी होगी। इसका पुरस्कार बहुत बडा है। 'ब्रह्मनवत् परमाप्नोनत' अर्ाथत् ब्रह्म को ि◌ानने वाला परम पद प्राप्त करता है। 'अमृतमश्नुते' – वह अमृतत्व — अमरता रूपी अमृत पीता है।

प्रणोद

प्रणोद आकद्धस्मक प्रेरक ि◌द्धि होते हैं। प्रणोद तीन प्रकार के होते हैं अर्ाथत् नवचार-प्रणोद, वाणी-प्रणोद और कमथ-प्रणोद। मौन से वाणी-प्रणोद रुकता है और ध्यान से नमथ्या नवचार और असत्कमथ के प्रणोद रुकते हैं।

दो महत्त्वपूणथ प्रणोद होते हैं। वे हैं काम-प्रणोद और वाणी प्रणोद। प्रणोद और कल्पना में घननष्ठ सम्बन्ध है। कल्पना प्रणोद उत्पन्न करती है। प्रणोद को नववेक, इच्छा–ह्धि तऱ् परमात्मा के ध्यान द्वारा रोकना चानहए।

आवेग

नवचार और इच्छा के नमश्रण से आवेग बनता है। प्रत्येक नवचार आवेग से प्रभाररत होता है। आवेग वे इच्छाएँ हैं निनमें नवचार का अंप्रनवष्ट रहता है। दूसरे िब्दों ंमें नवचार और इच्छा नमल कर आवेग कहलाते हैं। आवेगों ंके स्पन्दन से िि मानननसक पदार्थ में उद्वेग होता है और मनुष् के सभी नवचार नवकुषि तऱ् नवकृत हो िाते हैं।

एक आवेग इच्छा होती है और एक आवेग भावना होती है। यनद इच्छा-तत्त्व अनधक हो तो आवेग-इच्छा कहलाती है और यनद सुख-तत्त्व अनधक हो तो आवेग भावना कहलाती है।

राग और द्वेष मन के दो प्रधान आवेग हैं। अन्य सभी आवेग इन दोनों ंके अन्तगथत नवभि नकये िा सकते हैं। आश्चयथ एक नमनश्रत आवेग है निसमें श्लाघा और भय दोनों ंनमले होते हैं। श्रिा भी नमनश्रत आवेग है। इसमें नवस्मय और सम्मान नमले होते हैं। अमषथ भी नमनश्रत आवेग है निसमें क्रोध और घृणा नमले होते हैं। प्रबल ितुरु के नीचे स्तर पर ढ्कंखच िाते ही घृणा रखने वाले असमर्थ मनुष् का क्रोध नष्ट हो िाता है।

आनन्द मन में एक प्रकार का आवेग है। आनन्द में मन फैलता है। मन में िीतलता रहती है। आनन्द के समय मन में क्ा होता है, इसे पाश्चात्य मनोनवज्ञानवेत्ता ठीक-ठीक नहीं ंसमझ पाये हैं। साधारण मनुष् भी इसको नहीं ंसमझ सकते। इस मन में घटने वाली घटना को योगी या ज्ञानी ही िानता है। दिुःख में मन नसकुड िाता है और मन में अत्यन्त उष्णता पैदा हो िाती है।

मनुष् में बहुत सी भौनतक इच्छाएँ और आवेग पिु–गत् की इच्छाओं ंके सदृि होते हैं। क्रोध और मैरुन की प्रवृनत्त पािनवक वृनत्तयाँ हैं। असंसृकृत मनुष्ों ंमें ये इच्छाएँ और आवेग िो अपरा प्रकृनत में ननननहत होते हैं, परा प्रकृनत को दबा कर प्रबल हो िाते हैं।

मन में आवेगों ंका आना दुबथलता का पररचायक है। बुद्धि और इच्छा–ह्धि के द्वारा इनका संयम करना चानहए।

आवेगो ोंऔर प्रणोदो ोंके शनयन्त्रण की शवशध

बि कभी आवेग और प्रणोद आपको अनधक कष्ट दें, तो उनसे उदासीन हो िाया करें तऱ् अपने आपसे कहें- "मैं कौन हूँ? मैं मन नहीं ंहूँ, मैं सवथव्यापी आत्मा हूँ, िि सद्धच्चदानन्द हूँ। मुझ पर आवेगों ंका क्ा प्रभाव हो सकता है? मैं तो ननननलथप्त हूँ। मैं इन आवेगों ंका साक्षी हूँ। मुझे कोई भी वसुतु आन्दोनलत नहीं ंकर सकती।" नवचारों ंके इन संकेतों ंको दोहराने से आवेग अपने आप ही नष्ट हो िायेंगे। आवेगों ंको भगाने का यह ज्ञान-मागथ योग-मागथ के बताये हुए मन से िबरदस्ती करने (**योगशश्चत्तवृशत्तशनरोधिः**) से सुगमतर है।

भावनाएँ

धानमथक भावना, नैनतक भावना और सौन्दयथ भावना—ये तीनों ंमन की मुख्य भावनाएँ हैं। ये संवेदनाएँ तऱ् भावनाएँ भ्रामक हैं। ये आत्मा में नहीं ंहोती हैं। ये मन के उत्पन्न नकये हुए भ्रम मात्र हैं।

भाव

भाव एक माननसक अवस्र्ा है। अंगरेिी के 'मिू' (Mood) िब्द का सच्चा अर्थ 'भाव' से भी पूरी तरह प्रकट नहीं ंहोता। हम कहा करते हैं "नम. नायिु या नम. एनकन्सन भावयिु सज्जन है।" इसका अर्थ है नक वह िीघ्र ही भाव का दास बन िाता है। हम यह भी कहा करते हैं: "अमुक सज्जन अचेछे या प्रसन्न भाव में है। अब मैं र्ोडी-सी बातचीत करने के नलए उसके ननकट िा सकता हूँ अर्वा वह बडी कुरुि दिा में है। इस समय मुझे उससे नहीं ंनमलना चानहए।"

अँगरेि अपने वाताथलाप में 'मिू' (Mood) िब्द को नवसूतृत अर्ों में भी प्रयोग करते हैं। वे कहते हैं- "वह बातचीत करने के भाव में है।" "वह मौन भाव में है।" "वह घृणा के भाव में है।" "वह पे्रेम के भाव में है।" "वह स्वार्थ के भाव में है।" "वह ईष्र्थयषा के भाव में है।" "वह पार्थक् के भाव में है।" "वह एकत्व के भाव में है।" वेदान्त की पररभाषा में ये सब वृनत्तयाँ ही हैं। 'भावना-नवज्ञान' (Sciencs of Emotions) प्रनसि लेखक िाक्टर भगवानदास इनको भावनाओं ंमें ही मानते हैं।

दो प्रकार के भाव तर्ा उनके प्रभाव

वेदान्त में केवल दो ही प्रकार के भाव हुआ करते हैं-हषथ और िोक मन में हषथ और िोक से दो प्रकार के भाव उठा करते हैं। अभी हषथ है। पाँच नमनट पीछे उदासी होती है। ये प्रवाह बारी-बारी से आते रहते हैं। ये षनमथयों ं में से हैं। ये दो लहरें हैं िो मनु सागर को कुषिु करती हैं।

उदास (ननरानन्द) भावयिु पुरुष दूसरे मनुष्ों ंसे तर्ा सूल िगत् के आकाि भण्डार से अपनी ओर उदास पदार्थ और ननरानन्द नवचार आकृष्ट नकया करते हैं। आिा, नवश्वास और प्रसन्नवृनत्तयिु पुरुष दूसरों ंसे भी इसी प्रकार के नवचार अपनी ओर खीचंते हैं। वे सदा अपने प्रयत्न में सफल हुआ करते हैं।

उदासी, क्रोध, घृणा आनद ऋणात्मक भावों ंवाले मनुष् दूसरों ंको नननश्चत ही हानन पहुँचाते हैं। वे दूसरों ंपर प्रभाव िालते हैं और उनमें भी ये नवनािकारी वृनत्तयाँ िगा देते हैं। वे अपराधी हैं। नवचार–गत् की वे बहुत हानन करते हैं। प्रसन्ननचत्त मनुष् समाि के नलए प्रसाद रूप हैं। वे दूसरों ंमें भी प्रसन्नता लाते हैं।

िैसे कोई सुन्दरी युवती निसके गाल या नाक पर पका हुआ गन्दा फोडा हो तो वह अपना मुँह ढक लेती है और समाि में दूसरों ंसे नमलने के नलए बाहर ननकलना पसन्द नहीं ंकरती; इसी प्रकार िब आपके मन में उदासी, घृणा या ईष्र्ा थ के भाव हों ंतो आपको बाहर ननकलना और अपने नमत्रों ंतर्ा अन्य लोगों ंसे नमलना नहीं ं चानहए, क्ोंनक आप दूसरों ंमें भी यही भाव भर देंगे। आप समाि के नलए भय की वसुतु हैं।

ऋणात्मक भावो ंके शनयन्त्रण की शवशध

साधकों ंको चानहए नक उदासी को प्रार्थना, ध्यान, आनन्द के नवचार, प्रणवोच्चार, सनद्वचार और नदव्य भिनों ंके गायन द्वारा दूर करें। ननरािानक उदासी के भाव को कभी स्र्ान नहीं ंदेना चानहए। भाव सनहत ॐ का उच्चारण करें और कहें "मैं आनन्दमय है। मेरा स्वरूप आनन्द है।" उदासी दूर हो िायेगी। इस उदासी के अनेक कारण होते हैं। बादलों ंका नदन, दुिथनों ंकी संगनत, अपच, सूक्ष्मात्माओं ंका प्रभाव, उदासी के पुराने संस्कारों ंका पुनरुद्भव ये सब उदासी लाते हैं।

बि आपको बोलने की इच्छा हो, एकदम मौन का अभ्यास करें। यह बोलने की इच्छा की प्रनतरोधक औषनध है। िब आपके मन में घृणा का भाव हो तो इसके नवरोधी पे्रेम के सद्‌गुण की वृद्धि करें। घृणा का भाव िीघ्र दूर हो िायेगा। िब आपके मन में स्वार्थपूणथ भाव हो तो एकदम ननिःस्वार्थ कायथ प्रारम्भ कर दें। िब आपके मन में पार्थक् का भाव आये तो सेवा, पे्रेम, कृपा और क्षमा के द्वारा दूसरों ंके सार् नमलने की चेष्टा करें। िब आप आलस्य के भाव में हों ंतो तुरन्त कोई-न-कोई फुरतीला काम - यर्ा बगीचा लगाना, पानी खीचंना, दौडना, तेि चलना या साइनकल चलाना आनद करने लगे।

िीवन्मुि पुरुष सारे भावों ंसे सवथर्ा रनहत होता है। उसने समस्त भावों ंका पूणथ संयम कर नलया होता है। वह इन सबका स्वामी बन गया होता है। आत्मा में कोई भी भाव नहीं ंहुआ करता। यह (आत्मा) िुि चेतना है। उससे सारूप्य प्राप्त करें। आप सारे भावों ंको सुगमता से नष्ट कर सकते हैं।

ध्यानिील भाव

िो ध्यान का अभ्यास करते हैं, उनमें एक अच्छा भाव हुआ करता है निसे 'ध्यानिील भाव' कहते हैं। िो धारणा और ध्यान का अभ्यास करते हैं, उनको इस प्रकार के भाव का अनुभव होता है। िब यह भाव प्रकट हो, आपको अवश्यमेव तुरन्त ही पढ़ना, नलखना, बातचीत करना आनद सब कुछ छोड कर तत्काल ननत्य के आसन में बैठ कर ध्यान करना आरम्भ कर देना चानहए। ध्यान नबना नकसी प्रयास के स्वयमेव लगने लगेगा। यह भाव ध्यान के अभ्यास (ननननदध्यासन) के नलए बहुत अनुकूल होता है। इस प्रकार के भाव की उत्सुकता से प्रतीक्षा करें। यनद प्रकाि से बाधा होती हो तो द्धखडनकयाँ बन्द कर दें या उनमें परदे लगा दें। ध्यान के नवीन अभ्यानसयों ंके नलए अँधेरा कमरा अनुकूल होता है।

तरंगें तर्ा कल्पनाएँ

'Whim' को संस्कृत में तरंग कहते हैं। तरंग का अर्थ मौि है। मन में अचानक एक पररवतथन आता है निसे तरंग कहते हैं। तरंग मन में उठने वाली मौिें हैं। वे िल्दी–िल्दी उठती और टूटती हैं। वे आपको इधर-उधर घसीटती हैं। वे आपको भ्रान्त करती हैं।

प्रत्येक मनुष् को कुछ-न-कुछ सनक होती है िब कोई व्यद्धि सनक के सामने झुक िाता है तो हम प्राय: कहते हैं, "अमुक व्यद्धि सनकी है।" तरंग को लहर भी कहते हैं। खब्त सनक का अनतियोद्धिपूणथ रूप है। यनद व्यद्धि सनक से दब िाता है तो यह उसे उधर से उस नचाती है। सनक के द्वारा नकये हुए कमथ से क्लेि नमलता है। मन आपको सनक के द्वारा धोखे में िालता है। इसे बुद्धि के द्वारा रोकना चानहए।

सनक के वि में हो कर कायथ न करें। कमथ नववेक और बुद्धि-सनहत करना चानहए। िैसे ही सनक उत्पन्न हो, वैसे ही नवचार द्वारा उसको नष्ट कर दें। सदा प्रश्न करें नक प्रस्तानवत कायथ से आपको आनन्द और आत्म-कल्याण नमलेगा या नहीं ं? सतकथ रहें। 'Whim' (तरंग) िब्द सदा 'Fancy' (कल्पना) िब्द के सार् प्रयोग होता है। हम कहा करते हैं : *Whims and Fancies' । कल्पना से हलकी या कम प्रभाव वाली बौद्धिक प्रनक्रया का एक रूप 'Fancy (लनलत कल्पना) है। इस माननसक िद्धि के कारण नवीन तर्ा आनन्दप्रद नवचार Fancy कहलाता है। Fancy कल्पना का एक रूप है। भावुकता कनव की सहायक भले ही हो; परन्तु साधक को इससे लाभ नहीं ंहो सकता। ध्यान करने में यह एक बाधा है। इससे हवाई नकले बनते हैं। इसे नवचार और नववेक से रोकना चानहए।

िैसे सागर के ऊपर छोटी और बडी लहरें उठती हैं, इसी प्रकार मन रूपी समुि में कुत्सि वासनाएँ और नमथ्या संकल्प उठा करते हैं। अनेक प्रकार की सनक छोटी-छोटी लहरें हैं। आपको इनसे भय नहीं ंकरना चानहए। ये आती हैं और िीघ्र ही चली िाती हैं। आपको बलवती लहरों ंअर्ाथत् असत् संकल्पों ंसे सतकथ रहना चानहए। बलवान् नवचारों ंको सनद्धचार के दृढ़ अभ्यास और तकथ द्वारा ननकाल देना चानहए।

कल्पना

प्रकृनत मन में कभी िून्यता नहीं ंहोने देती। यनद एक नचन्ता समाप्त हो िाती है तो दूसरी तुरन्त प्रकट हो िाती है। मन कभी भी ररि नहीं ंरह सकता है। इसमें अनन्त पूवथधारणाएँ होती है।

मन के कायों को ध्यानपूवथक देखें। यह लुभाता है, अनतरंनित करता है, बात को बढ़ाता है, मोनहत करता है और नमथ्या कल्पनाओं,ं नमथ्या भव नमथ्या नचन्ताओं ंऔर नमथ्या पूवाथभासों ंके द्वारा अनावश्यक भयभीत करता है। आपको लक्ष्य पर ध्यान केद्धन्द्रत करने से हटाने के नलए यह पूरा प्रयास करता है।।

मन की सूक्ष्म नक्रयाओं ंको पूणथतिः समझने के नलए मैंने कई वषथ लगा नदये। अनुमानि–द्धि के द्वारा मन नविाि करता है। अनेक प्रकार के अनुमानगत भय, बात को बढ़ा कर बताना, ननमूथल बात को गढ़ना, माननसक कल्पना से नाटक की-सी घटनाएँ घटाना, मनोराज्य बनाना—यह सब कायथ अनुमान - िद्धि करती है। मन की कल्पना िद्धि के कारण पूणथतिः स्वस् मनुष् को भी कोई-न-कोई कद्धल्पत रोग होता ही है। कद्धल्पत भय के कारण बहुत-सी िद्धि क्षीण हो िाती है।

िब मन युि-कायथ में पूणथ रूप से संलग्न होता है तो योिा को गोली लगने के भारी आघात का अनुमान नहीं ंहोता। उसे अनधक पररमाण में रि बह िाने का भी ज्ञान नहीं ंहोता। उसमें आवेि होता है। उतने समय के नलए वह अपने िरीर से भी बेसुध होता है। िब वह आवेि बीत िाता है, िब वह अपने वस्त्रों ंपर खून के धब्बे देखता है या िब उसका कोई नमत्र उसकी टाँग के घाव को उसे नदखाता है, तब उसे इसका ज्ञान होता है। तब उसे र्ोडा-सा भय प्रतीत होता है। तब अनुमान िद्धि नविाि करती है और वह अचेत हो कर नगर पडता है। अनुमानि–द्धि हमेिा बात को बढ़ा नदया करती है।

नकसी मनुष् में कोई तननक-सी दुबथलता (तुरुनट) हो तो िब वह आपका ितुरु बनता है, आप तुरन्त ही उसकी तुरुनटयों ंऔर दोषों ंको वामन अवतार की भाँनत बढ़ा देते हैं और आप बहुत से दोषों ंका उसमें आरोप कर देते हैं अर्वा बहुत से दूसरे दोष और दुबथलताएँ गढ़ते हैं। यह आपकी दूनषत कल्पना के कारण होता है।

िब कभी दो नमत्रों ंमें दुभाथवना के कारण मन-मुटाव हो िाता है तो उन दोनों ंके मन नयी-नयी बातें गढ़ने लगते हैं और बात को बढ़ा देते हैं। एक-दूसरे के दोष ढूँढ़ने का स्वभाव बढ़ िाता है। इन भंग मैत्री वाले दोनों ंनमत्रों ं के विव्यों ंसे सत्य बात तक पहुँचना कनठन हो िाता है। उनकी बातें उनकी अपनी आन्तररक भावनाओं ंके रंग में पगी हुई होती हैं। यहाँ भी अनुमानि–द्धि नविाि करती है। माया मन और इसकी अनुमान - िद्धि के द्वारा नविाि करती है।

मन प्रलोभन नदखाता है और उगता है। नकसी को अपना पक्का नमत्र सोचें और वही नवचार सत्य में पररणत हो िाता है। उसी को अपना ितुरु मान लें तो मन उसी भाव को सत्य में पररणत कर देता है। निसने मन के कायथ को समझ नलया, वही सचमुच सुखी है।

अब हम आपको मन का नाटक समझाते हैं। मन की रीनत देद्धखए। अपने नमत्रों ंसे वाताथलाप करते हुए कभी आपका मन व्यर्थ कल्पना करता है नक आपके नमत्र के भावों ंको ठेस पहुँची है। तब यह अनावश्यक भावना में बहुत िद्धि का अपव्यय कर देता है। आप सोचते हैं, "कल सबेरे मैं उससे नकस प्रकार नमल सकता | िायद

वह मुझसे नारि हो।" अगले नदन प्राति:काल िब आप उससे नमलते हैं तो कुछ भी नहीं ंहोता। आपका नमत्र आनन्दप्रद वाताथलाप प्रारम्भ कर देता है और आपसे सद्धस्मत नमलता है। आपको आश्चयथ होता है िब वाताथलाप का रंग कुछ और ही बदल िाता है। िब महामारी (प्लेग) का प्रकोप होता है तो गृहस्र् मनुष् नवचार करता है, "यनद अब मेरी पत्नी को प्लेग हो गया और वह मर गयी तो मैं क्ा करूँगा, मेरे छह बच्चे हैं।" यह उसकी वृर्ा कल्पना होती है। कुछ भी नहीं ंहोता। कभी-कभी िब श्रीरामेश्वरम् के ननकट समुि के ऊपर के पम्बन पुल पर रेलगाडी मन्द गनत से चलती है तो मन सोचता है, "यनद अब पुल टूट िाये तो मेरी क्ा दिा होगी। मेरे तो टुकडे-टुकडे हो िायेंगे।" उसी समय भय का संचार हो िाता है। इनके ही समान हिारों ंरीनतयों ंसे मन नाटक के दृश्य गढ़ा करता है। इसमें कल्पना–द्धि का मुख्य भाग होता है।

बि आपका मन गम्भीरता से एकाग्र होता है तो दो घण्टे का समय पाँच नमनट के समान प्रतीत होता है। यनद मन चंचल और अद्धस्र हो तो आधा घण्टा भी दो घण्टे के समान हो िाता है। यह प्रत्येक मनुष् के अनुभव की बात है। स्वप्न में भी बहुत-सी घटनाएँ िो पचास वषों में पूरी होने वाली हैं, दि नमनट में हो िाती हैं। मन की लीला के द्वारा एक कल्प क्षणमात्र प्रतीत होता है और क्षणमात्र समय कल्पसम बीतता है। समय भी मन का रूप है। यह काल िद्धि है। यह भी अन्य पदार्ों की भाँनत भ्रममूलक है।

मन की छलना से कभी-कभी एक फरलांग भी बहुत दूर प्रतीत होता है और कभी-कभी तीन मील बहुत ननकट लगते हैं। आपने ननत्य के व्यवहार में यह तो देखा होगा।

मैं और रूमाननयाँ के ब्रह्मचारी मरीनच चैतन्य, एम. ए., पीएच. िी. स्वगाथश्रम की कैलास कुनटया में भोिन करने बैठे आलू की झोल एक प्लेट आयी। मरीनच को - भारतीय भोिन-सामग्री का ज्ञान नहीं ंर्ा। उसने उसे मांस का िोरबा समझा। उसका रूप-रंग ठीक वैसा ही र्ा। यह माननसक प्रक्षेपण का एक दृष्टान्त है। मरीनच ने अपने मन में द्धस्र् संस्कारों ंसे आलू के िोल में मांस के िोरबे का प्रक्षेपण नकया। माननसक प्रक्षेपण सब झूठे होते हैं।

कल्पना का अर्थ है उद्भावना। मन की कल्पना सच्ची योगमाया है। आपको इन नवनवध कल्पनाओं ंको नष्ट करना होगा। सारी आध्याद्धत्मक साधनाओं ंका यही ध्येय है। तब आप ननर्नवथकल्प आनन्द अवस्र्ा में द्धस्र् हो िायेंगे। ननष्काम कमथयोग के द्वारा नचत्त िुद्धि हो िाने पर इस अवस्र्ा को प्राप्त करने के नलए िािु ननवृनत्त की आवश्यकता होती है।

स्वभाव तर्ा उसको रूपातररत करने की शवशध

अन्तिःस्रावी ग्रद्धन्याँ यर्ा अवटुग्रद्धन्, बाल्य-ग्रद्धन्, कणथ-मूल-ग्रद्धन्, िकुरूप-ग्रद्धन्, अनधवृक्क-ग्रद्धन् वानहनीहीन होती हैं। इनमें स्राव बनता रहता है। यह स्राव-पदार्थ सीधा ही रि में नमल िाता है। इस िव पदार्थ का प्रत्येक मनुष् का स्वभाव बनाने में मुख्य भाग होता है। मनुष् का स्वभाव उसकी समीपवती पररद्धस्नत, उसकी निक्षा और उसके अनुभव से नविेषकर रूपान्तररत हो सकता है; परन्तु इसका नबलकुल रूपान्तरण असम्भव है। इसी कारण गीता (३-३३) में बताया गया है: **"सदृिं चेष्टते स्वस्यािः प्रकृतेज्ञाथछनवानशप "** – ज्ञानवान् पुरुष भी अपनी प्रकृनत के अनुसार चेष्टा करता है।

परर‍चे्छेद-८

मानशसक ि‍न्क्त

मानव मन की ि‍न्क्त

यनद आप मन की मन के ऊपर, पदार्थ के ऊपर तऱ् मानव ि‍रीर के ऊपर नक्रयाओं ंको ध्यानपूवथक देखें तो आपको ज्ञात होगा नक प्रते्येक मनुष् स्वयं एक ि‍द्धि है। अपनी वासनाओं ंपर प्रभुत्व और आत्म-ननरोध के द्वारा आपको अन्तननथनहत ि‍द्धि का नवकास करना होगा। ि‍ब मन इतना ि‍द्धिाली है तो उस आत्मा की मनहमा का क्ा कहना है ि‍ो सब वसु्तुओं ंका भण्डार हैं, ि‍ो ि‍द्धि, ज्ञान तऱ् आनन्द का केन्द्रीभूत असीम तऱ् कभी न चुकने वाला भण्डार है निससे यह तुच्छ मन अपना प्रकि‍ा और बल प्राप्त करता है।

मन की ि‍न्क्त का दृष्टात

बि कभी कोई अनग्नकाण्ड अर्वा अन्य घटना हो िाती है, आप नकतने सचेत और फुरतीले हो िाते हैं! क्ा आप अद्भुत ग्धद्धियों ंका प्रदिथन नहीं ंकरते? आप ऊँची दीवार को लाँघ िाते हैं, बहुत से बच्चों ंको बचा लेते हैं तर्ा अनग्न में से दौड कर बहुत-सी वसु्तएँ ले आते हैं। सारी माननसक ि द्धियाँ अर्ाथत् सृ्मनत, कल्पना, इच्छा इत्यानद अपना कायथ करती हैं। िैयथ, ननभीकता, दया तर्ा अनेक अन्य सद्गुण आप प्रदनिथत करते हैं। आपने ये सब क्षमताएँ तर्ा िद्धियाँ कहाँ से प्राप्त कीं ं? इससे आप यह ननष्कषथ ननकाल सकते हैं नक वास्तव में आप सवथिद्धिसम्पन्न हैं। आपके अन्दर एक महान् नविाल िद्धि-भण्डार है। ध्यानाभ्यास द्वारा इसी स्रोत तक पहुँच ग्यिें और िद्धि प्राप्त करें। आपको प्रते्यक वसु्त नमलेगी। अन्तरात्मा पर नवश्वास करें।

यनद ग्रीष्म काल के उष्ण मध्याहन काल में बारह बिे आपको एक तार नमले नक बीस मील दूर आपके गाँव में आपके नपता अत्यन्त नचन्तािनक रूप से बीमार पडे हैं तो आप तुरन्त अपना भोिन भी छोड कर दौडते हुए िाने लगते हैं। यद्यनप आपका अपना स्वास्थ्य भी उस समय अच्छा नहीं ंहोता तो भी केवल अपने नप्रय नपता को देखने की इच्छा मात्र से आप नकसी बात की नचन्ता नहीं ंकरते। आप सारे मागथ-भर दौडते चले िाते हैं और कुछ ही घण्टों ंमें उस स्र्ान पर पहुँच िाते हैं। तब आप आश्चयथ करते हैं— "यह क्ा? मैं स्वयं भी अच्छा नहीं ंर्ा। मैं बीस मील दो घणे्ट में चले आया। यह कैसा आश्चयथ है।" इससे स्पष्ट प्रकट होता है नक वास्तव में आप सवथिद्धिसम्पन्न हैं। आपके मन में अनेक प्रकार की िद्धियाँ तर्ा क्षमताएँ हैं। वे अनक्रय रहती हैं। आपको उन्ें ग्राग्रत करना होगा।

मन की ई महत्त्वपूणछ िन्क्तयााँ

मन में तीन िद्धियाँ होती हैं—इच्छाि–द्धि, नक्रयाि–द्धि और ज्ञानि–द्धि। मन में एक वासना उठती है; यह इच्छाि–द्धि है। मन इस वासना को तृप्त करने का प्रयत्न करता है; यह नक्रयाि–द्धि है। यह उसकी पूनतथ के नलए उपाय सोचता है; यह ज्ञानि–द्धि है।

वेदनाि–द्धि (इद्धन्द्रय-ज्ञान), स्मरण िद्धि अर्वा सृ्मनत िद्धि, भावनाि–द्धि, - मनीषा िद्धि, इच्छा या संकल्प िद्धि और धारणा िद्धि—ये मन की छह मुख्य - िद्धियाँ हैं।

वेदनाि–न्क्त

वेदना िद्धि संज्ञान िद्धि अर्वा संवेदनि–द्धि अर्वा बोध िद्धि अर्वा इद्धन्द्रय-ज्ञान है।

ृशितििि–न्क्त

सृ्मनत िद्धि के तीन काम हैं। यह ग्रहण करती है, धारण करती है और - आवश्यकता पडने पर याद नदलाती है। यद्यनप ग्रहण करने का काम वेदनाि–द्धि द्वारा होता है तो भी सृ्मनति–द्धि इसमें भाग लेती है।

कल्पना करें नक आप मद्धन्दर में घणे्ट का िब्द सुनते हैं सृ्मनत िद्धि इसे ग्रहण कर लेती है। नफर धारणा द्वारा वह इसे धारण करती है। नफर िब कभी आप मद्धन्दर के घणे्ट का िब्द सुनते हैं तो आपको याद आता है, 'यह मद्धन्दर के घणे्ट का िब्द है, यह छात्रावास का घण्टा नहीं ंहै।'

ध्यान में मन अपने इद्धन्द्रय-ज्ञान और ननश्चय को ग्रहण करता है और उनें् पकड लेता है, नवचार के नवषय को अपना लेता है, संस्कारों ंको दृढ़ करता है और इसकी इच्छागत सूमृनत को सुगम कर देता है।

भावनाि–न्क्त

आपने कभी हार्ी को साइनकल चलाते नहीं ंदेखा है। निस मनुष् ने वास्तव में देखा है, िब यह आपको इसका वणथन सुनाता है तो आपका मन तत्काल इसका माननसक नचत्र बना लेता है। यह मन की भावनाि–द्धि द्वारा होता है।

मनीषाि–न्क्त

तुलना और भेद देखने की िद्धि, अनुमान, परामिथ, ननष्कषथ आनद ये सब मन की मनीषाि–द्धि के अन्तगथत है। मनीषा िद्धि के दो उपांग और हैं—ननणथय (ननश्चय करना) और तकथ।

राम मरणिील है, श्याम मरणिील है, मुरारी मरणिील है; इसनलए सारे मनुष् मरणिील हैं। सारे मनुष् मरणिील हैं, महिाय चौधरी मनुष् हैं; इसनलए महिाय चौधरी मरणिील हैं। साध्य-पद, पक्ष-पद तर्ा मध्य-पद के सार् ननगमननक तर्ा आगनमक तकथ द्वारा इस प्रकार के ननष्कषथ ननकालना या गौतम ऋनष के न्यायिास्त्र के न्यायबि तकथ की पाँच प्रकार की युद्धियों ंद्वारा ननणथय और तकथ की सहायता से ननश्चय करना मनीषा िद्धि का काम है।

तकथ के दो अंग और हैं— अनुमान और परामिथ। िब प्रातिः काल आप नदी में चढ़ाव देखते हैं तो आप अनुमान करते हैं नक गत रानत्र में वषाथ हुई होगी। िब आप पहानडयों ंपर धुआं देखते हैं तो अनुमान करते हैं नक वहाँ अनग्न होनी चानहए। यह अनुमान िद्धि के कारण है।

इच्छाि–न्क्त

इच्छा आत्मि–द्धि है। यह ब्रह्म का प्रगनतिील रूप है। यह ब्रह्म का चल रूप है। वेदान्त में इच्छा िद्धि एक नविेष भूनमका अदा करती है।

पाश्चात्य दािथननकों ंने कल्पनाि–द्धि के नलए बहुत कुछ कहा है नक मनुष् के मन में यह सबसे उग्र िद्धि है और िब कल्पना और इच्छाि–द्धि में टक्कर होती है तो ननर्निवथकल्प रूप से कल्पना िद्धि का ही बोलबाला होता है।

कुछ लोग कहते हैं नक कल्पना से अनधक बलवती इच्छाि–द्धि होती है। पूवथ में वेदाद्धन्तयों ंने इच्छाि–द्धि को कल्पना से भी बडी िद्धि माना है। कामनाओं, ं लक्ष्यों ंतर्ा वासनाओं ंको सनक्रय िद्धि द्वारा ननष्पन्न करने के नलए इच्छाि–द्धि का गनतबल प्राप्तिः नकये नबना अकेली कल्पना क्ा करेगी ?

मन के नभन्न-नभन्न तत्त्वों ंमें सह-सम्बन्ध, समन्वय तर्ा सहयोग पाया िाता है। इसनलए िब प्रते्येक दूसरे पर अपनी िद्धि के नलए ननभथर करता है तो कौन कह सकता है नक अमुक बडा है तर्ा अमुक छोटा, अमुक प्रधान है तर्ा अमुक गौण ? यह यर्ार्थतिः नहीं ंकहा िा सकता नक इनमें कौन बडी है; क्ोंनक इनकी स्वतन्त्रता तर्ा िद्धि एक-दूसरे से प्राप्त की िाती है।

धारणा–न्क्त

धारणा–द्धि वास्तव में सूमृनत–द्धि का ही अंग है। साधारण बातचीत में हम कहते हैं, "श्री रामकृष्ण की वेदान्त में अच्छी धारणा है।" इसका अर्थ यह है नक श्री रामकृष्ण के वेदान्तनवषयक नवचार द्धस्र्र और दृढ़ हैं। उनें् कोई भी बदल नहीं सकता। उनकी वृनत्त ि्ाँविाोल नहीं ंहै वह केवल वेदान्त में ही लगी रहती है उसे कोई भी नहीं ं नहला सकता।

आत्म-बोध

बि मन चेतन कताथ के रूप में अपने को ही देखता है तो उसे आत्मबोध कहते हैं। यह आत्म-बोध तत्त्व चेतना के िाक बाबू की भाूँनत है िो सने्दिे प्राप्त करता है, छाूँटता है, एक-दूसरे से नमलाता है, यर्ास्र्ान रखता है, संसगथ करता है और बाहर भेिता है।

मन की अतशनछशहत िन्क्त का उद्र्ाटन

मनुष् के अन्दर बहुत-सी उच्च तर्ा गुप्त माननसक िद्धियाूँ हैं। मन िद्धियों ंका भण्डार है। उपयुि साधना के द्वारा इन अन्तननथनहत माननसक िद्धियों ंका उद्घाटन सम्भव है। साधना क्रमबि, ननरन्तर और तीव्र होनी चानहए। साधक को अपनी पररपक्वता की योग्य अवस्र्ा तक भी पहुूँच िाना आवश्यक है। सच्ची श्रिा भी होनी चानहए। तभी प्रत्यानित सफलता की सम्भावना होती है।

परिच्छेद-९

दोष-त्रय

कुछ लोगों ंको दूध पसन्द है, कुछ को नहीं।ं दूध में कुछ खराबी नहीं ंहोती। मन में कुछ-न-कुछ खराबी अवश्य होती है। एक ही स्त्री को िब उसका बच्चा देखता है तो वह उसे अपना पोषण करने वाली और सुखों ंको देने वाली माता समझता है, उसका पनत उसे उपभोग की सामग्री मानता है और बाघ उसे अपना निकार समझता है। स्त्री पदार्थ एक ही होता है; नकनुतु इन तीनों ंव्यक्तियों ंमें मन के दोष के कारण दृनष्टकोण का भेद हो िाता है।

मन के तीन दोष हैं—मल, नवक्षेप और आवरण ।

िैसे िैसे झंझावात में हलका पंख इधर-उधर उडा उडा नफरता है, इसी प्रकार राग और द्वेष के नवषयों ंमें मन इधर-उधर िोलता है। व्यर्थ में ही ग्राम-कुकुकुर की भाँनत नवषयों ंमें घूमता हुआ मन ज्ञाननयों ंकी संगनत से बहुत दूर चला िाता है; परनुतु पररणाम कुछ नहीं ंननकलता। यह कुद्धत्सत मन अनत अभीद्धित अतुल धन के दिथन मात्र से नाच उठता है। यह मन रूपी क्रूर निकारी कुत्ता वासना रूपी कुनतया के पीछे-पीछे नफरता हुआ अभागे अज्ञानी संसारी मनुष्ों ंको लिा के समान अपना निकार बनाता रहता है। एक क्षण में वह हावडा से पेररस और कोलम्बो से बनलथन को उड िाता है। यह नकसी एक पदार्थ पर द्धस्थर नहीं ंरहता और चंचल बना रहता है। यह अद्धस्थर तर्ा सम्भ्रनमत रहता है, एक नवषय से भाग िाता है और नफर उसी पर वापस आता है। ननरर्थक आनद्धन्दत होता है। और अहंकार से मदहोि हो िाता है। यह भय का निकार बन िाता है।

मन को मोक्ष के योग्य बनाना चानहए अर्ाथत् वह इस योग्य हो िाये नक अपने अनधष्ठान, अपने नपता ब्रह्म के पास पहुँच सके। तीनों ंदोषों ंको दूर कर देना आवश्यक है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सयाथनद मल ननष्काम कमथ करने से दूर हो सकते हैं।

उपासना, त्राटक, प्राणायाम और रियोग से मन का नविेष सकता है। दूर नकया िा सकता है ।

ज्ञान से, वेदान्तिास्त्र के अध्ययन से, नननदध्यासन से और 'तत्त्वमनस' महावाक् के तात्पयथ को ठीक-ठीक समझ कर अभेद नचन्तन से आवरण को दूर नकया िा सकता है।

दुच्छ सांसाररक पदार्ों के पीछे भरमाये नबना और अपने मन को इलाये नबना आप निला के समान दृढ़ और अचल बन िायें। निनमें पिानवक कामनाएँ नहीं ंहोतीं,ं वे पुनम को बहुत दूर भगा देते हैं।

मन के स्वभाव को देखें। सावधानीपूवथक इसका नवश्लेषण करें। मन के तीनों ंदोष • नवक्षेप और आवरण को दूर हटायें। मन को पनवत्र बना कर द्धस्थर करें। इसे ईश्वर मल, 'अर्वा ब्रह्म पर लगा दें। ननरन्तर तीव्र नवचार के अभ्यास से मन को ईश्वर में नवलीन कर दें। मनोनिा के साधन का अभ्यास करें। मन के भुलावे और लालच से ऊँचे उठ िायें। यह आपका धमथ है। आपका िन्म ही इसके नलए हुआ है। और सारे धमथ तो अनवद्या के कारण आपने स्वयं ही अपने ऊपर लाद नलये हैं।

पररचे्छेद- १०

िि और िअि मन

बुद्धिमान् मनुष् नववेकयिु मन के द्वारा नीच मन को दृढ़ता से वि में कर लेते हैं। "उदरेदात्मनात्मानम्" िविात्मा अपने द्वारा आपका (संसार-समिु से) उिार करे (भगवद्गीता ६-५) ।

मन के दो भेद

उपननषदों ंके मतानुसार मन िि और िअि दो प्रकार का होता है। िअि मन में कामनाएँ भरी हुई होती हैं। िि मन में पनवत्रता भरी हुई होती है। इस प्रकार दो मन होते। हैं। यनद आप ध्यान का अभ्यास करना चाहते हैं तो इन दोनों ंको एक कर दें—साद्धत्त्वक मन बना दें। साद्धत्त्वक मन के द्वारा वासनामय और भावमय िअि मन का संयम करना होगा।

बुद्धि भी दो प्रकार की होती है— व्यावहाररक बुद्धि और ििु बुद्धि। अहं अर्वा अहंकार भी दो प्रकार का होता है— ििु अहंकार िो ब्रह्म से एकीभाव बनाता है और अिु अहंकार िो िरीर से एकीभाव बनाता है। संकल्प भी दो प्रकार का होता है— ििु संकल्प अर्ाथत् ईश्वर-सम्बन्धी नवचार और अिु संकल्प अर्ाथत् िरीर और संसार-सम्बन्धी नवचार ।

अिु मन से अिु संकल्प, व्यावहाररक बुद्धि और अिु अहंकार बनते हैं। इन तीनों ंका दुश्चक्र है।
ये तीनों ंपरस्पर सहयोग से काम करते हैं। मन का बीि अहंकार है। मन नवचारों ंकी गठरी मात्र है। सारे नवचारों ं की िड अहंभाव है। यही नवचार सबसे पहले मन से ननकला र्ा। अतएव मन केवल अहंभाव है। अहंकार की नीवं बुद्धि है। बुद्धि ही आपको भौनतक िरीर के सार् एकरूप हो िाने को नववि करती है। बुद्धि ही भेद और नानाभाव उत्पन्न करती है।

सान्त्त्वक मन के लक्षण

साद्धत्त्वक मन को एकान्त. मौन. सरल िीवन, उच्च नवचारधारा, आध्याद्धत्मक ग्रन्ों ं का स्वाध्याय, दाथननक पररचचाथ, मन की एकाग्रता और साधु-महात्माओं ंतर्ा संन्यानसयों ंका सत्संग पसन्द होता है। ििु मन की परीक्षा वाणी, मुख और नेत्रों ंद्वारा हो सकती है। इन माध्यमों ंके द्वारा मत द्धस्र्र नकया िा सकता है नक क्या व्यद्धि का मन ननदोष है। उच्च कामनाएँ, महान् आकांक्षाएँ, ऊँचे आदिथ, सच्ची धानमथक भावना, दया, सहानुभूनत, ििु ननःस्वार्थ प्रेम, भद्धि, आद्धत्मक नवचार, प्रेरणा और प्रनतभा — ये सब उच्च मन से प्राप्त होते हैं। ििु मन तो ब्रह्म ही है। यह मूनतथमान् पनवत्रता है।

राजशसक मन के लक्षण

रािनसक मन को भीड-भाड वाले नगर, ज्यादा बातचीत, नवलासी िीवन, नीच नवचारधारा, द्धस्त्रयों ं की संगनत, स्वच्छन्दतावादी उपन्यासों ंका अध्ययन, स्वानदष्ट भोिन और स्वार्थपूणथ कायथ पसन्द होता है। सहिवृनत्तक मन नीच, मनलन काम-मानस है निसमें कामनाएँ, वासनाएँ और प्रवृनत्तयाँ होती हैं। अनधक संख्या में मनुष्यों ंमें यह सहिवृनत्तक मन ही होता है। निनक्षत और सभ्य कहलाने वाले मनुष्य भी इसी सहिवृनत्तक मन के स्तर पर रहते हैं। उनकी इद्धन्द्रयाँ बडी ननपुण तर्ा संवेदनिील होती हैं और वे उनकी तृद्धप्त के नलए अनधक पररष्कृत पदार्ों की खोि में रहते हैं। वे अपने को भौनतक िरीर और इद्धन्द्रयों ंसे एकरूप मानते हैं। सूक्ष्म आत्मा का उनको ज्ञान नहीं ं होता िो िरीर और इद्धन्द्रयों ंसे नबलकुल पृर्क् है। यद्यनप वे यह िानते हैं नक मन भी होता है; पर उसका 'मैं' यह भौनतक स्र्ूल िरीर ही है।

नवषय-भोग से रोग उत्पन्न होते हैं और नववेक-बुद्धि नष्ट होती है। यह मन को मनलन बनाता है। इसनलए नवषय-भोग से बचे रहें। अपने अन्दर ही आत्म-साक्षात्कार का प्रयत्न करें िहाँ ननत्य सुख और अमृतत्व का वास है।

आत्म-शवचार के शलए सान्त्त्वक मन की आवश्यकता

तीक्ष्ण, सूक्ष्म, एकाग्र और साद्धत्त्वक मन की आवश्यकता आत्म-नवचार और उपननषदों ंके स्वाध्याय के नलए होती है। स्वार्थपरायण और कामपूणथ व्यावहाररक बुद्धि नवचार तर्ा दाथननक तकथणा में ननतान्त असमर्थ होती है। उसकी समझ पर स्वार्थ का बादल छाया रहता है। स्वार्थपरता िीवन का अनभिाप है । संसारी मनुष्य का मन यौन नवचारों ंको आत्मसात् करने को सदा प्रस्तुत रहता है। वह सूक्ष्म िास्त्रीय नवचारों ंको आत्मसात् नहीं ंकर

सकता। वह बहुत कठोर होता है और िास्त्रीय नवचारों ंको ग्रहण करने के नलए ठीक तरह से प्रदोनलत नहीं ंहोता। आप नचकनी नमट्टी में कील ठोक सकते हैं; परन्तु पत्थर में नहीं।ं ननष्काम कमथ, िप, प्राणायाम और दूसरी आध्याद्धत्मक साधनाओं ंद्वारा मन को ििु करना होगा।

यनद दपथण मैला हो तो आप अपना मुँह साफ नहीं ंदेख सकते। ऐसे ही यनद मन-मुकुर मैला हो तो आप परमात्मा का, आत्मा का स्पष्ट दिथन नहीं ंकर सकते। ब्रह्म-ज्योनत कायथसाधक ढंग से प्रकानित नहीं ंहो सकती है। यह मैल काम, क्रोध, लोभ आनद का मल है। इनको दैननक प्रयास से आध्याद्धत्मक साधना, ध्यान, अनवरत ननष्काम कमथयोग, भद्धि आनद के द्वारा दूर कर दें।

शुरुनत वाक् है 'मनसैवानुिष्टव्यम्'- 'मन के द्वारा ब्रह्म को देखना चानहए। यहाँ मन का तात्पयथ ििु मन से है। ब्रह्म उस मन से देखा िा सकता है िो मोक्ष के साधन-चतुष्टय से युि हो; िो िम, दम, यम और ननयम के अभ्यास से सूक्ष्म और ििु नकया गया हो, िो सुयोग्य गुरु के सदुपदेिों ंसे युि हो तरा िो श्रवण, मनन और ननदध्यासन करता हो। यनद ििु मन ज्ञानिास्त्रों ंके अध्ययन, ज्ञाननयों ंके सत्संग और ध्यान के ननरन्तर अभ्यास से कुछ समय के नलए एकाग्र होने लगे तो ऐसे पुरुषों ंकी सारवृद्धि होकर नदव्य दृनष्ट हो िायेगी निससे उन्ें एक सत्य परब्रह्म की अपरोक्षानुभूनत हो िायेगी।

अिुि मन को मार िालें

आत्मा का ितुरु यह अिुि मन हैं िो अनतिय भ्राद्धन्त और नवचारों ंके समूह से पररपूणथ है। अिुि मन रूपी यह िैतान और बलवान् नट सारे दुिःख और भय उत्पन्न करता है और सारी उत्तम आध्याद्धत्मक सम्पनत्त नष्ट कर देता है। आपका वास्तनवक ितुरु केवल यह अिुि मन है निसमें तृष्णा, भ्रम, वासना और अपनवत्र नवचारों ंका समूह भरा हुआ है। कहीं ंऐसा न हो नक यह मन रूपी ितुरु आपको अनेक प्रकार से संसार के नाना सुखों ंके उपभोग द्वारा नबगाड दे; इसनलए ननत्य सुख और आद्धत्मक ज्ञान-प्रकाि के नलए इसको मार िालें। ििु मन के द्वारा इस अिुि मन का नाि कर दें। अपने साद्धत्त्वक उच्च मनस् और नववेक की सहायता से इस सहिवृनत्तक मन को नष्ट कर दें। तब आपको स्रायी अपररद्धच्छन्न िाद्धन्त और आत्मानन्द प्राप्त होगा। तब आप िीवन्मुि हो िायेंगे।

साद्धत्वक और रािनसक मन की गनत एक-दूसरे के नवपरीत नदिा में हुआ करती है। साद्धत्त्वक मन एकता बनाता है। सहिवृनत्तक मन नवभाग और भेद बनाता है। सहिवृनत्तक मन की वाणी आपको धोखे में िालेगी मन अिुि करें और साद्धत्वक मन की आवाि सुने। नीच, अिुि और सहिवृनत्तक मन का नविाि कर आपको ििु मन की वृद्धि करनी होगी। ििु मन के द्वारा इस अिुि मन का नाि कर दें, तब आपको िाश्वत सुख तरा िाद्धन्त प्राप्त होगी, तभी आपको मोक्ष, ब्रह्मज्ञान तरा ननत्यानन्द प्राप्त होगा। इस मन को सतत नवचार और प्रणव के ध्यान से नष्ट कर देना चानहए और अपने सद्धच्चदानन्द-स्वरूप में द्धस्रत हो िाना चानहए।

मन को कैसे ििु करें

िैसे लोहे के एक साँचे से दूसरे लोहे का आकार बनता है, वैसे ही मनुष्य के धानमथक मागथ में प्रयत्निील ििु मन को उसके अिुि मन को सुधारने और पनवत्रता में ढालने में समर्थ होना चानहए। वास्तनवक सत्कमथ तरा ननरन्तर सत्संग के द्वारा ननश्चय ही मन ििु हो िाता है। सत्य भाषण और दया का अभ्यास मन को बहुत ििु करते हैं। सारी महती आकांक्षाएँ, समनष्ट-प्रेम की वृनत्तयाँ तरा दयावे सब मन की साद्धत्त्वक सामग्री बढ़ाने में बडी सहायक होती हैं। इनसे उच्च मन की वृद्धि होती है।

यज्ञ, दान, दया, वेदाध्ययन, सत्य भाषण —ये पाँचों ंिि ु करने वाले हैं। छठी सुआचररत तपस्या है। अद्धन्तमिो परम पावनी है। तीर्थयात्रा भी नचत्त की िुद्धि करती है। 6 इसके द्वारा महात्माओं ंका अच्छा सत्संग हो सकता है।

दान, िप, ननष्काम कमथ, यि, अनग्रहोत्र, ब्रह्मचयथ, सन्ध्या, तीर्थयात्रा, िम, दम, ननयम, स्वाध्याय, तप, व्रत, साधु-सेवा – ये सब मन को िि ु करने वाले हैं। ननश्चय ही इस प्रकार िि ु हुए मन में नविु आनन्द रहेगा।

मन्त्र भी मन को िि ु करता है। तोते की तरह मन्त्र को केवल रटने से फल होता है। मन्त्र का भावपूवथक पि करना चानहए। तब इसका आश्चयथिनक प्रभाव बहुत कम होता है। िब तक मन्त्र में अपने ही मन की पूणथ इच्छा–द्धि नहीं ंभरी होती, तब तक उसका बहुत प्रभाव नहीं ंहो सकता ।

दिाथननक ग्रन्ों ंका स्वाध्याय, सनद्वचार, अच्छी भावनाओं ंका अभ्यास, प्रार्थना तरा् परोपकारी कायथ और सवोपरर ननयमबि तरा् तीव्र ध्यान मन को सुधारने के साधन हैं। इनके द्वारा मन की उन्ननत िीघ्र होगी। िब मन पनवत्र हो िाता है तो मध्य में एक नछि बन िाता है निसमें पनवत्रता, प्रकाि और ज्ञान ब्रह्म से बहते हैं।

दि कैरट के सोने को तेिाब नमला कर मूषा में बार-बार तपा कर सुनार पन्दरह कैरट का बना लेता है। इसी प्रकार आपको अपने इस इद्धन्द्रय- लोलुप मन को धारणा, गुरु-वचनों ंके मनन, उपननषद्-वाक्ों ंपर नवचार, ध्यान, िप तरा् मौन नाम-स्मरण द्वारा िि ु बनाना होगा।

हरताल को िि ु करने में बहुत समय लगता है। पहले इसे गोमूत्र में सात नदन, नफर चूने के पानी में दि नदन और नफर दूध में सात नदन नभगोते हैं। इसके बाद इसे १०८ बार अनग्न में िलाना पडता है, तब इसकी भस्म बनती है। इसी प्रकार नचत्त–ुद्धि करने में भी बहुत समय लगता है। इसके नलए कठोर तपश्चयाथ की आवश्यकता होती है।

मन िि ु हो िाने पर इसकी संवेदन–द्धि बढ़ िाती है। रा्ेडे से भी िब्द या झटके से बाधा मालूम होती है और नकसी भी दबाव को तीव्र मानता है। साधक की संवेदनिद्धि नवकनसत होनी चानहए, तो भी उसको अपने िरीर और नानडयों ंको संयनमत रखना चानहए। ज्यों–ंज्यों ंसंवेदनिद्धि बढ़ती िाती है, संयम भी अनधकतर कनठन होता िाता है। बहुत से िब्दों ंपर साधारण मनुष् ध्यान तक नहीं ंदेता; परन्तु निसकी संवेदन–द्धि अत्यनधक नवकनसत हो गयी हो, उसको वे बडी व्यरा् पहुँचाते हैं। आपको इस अनतसंवेदनिीलता को समाप्त करना चानहए।

िि ु मन की दीक्षा शनशवछकल्पावस्ा् की ओर अग्रसाररत करती है

ुद्धि योग का प्रर्म अंग है। िब िुद्धि हो िाती है, तब मन की प्रवृनत्त स्वभावतिः ही मोक्ष की ओर आ िाती है।यनद नकसी निष् का मन सारे मलों ंसे िि ु हो गया है और उसे गुरु ईश्वरीय रहस्यों ंमें दीक्षा दें तो उसका मन नबलकुल िान्त हो िायेगा और वह ननननवथकल्प अवस्ा् (असंवेदन) प्राप्त कर लेगा।

परिच्छेद -११

वृशत्तयाँ

वृशत्त: उसका स्वरूप और कायछ

पानी में िो भूँवर पडते हैं, उन्हें आवतथन या वृनत्त कहते हैं। इसी प्रकार नवचार की लहर, िो अन्तिःकरण में उठती है, वृनत्त कहलाती है। वृनत्तयाँ मन के नवकार हैं और वे अनवद्या के कायथ हैं। िब ज्ञान द्वारा अनवद्या नष्ट हो िाती है तो वृनत्तयाँ भी उसी प्रकार मन में लय हो िाती हैं िैसे गरम तवे पर िाला िल उसी में सूख िाता है।

वृनत्त कहाँ से उठती है? नचत्त से। वृनत्त क्यों उठती है? यह अन्तिःकरण का स्वभाव है। इसका क्या कमथ है? यह आवरण भंग करती है अर्ाथत् स्थूल अनवद्या के आवरण को, िो पदार्ों को ढके रखता है, हटाती है। यह मनुष्य को पूणथता (िीवन्मुक्ति) प्राप्त करने तक उन्ननत में सहायक होती है। वृनत्त ज्ञाननयों में, आज्ञाचक्र में कुण्डनलनी को खोलती है और उसे सहस्रार चक्र से नमलाती है। यह एक मागथ है।

नचत्त मानस-द्रव्य है। यह माननसक िव्य है। वृनत्त या नवचार-तरंग इसी माननसक िव्य का नवकार है। यह एक कायथ-प्रणाली है। िैसे समुि के ऊपरी तल से लहरें तर्ा बुदबुद उठते हैं, वैसे ही ये वृनत्तयाँ मन रूपी सागर से उठती हैं। िैसे सूयथ से नकरणें ननकलती हैं, उसी प्रकार माननसक नकरणें (नवकार या वृनत्तयाँ) मन रूपी सूयथ से ननकलती हैं। िैसे सूयाथस्त के समय अपने नकरण-समूह को समेट कर सूयथ पनश्चम नक्षनति में लीन हो िाता है, उसी प्रकार आपको भी उस सूयों के सूयथ, नचद्घन, ननत्य िाज्वल्यमान-रूप आत्मा में मन की सारी नबखरी हुई नकरणें समेट कर मन को लीन करना होगा।

वृनत्त का काम मन के आवरण को हटाना है। सब पदार्ों को स्थूल अनवद्या ने ढक रखा है। िब यह आवरण हटता है तो सारे पदार्थ भासते हैं। िब आप बहुत से लोगों में से गुिरते हैं तो उनमें से कुछ लोगों को ही देखते हैं। यद्यनप कुछ व्यक्ति आपकी दृनष्ट के सामने भी आते हैं, तर्ानप आप उनको इसनलए नहीं देखते नक पूरा-पूरा आवरण भंग नहीं हुआ र्ा। िब पूरा आवरण भंग हो िाता है तो पदार्थ भासने लगता है।

महनषथ पतंिनल के रियोग के अनुसार पाँच प्रकार की मनोवृनत्तयाँ होती हैं अर्ाथत् प्रमाणनव नवकल्प ननिा और स्मृनत यनद वे पाँचों माननसक नक्रयाएं दबा दी िायें तो इच्छाओं और अन्य नक्रयाओं का ननग्रह स्वयं ही हो िायेगा।

शवषयाकार-वृशत्त तर्ा ब्रह्माकार-वृशत्त

अपने ही प्रयत्नों द्वारा निस पदार्थ पर मन धारणा करता है, उसी का रूप बन िाता है। यह स्त्री का नचन्तन करता है तो स्त्री का रूप बन िाता है। यह वृनत्त तदाकार कहलाती है। यनद वह ईश्वर या ब्रह्म का नचन्तन करता है तो ईश्वर या ब्रह्म का रूप बन िाता है। ब्रह्माकार-वृनत्त अब पैदा होती है। पहली अवस्र्ा में मन में रिस् भर आता है और दूसरी अवस्र्ा में सत्त्व या पनवत्रता भरती है।

बि मन पदार्ों का नचन्तन तर्ा उन पर देर तक नवचार करता है तो वह स्वयं उन पदार्ों का रूप धारण कर लेता है। इसे नवषयाकार-वृनत्त कहते हैं। िब यह ब्रह्म-नचन्तन करता है तो ब्रह्माकार-वृनत्त बन िाती है। मन

और उसकी नक्रयाओं ंको देखने में साधक को बडा सतकथ तरा् सावधान रहना चानहए। नवषयाकार-वृनत्त को ब्रह्माकार-वृनत्त में बदलना आवश्यक है। ज्यों–ंही मन ब्रह्माकार-वृनत्त से नवषयाकार-वृनत्त में नगरे, उसे नफर ब्रह्माकार-वृनत्त में लगा देना चानहए। यह संग्राम ननस्सन्ेदेह बडा कनठन है।

आप एक ही समय में (घटपटानद) नवषयाकार वृनत्त और ब्रह्माकार वृनत्त नहीं ंरख - सकते। यह शुरुनत-नवरुि है और नक्रयात्मक अनुभव भी ऐसा नहीं ंबताता।

आपको पदार्थ या नवषय नहीं ंबाँधते । वृनत्त और उसके सार् तादात्म्य-सम्बन्ध ही आसद्धि और बन्धन का कारण होते हैं। अनवद्या के कारण आप वृनत्त के सार् सारूप्य कर लेते हैं, यरा् क्रोध आने पर आप कहते हैं—'मैं कुरुि हूँ।"

वृशत्तयो ोंके भेद

वृनत्तयाँ पाँच प्रकार की होती हैं : (१) मनोवृनत्त, (२) बुद्धि-वृनत्त, (३) साक्षी - वृनत्त, (४) अखण्डाकार-वृनत्त और (५) अखण्ैडैकरस- वृनत्त। इसमें प्रर्म िड-रूप मन की वृनत्त है और िेष सब साद्धत्त्वक मन की वृनत्तयाँ हैं।
सांसाररक मनुष्ों ंकी नवषयाकार - वृनत्त ही मनोवृनत्त है। नववेनकयों ंकी बुद्धि-वृनत्त होती है। िब आप साक्षी वृनत्त से
तादात्म्य कर लेते हैं, तो मन के नवकारों ंको देख सकते हैं। िब आप ऐसा अनुभव करने का प्रयास करते हैं नक आप अनन्त, असीम आत्मा हैं, तब अखण्डाकार-वृनत्त पैदा है। यही ब्रह्माकार-वृनत्त भी कहलाती है। ब्रह्म में कोई वृनत्त नहीं ंहोती।
मनोवृनत्त से नववेक-वृनत्त पर पहुँचना चानहए। मनोवृनत्त का सम्बन्ध मनोमय कोि से है तरा् नववेक-वृनत्त का सम्बन्ध नवज्ञानमय कोि से है। नवज्ञानमय कोि को समृि करने से मनोवृनत्तयों ंको िीता िा सकता है। नववेक वृनत्त से साक्षी-वृनत्त पर पहुँचना चानहए। साक्षी वृनत्त से अखण्डाकार वृनत्त प्राप्त करनी चानहए। अखण्डाकार-वृनत्त से अखण्ैडैक-रस प्राप्त करना चानहए। यही ब्रह्म स्वरूप है, कैवल्य है और िीवन का चरम लक्ष्य है।

अतमुछख-वृशत्त तरा् बशहमुछख-वृशत्त

िब मन की बनहगाथमी वृनत्तयों ंका ननरोध हो िाता है और मन को हृदय गुहा में ही रोक नलया िाता है, िब इसका समूपूणथ अवधान इसी पर लगा नदया िाता है, वह दिा अन्तमुथख-वृनत्त कहलाती है। सत्त्वगुण में वृद्धि होने से मन में िो अन्तिः प्रत्याहरन की िद्धि होती है, उसे अन्तमुथख-वृनत्त कहते हैं। िब साधक को यह अन्तमुथख-वृनत्त प्राप्त हो िाये तो साधक बहुत कुछ साधना कर सकता है।

रिोगुण के कारण मन की बनहगथमनिीलता को बनहमुथख वृनत्त कहते हैं िब दृनष्ट - बाहर की ओर िाली िाये तो मन भागती हुई घटनाओं ंके वेग में संलग्न हो िाता है। तब मन की बनहगाथनमनी िद्धियाँ अपना कायथ करने लगती हैं स्वभावनि कान और आँख दोनों ंिब्द तरा् दृश्य की ओर दौडते हैं। पदार्थ (नवषय) और इच्छाएँ मन को बनहमुथख बनाने वाली िद्धियाँ हैं। वासनाओं ंसे भरा हुआ रिोगुणी मनुष् अन्तमुथख-वृनत्त सनहत आन्तररक आध्याद्धत्मक िीवन की स्वप्न में भी आिा नहीं ंकर सकता। वह अन्तननथरीक्षण के सवथरा् अनुपयुि है।

बनहमुथख करने वाली मन की सारी िद्धियों ंको नष्ट कर चुकने पर ही अन्तमुथख-वृनत्त प्राप्त होती है। इस माननसक अवस्रा् को प्राप्त करने में वैराग्य और त्याग के द्वारा मन को भूखा मार दें। यौनगक नक्रया प्रत्याहार के द्वारा मन को अपने ऊपर अन्तमुथख करने की कला आपको अवश्य सीखनी चानहए। निस प्रकार आपका कपडा नकसी काँटेदार झाडी पर नगर िाये तो आप धीरे-धीरे एक-एक काँटा ननकाल कर कपडे को उठाते हैं, इसी प्रकार अनेक वषों से नगरी हुई मन की नकरणों ंको भी सतकथता और अध्यवसाय से समेटना होगा।

आपको धैयथ के सार् वैराग्य और अभ्यास, त्याग और तप के द्वारा इन ि द्धियों ंको समेटना होगा तर् नफर साहस और अर्क सामथ्यथ के सार् परमात्मा या ब्रह्म की ओर आगे बढ़ना होगा। निन्हें इस अभ्यास का ज्ञान है, वे ही वास्तव में ान्ति हो सकते हैं, वे ही सुखी रह सकते हैं। िब मन की नकरणें संकेद्धन्द्रत होती हैं तो प्रकाि नमलने लगता है। अब मन कुछ भी हानन नहीं ंकर सकता। वह बाहर नहीं ंिा सकता। उसे हृदय-गुहा के अन्दर ही
रखा िा सकता है।

वृशत्त निा मनोबल प्राप्त कराता है

वृनत्तयों ंको नष्ट कर देने से मन को बडी ि द्धि नमल िाती है। वृनत्तयों ंका निा करना सहि नहीं ंहै; क्योंनंक ये अगनणत हैं। इनसे एक-एक करके ननबटना चानहए। कुछ वृनत्तयाँ प्रबल होती हैं। उनके नविा के नलए दृढ़ प्रयत्न की आवश्यकता होती है। अनधकां वृनतयाँ बहुत दुबथल होती हैं। छोटी-छोटी वृनत्तयाँ फटे हुए बादलों ं की भाँनत नवलीन हो िाती है। प्रबल वृनत्तयाँ बची रहती हैं और नींद से उठने के बाद प्रायिः पुनिः प्रकट होती हैं।

मौन हो िायें। िाद्धन्त में प्रवेि करें। आत्मा िाद्धन्त रूप है। ब्रह्म िाद्धन्त रूप है। मौन ही केन्द्र है। मौन ही हृदय गुहा है। िब मन एक वस्तु से दूसरी वस्तु की ओर दौडता है तो वह बीच की अवस्र्ा निसमें आप अनत सूक्ष्म काल के नलए ही अमन हो िाते हैं, स्वरूपद्धस्र्नत है। वह ब्रह्म है। िब मन का पूणथ ननग्रह हो िाता है तो वृनत्तयाँ समाप्त हो िाती हैं। िब सारे नवकार िान्त हो िाते हैं, तब ही आप िाद्धन्त-रूप मौन में प्रवेि करते हैं। इसका इसी क्षण साक्षात्कार करें। नेत्रों ंको बन्द करके, इद्धन्द्रयों ंका प्रत्याहार करके, मन को ननश्चल करके, नवचारों ंको ान्ति करके, बुद्धि को तीव्र करके, नचत्त ि ुद्धि करके, ओंकार का नचन्तन करके, भावसनहत प्रणवोच्चार द्वारा नदव्य मनहमा और ब्रह्मिक्ति का अनुभव करें। चौबीसों ंघण्टे ब्रह्ममयी चेतना को अनवरत िारी रखें। आत्म-चेतना का ननरन्तर प्रवाह रखें। यह अत्यन्त आवश्यक है। यह अननवायथ ितथ है। यह बहुत ही अभीष्ट है।

िब सारी वृनत्तयाँ मर िाती हैं तो संस्कार और मन का ढाँचा रह िाता है। संस्कार केवल ननबीथ समानध द्वारा भस्म नकये िा सकते हैं।

परिच्छेद- १२

प्रत्यक्ष ज्ञान का शसात

"यदा वै मनुतेऽर् नविानानत नामत्वा नविानानत मत्वैव नविानानत..."
- निस समय मनुष् मनन करता है, तभी वह नविेष रूप से ि◌ानता है: नबना मनन नकये कोई नहीं ◌ं◌िानता, अनपतु मनन करने पर ही ि◌ानता है। (छान्दोग्योपननषद् : (७-१८-१)

.... अन्यत्रमना अभूवं नादिथमन्यत्रमना अभूवं नाश्रौपनमनत मनसा होव पश्यनत मनसा शृणोनत कामिः संकल्पो नवनचनकत्सा श्रिाऽश्रि धृनतरधृनतहीर्धीभीररत्येतत्सवं मन एवं तस्मादनप पृष्ठत उपसूपृष्ठो मनसा नविानानत ... " - " मेरा मन अन्यत्र र्ा, इसनलए मैंने नहीं ◌ंदेखा, मेरा मन अन्यत्र र्ा. इसनलए मैंने नहीं ◌ंसुना (ऐसा ि◌ो मनुष् कहता है, इससे ननश्चय होता है नक) वह मन से ही देखता है और मन से ही सुनता है। काम, संकल्प, संयि, श्रिा, अश्रिा, धृनत, अधृनत, लज्जा, बुद्धि, भय-ये सब मन ही हैं। इसी से पीछे से स्पिथ नकये ि◌ाने पर मनुष् मन से ि◌ान लेता है। (बृहदारण्यकोपननषद् : १-५-३)

मन के दो उपखण्ड हैं—एक नवचार वाला भाग और दूसरा प्रत्यक्ष दिथन करने वाला भाग। नवचार करने वाले भाग को बन्द कर देना सुगम है; परनुतु प्रत्यक्ष दिथन के भाग को बन्द करना कनठन है।

व्यद्धिगत मन बाहरी पदार्ों को देखता है। यनद दूरदिथक से वही पदार्थ देखा ि◌ाये तो वह कुछ और तरह नदखायी देता है। यनद आप सीधे मन के ही द्वारा देख सकते होते तो वही पदार्थ कुछ और तरह नदखायी देता । नहरण्यगभथ (कायथ ब्रह्म) की दृनष्ट नभन्न है। यनद आप ध्यान करें नक बडी भारी लडाई चल रही है और दोनों ◌ंपक्षों ◌ंके बहुत से मनुष् मर रहे हैं तो उस समय निस प्रकार का दृश्य आपके मानस पटल पर अंनकत हो ि◌ायेगा, उसी प्रकार वह (नहरण्यगभथ) प्रत्येक पदार्थ अपने अन्दर ही संकल्प के रूप में स्पद्धन्दत या गनतिील-सा देखता है। अपने इच्छानुसार अपने ध्यान को आप वापस कर सकते हैं।

प्रत्यक्ष ज्ञान के शसात

एक नसिान्त मन के लचीले होने का है। इस नवचारधारा के लोग कहते हैं नक ि◌ब नवनवध इद्धन्द्रयों ◌ंका स्पिथ अनेक नवषयों ◌ंसे होता है तो मन लचीला हो ि◌ाता है और इस प्रकार एक-सार् ही सारी ज्ञानेद्धन्द्रयों ◌ंके संसगथ में आ ि◌ाता है। ि◌ब मन का स्पिथ एक नवषय और एक इद्धन्द्रय से होता है तो मन नकसी अंतिक नसमट ि◌ाता है। बेदाद्धन्तयों ◌ंने इस नसिान्त को पौधा बता कर इसका खण्डन कर ननमूथल नसि नकया है।

एक नवचारधारा अन्य भी है ि◌ो कहती है नक मन के नभन्न-नभन्न नवभाग होते हैं। मन का एक भाग एक ज्ञानेद्धन्द्रय से स्पिथ करता है, दूसरा भाग दूसरी इद्धन्द्रय से इत्यानद। वेदान्ती इस नसिान्त को भी ननमूथल और ग़्ोरा् बता कर ननराधार कर देते हैं।

दृनष्ट-सृनष्टवाद के नाम से प्रनसि नवचारधारा के अनुसार ि◌ष्टा और दृश्य पदार्थ एक ही हैं। ि◌ैसे मकडी अपने ही ि◌रीर में से ि◌ाला बनाती है, उसी तरह मन भी अपने ही ि◌रीर से ि◌ाग्रत अवस्ा् में यह स्ूल संसार रचता है और सुषुद्धप्त में इस संसार को वापस ले लेता है। माननसक वृनत्त बाहर आ कर पदार्थ बन ि◌ाती है।

माननसक अनवद्या के कारण ही दृश्य की द्धस्नत है। बाहर तो केवल प्रकाि और स्पन्दन है। मन ही आकार और रंग देता है। यह सब मन का ही धोखा है। यह एक दृनष्टकोण है, प्रत्यक्ष ज्ञान का एक नसिान्त है।

आन्तररक मन और बाह्य तन्मात्रा के स्पन्दन का पारस्परिक प्रभाव ही वह पदार्थ या संसार है ि◌ो आप देखते हैं। पाूँचों ◌ंतन्मात्राओं ◌ंके साद्धत्त्वक अंि से मन बनता है। बाहर प्रकाि है। सूयथ भी प्रकाि उत्पनिथत करता है। आूँख अनग्न-तत्त्व से बनी है। मन का वह अंि भी अनन-तत्त्व से बना है ि◌ो देखता है। इसनलए अनन अनन को देखती है। मन का वह अंि ि◌ो ि◌ब्द-तन्मात्रा से बना है, सुन सकता है। ि◌ब्द बाहर आकाि से आता है, इसनलए मन का आकाि बाहर के आकाि को सुनता है। परन्तु आत्मा प्रत्येक वस्तु को देख सकती है, सुन सकती, स्वाद ले सकती और स्पिथ कर सकती है। आत्मा आत्मा से देखी ि◌ा सकती है। इसनलए आप ि◌ो कुछ भी बाहर देखते हैं, सब आत्मा ही है। **सवछ खन्दिं ब्रह्म** -ननश्चय ही प्रत्येक वस्तु ब्रह्म है।

पाश्चात्य शचशकत्सा ि◌ा का मत

पाश्चात्य नचनकत्सा ि◌ास्त्र के अनुसार बाहरी प्रकाि के स्पन्दन दृनष्ट-पटल पर - पडते हैं और वहाूँ पदार्थ का नवलोम आकार बन ि◌ाता है। वे स्पन्दन दृग्-क्षेत्र तर्ा दृग् चेतक द्वारा निर के पश्च भाग में मद्धस्तष्क के पश्चकपाल-खण्ड के केन्द्र में पहुूँचते हैं और वहाूँ उसी पदार्थ का सीधा आकार बनता है। तभी आप अपने सामने के पदार्थ को देखते हैं।

साोंख्य-दिछन के अनुसार प्रत्यक्ष ज्ञान

प्रत्यक्ष ज्ञान की असली नभनत्त पुरुष है निसका पाश्चात्य नचनकत्सकों ◌ंऔर मनोनवज्ञाननयों ◌ंको ज्ञान तक नहीं ◌ं है। मांसल चक्षु केवल दिथन के नलए बाह्य करण है। यह दृनष्ट की इद्धन्द्रय नहीं ◌ंहै। इद्धन्द्रय-दृनष्ट तो मद्धस्तष्क में द्धस्त एक केन्द्र है। यही बात सारी इद्धन्द्रयों ◌ंकी है। मन इद्धन्द्रयों ◌ंसे सम्बि है, इद्धन्द्रयाूँ तत्सम्बन्धी मद्धस्तष्क केन्द्रों ◌ंसे, मद्धस्तष्क केन्द्र स्ूल इद्धन्द्रयों ◌ं(करणों)◌ं से और स्ूल करण बाह्य नवषयों ◌ंसे सम्बि हैं। मन इद्धन्द्रय-ज्ञान को बुद्धि के सम्मुख रखता है और बुद्धि पुरुष (अर्ाथत् अभौनतक ि◌ीव आत्मा) के सम्मुख रखती है। वास्तनवक दिथन तभी होता है। पुरुष बुद्धि को आदेि देता है। इसके बाद बुद्धि उस नवषय की भलाइयों ◌ंतर्ा बुराइयों ◌ंकी तुलना करके, ननश्चय
करके, मन को कमेद्धन्द्रयों ◌ंके द्वारा कायथ सम्पन्न करने की आज्ञा देती है। बुद्धि प्रधानमन्त्री और न्यायाधीि है ि◌ो मन-वकील के बयान सुनती है। मन वकालत भी करता है और प्रधान सेनापनत का काम भी करता है। बुद्धि की आज्ञा नमलने पर मन प्रधान सेनापनत का काम करता हुआ पाूँच कमेद्धन्द्रय-रूपी अपने पाूँच सैननकों ◌ंद्वारा कायथ कराता है। सांख्य-मत के अनुसार यह दिथन का नसिान्त है। ध्यान दें नक नहन्दू-दिथन में नवषयों ◌ंका प्रनतपादन नकतना स्पष्ट है।

पहले स्ूल आूँख करण होती है। यह पदार्ों का अंक इद्धन्द्रय-केन्द्र तक पहुूँचाती है। नफर मन का सम्बन्ध इद्धन्द्रय-केन्द्र और बाह्य स्ूल करण से हो ि◌ाता है। नफर मन उसी अंक को बुद्धि तक पहुूँचाता है। तब अहंकार

की अनभव्यद्धि होती है, ो अपना अद्धस्तत्व प्रसुतुत करके अनभमान का स्वरूप ले लेता है। तब इस नक्रया-प्रनतनक्रया 1 पररणाम आत्मा के आगे पहुँचता है ो उस पदार्थ को इस पररणाम के प्रकाि देखती है।

इद्धन्द्रयार्थसनन्नकषथ अर्ाथत् इद्धन्द्रयों ंऔर नवषयों ंके संस्पिथ द्वारा भौनतक ज्ञान प्र होता है। प्रपंच-नवषय को ानिने के नलए इद्धन्द्रय, अन्तिःकरण और ीव इन तीनों ंआवश्यकता होती है। इद्धन्द्रय अपने नवषय को देखेगी, मन उसको प्रकट करेगा और बु आभास-चैतन्य की सहायता से उसको समझेगी। मन, इद्धन्द्रयाँ और करण तीनों ंइकट्ठे हो ायें, तभी नकसी पदार्थ का प्रत्यक्ष ज्ञान (Perception) हो सकता है। पदार्थ इद्धन्द्रयों ंके संसगथ में आता है। इद्धन्द्रयाँ मन से सम्बि हैं। मन का आत्मा से सम्बन्ध होता है। आत्मा प्रकाि देता है। यह भौनतक गत् के सम्बन्ध में है।

वेदात का शसात

अदै्वैत दिथन के नसिान्त के अनुसार हमारे अन्दर का चैतन्य प्रत्यक्ष ज्ञान की सम्भावना बनाता है। हमारे अन्तर की चेतना नवषय की चेतना से संयुि होती है और पहुँचाने के नलए पररणाम में प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। इसका यह अर्थ नहीं ंहै नक मन और इद्धन्द्रयों ंका कुछ उपयोग ही नहीं ंहै। दिथन को तत्सम्बन्धी नवषयों ंके सार् यर्ास्र्ान इद्धन्द्रयाँ आवश्यक है। आत्मा के चैतन्य-स्वरूप होने से इद्धन्द्रयों ंकी ननरर्थकता नसि नहीं ंहोती; क्ोंनक ये प्रते्येक इद्धन्द्रय का नवषय-नविेष ननरूपण करती हैं।

वेदान्तमतानुसार मन आँख के द्वारा बाहर आता है और स्वयं बाह्य पदार्थ का रूप बन ाता है। इद्धन्द्रयों ं के मागथ से अन्तिःकरण-वृनत्त प्रवेि करती है, नवषय-अज्ञान को हटाती है और नवषयाकार अर्ाथत् पदार्थ का स्वरूप बन कर उस पदार्थ को आपकी दृनष्ट के समुमुख लाती है । वृनत्त का काम मन के आवरण को भंग करना है।

वास्तव में मन की एक नकरण ही बाहर ा कर पदार्थ का रूप तर्ा आकार धारण करती है और उसे ढक लेती है। तभी प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। पुस्तक का ज्ञान तभी हो सकता है ब मन पुस्तक का रूप बन ाता है। मन की आकृनत और बाह्य आकार नमल कर पदार्थ बनता है। ो-कुछ भी पदार्थ आप बाहर देखते हैं, मन में उसका आकार अवश्य होता है।

ब आप नकसी आम के बगीचे से हो कर ननकलते हैं तो आपके मन की एक नकरण आँख के द्वारा बाहर ननकल कर एक आम को घेर लेती है। यह आम का स्वरूप बन ाती है। इस नकरण को वृनत्त कहते हैं। ढक लेने की नक्रया को वृनत्त-व्याद्धप्त कहते हैं। पदार्थ और उपहत चैतन्य को आवरण ढक लेता है, उसको हटाना वृनत्त का काम है। ो आवरण पदार्थ-रूप आम को ढके हुए है, वह वृनत्त द्वारा दूर हो ाता है। वृनत्त के सार् चैतन्य (वृनत्त -सनहत चैतन्य) होता है। यह चैतन्य पदार्थ-रूप आम को प्रकानित करता है। इसे फल-व्याद्धप्त कहते हैं। निस प्रकार टाचथ के प्रकाि में पदार्थ भी प्रकाि में आ ाते हैं, उसी प्रकार वृनत्त-चैतन्य पदार्थ को प्रकानित कर देता है। नफर आम का प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। मन संकल्प-नवकल्प करता है नक यह आम है या नहीं।ं बुद्धि मन की सहायता करती है और पूवथ अनुभव के द्वारा ननश्चय करती है नक आम है। नचत्त अनुसन्धान करता है नक मुझे आम नकस प्रकार नमल सकता है। “क्ा मैं मानलक से पूछूं या माली से माँगूं ?" अहंकार कहता है, "मुझे नकसी-न-नकसी प्रकार आम नमलना ही चानहए। मैं इसे चाहता हूँ।" नफर मन कमेद्धन्द्रयों ंको कायथ करने का आदेि देता है।

ब आप आम के वृक्ष को देखते हैं तो यह आपसे बाहर का पदार्थ है। इसमें बाह्यता है। आम का वृक्ष माननसक पदार्थ है। इसकी एक माननसक सूमृनत–न्य आकृनत भी है। मन से नभन्न (पृर्क्) आम का वृक्ष है ही नहीं।ं नकसी वृक्ष की सत्ता आप मन के द्वारा ही ान सकते हैं। मन के अन्दर एक आकृनत होती है। वह माननसक आकृनत और बाह्य पदार्थ नमल कर आम का वृक्ष बनता है। यनद आप आँखें बन्द भी कर लें तो सूमृनत के द्वारा ही

आप माननसक आकृनत देख सकते हैं। पनत्तयों ंका हरा रंग प्रकाि-स्पन्दों ंके एक ननननश्चत प्रमाण के कारण बनता है। ये प्रकाि-स्पन्द आँख की पुतली से टकराते हैं और मद्धस्तष्क के नपछले भाग में दृनष्ट के केन्द्र तक पहुँचाये िाते हैं। नवज्ञान कहता है नक आम की पनत्तयों ंमें सूयथ की नकरणों ंको भेद कर केवल हरा रंग ग्रहण करने की िद्धि रहती है।

आपका िरीर भी आपके नलए उसी प्रकार बाह्य पदार्थ है िैसे नक वह आम का वृक्ष। यह भी एक माननसक पदार्थ अर्वा माननसक आकार है। आम का वृक्ष आपके िरीर-सम्बन्ध से आपसे बाह्य है। आम का वृक्ष भी उस ननत्य सत्ता में तैरता हुआ एक आभास मात्र है। क्ोंनक आम का वृक्ष िरीर के सम्बन्ध से आपसे बाह्य है और आपका िरीर भी बाह्य पदार्थ है, इसनलए आम के वृक्ष की बाह्यता अर्वा इस संसार की बाह्यता का भाव अब ननमूथल हो िाता है। इसी प्रकार आन्तरर‍कता का भेद है। यनद बाह्यता िाती रहे तो आन्तरर‍कता कहाँ रहेगी ? बाह्यता और आन्तरर‍कता ये दोनों ंिब्द भ्रममात्र हैं और मन की कल्पनाएँ हैं। इन कहलाने वाली बाह्यता और आन्तरर‍कता के पीछे एक ही ननत्य सत्ता अर्वा परम सत्ता है। वह ननत्य अनन्त 'मैं' है। यह आपकी अपनी आत्मा है।

मन ही भेद उत्पन्न करता है

चक्षु मन के समुमुख कुछ एक रूप या आकार उपद्धस्त करते हैं। मन उनको अच्छा या बुरा ननश्चय करता है। यह कहता है, "यह आकार सुन्दर है, यह भद्दा है, यह अच्छा है।" यहाँ ही बन्धन और दुिःख आता है। अच्छा-बुरा, सुरूप और कुरूप, यह सब मन की कल्पना मात्र है। यनद मन बना सकता है तो नवनाि भी कर सकता है। इसी प्रकार कान कुछ एक िब्दों ंके स्पन्द मन के समुमुख उपद्धस्त करते हैं। मन कहता है, "यह प्रिंसा है, यह आक्षेप है।" आँख और कान का नंकंनचत् भी दोष नहीं ंहै। वे ननदोष हैं। मन ही िैतानी करता है।

मानशसक बोध क्रमििः होता है

मन केवल परर‍द्धच्छन्न पदार्ों का नचन्तन कर सकता है। हरे पदार्थ का ध्यान नकये नबना मन हरर‍याली का ध्यान नहीं ंकर सकता।

मन ननरवयव है। वह केवल एक ही नवचार एक समय में ग्रहण कर सकता है। यह वैकों ंका नसान्त है। ये वेदान्ती भी िो मन को सावयव बताते हैं और इसी के नलए बोरनारीदृष्टान्त देते हैं अर्ाथत् उसे कुलटा स्त्री घर का धन्धा करती हुई भी उपपनत्त में लगाये रखती है, यह मानते हैं नक उस समय उसके मन की नविेष वृनत्त उपपनत्त में होती है और केवल सामान्य वृनत्त घर के काम में होती है।

मनुष् का मन एक समय में एक ही पदार्थ को ग्रहण कर सकता है, यद्यनप यह एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर ऐसे अद्भुत वेग से िा सकता है नक कुछ वैज्ञाननकों ंने ननश्चय नकया है नक यह एक समय में अनेक वसुतुओं ंको ग्रहण कर सकता है। मन एक प्रकार का द्वारपाल है िो एक समय में एक ही प्रकार का इद्धन्द्रय-ज्ञान माननसक उद्योगिाला में आने देता है। आप एक ही सार् देख और सुन नहीं ंसकते। मन एक समय में एक ही नवचार कर सकता है। परनुतु मन की गनत चपला-सी इतनी तीव्र होती है नक साधारण मनुष् समझता है नक वह एक ही समय में अनेक नवचार रख सकता है।

सीनमत या परर‍नमत मन के द्वारा प्रत्यक्ष ज्ञान, अनुभव या बोध क्रमििः होता है, एक-सार् ही सहसा कई पदार्ों का ज्ञान नहीं ंहुआ करता। एक-सार् अनेक नवषयों ंका ज्ञान केवल ननननवथकल्प समानध में प्राप्त हो सकता है निसमें भूत और भनवष् दोनों ंही वतथमान काल में लीन हो िाते हैं। केवल योगी को ही सारी वसुतुओं ंका एक सार् ज्ञान हो सकता है। संसारी मनुष् का मन सीनमत होता है। वह तो क्रमििः ही ज्ञान प्राप्त कर सकता है। दो नवचार

परस्पर चाहे नितने भी सम्बि क्यों ंन हों,ं एक ही समय में सार्-सार् नहीं ंरह सकते। हमारे अन्तिःकरण का स्वभाव एक क्षण में एक पदार्थ को एक से अनधक रूप में चेतना के समुमुख िाने से रोकता है। यद्यनप नभन्न-नभन्न इद्धन्द्रयों ंसे तत्सम्बन्धी अनेक नवषयों ंका स्पिथ एक ही काल में हो िाता है, नफर भी मन उस द्वारपाल का कायथ करता है िो फाटक में एक समय में एक ही मनुष् को आने देता है। मन एक समय में केवल एक ही प्रकार का संवेदन माननसक उद्योगिाला में भेि सकता। निसके फलस्वरूप सम्यग्दिथन तर्ा सुन्दर आकृनत तैयार होती है।
है

बि मन दृनष्ट के सार् लगा होता है और उधर ध्यान देता है तो यह केवल देखता ही है, सुन नहीं ंसकता। यह एक समय में दोनों ंकाम नहीं ंकर सकता। यह प्रत्येक मनुष् का ननत्य का अनुभव है। िब आपका मन नकसी रोचक पुस्तक में लगा होता है, तो यनद कोई िोर से नचल्लाये भी तो आप नहीं ंसुन सकते; क्योंनक मन कान के सार् नहीं ंहोगा। "मेरा मन अन्यत्र र्ा, इसनलए मैंने नहीं ंदेखा: मेरा मन अन्यत्र र्ा, इसनलए मैंने नहीं ंसुना, क्योंनक मनुष् अपने मन के द्वारा ही देखता है और अपने मन के द्वारा ही सुनता है" (बृहदारण्यकोपननषद् : १-५-३)। िब आप नकसी नवषय पर बडा गम्भीर नवचार कर रहे हों ंतो आप न देख सकते हैं, न सुन सकते हैं और न अनुभव कर सकते हैं। सारी इद्धन्द्रयाँ मन से नवयुि होती हैं। उस समय नचत्त के द्वारा अनुसन्धान की नक्रया चल रही होती है।

अच्छे-अच्छे दािथननक और ऋनष तर्ा मुनन प्राच्य तर्ा पाश्चात्य िगत् के श्रेष्ठ नविेषज्ञ 'एकल नवचार' के नसिान्त को ठीक मानते हैं। वे इस बात पर एक स्वर से सहमत हैं नक वास्तव में मन एक समय में एक वसुतु से अनधक की ओर ध्यान नहीं ंदे सकता। परनुतु निस काल में वह ऐसा करता हुआ प्रतीत होता है, वह असामान्य तीव्र गनत से एक नसरे से दूसरे नसरे तक आगे-पीछे दौडता रहता है। ननरक्षर लोग कहते हैं नक वे एक-सार् ही सुन भी सकते हैं और देख भी सकते हैं। मन बडी तीव्र गनत से दोनों ंओर दौडता है और लोग समझते हैं नक मन दोनों ं काम एक-सार् कर सकता है। यह भारी भूल है। अनग्न की नचनगारी को यनद िल्दी–ल्दी घुमाया िाये तो वह अनग्न चक्राकार होने लगती है। इसी प्रकार यद्यनप मन एक समय में एक ही कायथ कर सकता है—सुनना, देखना, सूँघना और एक समय में एक ही प्रकार का संवेदन ग्रहण कर सकता है; क्योंनक यह एक वसुतु से दूसरी वसुतु पर इतनी िीघ्रता से िाता है नक इसकी क्रमिः की हुई अनेक नक्रयाएँ एक ही अबानधत नक्रया प्रतीत होती है और हमें यह नवश्वास हो िाता है नक मन एक ही सार् कई-कई कायथ करता है।

इन्द्रिय-सोंवेदन में प्रशतपूरक सुशवधा

कुछ मनुष्यों ंमें चक्षुु की अपेक्षा श्रोत्रेद्धन्द्रय नविेष नवकनसत होती है। न्यायाधीिों ंकी श्रोत्रेद्धन्द्रय तीव्र होती है। प्रधान सेनापनतयों ंकी दृनष्ट तीव्र होती है। अपने-अपने कायथ के अनुसार मनुष् इद्धन्द्रय-नविेष को नवकनसत करने को बाध्य हो िाता है। अन्धों ंकी श्रवण–द्धि तीव्र होती है। यनद एक इद्धन्द्रय–द्धि न हो तो प्रकृनत उसकी पूनतथ नकसी अन्य इद्धन्द्रय को अनधक नवकनसत करके कर देती है। मेरा एक नमत्र एक ऐसे अन्धे मनुष् को िानता है िो स्पिथ मात्र से रंग बता सकता है।

वाणी भी पुरुष की दृनष्ट ही है। यहाँ वाणी से अिाय श्रोत्रेद्धन्द्रय के नवषय िब्द का है। िब यह इद्धन्द्रय िाग्रत होती है तो मन पर इसका प्रनतनबम्ब पडता है। मन के ही द्वारा बाह्य नवषयों ंको ग्रहण करने का प्रयत्न होता है; क्योंनक मनुष् मन के द्वारा ही देखता और सुनता है। िब रानत्र में नकसी समय मनुष् ननश्चय नहीं ंकर सकता नक िब्द कहाँ हो रहा है (चाहे वह िब्द घोडे की नहननहनाहट, गधे का रेंकना या कुत्ते का भौंकना हो) वह उसी ओर िाता है निधर से िब्द आ रहा होता है।

अतीन्द्रिय ज्ञान

वास्तव में मन ही देखता, चखता, सूंघता और स्पिथ करता है। िब आप भगवान् कृष्ण के नचत्र का ध्यान करना प्रारम्भ करते हैं, तब नेत्र तो बन्द रहते हैं; नकनुतु आप मन के नेत्रों से नचत्र को देखते हैं।

ताद्धन्त्रक अपने स्थूल चकुषुओं से काम नहीं लेता और सीधे मन के द्वारा देख सकता है। ईश्वर से अनभन्न हुआ भि उसे कारण िरीर की नदव्य दृनष्ट द्वारा देखता है। ज्ञानी ज्ञान चकुषु अर्वा नदव्य दृनष्ट द्वारा देखता है।

ब्रह्म के अवलोकन की शवशध

मन में दृनष्ट और इच्छा पृर्क्-पृर्क् हैं। िि नचत्त में दृनष्ट और इच्छा अनभन्न हैं। और मन की तरह एक-दूसरे से पृर्क्-पृर्क् नहीं हैं।

ब्रह्म को अनुभव करने, सोचने तर्ा तकथ करने के नलए अन्तिःकरण की भी आवश्यकता नहीं है। ब्रह्म को देखने के नलए आँख की आवश्यकता नहीं है। वह स्वयं ज्योनत है। वह सबको प्रकाि प्रदान करता है। वह अन्तिःकरण को प्रकाि प्रदान करता है। वह इद्धन्द्रयों को प्रकाि और िद्धि देता है। वह नचत्स्वरूप है, नचधन है, ज्ञान का भण्डार है। वह आत्मज्ञान द्वारा प्रत्येक नवषय को िानता है। वह अपने अन्दर ही आत्मज्ञान द्वारा सारे संसार को अपने संकल्प से नववतथ रूप में देखता है।

ब्रह्म-दिछन की शवशध

ब्रह्म कोई पदार्थ या नवषय नहीं है निसे देखा िा सके। उसका अनुभव तो साक्षात्कार से ही हो सकता है। ब्रह्मज्ञान आध्याद्धत्मक अनुभव अर्वा आत्म-साक्षात्कार द्वारा होता है निसमें िष्टा, दृश्य और दृनष्ट एक ही सत्ता में लीन हो िाते हैं—िैसे समुि में बुदबुद ।

परिच्छेद- १३

शचत्त और िृशत

शचत्त क्या है?

नचत्त को मानस- िव्य कहते हैं। यह पहली मंनिल के समान है। इससे मन, बुद्धि और अहंकार उत्पन्न होते हैं। यह (नचत्त) महनषथ पतंननल के रियोग का िब्द है। गीता में भी भगवान् कृष्ण ने 'नचत्त' का प्रयोग कई स्थलों पर नकया है।

वेदान्त में नचत्त एक नभन्न मनिःद्धि या प्रवगथ है । कभी-कभी यह मन के ही अन्तगथत आता है। सांख्य-दिथन में यह बुद्धि या महत् तत्त्व के ही अन्तगथत है। पतंननल ऋनष के रियोग का 'नचत्त' (योगनश्चत्तवृनत्तननरोधिः) वेदान्त के 'अन्तिःकरण' के सदृि है।

वेदान्त की पररभाषा में अवचेतन मन को नचत्त कहते हैं। आपके अवचेतन मन का अनधकांअिन्तस्तल में नछपे हुए अनुभवों ंऔर पृष्ठभूनम में िाली हुई उन सूमृनतयों ंका बना हुआ होता है िो नफर प्राप्त हो सकती हैं। नचत्त एक िान्त सरोवर है। इसके ऊपर वृनत्तयों ंकी लहरें उठती हैं। नाम और रूप के कारण ही ये वृनत्त-रूपी लहरें उठती हैं। नाम और रूप के नबना कोई लहर नहीं ंउठ सकती।

सूमृनत या स्मरण, धारणा और अनुसन्धान नचत्त के कायथ हैं। िब आप नकसी मन्त्र का िप करते हैं तो नचत्त स्मरण करता है। यह बहुत-सा कायथ करता है। यह मन या बुद्धि से भी अच्छा और अनधक कायथ करता है।

अवचेतन मन की प्रशक्रया का क्ेषेत्र

माननसक प्रनक्रयाएँ चेतना के क्ेषेत्र तक ही सीनमत नहीं ंहोतीं।ं अवचेतन माननसक प्रनक्रयाओं ंका क्ेषेत्र चेतन माननसक प्रनक्रयाओं ंसे अनधक व्यापक होता है। अपनी नक्रयाओं ंके अनधकांकिो मन स्वयं नहीं ंिानता है। क्ोंनंक व्यद्धि को एक समय में एक ही वसुतु की चेतना हो सकती है; हमारे ज्ञान का एक अंहिी एक समय में हमारी चेतना के समुमुख आ सकता है। केवल दि प्रनतित माननसक नक्रयाएँ चेतना के क्ेषेत्र में आती हैं और नबे्बे प्रनतित अवचेतन मन अर्वा नचत्त में होती रहती हैं। नचत्त में से तैयार हुए सने्दि चेतन मन के तल पर अवचेतन मन के छदाद्वार से घ्रिि आ िाते हैं। हम ब समस्या सुलझाने को बैठते हैं और असफल रहते हैं। नफर उठ कर र्ोडी दूर घूम कर आते हैं और पुनिः प्रयत्न करते हैं, नफर भी नहीं ंसुलझा पाते। अकस्मात् एक नवचार का उदय होता है निसके द्वारा हमारी समस्या सुलझ िाती है। अवचेतन मन इसके सुलझाने का कायथ बराबर कर रहा र्ा।

रानत्र को गनणत या रेखागनणत का कोई प्रश्न ननकालने में आप बारम्बार असफल रहते हैं। प्रातिःकाल िब आप सो कर िागते हैं, तो उस प्रश्न का उत्तर ठीक-ठीक नमल िाता है। यह उत्तर आपके अवचेतन मन से नवद्युत्प्रकाि के समान प्राप्त होता है। ननिा में भी आपका अवचेतन मन अनवराम कायथ करता रहता है। यह सारे तथ्यों ंको व्यवद्धस्र्त करता, उनका वगीकरण करता, उनकी तुलना करता तर्ा उनें् छाँटता है और उपयुि तर्ा सन्तोषिनक उत्तर ननकाल देता है।

कभी-कभी आप रानत्र के दि बिे इस नवचार से सोते हैं नक गाडी पकडने के नलए मुझे प्रातिः दो बिे अवश्य िागना है। आपका नचत्त यह सने्दि ग्रहण कर लेता है और ठीक दो बिे ननश्चय ही आपको िगा देता है। यह अवचेतन मन आपका सच्चा नमत्र और ननरन्तर नवश्वसनीय सहचर है।

इस अवचेतन मन की सहायता से आप अपने दूनषत स्वभाव को बदल सकते हैं। और उन सद्‌गुणों ंकी स्र्ापना कर सकते हैं िो प्रतेे्यक मानव हृदय में रहते हैं। यनद आप - भय से मुि होना चाहते हैं, तो अपने मन से भय का ननषेध कर दें और उसके नवरोधी सद्‌गुण – साहस की माननसक धारणा करें िब साहस की वृद्धि होती है तो भय स्वयं ही दूर हो िाता है। धनात्मक सदा ऋणात्मक को परानित करता है। यह प्रकृनत का अचूक ननयम है। इसे रियोगी प्रनतपक्ष भावना कहते हैं। इसी प्रकार अरुनचकर कायों तर्ा कतथव्यों ंके नलए भी आप रुनच उत्पन्न कर सकते हैं। आप नये स्वभाव, नये आदिथ, नये नवचार, नयी रुनचयाँ और नये आचरण नचत्त में बना सकते हैं और पुरानों ंको बदल सकते हैं।

ृशित

सूमृनत नचत्त का कायथ है। सूमृनत का प्रयोग दो अर्ों में हुआ करता है। िब हम कहते हैं नक महािय िॉन की स्मरण िद्धि अच्छी है, तो हमारा तात्पयथ यह होता है नक महािय िॉन के मन में अतीत के अनुभवों ंको संनचत करने की अच्छी क्षमता है। कभी-कभी हम कहते हैं, "मुझे उस घटना का कुछ स्मरण नहीं ंहै।" इसमें कुछ वषथ

पहले ◌ो घटना हो चुकी है, उसको अपने मौनलक स्वरूप में चेतना के स्तर के ऊपर आप नहीं ◌ंला सकते हैं। यह एक सूमृनत की नक्रया है। सूमृनत से आपको नया ज्ञान प्राप्त नहीं ◌ंहोता। यह तो पुराने ज्ञान का ही अनुभव है।

यनद नया अनुभव हो तो सूमृनत के द्वारा आप उसे पूणथ रूप से दोबारा याद कर सकते हैं। साधारण स्मरण कायथ में एक सामनयक प्रनतनननध (सहकारी) हुआ करता है। वैयद्धिक सूमृनत में एक नननदथष्ट प्रनतनननध (सहकारी) होता है। ◌ो नकसी दूसरे के सार् कायथ करता है, वह सहकारी प्रनतनननध कहलाता है। गनणत नवद्या में एक अज्ञात संख्या के पूवथ ◌ो संख्या या अपूणथ अंबीगनणत में लगाया ◌ाता है, वह भी सहकारी (Coefficient) कहलाता है।

ृशित क्योकोंरउशदत होती है ?

मान लें नक अपने नकसी नमत्र से आपको एक सुन्दर पंखी नमली है। ◌ब आप पंखी को काम में लाते हैं, तो यह कभी-कभी आपको उस नमत्र का स्मरण नदलाती है। र्ोडे समय तक आप उसका नचन्तन करते हैं। यह पंखी उद्बोधक या सूमृनत-हेतु का काम करती है।

यनद आपका भाई लम्बा है, तो दूसरे स्ान पर इसी प्रकार के दूसरे लमे्ब मनुष् को देख कर आपको अपने भाई का स्मरण हो ◌ाता है। इस सूमृनत का कारण पदार्ों का सादृश्य है।

मान लीनिए, आपने मिास में एक वामन को देखा है। ◌ब आप नकसी बहुत लमे्ब मनुष् को देखते हैं, तो आपको उस वामन की याद आती है निसे आपने मिास में देखा र्ा। नकसी बडे रिामहल को देख कर नकसान की झोंपंडी या गंगा के नकनारे नकसी संन्यासी की पणथकुटीर याद आती है। यह सूमृनत पदार्ों की नवपरीतता के कारण होती है।

बि नकसी नदन आँधी चली हो और आप सडक पर ◌ाते समय नकसी उखडे हुए वृक्ष को देखते हैं, तो आप ननष्कषथ ननकाल लेते हैं नक वृक्ष आँधी के कारण नगरा है। यह सूमृनत कायथ-कारण-सम्बन्ध द्वारा हुई है।

नये संस्कार पुराने संस्कारों ◌ंको बहा देते हैं। यनद संस्कार नवीन तर्ा सद्यस्क हों,◌ं तो उन्ें स्मरण करना सुगम होता है। वे ◌ीघ्र ही अन्तमथन की गहराई से सचेत मन के ऊपर पुनिः आ ◌ाते हैं। पुराने संस्कारों ◌ंका नव-ागिरण होता है। यनद रिाकीय पदानधकारी बन ◌ाने के दि वषथ पश्चात् आप एक बार उस नवद्यालय में ◌ायें, हिाँ से आपने निक्षा प्राप्त की र्ी, तो आपके नवद्यार्ी ◌ीवन के पूवथ-संस्कार नफर सिीव हो ◌ायेंगे। अब अपने भूतपूवथ अध्यापकों,◌ं नमत्रों,◌ं पुस्तकों ◌ंऔर अन्य अनेक वसुतुओं ◌ंका स्मरण करेंगे।

अच्छी ◌ृशत के लक्षण

अच्छी सूमृनत के ये चार लक्षण है: यनद आप नकसी पुस्तक का कोई पररचे्छेद एक बार पढ़ें और उसको भली प्रकार दोहरा सकें, तो यह इस बात का सूचक है नक आपकी सूमृनत बहुत अच्छी है। यह 'सुगमता' कहलाती है। यनद आप उसी नवषय को नबना घटाये-बढ़ाये, नबना संयिोक-नवयिोन दोहरा सकें, तो यह 'अवैकल्य' कहलाती है। यनद आप नकसी बात को या नकसी पररचे्छेद को दीघथ काल तक स्मरण रख सकते हैं, तो यह 'धारणा' कहलाती

है। यनद आप आवश्यकता पडने पर तत्काल नकसी पररचे्छेद को नबना नकसी कनठनाई के दोहरा सकें, तो यह 'उपाहरण' कहलाता है।

अनुिरणकी प्रशक्रया

बि आप नकसी बात को स्मरण करना चाहते हैं, तो आपको माननसक प्रयत्न करना पडता है। आपको अन्तिःकरण के नवनभन्न स्तरों ंकी गहराई में नीचे-ऊपर िाना पडता है और नवनभन्न प्रकार की असंगत वसुतुओं ंके नवनचत्र नमश्रण में से ठीक अभीद्धित वसुतु का चयन करना होता है। िैसे रेलगाडी की िाक छाँटने वाला बाबू पत्रों ं के खाने में नीचे-ऊपर हार् नहला कर ठीक इद्धच्छत पत्र को ननकाल लेता है, इसी प्रकार यह अन्तिःकरण भी अपने नभन्न-नभन्न कोष्ठकों ंमें से इद्धच्छत वसुतु को ननकाल कर सामान्य चेतना के स्तर पर ले आता है। अन्त:करण नभन्न-नभन्न पदार्ों के ढेर में से ठीक इद्धच्छत वसुतु को ननकाल सकता है।

एक बडे िल्य-कमथ-नचनकत्सालय में सहायक िल्य-नचनकत्सक एक समय में एक ही रोगी को वररष्ठ ल्यि-नचनकत्सक के परामिथ-कक्ष में परीक्षा के नलए भेिता है। इसी प्रकार मन भी मनोद्वार से एक नवचार को ही माननसक उद्योगिाला में परीक्षा करने देता है। अवचेतन मन सूमृनत-कायथ के समय चेतन मन की देहली पर और सब वसुतुओं ंको दबा कर यर्ासमय उनचत वसुतु ही लाता है। यह ननयन्त्रक का कायथ करता है और केवल प्रासंनगक सूमृनतयों ंको ही गुिरने देता है। यह कैसी आश्चयथिनक यन्त्र-रचना है! इस नद्वनवध मन का संचालक कौन है? इसको नकसने बनाया? वह नकतना महान् व्यद्धि होगा! िब मैं उसका ध्यान करता हूँ, तो रोम खडे हो िाते हैं। बि नलखता हूँ, तो लेखनी कद्धम्पत हो िाती है। क्ा और उसके सार् रहना नहीं ंचाहते? उसके सम्पकथ में रहना नकतना बडा सम्मान (नविेषानधकार) और हषथ की बात है!

बि आप नकसी बात को स्मरण करने का प्रयास करते हैं, तो कभी-कभी वह िीघ्र स्मरण नहीं ंआती। कुछ समय पश्चात् वह नवसूमृत बात स्वयमेव चेतन मन में कौंधं उठती है। इसका क्ा कारण है? यह सूमृनत लोप है। उस बात का संस्कार नचत्त के भण्डार में नीचे दब गया है। छत-द्वार के द्वारा उसे चेतन मन के ऊपर लाने के नलए नचत्त को कुछ अभ्यास करके नवश्लेषण तर्ा छूँटाई करनी पडती है। र्ोडे से श्रम के अनन्तर पुराने संस्कारों ंकी सूमृनत होने लगती है और वह नवसूमृत नवचार अर्वा नाम, निसे कुछ समय पूवथ आप स्मरण करना चाहते र्े, चेतन मन में अकस्मात् कौंधं उठता है। मद्धस्तष्क में कुछ नवचार संकुलता अवश्य रही होगी निससे नवसूमृत नवषय, नवचार अर्वा व्यद्धि के स्मरण आने में बाधा हुई, ज्यों ंही यह नवचार संकुलता हट िाती है, तो नवसूमृत नवचार - चेतन मन के ऊपरी तल पर तैरने लगता है। िब मन िान्त होता है, तो स्मरण िद्धि तीव्र होती है।

रिणा–न्तक्त

िो लोग माननसक काम अनधक करते हैं, ब्रह्मचयथ व्रत पालन नहीं ंकरते और निन्ें माननसक व्यर्ा और नचन्ता अनधक सताती हैं, उनकी स्मरण िद्धि िीघ्र िाती रहती है। िब वृिावस्र्ा के कारण आपमें सूमृनत लोप होने लगता है, तो इसका पहला नचह्न यह है नक आपको मनुष्ों ंके नाम स्मरण करने में कनठनाई होती है। इसका कारण खोिने कहीं ंदूर नहीं ंिाना है। सारे नाम यादृद्धच्छक होते हैं। वे नाम-पत्र की भाँनत होते हैं। नाम के सार् कोई साहचयथ नहीं ंहोता। मन प्रायिः साहचयथ रखता है; क्ोंनक उससे सूमृनत के अंक गहरे हो िाते हैं।

वृिावस्ा में भी आप नकन्ीं ंघटनाओं ंको याद रख सकते हैं; क्ोंनंक उनमें साहचयथ सम्बन्ध होते हैं। वृिावस्ा में भी आप सूकूल और कालेि में पढ़े हुए कुछ अंिों ंको भली प्रकार स्मरण रखते हैं; परन्तु िो अंि आपने प्रभात में ही नया पढ़ा है, सन्ध्या समय में उसको याद रखने में आपको कनठनाई मालूम होती है। इसका कारण यह है नक मन ने अपनी धारणा िद्धि खो दी है। मद्धस्तष्क के कोिाणुओं ंका अपकषथ हो चुका है।

बाल्यकाल में मन की धारणा िद्धि अच्छी होती है; परन्तु समझने की िद्धि नहीं ं- होती १६ वें १८ वें, २० वें वषथ में समझने की िद्धि प्रकट हो िाती है। इस अवस्ा में स्मरणा-िद्धि भी अनधक होती है। ३० वषथ की अवस्ा में मन द्धस्र हो िाता है। इससे कम अवस्ा में मन में बडी चंचलता होती है। ३० वषथ से कम अवस्ा का मनुष् स्वयं नवचार कर ननश्चय नहीं ंकर सकता। उसमें ननणथय िद्धि नहीं ंहोती। ४५ वषथ के बाद धारणा-िद्धि घटने लगती है। स्मरण िद्धि भी कम होती िाती है। िो कुछ उसने पहले सीखा है, उसे ही धारण कर सकता है। वह नये नवज्ञान नहीं ंसीख सकता। ब्रह्मचयथ मनुष् की धारणा-िद्धि और अन्य माननसक िद्धियों ंके नवकास में सहायता करता है।

परररचे्छेद- १४

सोंस्कार

सोंस्कार क्या है ?

मन-रूपी समुि में वृनत्त उठती है, कुछ काल तक यह नक्रया करती है और तब यह सामान्य चेतना की देहली के नीचे बैठ िाती है। चेतना के उपररस्तर से, िहाँ यह कुछ काल तक अनभभावी रही है, अवचेतन मन (नचत्त) के क्षेत्र में गहरी उतर िाती है। वहाँ इसका िोधन-कायथ चालू रहता है और संस्कार बन िाती है। एक

सचेत नक्रया चाहे वह संज्ञानात्मक, भावात्मक या नक्रयात्मक हो, चेतना की देहली के ठीक नीचे सूक्ष्म और अव्यि रूप धारण कर लेती है। इसे संस्कार कहते हैं।

शिित-सोंस्कारो ोंका नव-जागरण

अवचेतन मन या नचत्त में संस्कार सनन्ननहत रहते हैं। अवचेतन मन दूसरे िब्दों ंमें सुषुप्त चेतन मन भी कहलाता है। आत्मपरक मन, अवचेतन मन, सुषुप्त चेतन मन तरा नचत्त पयाथयवाची िब्द हैं। इस अवचेतन मन का स्ान अनुमद्धस्तष्क या मद्धस्तष्क का नपछला भाग है। आप गत अनुभवों ंको अवचेतन मन में संस्कारों ंके भण्डार से स्मरण कर सकते हैं। भूतकाल का सूक्ष्मतम नववरण तक सुरनक्षत रखा रहता है, उसमें से कभी भी नंकंनचन्मात्र भी लुप्त नहीं ंहोता। िब सूक्ष्म संस्कार अवचेतन मन के ऊपर पुनिः बडी वृनत्त के रूप में आ िाते हैं, पुरानी वृनत्त िब अवचेतन मन के उपररस्तल पर नफर आ िाती है तो उसे सूमृनत कहते हैं। संस्कार की सहायता के नबना सूमृनत का आना सम्भव नहीं ंहै।

सोंस्कार कैसे बनते हैं ?

इद्धन्द्रय-ज्ञान का अनुभव नचत्त की गहराई में उतर िाता है और वहाूँ संस्कार बन िाता है। िब मन को नकसी वसुतु का अनुभव होता है तो उसी समय नचत्त में उसका एक संस्कार पड िाता है। इस वतथमान अनुभव और नचत्त में पडने वाले संस्कार के बीच में कुछ अन्तराल नहीं ंपडता। एक अनुभव-नविेष संस्कार-नविेष छोडता है। इस अनुभव की सूमृनत उसी संस्कार से बनती है िो नक उस नविेष अनुभव से बना रा।

बि आप सन्तरे को पहली बार देखते हैं और चखते हैं तो आपको सन्तरे का ज्ञान होता है। आप उसके स्वाद को िानते हैं। आप पदार्थ-रूप सन्तरे को िान लेते हैं। तुरन्त अवचेतन मन में उसका संस्कार बन िाता है। नकसी समय भी यह संस्कार पदार्थ रूप सन्तरे और उसके ज्ञान की सूमृनत बना सकता है। यद्यनप पदार्थ और ज्ञान-नक्रया में भेट नकया िा सकता है, नफर भी ये अनभन्न रहते हैं।

शवचार तरा सोंस्कार का कायछ-कारण-सम्बन्ध-चक्र

बाहरी आवेग के कारण नवषय-पदार्थ मन में संस्कारों ंको िाग्रत कर देता है। इसनलए संकल्प उठता है।
बि नकसी पहले देखी हुई गौ का आप नवचार करते हैं और आप मन में 'गौ' िब्द का उच्चारण करते हैं, तभी मन में गौ की मूनतथ आती है। तब नवचार आकार लेता है। िैसे बीच से वृक्ष और नफर वृक्ष से बिी बनता है, उसी प्रकार संस्कार से संकल्प और संकल्प से संस्कार बनते हैं। बिी से वृक्ष होता है और वृक्ष में नफर बिी बनता है। यह कायथ-कारण का चक्र अर्वा बिी-वृक्ष-न्याय कहलाता है। इसी प्रकार वृनत्त संस्कार को बनाती है और संस्कार नफर वृनत्त बनाता है। िैसे बिी- -वृक्ष के उदाहरण में उसी प्रकार यहाूँ भी कायथ-कारण का चक्र चलता रहता है। आन्तररक या बाह्य उद्बोधक िद्धि के बल से ये बिी-रूप संस्कार नफर फैल िाते हैं और आगे नक्रयाओं ंको िन्म देते हैं। यह वृनत्त तरा संस्कार का चक्र अनानद है; परनुतु नदव्य ज्ञान और मोक्ष की प्राद्धप्त होने से इसका अन्त हो िाता है। ये प्रकृनत में लय हो िाते हैं। िीवनुमुि पर इनका प्रभाव नहीं ंपडता। ननरन्तर समानध के द्वारा इन संस्कारों ंको भून देना चानहए। तभी आप िन्म और मृतुयु से मुि हो सकेंगे।

सोंस्कारो ोंपर सोंयम

संस्कार को अवनिष्ट िद्धि भी कहते हैं। िब सारी वृनत्तयाूँ और नवचार नष्ट हो िाते हैं, तो संस्कारों ंसनहत मन िेष बचता है। यह सूक्ष्म मन कहलाता है। वेदान्त की िब्दावली में इसे अन्तिःकरण मात्र कहते हैं।

सारे संस्कार एक-सार् मन में रहते हैं। धीरे-धीरे वृनत्तयाँ िान्त हो िाती हैं और मन में अपना अंक छोड िाती हैं। ये अंक संस्कार होते हैं। इन संस्कारों ंसे स्मृनत बनती है। यनद आपको योग-दृनष्ट प्राप्त है तो आप मनुष् की माननसक उद्योगिाला में होने वाले आश्चयों को साफ-साफ देख सकते हैं—कैसे वृनत्त उठती है, कैसे िान्त होती है और कैसे संस्कार बनता है। आप आश्चयथचनकत रह िायेंगे। इन संस्कारों ंके ऊपर नकया हुआ संयम अवनिष्ट िद्धियों ंका ज्ञान कराता है। योगी संस्कारों ंका अपरोक्ष ज्ञान प्राप्त करके पूवथ-िन्मों ंकी अपरोक्ष चेतना पाता है। ऐसा ज्ञान नवश्वनवद्यालयों ंमें कनठनाई से प्राप्त होता है। सत्पात्र साधकों ंको योगी ही ऐसा ज्ञान दे सकता है।

सद् तर्ा असद् सोंस्कार

िद्धियों ंकी भाँनत संस्कार भी एक-दूसरे की सहायता अर्वा ननरोध करते हैं। िब आप नकसी मनुष् को गम्भीर रोग से ग्रनसत देखते हैं, तो आपके मन में दया का संचार हो िाता है, आपके पुराने दयामय कमों के सभी संस्कार परस्पर सद्धम्मनलत हो िाते हैं तर्ा आपको रोगी की सहायता और सेवा करने को बाध्य कर देते हैं। इसी प्रकार, िब आप नकसी मनुष् को गम्भीर दुिःखी तर्ा तंगहाल दिा में देखते हैं तो आपके पुण्य कमों के मारे संस्कार अवचेतन मन के ऊपर आ िाते हैं और आपको उसकी सहायता के नलए बाध्य कर देते हैं। आप अपनी सम्पनत्त में से उसे भी एक भाग देने लगते हैं।

िब नकसी सद् कायथ का संस्कार उभरा हुआ हो तो उसका नवसदृि संस्कार भी प्रकट हो सकता है और उसके पूवाथगत संस्कार भी पूणथता में बाधक हो सकता है। यह सद् तर्ा असद् संस्कारों ंकी टक्कर है।

िब आप अपना मन परमात्मा में द्धस्र्र करने की चेष्टा करते हैं और पनवत्रता की भावना करते हैं, ठीक उसी क्षण में सारे कुद्धत्सत नवचार और संस्कार आपके नवरुि लडने के नलए उग्रता तर्ा प्रनतिोध-भावना के सार् फूट पडते हैं। इसे संस्कारों ंका िमघट कहते हैं। अच्छे संस्कार भी आपकी सहायता और कुसंस्कारों ंको भगाने के नलए इकट्ठे हुआ करते हैं। श्री स्वामी अद्वैतानन्द िी के नपता चण्डी के बडे भि र्े। मृत्युकाल में वह अधथचेतन-अवस्र्ा में र्े। युवावस्र्ा में नितने चण्डी के स्तोत्र के श्लोक उन्ोंने कण्ठस्र् नकये र्े, वह उन सबकी आवृनत्त करने लगे। यह आध्याद्धत्मक संस्कारों ंका िमघट है।

भूतपूवछ सोंस्कारो ोंसे प्रारब्ध बनता है

आपके िन्म-समय में मन कोरा कागि नहीं ंहोता है। यह संस्कार का, प्रवृनत्तयों, ंअनभरुनचयों ंआनद का भण्डार होता है। बालक अपने संस्कारों ंसनहत उत्पन्न होता है। उसके नवगत अनुभव माननसक और नैनतक वृनत्तयों ंतर्ा िद्धियों ंमें बदल िाते हैं। आनन्दयुि अर्वा दुिःखप्रद अनुभवों ंसे मनुष् सामग्री इकट्ठी करके माननसक अर्वा चाररत्र्य की िद्धियाँ बनाता है। भौनतक अनुभव बौद्धिक िद्धियाँ बन िाते हैं। संसार से इद्धन्द्रयों ंद्वारा िो रूप-रेखा अंनकत होती है, उससे ही मन का उनद्वकास होता है। सारे संसार का पूणथ अनुभव प्राप्त करने के नलए इसे अनेक िरीर धारण करने पडेंगे। प्रत्येक मनुष् अपने संस्कारों ंसनहत िन्म लेता है और वे संस्कार नचत्त में, िो प्रारि का अनधष्ठान है, अन्तिःस्र्ानपत रखे अर्वा अंनकत रहते हैं। भौनतक िीवन में उसे और बहुत से संस्कार प्राप्त हो िाते हैं और ये पूवथ के भण्डारों ंसे नमल कर आगामी संनचत कमथ बन िाते हैं।

सारे संस्कार प्रच्छन्न कायथकलाप के रूप में नचत्त में ननश्चेष्ट पडे रहते हैं, न केवल इसी िन्म के, अनपतु अनानद काल से सभी अनेक पूवथ-िन्मों ंके भी पिु-िीवन के संस्कार, देव-योनन के संस्कार, रािा के िीवन के, कृषक के िीवन के सारे संस्कार नचत में नछपे पडे रहते हैं। मनुष्-िन्म में केवल उसी प्रकार के संस्कार नक्रयािील होते हैं िो उस िन्म के उपयुि होते हैं। अन्य प्रकार के संस्कार प्रच्छन्न और ननद्धिय रहते हैं।

ैसि वषथ-भर का खाता बन्द करके नये वषथ का खाता खोलने वाला व्यापारी नपछले वषथ की सारी रकमें नये खाते में नहीं ंनलखता, अनपतु अन्त िेष ही नलखता है; इसी प्रकार िीवात्मा नये मद्धस्तष्क को अतीत िीवन के अनुभवों ंपर उसके ननणथय, निस ननष्कषथ अर्वा ननणथय पर वह पहुँचा है, उसे दे देता है। यही वह सामान है िो नये िीवन को नमलता है, यही माननसक सामग्री नये मकान को नमलती है। यह वास्तनवक सूमृनत होती है।

कमछ

आपके नपछले कमों के अनुसार आपके िरीर और मन का झुकाव एक नननश्चत नवनध से कमथ करने की ओर होता है और आप यन्त्र के समान ठीक उसी झुकाव के अनुसार कायथ करते हैं। आप भूल से इन कमों का कताथपन अपने ऊपर आरोनपत कर लेते हैं और इस प्रकार मामला और भी नबगाड लेते आपके बहुत से काम
नूयूनानधक स्वभावत: ही होते रहते हैं।

यनद आप ननष्काम भाव से कमथ करने में कनठनाई देखें तो सारे कायथ करते हुए केवल मोक्ष की ही इच्छा रखें।

स्वगथ में मन के सारे भौनतक अनुभवों ंकी छूँटाई और नवशे्लेषण नकया िाता है। सार भाग ग्रहण कर नलया िाता है। माननसक िगत् ने िो सार-भाग ननकाला है, उसके स्वरूप के अनुकूल ही नवीन मनोवृनत्त आनद के सनहत िीव नफर भौनतक िगत् में िन्म लेता है।

बि आप कोई नाटक नलख रहे हैं, यनद ननिा आती है तो आप नलखायी बन्द कर देते हैं और सोने चले िाते हैं। िब आप सो कर उठते हैं तो िहाँ से आपने पूवथ रानत्र में नलखना छोडा र्ा, वहाँ से आगे नलखने लग िाते हैं। इसी प्रकार पूवथ िन्म की वासनाओं ंके अनुसार नये िन्म में भी आप वही कायथ िारी रखते हैं निसे पूवथ िन्म में आपने अधूरा छोडा र्ा।

आपका आगामी िीवन अनधकतर उन कमों के अधीन रहेगा िो आप इस िीवन में करेंगे। बहुत-सी ऐसी बातें हैं िो संसारी मनुष् करते हैं और िायद उनसे उनको कुछ हानन नहीं ंहोती; परन्तु आध्याद्धत्मक पर् के सचे्चे साधक यनद वही बातें करने लगें तो ननश्चय ही वे हाननकारक होंगें।

स्वभावतिः सूक्ष्म नवषयों ंके अध्ययन से दूसरे भौनतक िीवन का रूप ही बदल िाता है। इससे सूक्ष्म नवचार–द्धि बढ़ती है और िल्दी–ल्दी ऊपरी नवचार द्वारा एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर कूद िाने की आदत से अगले िीवन में अत्यन्त अिान्त तर्ा कुव्यवद्धस्त मन नमलेगा।

सोंस्कारो ोंकी दासता की िृोंखला

मन संस्कारों ंके द्वारा अपना आनधपत्य स्र्ानपत करता है। संस्कारों ंसे नटड्डी-दल की भाँनत वासनाएँ प्रकट होती हैं, वासनाओं ंसे इच्छाओं ंका प्रवाह चलता है और इद्धच्छत पदार्ों के भोग से तृष्णा बढ़ती है। तृष्णा बडी प्रबल होती है। मन में, कारण िरीर में संस्कारों ंका स्र्ान है। मन में भोग की सूमृनत उठती है। नफर मन पदार्ों का नचन्तन करता है। नचन्तन में माया का दृढ़ आसन है। अब आसद्धि आ िाती है। मन योिनाएँ और परयोिनाएँ बनाने लगता है। आप काम-वासनाओं ंसे नवचनलत हो िाते हैं। आप उन पदार्ों को प्राप्त करने और भोगने का रीर से प्रयत्न करते हैं। इस प्रयत्न में राग और द्वेष के कारण आप नकसी पर अनुराग करते हैं और नकसी से

अरुनच करते हैं। आपको अपने पुण्य और पाप का फल भोगना ही पडेगा। अनानद काल से राग-द्वेष, पाप-पुण्य और सुख-दुिःख-रूपी इन छह अरों ंवाला आवागमन का यह संसार-चक्र घूमता ही रहता है।

शवचार तर्ा इच्छाएँ सोंस्कारो ोंपर शनभछर करते हैं

आपकी इच्छाओं ंऔर नवचारों ंका स्वरूप आपके संस्कारों ंके स्वरूप पर ननभथर करता है। यनद अचे्छे संस्कार होंगें तो आपकी इच्छाएँ और नवचार भी अचे्छे होंगें। इसके नवपरीत यनद आपके बुरे संस्कार होंगें तो आपकी इच्छाएँ और नवचार भी बुरे होंगें। यनद आपने चालीस वषथ की आयु तक भी दुष्कमथ नकये हैं तो भी इसी क्षण से दान, िप, दम, स्वाध्याय, ध्यान, दरिर और रोनगयों ंकी सेवा, साधु-सेवा आनद सत्कमथ आरम्भ कर दें। और यह संस्कार आपको नविेष सत्कमथ करने की प्ेरेरणा करेंगे। इनसे सनदच्छाएँ और िुभ नवचार प्रकट होंगें। भगवान् ने भगवद्गीता (९-३०) में कहा है-

अशप चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
साधुरेव स मतव्यिः सम्यग्व्यवशसतो शह सिः ।।

अर्ाथत् यनद कोई अनतिय दुराचारी मनुष् भी अनन्य भाव से मेरी उपासना करता है तो उसको साधु ही समझना चानहए; क्ोंनक उसने सच्चा ननश्चय कर नलया है।

कुसोंस्कार ही विाशवक िुत्रु हैं

आपका वास्तनवक िुत्रु कौन है? आपके अपने ही बुरे संस्कार। अिुभ वासनाओं ंके स्र्ान में िुभ वासनाएँ प्रनतस्र्ानपत करें। तब आप ईश्वर के समीप पहुँच सकते हैं। आपका मन बदल िायेगा, पुराने संस्कार नमट िायेंगे। आपके मन में अनेक प्रकार के असत् सुझाव और नवनचत्र अन्धनवश्वास दृढ़ता से िमे हुए हैं। ये हाननकारक हैं। इनको उन्नत सुझावों ंऔर सनद्वचार द्वारा धरािायी कर देना चानहए। 'मैं िरीर हूँ,' 'मैं अमुक व्यद्धि हूँ', ‘मैं ब्राह्मण हूँ', 'मैं धनवान् हूँ' इत्यानद सब असद् सुझाव और असद् संस्कार हैं। मन के अन्दर यह सुझाव दृढ़ता से भरें नक आप ब्रह्म हैं। आपकी पुरानी देहाध्यास की भावना प्रबल प्रयत्न से धीरे-धीरे लुप्त हो िायेगी।

यनद आप एक नमनट के नलए भी अपने सचे्च ब्रह्म-स्वभाव को भूल िायेंगे तो अज्ञान के पुराने संस्कार ऊपर आने और आपको दबा लेने की चेष्टा करेंगे। देखें, नारद ने ध्यान में द्धस्र्त होते हुए भी िब देव-कन्याओं ंको देखा तो उनका ननश्चय िगमगाने लगा र्ा। उनको तुरन्त काम-वासना का अनुभव हुआ। उनका वीयथ स्खनलत हुआ। उन्ोंनें वीयथ को एक कुम्भ (घडे में रखा और उसमें से कुम्भ मुनन के रूप में रानी चिुाला प्रकट हुई। इसनलए आपको बहुत सावधान रहना होगा। हर प्रकार के प्रलोभनों ंसे; यर्ा—धन, नारी, यि आनद से; दूर रहें।

सुसोंस्कारो ोंकी प्रान्प्त की शवशध

यनद आप अपना सारा समय आध्याद्धत्मक साधना में लगा देने में असमर्थ हैं तो इस िीवन में कम-से-कम आध्याद्धत्मक संस्कार बनाने की तो चेष्टा कर लें। ननत्य ही र्ोडी देर के नलए - कम-से-कम प्रातिः काल और सायंकाल आधे घणे्टे के नलए अवश्य ही नकसी प्रकार का ध्यान नकया करें। ध्यान के नलए एक कमरा रखें। नकसी मन्त्र का र्ोडा-सा िप नकया करें। गीता का स्वाध्याय ननयमपूवथक नकया करें। सत्संग करें। वषथ में एक बार एक सप्ताह के नलए ऋनषकेि, नानसक, वाराणसी, हररद्वार अर्वा प्रयाग में रहने के नलए िाया करें। महात्माओं ंका दिथन करें। ऐसा करने से आपको कुछ आध्याद्धत्मक संस्कार प्राप्त हो िायेंगे, िो नया साद्धत्त्वक िीवन प्रारम्भ

करने में उपयोगी प्रतीत होंगें। आपको उत्तम िन्म नमलेगा। आपके अगले िन्म में योग-साधना के नलए, अपने हृदय में ननभृत नदव्यता का उद्घाटन करने के नलए उपयुि वातावरण प्राप्त होगा। ईश्वर अपनी कृपा द्वारा आपको आध्याद्धत्मक साधना के नलए सारी सुगमताएँ और अवसर प्रदान करेंगे। र्ोडे से भी ननयमपूवथक योगाभ्यास और वेदाद्धन्तक साधना के द्वारा आप अपनी मनोवृनत्त और पुराने कुसंस्कारों ंको बदल सकते हैं। आप कई आगामी िन्मों ंको अचानक समाप्त कर सकते हैं। तीन वषथ के अभ्यास से आप िन्म-मरण के चंगुल से छुटकारा पा सकते हैं। आप अवश्य ही संन्यासी बनेंगे। इसी िन्म में, अभी ही क्ों ंनहीं ंबनते? अनावश्यक िन्मों ंके चक्र को और इनके अनुगामी क्ेिों ंको आप अचानक समाप्त क्ों ंनहीं ंकर देते हैं? आप कब तक इस संसार के नवषयों ंके और इद्धन्द्रयों ंके दास बने रहना चाहते हैं? अब िाग िायें। साधना करें और अमृतत्व प्राप्त कर लें।
"उिरेदात्मनात्मानम्"– अपने ही द्वारा अपना (संसार-सागर से) उिार करना चानहए (गीता : ६-५)।

नये अच्छे-अच्छे संस्कार नये स्व-स्व सुझावों ंसे बनाये िा सकते हैं। कल्पना करें नक मद्धस्तष्क एक काष्ठफलक है और उसमें कीलें लगी हैं िो नक नवचार, स्वभाव तर्ा नैसनगथक प्रवृनत्त की प्रतीक हैं निनसे कमों का ननश्चय होता है। यनद आपको ज्ञात हो नक कोई नवचार या स्वभाव बुरा है, कोई नैसनगथक प्रवृनत्त बुरी है तो िैसे तख्ते में कोई बुरी कील लगी हो तो नयी कील ले कर, उसे बुरी कील के ऊपर रख कर बराबर हर्ोडे की चोट लगाते रहने से बुरी कील र्ोडी-र्ोडी बाहर को ननकलती रहेगी और नयी कील उतने ही पररमाण में अन्दर धूँसती िायेगी और अन्त में बुरी कील नबलकुल ननकल िायेगी। इसी प्रकार नया नवचार, स्वभाव या नैसनगथक प्रवृनत्त मन के सम्मुख प्रस्तुत करें और उसका र्ोडा-र्ोडा अभ्यास करते रहें। इस तरह करते रहने से कुछ समय में बुरे नवचार और स्वभाव नबलकुल दूर हो िायेंगे। ननिःसन्देह इसके नलए दृढ़ प्रयत्न की आवश्यकता है। नये स्वस् सुझाओं ंको ननरन्तर दोहराते रहने की आवश्यकता है। आदत भी दूसरी प्रकृनत होती है। परन्तु िुि, अप्रनतरोध्य, ननश्चत दृढ़ इच्छा–द्धि अवश्य ही नविय प्राप्त कर लेगी।

बि आप ओंकार या 'अहं ब्रह्माद्धस्म' महावाक् का उच्चारण करते हैं तो नचत्त में एक संस्कार बनता है नक 'मैं ब्रह्म हूँ।' ओंकार का ननत्य २१,६०० िप करने का उद्देश्य यह है नक यह संस्कार दृढ़ हो िाये।

सोंस्कार-नाि मोक्षदायक है

व्यद्धि का स्रू्ल िरीर भले ही मर िाये; परन्तु कमों के, भोगों ंके और नवचारों ंके संस्कार मृत्यु के बाद भी मोक्ष-प्राद्धप्त तक उसका अनुसरण करते हैं। ये उपानधयाँ मृत्यु के पीछे उसके सार्-सार् रहती हैं। ये उपानधयाँ पररवतथनिील हैं; क्ोंनक व्यद्धि प्रत्येक मृत्यु के समय नभन्न-नभन्न प्रकार के संस्कार ले िाता है। अनेक िन्मों ंमें आप नभन्न-नभन्न प्रकार के संस्कार बनाते हैं। िो ननश्चत उपानधयाँ मृत्यु के बाद आपके सार् िाती हैं, वे हैं पंच ज्ञानेद्धन्द्रयाँ, पंच कमेद्धन्द्रयाँ, पंच प्राण, अन्तिःकरण चतुष्टय और कारण िरीर िो नलंग–िरीर का आधार होता है। संस्कारों ंका नाि या कारण–िरीर का नाि ही मोक्ष प्राप्त कराता है। यह ब्रह्म-ज्ञान-प्राद्धप्त कराता है। िब तक संस्कार बने रहेंगे तब तक आपको नये-नये िन्म लेने पडेंगे। िब तक ब्रह्म-ज्ञान-प्राद्धप्त द्वारा सारे संस्कार नष्ट नहीं ंिाते, नवदग्ध नहीं ंहो िाते, तब तक आपको बारम्बार िन्म लेना पडेगा। िब संस्कार नष्ट िायेंगे तो ब्रह्म-ज्ञान स्वयं अपनी मनहमा से नवभानसत हो उठेगा।

सोंस्कारो ोंको नष्ट करना ही साधना है

साधक का लक्ष्य ननबीि समानध के द्वारा इन संस्कारों ंको िला देना या नमटा देना होता है। संस्कारों ंको नमटा देना ही साधना है। श्वास लेना, सुनना, देखना, स्पिथ करना, चखना, सूँघना—इन सबसे मन में संस्कार बनते हैं। संसार मन में आँखों, ं कानों, ं वाणी और पुराने संस्कारों ंके द्वारा प्रवेि करता है। यनद आप एकान्त में रहें तो

आप प्रर्मि तीन द्वारों ंको बन्द कर सकते हैं। नवचार के द्वारा आप चौरे् द्वार, संस्कारों ंको भी बन्द कर सकते हैं। तभी ज्ञान का उदय होगा। ज्ञानी पुरुष में संस्कार नहीं ंहोते। वे ज्ञान द्वारा िल िाते हैं। ननस्सने्देह उसके अन्तिःकरण में संस्कारों ंका बल रह िाता है; परनु्त उससे हानन नहीं ंहो सकती। वे ज्ञानी को बन्धन में नहीं ंालि
सकते।

परर‍चे्छेद- १५

सोंकल्प

शवचार-प्रशक्रया

ईश्वर में ही आध्याद्धत्मक िीवन है। यही हमें अनन्त से यिु कर देता है। क्ोंनंक ब्रह्म स्वत: पूणथ और पररपूणथ है, इसनलए आपको ब्रह्म में सब कुछ नमल िाता है। आपकी सारी आवश्यकताएं और इच्छाएँ वहाँ तृप्त हो िाती हैं। दूसरी ओर भौनतक िीवन है; यह हमारा सम्बन्ध चारों ंओर के संसार से करा देता है। इन दोनों ंसे सम्बन्ध कराने वाला नवचार है। यही दोनों ंके बीच द्धखलवाड करता है।

हमारे अन्दर िद्धि है निससे हम अपनी पसन्द के अनुसार नदव्य प्रवाह के नलए अपना हृदय खोल या बन्द कर सकते हैं। यह सब मन की िद्धि से नवचार-प्रनक्रया द्वारा होता है। यनद आप रािसी प्रकृनत के हैं तो आप ईश्वर से बहुत दूर हैं, आपका हृदय ईश्व की ओर से बन्द है और यनद आपकी प्रकृनत साद्धत्त्वक है तो आपका हृदय ईश्वर के नदव्य प्रवाह के नलए खुला है।

पनवत्र गंगा िी का उद्गम-स्र्ान गंगोत्तरी है और वे सदा गंगा-सागर की ओर बहती रहती हैं। इसी प्रकार नवचार-धारा मन में िमे हुए संस्कारों ंके तल से प्रारम्भ होती हैं िहाँ वासनाएँ भरी रहती हैं और िाग्रत तर्ा स्वप्न अवस्र्ा में ननरन्तर पदार्ों की ओर बहती रहती है। िब पनहये बहुत गरम हो िाते हैं तो रेल के इंनि को भी आराम देने के नलए इंनि-घर में भेि नदया िाता है। परनु्त मन का यह रहस्यमय इंनि पल-भर भी आराम नकये नबना बराबर काम नकये िाता है। इस मन का नवस्तार ही संकल्प है और अपनी नानात्व-िद्धि के द्वारा इस संकल्प-िगत् को िन्म देता है।

अज्ञाननयों ंका मन नवक्षेपयिु, चंचल और करोडों ंसंकल्पों ंवाला होता है। उनके मग संकल्पों ंद्वारा िलते रहते हैं। परनु्त ज्ञानी संकल्पों ंसे मिु होते हैं। वे सदा आत्मज्ञान में द्धस्र्त होते हैं िो सवोच्च तृद्धप्त और परम िाद्धन्त देता है।

सोंसार केवल सोंकल्प है

बि संकल्प अनत-वेग से बढ़ने लगता है तो कभी भी लाभदायक नहीं ंहोता, प्रतुयुत् इससे हानन ही होती है। संकल्प बन्धन का कारण है। िो कुछ संकल्प और वासनाएँ आप बनाते हैं, वे सब ही आपको िाल में फूँसाते िाते हैं। िैसे रिम कीट स्व-नननमथत कृनमकोि में फूँस िाता है, वैसे ही आप स्व-रनचत संकल्पों ंऔर वासनाओं ंके द्वारा बन्धनग्रस्त हो िाते हैं। संकल्प ही दुिःख है और इसका अभाव ब्रह्मानन्द है। संकल्प ही संसार है और इसका नविाि मोक्ष है।

मन का संकल्प ही सारे स्र्ावर और िंगम िीवों ंके सनहत सारे संसार का उद्भव करता है। महामाया की भ्राद्धन्त का यह नवषैला वृक्ष संसार के नभन्न-नभन्न नवषय-भोगों ंकी भूनम में मन के नवकारों ंके बीि से अनधकानधक फलता-फूलता है, संकल्पों ंसे पूणथ होता है।

माया एक बडा नवषैला वृक्ष है। माया-भ्रम के इस वृक्ष को तृष्णाएँ और वासनाएँ सींचंती हैं। कमथ इसके फल हैं। कामवासना, क्रोध, लोभानद इसकी कोंपलें हैं। सत्त्व, रि और तम कनलयाँ हैं। इद्धन्द्रयाँ टहननयाँ हैं। अहंकार इसका तना है। राग और द्वेष इसकी दो मुख्य िाखाएँ हैं। उनके नवषय पदार्थ इसकी पनत्तयाँ हैं।

िैसे सवथगत आकाि का रूप नहीं ंहै, वैसे ही यद्यनप व्यद्धिगत मन की, िो अनवद्या से पूणथ और व्यापक है, द्धस्र्नत नाम के नलए है तर्ानप इसका बाहरी या आन्तररक कोई रूप नहीं ंहै। सारे पदार्ों से भासमान सत्यता का नवकास ही मन है। िहाँ भी संकल्प है वहाँ मन का अद्धस्तत्व है।

इस संसार का उद्भव और नवलय (िो चेतना के नवकार के नसवाय और कुछ नहीं ंहै) मन के संकल्पों ंके उद्भव और क्षय के सार्-सार् होता है। संकल्पों ंऔर नवकल्पों ंका त्याग कर देने पर ही मन के द्वारा ब्रह्म-साक्षात्कार हो सकता है। आपको संकल्पों ंका यर्ासम्भव पूणथ उनूमूलन करना चानहए। यह संकल्प-नाि की साधना बुद्धिमत्तापूवथक करनी चानहए।

सोंकल्प-नाि से ही मोक्ष होता है

चाहे आप कोनट-कोनट वषों तक तप करते रहें, चाहे आप एक ही समय में तीनों ंलोकों ंकी यात्रा करने में समर्थ हो िायें; परनुतु संकल्प-नाि के सुनननश्चत पर् का अनुसरण नकये नबना आप नननवथकार मोक्ष को प्राप्त करने में कदानप सक्षम नहीं ंहो सकते। इसनलए संकल्प के नविाि का प्रयत्न करें और इससे सारे दुिःख और नवषमता से रनहत ब्रह्मानन्द की प्राद्धप्त कर लें।

अपुनिथन्य संकल्प-क्षय ही ननदोष ब्राह्मी-द्धस्र्नत है। तो नफर मौन हो कर गुप्त रूप से अपने हृदय में संकल्पों ंके नाि का नवचार क्ों ंनहीं ंबनाते ? निन्ोंने संकल्पों ंका नविाि कर नदया है, उनें् चक्रवती सम्राट् का रािनसंहासन भी तुच्छ द्धखलौना-सा प्रतीत होगा।

संकल्प, नवकल्प और द्वैत-भावना से रनहत हो िायें। अपने को नबलकुल संकल्प- रनहत बना दें और नननवथकल्प बन िायें। यही ब्रह्म-ननष्ठा या अद्वैत-ननष्ठा है। इस अवस्र्ा को प्राप्त करने के नलए कठोर प्रयत्न करें। तब आप पूणथ िाद्धन्त और आनन्द में रहेंगे।

मन का स्वभाव

मन संसारी पदार्ों का ध्यान सरलता से कर सकता है। यह इसका स्वभाव है। साधारणतया नवचार पदार्ों की ओर सुगमता से िाते हैं। माननसक िद्धि इस ओर सहि ही प्रवानहत होती है। यह सांसाररक नवचारों ं

की प्राचीन बीनधयों ंया लीकों ंमें सरलता से प्रवानहत होती है। ईश्वर का ध्यान करना इसे अत्यनधक कनठन लगता है। संसारी व्यावहाररक मन के नलए यह उतना ही कनठन है नितना पहाडी पर चढ़ना। मन को पदार्ों की ओर से हटा कर ईश्वर की ओर ले िाना वैसा ही कनठन है, िैसे गंगा के सहि प्रवाह को गंगा सागर की ओर से रोक कर बदरीनारायण की ओर िाना या यमुना के प्रवाह के प्रनतकूल नाव चलाना तो भी यनद आप िन्म मरण से मुि होना चाहते हैं तो मन को इच्छा के नवरुि भी अनवरत प्रयत्न और त्याग के द्वारा ईश्वर की ओर चलने के नलए साधना चानहए। यनद संसार के क्लेिों ंऔर नवपनत्तयों ंसे छुटकारा पाना चाहते हैं तो इसके अनतररि अन्य कोई
उपाय नहीं ंहै।

सोंकल्प-नाि कैसे करें ?

संकल्प के धब्बे या बादल को नववेक और सतत प्रयत्न की िुद्धि से नछन्न करके आत्म-प्रकाि सनहत ब्रह्मानन्द-सागर में ननमग्न हो िायें। िब आप अपनी छाया पर नमट्टी िाल कर उसे दबाना चाहते हैं तो छाया सदा ऊपर ही रहती है। इसी प्रकार िब आप संकल्पों ंको नववेक-वृनत्त से नष्ट करने का यत्न करते हैं तो वे बार-बार प्रकट हो िाते हैं। मन को वस्तुओं ंकी ओर से हटा लें और अपने गुरु के उपदेिों ंके अनुसार चलें। मन को िुि करके नचदाकाि में द्धस्र्र करें। संयम पा कर मन का क्षय हो िायेगा; इसमें सन्देह नहीं ंहै।

सांसाररक पदार्ों का क्षणमात्र के नलए भी ध्यान न करें। संकल्प से छुटकारा पाने के नलए बहुत प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं ंहै। नवचारों ंका ननग्रह करने से मन का नाि हो िायेगा। एक पूणथ नवकनसत पुष्प को अपने हार् से मसल िालने में तो कुछ प्रयत्न लगता भी है; परन्तु संकल्प का क्षय करने के नलए उतने भी प्रयत्न की आवश्यकता नहीं।ं नवचारों ंके संयम से संकल्प का नाि हो िाता है। आन्तररक संकल्प के द्वारा बाह्य संकल्पों ंको दृढ़ता से क्षय करके और िुि मन के द्वारा अिुि मन का नाि कर आत्मज्ञान में दृढ़तापूवथक द्धस्र्त हो िायें।

िब संसार की असारता का नवचार आपके अन्दर दृढ़ता से िम िायेगा तो नाम और रूप द्वारा िननत नवक्षेप और संकल्प की स्फुरणा भी धीरे-धीरे लुप्तप्राय हो िायेगी। ननरन्तर कहते रहें, **"ब्रह्म सत्यों जगन्मथ्या जीवो ब्रह्मैव नापर:** अर्ाथत् केवल ब्रह्म ही सत्य है, संसार असत्य है और िीव ब्रह्म से अनभन्न है। इसका उच्चारण करते रहने से आपको अत्यनधक माननसक िुद्धि तर्ा िाद्धन्त प्राप्त होगी।

अपने सम्मुख के दृश्य पदार्ों के नलए समस्त वासनाओं ंसे अपने को मुि कर अपने मन में उठने वाले सारे संकल्पों ंका उन्मूलन कर दें। यह मन िो संकल्पों ंद्वारा उत्प होता है, इन्हीं ंसंकल्पों ंद्वारा नष्ट हो िाता है िैसे अनग्न वायु द्वारा उद्दीप्त होती है और वायु द्वारा ही िनमत भी होती है।

शनि:सोंकल्पावस्र्ा

नीच संकल्पों ंके नमटने के सार्-सार् अनवद्या और उसका कायथ (मन) भी नमट िाता है। संकल्प दुि:खमय है। ननि:संकल्प परमानन्द है। एकान्त कमरे में अकेले बैठ िायें। नेत्र बन्द कर लें। मन को देखें और ननरन्तर तर्ा दृढ़ प्रयत्न द्वारा एक-एक करके वृनत्तयों ंको नष्ट कर दें। असम्प्रज्ञात समानध हो िायेगी।

यनद दुि:खिनक संकल्पों ंके नविाि के सार्-सार् मन का भी नाि कर नदया िाये तो मोह-रूपी घना कुहासा, िो आप पर अतीत काल से छाया हुआ है, स्वयं ही नमट िायेगा। नफर िरत्काल के ननरभ्र आकाि के समान ज्योनतस्वरूप, आनन्दमय, अनद्वतीय, ननराकार, अिन्मा, अनवनािी ब्रह्म स्वयं प्रकाि करने लगेगा।

बि आपके नवकीणथ नवचार एकत्र हो ाियेंगे और आप ािन्त हो कर नवश्राम की अवस्ा में रहेंगे तो ननत्यानन्द-स्वरूप आत्मा उसी प्रकार प्रकानित हो ाियेगा निस प्रकार ननमथल िल में सूयथ का प्रनतनबम्ब चमकता है धन, स्त्री या भोिन में ाद्धन्त नहीं ंहै। िब मन वासना रनहत हो ाियेगा तो आत्मदेव प्रकाि करके ननत्य सुख और ाद्धन्त की वषाथ करेंगे। आप व्यर्थ ही बाह्य पदार्ों में आनन्द की खोि क्ों ंकरते हैं? अपने अन्दर ही स्वानुभूनतमूलक सद्धच्चदानन्द अमृत आत्मा में सुख की खोि करें।

परररचे्छेद- १६

शवचार ही सोंसार की सृशष्ट करता है

शवचार ही प्रते्येक पदार्थ का स्रोत है

हमारे चतुनदथक् के इस स्थूल िगत् की प्रते्येक वसुतु का उद्गम सबसे प्रर्म नवचार में हुआ। इससे उसका आकार बना। प्रते्येक रािमहल, मूनतथ, नचत्र, यन्त्र का पुिा इत्यानद पदार्ों ने पहले उसके ननमाथता के मन में आकार नलया र्ा और नफर वे इस स्थूल रूप में बनाये गये।

मन पर अनेक नवषयों ंका पूवाथनधकार होता है। िब नचत्रकार कोई नचत्र बनाने लगता है तो अपने मन में पूवथ-कद्धल्पत नकसी नचत्र से ही सामग्री ले लेता है।

अन्ततिः संसार एक नवचार मात्र ही तो है। िैसे उपयुि समय और स्ान पर बीि का अंकुर फूटने लगता है, वैसे ही मन के संकल्प से िष्टा भी दृश्य रूप में नदखायी देने लगता है। िब मन सोचना बन्द कर देता है, संसार का लोप हो िाता है और अननवथचनीय आनन्द प्राप्त होता है। िब मन सोचना आरम्भ कर देता है तो संसार पुनिः प्रकट हो िाता है और पररणाम दुिःखमय होता है।

किोटेस के नसिान्त का मौनलक आधार है नक मेरा अद्धस्तत्व मेरे नवचार के अनुकूल है। भगवान् िंकर के वचन इस नसिान्त के अनुकूल ही हैं नक आत्मा कभी भ्रममूलक नहीं ं हो सकता; क्योंनक िो आत्मा के अद्धस्तत्व को नहीं ंमानता है, वह इसके इनकार करने में भी इसकी सत्ता को देखता है।

मन के द्वारा िगत् को देखा िा सकता है; परन्तु यह खेद का नवषय है नक ऋनष-मुननयों ंके अनतररि अन्य नकसी ने मन को नहीं ंदेखा। िब आप ननरन्तर और गम्भीरतापूवथक मनस्तत्त्व का नवचार करेंगे, तो आपको ज्ञात होगा नक मन कुछ भी नहीं ंहै। मन का नवश्लेषण करने पर वह कुछ भी नहीं ंरह िाता। मन नवचारों ंकी पोटली है और 'मैं' सब नवचारों ंका मूल है। यह अहंभाव एक नमथ्या भाव, असत्त्व है। िब सब नवचारों ंका मूल अहंभाव ही कुछ नहीं ंहै, तो नफर मन का अद्धस्तत्व कहाँ रहा!

प्रर्म नवचार िो आपके मन में उठा, वह अहंभाव र्ा। ब्रह्म में लय होने से पहले िो नवचार मन में उठेगा, वह ब्रह्माकार-वृनत्त होगी, िो आपकी इस अनुभूनत से पैदा हुई। है नक आप ब्रह्म हैं।

सोंसार वैश्व मन की सृशष्ट है

संसार िीव की माननसक कल्पना नहीं ंहै। वैश्व मन (नहरण्यगभथ) के एक संगनत नवचार ने भासमान िगत् का आकार नलया। यह संसार केवल ईश्वरेच्छा का फल है िो मन की नक्रयाओं ंके द्वारा सच्चा सा प्रतीत होता है।

कोई नाटक नलखने से पहले आपके मन में सारे नाटक का सुस्पष्ट नचत्र बना होता है। नफर आप इसको क्रमानुसार चार अंकों ंमें नलखते हैं। िब यह नाटक नदखाया िाता है. तो इसके एक-एक भाग को क्रनमिः खेला िाता है। इस प्रकार ईश्वर के मन में इस िगत् और इसकी गनत-नवनध का एक स्पष्ट नचत्र रहता है। उसके नलए अतीतकाल या भनवष्काल नहीं ंहोता। उसके नलए तो सब कुछ वतथमान ही है। उसके नलए ननकट और - दूर कुछ नहीं ंहै। सब-कुछ यहाँ ही है। समय की गनत के अनुसार इस नविाल िगत्-रूपी रंगमच पर घटनाएँ क्रनमक रूप से आती रहती हैं। अणु ननरन्तर चक्कर लगाते रहते हैं। नवी वस्तु पुरानी होती रहती है और पुरानी नयी हो िाती है। वस्तुतिः पुरानी या एकल कोई वस्तु नहीं ंहै। िीव अपने व्यनष्ट मन के द्वारा घटनाओं ंको क्रमानुसार देखते हैं; परन्तु ईश्वर सारी घटनाओं ंको एक-सार् ही िानता है। वह सवथज्ञ है। वह सवथनवद् भी है। वह अपनी सृनष्ट के प्रत्येक नववरण को िानता है। नवश्व-मन से माया उत्पन्न होती है। व्यनष्ट-मनिः वस्तुओं ंको इसी माया के भ्रम से ग्रहण करते हैं।

यह िगत् मन के नवकार के अनतररि और कुछ नहीं ंहै। यह ब्रह्म से, िो िगत् का कारण है, स्वयं ही बना है। यह समस्त नवश्व, िो केवल मन द्वारा भासमान है, मन के नवकार के अनतररि कुछ नहीं ंहै। आत्मननष्ठ रूप में मन चैतन्य है और वस्तुगत रूप में यही यह संसार है। इसनलए यह सवथव्यापी िगत् चैतन्य के नसवाय और कुछ नहीं ंहै।" (िीव तर्ा िगत् अपनी अन्तिाथत अवस्र्ा में ही ब्रह्म है)

ईश्वर और माया

सारे संस्कार माया में तैरते हैं। कल्पना करें नक एक बहुत बडा दपथण है। आप उसमें बािार में िाने वाले सारे मनुष्यों,ं ठेलों,ं गानडयों,ं मोटरों ंआनद के प्रनतनबम्ब देख सकते है। नबना नंकनचत् भी प्रभानवत हुए आप दूर से

दपथण में इन गनतयों ंको देखते रह सकते हैं। ऐसे ही संसार की सारी गनतयाँ माया नामक सबसे बडे दपथण में होती हैं। संसार का स्वामी ईश्वर केवल प्रत्येक वसुतु को देखता रहता है। वह मूक साक्षी है। िब िीवों ंका अदृष्ट (कमथ भोग का पारि) पररपक्क होता है तो ईश्वर केवल इच्छा करता है और संसार का प्रादुभाथव हो िाता है।

मन के सोंकल्प में सोंसार की सत्यता न्स्त है

अननवथचनीय ब्रह्म से सत्ता प्राप्त कर यह सवथदा उत्तेनित मन अपने संकल्पों ंके अनुसार िगत् की रचना करता है। आपके मन के संकल्पों ंसे ही इन्द्रिाल-रूपी संसार प्रकट होता है। आपके संकल्पों ंके कारण ही यह संसार अद्धस्तत्ववान्-सा प्रतीत होता है और यनद आप इस संसार से परे सत्-ब्रह्म को प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको इन्हीं ंको देने का आदेि नदया िाता है। भगवद्गीता (६-४) में कहा है **"सवछसोंकल्पसोंन्यासी योगारूढिदोच्यते**--सवथ संकल्पों ंका त्यागी व्यद्धि योगारूढ़ कहा िाता है।

छोटे से संकल्प की वृद्धि के सार् ही िगत् पैदा हो िाता है और संकल्प-क्षय हो िाने पर भी दृनष्ट से ओझल हो िाता है। संकल्पों ंके नष्ट हो िाने से िष्टा और दृश्य के भेद के सारे भाव दूर हो िाते हैं और नफर ब्रह्म की सत्यता अबाध गनत से प्रकानित होने लगती है। नफर सचराचर संसार की छाया अद्वैत रूप से इसी में लीन हुई नमलती है।

अहंभावना के सार् ही सांसाररक नवचारों ंका समूह आरम्भ हो िाता है अहंभावना के नहीं ंरहने से सारा संसार उसी क्षण इसी प्रकार िाता रहता है िैसे सूयथ के आने पर अन्धकार दूर हो िाता है। 'मैं' और मन एक हैं। मैं को नष्ट कर दीनिए तो मन भी नष्ट हो िायेगा।

योगवानसष्ठ में कहा है- **"मनिः कन्ल्पतों जगत्"** अर्ाथत् यह िगत् मन की कल्पना है। यह संसार की िादूगरी का खेल केवल मन ही तो बनाता है- **"मनोमात्रों जगत्।"** निसे आप िगत् कहते हैं, वह केवल मन ही है। मन संसार है। यह संसार मन के नसवाय और कुछ नहीं ंहै। िैसे स्वप्न में ही दूसरा स्वप्न बन िाता है, इसी प्रकार यह सूक्ष्म मन अदृश्य पदार्थ भी बनाता रहता है। मन की सत्ता के सार्-सार् ही यह नावान् संसार में रहता है; मन के क्षीण हो िाने से यह भी अदृश्य हो िाता है। यनद ज्ञान, दिथन और नक्रया का कारणभूत मन लोप हो िाये तो उसके सार् ही सार् यह नवषय िगत् भी लय हो िाता है।

प्रत्येक िब्द के नलए एक पदार्थ और एक अर्थ होता है। गौ िब्द के नलए भी एक अर्थ और एक पदार्थ है। माया आपको िब्दिाल के द्वारा धोखा दे रही है। सारा संसार भाव मात्र है। यह संकल्प मात्र, भ्राद्धन्त-मात्र है। यह कल्पना मात्र है, आकाि मात्र है। इसकी द्धस्रनत केवल नाम मात्र है। **"वाचारम्भणों शवकारो नामधेयों मृशत्तकेत्ेये सत्यम्"** अर्ाथत् नवकार केवल वाणी के आश्रयभूत नाम मात्र है, सत्य तो केवल मृनत्तका ही है (छा. उ. ६-१-४)। सारा संसार पंचभूतों ंका बना हुआ है। नवश्लेषण करें, सभी पदार्ों की भ्रम-मूलक दिा िान लें और सारे नमथ्या पदार्ों को त्याग दें। िब आप नवश्लेषण करना प्रारम्भ करेंगे तो सारा संसार लोप हो िायेगा और इसके सार्-सार् ब्दि भाव और पदार्ों का भी लोप हो िायेगा।

गित् में नितना हषथ–िोक का अनुभव होता है, वह मन की नक्रया से ही होता है। सारे दुिःख और सुख-समूह मन के द्वारा ही उत्पन्न होते हैं। इसनलए यनद िुि नववेक और आध्याद्धत्मक साधना के द्वारा मन का नाि कर नदया िाये, तो सुख-दुिःख का भी नाि हो िायेगा। मन के सुख और दुिःख के नलए ही नत्रलोकी की रचना होती है। मन की नक्रया रोक देने से तीनों ंलोक और उनके दुिःख सब लोप हो िाते हैं। मन के नविाि के सार् ही नत्रकाल का सवथर्ा लोप हो िाता है। मन के ननग्रह से सारी नसद्धियाँ प्राप्त हो िाती हैं। यनद मन का ननग्रह नहीं ंहो, तो सब-कुछ दुिःखमय और व्यर्थ हो िाता है। इसनलए मन का नाि कर देना चानहए।

मन तीन प्रवगों की सीमा में कायछ करता है

मन सवथदा दिे, काल और कारण इन्ीं ंतीनों ंप्रवगों के अन्दर काम करता है। ये तीनों ंप्रवगथ मन के बनाये हुए पदार्थ हैं। वसुतुतिः नाररयल का पेड बीस फुट ऊँचा नहीं ंहै। ऊँचाई तो मन की बनाई हुई व्याख्या है बाहर तो केवल स्पन्द मात्र है। यह मन ही लम्बाई, चौडाई, ऊँचाई, मोटाई, नवस्तार, चौकोर, िून्य आनद बनाता रहता है। दो मील की दूरी आभास मात्र ही है। आप वास्तव में यह अनुभव करते हैं नक आपने इतनी दूरी तय की है। िब आप मन से ऊपर पहुँच िाते हैं, तो ये प्रवगथ नबलकुल लुप्त हो िाते हैं। इसनलए ब्रह्म-नवचार के द्वारा मन को कुचल दें। तब आप िाद्धन्त, आनन्द और परम कारण-रूप प्रदिे में पहुँच िायेंगे िो िाश्वत, असीम तर्ा परम कारण है।

सोंसार की उत्पशत्त क्यो ोंऔर कैसे हुईस्क दुबोध प्रश्न

श्रीयुत् नारायण िो मेरा नमत्र मेरे समुमुख खडा है, वह मेरे अपने ही मन का कायथ है। यह संसार भी मेरे ही मन का कायथ है।

अभाव दिथन का नवषय कहा गया है; क्ोंनंक नकसी पदार्थ का अभाव नकसी दूसरे स्र्ान में उसकी सत्ता की सूचना देता है।

मायावाद के नसिान्त के अनुसार वास्तव में संसार है ही नहीं।ं यह केवल माननसक कल्पना है। बिौमत में इसे नवज्ञानवाद कहते हैं।

यर्ार्थवाद के अनुसार संसार एक यर्ार्थ सत्ता है। मर्ध्ाचायथ का द्वैतवाद, कावनिवाद और महनषथ पतंनिल का रियोग सब संसार को सत्यष (िगत् सत्यम्) मानते हैं।

दािथननक काणटष ने नलखा है नक दिे, काल और कारण ये वसुतुननष्ठ सत्ताएँ नहीं ंहूँ, बद्धि हमारी बुद्धि के आत्मगत रूपान्तर हैं। इसका नसिान्त यह है नक दिे, काल और कारण से पररद्धच्छन्न यह संसार मन का ही नवकास है, इसके नसवाय और कुछ भी नहीं ंहै।

पररद्धच्छन्न मन िो सूल है और िो काल, दिे और कारण कायथ के ननयम में द्धस्त है, संसार के नवषय में 'क्ों ंऔर कैसे' नहीं ंिान सकता। यह अनतप्रश्न है। इसका उत्तर नकसी िास्त्र, ऋनष या आचायथ ने भी कभी नहीं ं नदया है। इस प्रश्न पर अपना मद्धस्तष्क न खपायें; क्ोंनंक इस समस्या का उत्तर आपको कभी नहीं ंनमल सकता। संसार की रचना ब्रह्म की मिौ है। यह उसका लीला-नवलास है। यह उसकी माया है। यह उसका स्वभाव है।

जगत् के अभावसे क्या तात्पयछ है

गित् के अभाव या नाि का यह तात्पयथ नहीं ंहै नक इसके पवथत, सरोवर, वृक्ष और ननदयाँ सबका नाि हो िाये िब संसार के नमथ्या होने का आपका ननश्चय अनधकानधक हो िाये और िब आपकी द्धस्र्नत इस नवचार पर दृढ़ हो िाये नक यह संसार मृगतृष्णा के समान भ्रमपूणथ है, तो यही िगत् का नाि कहलाता है।

आप पहाड को नहीं ंनमटा सकते; नकनुतु पहाड के नवचार को नमटा सकते हैं। यह संसार ऐसा ही है िैसे िाग्रत में स्वप्न होता है। दपथण में िैसे प्रनतनबम्ब होता है। ऐसे ही मन रूपी दपथण में यह संसार एक नविाल प्रनतनबम्ब है। मन एक बडी चद्दर के समान है निसमें भाँनत-भाँनत के नचत्र लगे हैं। न तो नचत्रकार है न ही नचत्रपट

और न ही नचत्रकारी की अन्य सामग्री यर् तूनलका, रंग-पात्र, तैल, चूणथ आनद। ननमथल इन-प्रकाि पर संसार का नचत्र द्धखंचा हुआ प्रतीत होता है।

चैतन्य से उठने वाली मन की नक्रया से यह संसार बनता है। मन माया है। माया ही मन है। मन की नक्रयाएँ माया की ही नक्रयाएँ हैं। रूप में मन की आसद्धि माया है। स्वयं अपने मन को मन से अनभन्न समझना माया है।

मन सोंसार के रूप में कैसे अशभव्यक्त होता है।

प्राण की गनत से मन भी गनतिील होता है। मन की गनत से संसार की रचना होती है। मन अपने को बाह्य गित् के रूप में अनभव्यि करता है। माया की िद्धियों ंमें से नवक्षेपप-िद्धि के द्वारा नाम और रूप प्रकट होते हैं। माया की नवक्षेपप-िद्धि िाग्रत और स्वप्न दोनों ंअवस्र्ाओं ंमें कायथ करती है। इसी के कारण समस्त संसार नवक्षेनपत होता है। सुषुनत में यह लोप हो िाता है।

संसार मन में नेत्रों, ं वाणी और पुराने संस्कारों ंद्वारा प्रवेि करता है। यनद आप एकान्त में रहें, तो आप इनमें से प्रर्म तीन द्वारों ंको बन्द कर सकते हैं। नवचार द्वारा आप संस्कारों ंको, िो चतुर्थ द्वार हैं, नष्ट कर सकते हैं। तब ज्ञानोदय होगा।

िैसे आपके भ्रमपूणथ मन के द्वारा आकाि की नीनलमा प्रतीत होती है (िो वास्तव में कुछ भी नहीं ंहै) उसी प्रकार अनेक भेदयुि सारे लोक यद्यनप वे आत्म-ज्ञान ही है, संसार की भाँनत भासते हैं। केवल परब्रह्म की आत्म-ज्योनत ही मन या बहुरंगी संसार के रूप में प्रकट होती है। मन प्रज्ञा िद्धि है और पदार्थ भूत-िद्धि तर् प्राण ब्रह्म की नक्रया-िद्धि है। प्रत्येक वस्तु ब्रह्म की है। वास्तव में िीव है ही नहीं। ं केवल ब्रह्म ही है।

िीमन सदा वासनाओं ंके सार्-सार् उभरता और नगरता रहता है, वह अपने अज्ञान के कारण इस भ्रमपूणथ िगत् को सत्य मानता है; परन्तु इसको संसार का असली स्वरूप बता देना चानहए, तभी यह अपना ब्रह्म रूप िान सकेगा।

परिच्छेद-१७

अशवद्या और अहोंकार

अशवद्या

मन अनवद्या की रचना है। यह अनवद्या का कायथ है। यह भ्रम से पूणथ है। इसनलए यह आपको लुभाता है और धोखा देता है। यह आपको पर्भ्रष्ट कर देता है। यनद आप आत्म-ज्ञान के द्वारा मन के कारण रूप अज्ञान को नष्ट कर सके तो मन का अद्धस्तत्व कहीं ंनहीं ंरहता। यह ि्ून्य में लीन हो िाता है। िब ज्ञान का उदय होता है तो मनोनिा हो िाता है।

अनवद्या उपानधयों ंद्वारा कायथ करती है। सारी नविेष सामनग्रयाँ, निनको अनवद्या की अपेक्षा होती है, आत्मा की उपानधयों ंसे बनी हैं। मन उपानध है, बुद्धि उपानध है और अहंकार भी उपानध है।

अनवद्या का स्ान मनुष् के मन में होता है। अनुभविननत आकार की व्याख्या हमारी संज्ञानात्मक िद्धि में ढूँढ़नी चानहए। श्री िंकराचायथ अनवद्या की व्याख्या इस प्रकार करते हैं। यह नैसनगथक (स्वाभानवक) है। यह हमारी माननसक िद्धि में नननहत है। यह नमथ्या-ज्ञान-नननमत्त है अर्ाथत् इसका कारण भ्रमात्मक-ज्ञान है और ज्ञान मन की एक नक्रया है। यह ननत्य प्रत्ययरूप है। "समस्त िीव निनका अद्धस्तत्व वास्तव में है ही नहीं—ंअपने िन्म-मरण-रूप सहकारी आभासों ंके सनहत मन की नवषयननष्ठता की प्रवृनत्त के पररणाम हैं, और कुछ नहीं ंहैं।"

ष्टा और दृश्य से रनचत द्वैत का सारा अनुभव िु कल्पना मात्र है। मन से नभन्न अनवद्या है ही नहीं।ं मन का नाि होने पर सब-कुछ नष्ट हो िाता है। मन की नक्रया सारी प्रतीनत का कारण है। मन में अनवद्या या भ्राद्धन्त होने के कारण आप वृक्षानद पदार्ों को बाहर देखते हैं और अनुभव करते हैं नक वे आपसे पृर्क् हैं और सत्य पदार्थ हैं।

बि तक मन बना रहता है, तभी तक बडे-छोटे, ऊँचे-नीचे, उत्तम और ननकृष्ट, भले और बुरे का भेद रहता है। परमोच्च सत्य वही है निसमें सापेक्षता नहीं ंहै। यनद आप आत्मा पर ननरन्तर और गम्भीर ध्यान (आत्म-नवज्ञान) द्वारा मन को अनतक्रमण कर सकें तो आप ननद्वथन्द्व दिा को प्राप्त कर लेंगे। वहाँ परम िाद्धन्त और सवोत्तम ज्ञान है।

मन के बाहर अनवद्या कुछ भी नहीं ंहै। स्वयं मन ही अनवद्या है। कल्पनाएँ और संकल्प अनवद्या के कायथ हैं। अनवद्या मन में सनन्ननहत है। िैसे मोरचा लगी हुई ताँबे की र्ाली को नमट्टी, राख, खटाई, चूणथ आनद से चमकाया िाता है, वैसे ही मन को भी िप, प्राणायाम, सत्संग, नवचार और नननदध्यासन द्वारा मिथन करने की आवश्यकता है।

अहोंकार कैसे शवकशसत होता है?

बुद्धि-संयुि आत्मा अहंकार बन िाता है। अहंकार का आधार बुद्धि है। क्ोंनक भेद-बुद्धि इस अहंभाव का कारण है, इसनलए अहंकार का बीि बुद्धि कही िाती है। अहन्ता और ममता िीव-सृनष्ट है। िीव-सृनष्ट ही मनुष् को संसार से आबि करती है। ईश्वर-सृनष्ट भगवत्साक्षात्कार में मनुष् ही सहायक होती है।

मन का बीि अहंकार है। मन के नवचारों ंसे अहंकार की वृद्धि होती है। क्ोंनक सवथप्रर्म नवचार 'अहंभाव' का होता है और यहीं ंसारे नवचारों ंका आधार है; इसनलए मन का बीि अहंकार है। यह 'मैं' का नवचार अपने पीछे-पीछे काल, दिे तर्ा अन्य प्रभनवष्णुताओं ंका नवचार ले आता है। इन पररद्धस्र्नतयों ंके सार् इसे िीव का नाम प्राप्त होता है। इसी के समकालीन बुद्धि, सूक्ष्मनत और मन उपिते हैं िो संकल्प रूपी वृक्ष का बीि है।

कौमारावस्र्ा में अहंकार अनधक दृढ नहीं ंहोता। वह ऐसा ही होता है िैसे दपथण में छाया तरुणाई में िब नववाह हो िाता है और आप अनेक सांसाररक वासनाओं ंकी पूनतथ में लग िाते हैं, तब अहंकार नवकास प्राप्त करता है और दृढ़ता से बिमूल हो िाता है। बाल्यकाल में आप ननभथय रहते हैं और िैसे ही आपके अन्दर यह अहंकार दूर हो िाता है, उसके सार् ही अनेक प्रकार की वासनाएँ, भय और भ्रम आप पर अपना दृढ अनधकार कर लेते हैं और आपको संसार भी अनधकानधक सत्य प्रतीत होने लगता है।

अहोंकार का अशभिाप

अहंकार कुछ भी नहीं ंहै; परन्तु इसका प्रभाव नकतना नवस्मयकारी है! माया हो अहंकार है। मन अहंकार का दूसरा नाम है। संसार का अर्थ अहंकार है। अहंकार का अंकुर 'मेरी' और 'तेरी' लम्बी िाखाओं ंसे इधर-उधर फैलता है और बडा दृढ़ हो िाता है। अहंकार स्रू्ल देह में रहना चाहता है (अनभननवेि), स्रू्ल मांस खाना चाहता है और मांस का ही आनलंगन करना चाहता है। यह ननरा अज्ञान है। माया के छल तर्ा अन्धाधुन्ध ठगी को देखें सावधान रहें। िग िायें। ज्ञान प्राप्त करें।

िैसे बादल सूयथ को ढक लेता है, वैसे ही अहंकार का बादल ज्ञानसूयथ को, ब्रह्म को हक लेता है। यनद आपमें तननक-सा भी अहंकार है, नकसी भी एक नाम या रूप में बोडी-सी र्ी आसद्धि है, का लेिमात्र भी है और मन में नकनचन्मात्र भी संसारी है तो आप ईश्वर का साक्षात्कार नहीं ंकर सकते।

अहोंकार का उनूमूलन कैसे करें ?

धन अहंकार की गहरी िडों ंको ज्ञानानग्न से िला देना चानहए। तब आपको मोक्ष रूपी धन बडी सुगमता से प्राप्त हो सकता है। सारे के्लि, िोक, दुिःख और कष्ट समाप्त हो इद्धन्द्रय-दमन और प्राणायाम से बुद्धि के नवकास में सहायता नमलती है।

आप अचानक अहंकार का उनूमूलन नहीं ंकर सकते। आप स्त्री, सन्तान, धन,क्रोधानद को सुगमता से प्रापषत हो सकता है । परनुतु अहंकार को त्यागना अनत कनठन है; इसे र्ोडा-र्ोडा कम करने का प्रयत्न करें। तीन माह में ीषिोंिअहंकार दूर कर दें। चार वषथ में आप इसका पूरा उनूमूलन कर सकेंगे। आप कमथयोग द्वारा आत्मबनलदान से या भद्धियोग द्वारा आत्मननवेदन से या वेदाद्धन्तक आत्म नवचार द्वारा अहंकार को दूर कर सकते हैं।

मन के संकल्पों ंसे अहंकार उत्पन्न होता है। यनद नवषय-भोगों ंपर आनश्रत रहने वाले मन के नवकार नष्ट कर नदये िायें तो अहंकार से मुि आत्मा अकर्नीय ब्रह्मस्वरूप हो िाता है।

अहंकार एक सूत्र के समान है। यह समस्त इद्धन्द्रयों ंको अपने सार् संयोनित अर्वा शृंखनलत कर लेता है बि सूत्र टूट िाता है तो सारे मोती नगर िाते हैं। इसी प्रकार िब **'अहों ब्रह्मान्'** भावना द्वारा, साक्षी भाव द्वारा या नननमत्त-भाव ले कर आत्म-ननवेदन की रीनत से (अर्ाथत् यह मान कर नक मैं भगवान् के हार्ों ंमें केवल नननमत्त मात्र हूँ) यह मनरूपी सूत्र तोड नदया िाये तो सारी इद्धन्द्रयाँ भी टूट िायेंगी। इद्धन्द्रयों ंके सार् सम्बन्धनवचे्छेद हो िायेगा।

यनद आप अपने को आन्तररक सूक्ष्म िरीर से भी अनभन्न मान लें तो भी आपको आत्म-साक्षात्कार में सहायता नमलेगी। स्थूल हाड-मांस के िरीर से आत्मा को अनभन्न मानने से अहंकार के द्वारा सारी कनठनाइयाँ आती हैं। यह स्थूल 'में' बडी भारी अडचन है।

बि कभी अहंकार प्रकट होता हो तो प्रश्न करें, "इस 'मैं' का स्रोत क्ा है?" बार-बार इस प्रश्न को दोहरायें। नछलके के बाद नछलका उतारते रहने से प्यािा का कुछ भी िेष नहीं ंरह िाता। िब आप इस छोटे से 'मैं' का नवशे्लेषण करते हैं तो इसका अभाव ही हो िाता है। िरीर में' नहीं ंहै। टांग काट देने पर भी 'मैं' िेष रहता है। ीवि-सृनष्ट को त्याग दें।

नितना समय फूल तोडने में लगता है या नितना समय पलक झपकने में लगता है, उतने ही समय में ब्रह्म-भाव की सम्यक् साधना से अहंकार बडी सुगमता से ननमूथल हो. सकता है।

सान्त्त्वकअहोंकार

बि आप कहते हैं, 'मैं ब्रह्म हूँ' तो यह साद्धत्त्वक अहकार है। यह मोक्ष-अहंकार है। यह नकसी प्रकार भी बन्धन में नहीं ंरखता है। यह ब्रह्म-साक्षात्कार में सहायक होता है। नचत्र में बनी हुई अनध नकसी चीि को नहीं ं लिाती मध्याहनकालीन सूयथ के साम कोई अन्य ज्योनत नहीं ंचमकती और न अपना प्रकाि िालती है। इसी प्रकार साद्धत्त्वक पुरुष का अहंकार नकसी को हानन नहीं ंपहुँचा सकता।

परिच्छेद- १८

शवचार–िन्क्त

शवचार जीशवत िन्क्त है

नवचार एक ीनवत प्रबल िद्धि है। यह संसार में वतथमान सवाथनधक तिेस्वी, सूक्ष्म तर् अप्रनतरोध्य िद्धि है। इस भौनतक संसार की तुलना में नवचारों ंका िगत् अनधक वास्तनवक (सत्य) है। नवचार सिीव पदार्थ हैं। नवचारों ंमें प्रत्येक पररवतथन के सार् मनस्तत्त्व में स्पन्द होता है। िद्धि के रूप में कायथ करने के नलए नवचार को एक नविेष प्रकार के सूक्ष्म पदार्थ की आवश्यकता होती है।

निस वसुतु का मन ध्यान करता है, उसी का स्वरूप बन िाता है। िब आप नकसी वसुतु का ध्यान करते हैं तो आपका मन उसी वसुतु का रूप बन िाता है। िब आप नवचार बदल देते हैं तो मन भी अपना रूप बदल देता है। मन में अनेक प्रकार के नवचार बराबर बनते रहते हैं। िब आपके नवचार िल्दी–ल्दी बदलते हैं तो आपका मन भी अपना रूप िल्दी–ल्दी बदलता है। मन प्रनतक्षण बराबर सैकडों ंनवचारों ंकी मूनतथयाँ बनाता है और नबगाडता रहता है। यह कभी र्ोडे समय के नलए एक नवचार-मूनतथ पर द्धस्र्र नहीं ंरहता।

प्रत्येक नवचार का एक नाम और रूप होता है। एक ही नवचार की अनभव्यंकि िद्धि का स्र्ूल रूप उसका आकार है और सूक्ष्म रूप उसका नाम है। परनुतु ये तीनों ंएक ही हैं। यह नत्रत्व में एकत्व है, एक ही वसुतु की द्धस्नत की तीन अवस्र्ाएँ हैं। िहाँ एक होती है, वहाँ िेष दोनों ंभी उपद्धस्र्त हो िाती हैं। मान लीनिए नक आपका मन नबलकुल ि्ि और सवथर्ा नवचार - रनहत है। नफर भी ज्यों ंही नवचार उठने लगता है, यह फौरन ही नाम और रूप धारण कर लेता है। इसनलए मनुष् के प्रत्येक नवचार का प्रनतरूप एक िब्द भी अवश्य होता है।

भाषा नभन्न-नभन्न होती है; परनुतु नवचार एक ही होता है। सबमें मनोमूनतथ समान होती है। िब्द के चार स्वरूप होते हैं—परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी। वैखरी साधारण वाणी है। नभन्न-नभन्न देिों ंमें यह नभन्न-नभन्न होती है; परनुतु परा, पश्यन्ती और मध्यमा एक-सी ही होती हैं। िो मूल स्वरूप में िब्द-ब्रह्म में ननश्ेचेष्ट अवस्र्ा में नबना भेद के रहती है, वह परा-वाणी है। देवताओं ंकी भाषा तर्ा माननसक स्तर की भाषा एक ही होती है। कारण रीर का आवती स्पन्द पश्यन्ती है। यह आपका वास्तनवक नाम है। िब आप कारण िरीर के द्वारा कायथ करें, बि कारण िरीर के चकुषु (निसे नदव्य दृनष्ट कहते हैं) द्वारा आप देखें, तब आप पश्यन्ती-वाणी अर्वा अपना सच्चा नाम सुनेंगे।

शवचार सूक्ष्म पदार्छ है

नवचार सूक्ष्म पदार्थ है। नवचार भी उतना ही ठोस होता है नितना ठोस पत्थर होता है। आपकी मृतुयु भले ही हो िाये; परनुतु आपके नवचार कभी भी नहीं ंभर सकते। इनके भी रूप, आकार, रंग, पदार्थ, िद्धि, तौल और लक्षण होते हैं। आध्याद्धत्मक नवचार का पीत वणथ, क्रोध और घृणायुि नवचार का रि वणथ, स्वार्थपूणथ नवचार का भूरा रंग होता है इत्यानद। योगी अपने आन्तररक योग चकुषु से इन नवचारों ंको देख सकता है।

नितने दृढ नवचार होंगें, उतनी ही िल्दी उनका फल होगा। नवचार को केन्द्र में एकत्र नकया िाता है और उसकी नदिा ननदेनित की िाती है और निस मात्रा में नवचार केद्धन्द्रत नकया िाता है तर्ा नदिा ननदेनित की िाती है, उतने ही प्रभाव से वह उस कायथ को सम्पन्न करता है निसके नलए उसे प्ेरेनषत नकया िाता है।

शवचार रचनात्मक िन्क्त है

नवचार एक महती िद्धि है। नवचार गनतिील है। नवचार की गनत भी होती है। यह संक्रामक होता है। नवचार रचनात्मक है। नवचार की िद्धि द्वारा आप आश्चयथपूणथ कायथ कर सकते हैं। नवचार के द्वारा आप रचनात्मक िद्धि प्राप्त करते हैं। ओिकल नवचार–द्धि, नवचार गनत-नवद्या और नवचार संस्कार के नवषय पर अनेक पुस्तकें हैं। उनका अध्ययन करें। नफर आपको नवचार, उसकी िद्धि तर्ा उसके कायथ और उपयोग के नवषय में व्यापक ज्ञान हो िायेगा।

नवचार की ि़द्धि अनत महान् है। आपका प्रत्ेयेक नवचार आपके नलए प्रत्ेयेक सम्भव प्रकार से यर्ार्थ मूल्य रखता है। आपकी िारीररक और माननसक ि़द्धि, िीवन में सफलता और अपने संग से िो प्रसन्नता आप दूसरों ं को पहुंचाते हैं ये सब आपके नवचारों ंके स्वभाव तर्ा गुण पर ननभथर करता है। आपको नवचार संसूकृनत िाननी चानहए। -

शवचार स्वास्थ्य प्रदान करता है

यनद आपके नवचार स्वस्र् होंगें तो आपका िारीररक स्वास्थ्य भी ठीक होगा। यनद आपके मन में रोगी नवचार होंगें अर्ाथत् रोगी तनुतुओं,ं दुबथल नसों ंऔर अंगों ंकी नक्रयाओं ंके उनचत रूप में नक्रया न करने के नवचार होंगें तो आपको स्वास्थ्य, सौन्दयथ और एकरसत्व की आिा नहीं ंरखनी चानहए। िरीर मन के द्वारा बनता है। यनद आपके नवचार बलवान होंगें तो भौनतक िरीर भी बनलष्ठ होगा।

सब प्रकार के बुरे नवचार मन को गन्दा और आहत करते हैं और यनद उनको िारी रखा िाये तो वे सचमुच रोग बन िाते हैं और मन को ऐसा नवकृत बना देते हैं नक िीवन पयथन्त उनकी नचनकत्सा नहीं ंहो सकती।

शवचार चररत्र-शनमाछण करता है

"मनुष् िैसा नवचार करता है वैसा ही स्वयं बन िाता है।" "नवचार के द्वारा मनुष् बनाया िाता है। निस वसुतु पर मनुष् नवचार करता है, स्वयं भी वही बन िाता है।" आप नवचार करें नक आप बलवान् हैं तो आप बलवान् बन िायेंगे। नवचार करें नक आप बलहीन है तो आप बलहीन बन िायेंगे। आप नवचार करें नक आप मूखथ हैं तो आप मूखथ बन िायेंगे। आप नवचार करें नक आप ईश्वर हैं तो आप ईश्वर बन िायेंगे। मनुष् अपना स्वभाव स्वयं ही बनाता है; िैसा सोचता है वैसा ही बन िाता है। यनद आप साहस की धारणा करें तो अपने स्वभाव में आप साहस भर लेंगे। यही बात पनवत्रता, धैयथ, ननिःस्वार्थता और आत्म-संयम की है। यनद आपके उच्च नवचार होंगें तो िनैिः–नैिः आप अपने नलए ऊँचा चाररत्र्य बना लेंगे; परनुतु यनद आपके नवचार नीच श्ेरेणी के हैं तो हीन चाररत्र्य ही बनेंगे। द्धरूर और दृढ़ता से बने रहने वाला नवचार मन की एक नननश्चत आदत बना देता है और वह आदत मनुष् के चररत्र में एक स्वभाव (लक्षण) के रूप में प्रकट हुआ करती है। नवचारों ंके सूत्रों ंने नमल कर माननसक और नैनतक स्वभाव बनाया है और ये स्वभाव नमल कर ही चररत्र कहलाते हैं। आप अपने चररत्र को इतने ही ननश्चय के सार् ननयमानुसार काम करते हुए बना सकते हैं िैसे रािनमस्त्री दीवार को बनाता है।

नवचारपूवथक चररत्र - गठन का प्रर्म सोपान यह है नक हम अपने नवचारों ंका नवषय सतकथ हो कर पसन्द कर लें और नफर उसी लक्षण पर बार-बार नवचार करें। िीघ्र ही उस लक्षण को प्रकट करने की रुनच हो िायेगी। र्ोडे समय बाद इसका अभ्यास स्वाभानवक हो िायेगा। नवचार ही चररत्र को बनाते हैं। आप नवचार के द्वारा ही प्रारि का सूत काटते हैं।

शवचार प्रारब्ध की रचना करते हैं

व्यद्धि एक िन्म में निस वसुतु का अनधक नवचार करता है, अगले िन्म में स्वयं भी वही बन िाता है। यनद मन ननरन्तर एक ही नवचार धारा में चलता रहे तो एक नाली सी बन िाती है निसमें नवचार–द्धि स्वतिः ही दौडती रहती है और ऐसी नवचार की आदत मृतुयु के बाद भी रहती है, क्ोंनक इसका सम्बन्ध आत्मा से होता है। यह भावी पानर्थव िीवन में कभी एक सामथ्यथ और नवचारिैली के रूप में बनी रहती है।

प्रत्येक नवचार की अपनी अलग ही मनोमूनतथ होती है। प्रत्येक मनुष् की अपनी माननसक सृनष्ट, अपना मत, अपने भाव और नवचार-धारा तऱ् अनुभव होते हैं। एक भौनतक िीवन में बनी हुई मनोमूनतथयों ंका सार माननसक िगत् में बनता रहता है। यहीं ंअगले भौनतक िीवन का आधार होता है। िैसे प्रत्येक िन्म में नया रीर बनता है वैसे ही प्रत्येक िन्म में नया मन और नयी बुद्धि भी बनती है।

नवचार और कमथ की नक्रया को सनवस्तार समझाना कनठन है। प्रत्येक कमथ का दो प्रकार का फल होता है, एक व्यद्धिगत मन पर और दूसरा िगत् पर। व्यद्धि अपने भावी िीवन की पररद्धस्नतयाँ दूसरों ंपर अपने कमों का प्रभाव िाल कर स्वयं बनाता है।

प्रत्येक कमथ की एक पूवाथवस्ऱ्ा होती है निसके द्वारा वह कमथ बनता है। प्रत्येक कमथ का एक भनवष् होता है िो उस कमथ से उत्पन्न होता है। कमथ के बनाने में एक इच्छा होती है िो उसे प्ेरेरणा करती है और एक नवचार होता है िो उसे आकार देता है। कायथ और कारण की अनन्त शृंखला में प्रत्येक कमथ एक कडी होता है, प्रत्येक कायथ स्वयं कारण बन िाता है और प्रत्येक कारण पहले कायथ बन चुका होता है। इस अनन्त शृंखला की प्रत्येक कडी इच्छा, नवचार और नक्रया-रूपी तीन अवयवों ंसे बनी हुई होती है। इच्छा नवचार को चलाती है और नवचार नक्रया-रूप में पररणत हो िाता है।

दूसरों ंकी सम्पनत्त की स्वार्थपूणथ लालसा को यद्यनप वतथमान काल में कभी नक्रयात्मक धोखे के रूप में पररणत न भी नकया हो तऱ्ानप यह मनुष् को आगामी पानर्थव िीवन में चोर बनाती है और गुप्त रूप से दबाये हुए मन में घृणा और प्रनतकार के भाव आगामी िीवन में हत्यारे को िन्म देने के बीि बनते हैं। ऐसे ही नन:स्वार्थ प्ेरेम के फलस्वरूप परोपकारी तऱ् सन्त िीव उत्पन्न होता है और दयापूणथ भावों ंसे सब िीवों ंमें मैत्रीभाव रखने वाला कोमल तऱ् दयालु प्रकृनत का मनुष् बनता है।

प्रत्येक वि सजातीय वि को आकृष्ट करती है

यह महान् ननयम सदा चालू रहता है: “प्रत्येक वसुतु सितीय वसुतु को आकृष्ट करती है।" यह महान् नवश्विनीन ननयम है। यह प्रकृनत का ननयम है। नवचारि–गत् में भी यह ननयम काम करता है। समान नवचार वाले मनुष् एक-दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं। इसी कारण ये लोकोद्धियाँ प्रनसि है: "एक िानत के पक्षी इकट्ठे हुआ करते हैं", "िैसी संगनत मनुष् रखता है, उसी से उसका चररत्र िाना िाता है। एक नचनकत्सक दूसरे " नचनकत्सक की ओर आकृष्ट होता है। कनव दूसरे कनव से आकृष्ट होता है। गायक दूसरे क से प्ेरेम रखता है। एक दाथननक दूसरे दाथननक को चाहता है। एक आवारा दूसरे आवारा से प्ेरेम करता है। मन में खीचंने की िद्धि है। आप दृश्य और अदृश्य िॉवि–द्धियों ंसे बराबर अपनी नवचार-धारा के अनुकूल नवचारों,ं प्रभावों ंऔर द्धस्नतयों ंको आकृष्ट करते रहते हैं।

नवचारि–गत् में भी सितीय नवचारों ंके लोग एक-दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं। यह नवश्वव्यापी ननयम ननरन्तर कायथ करता रहता है, चाहे हम इसको िानें या न िानें। ऐसा कहना चानहए नक हम नवचारों ंके एक नविाल समुि में रहते हैं और हमारे चारों ंओर का वातावरण उन नवचारि–द्धियों ंसे भरा हुआ है िो नवचार-तरंगों ंके रूप में ननरन्तर भिी िा रही हैं। या तो िान-बूझ कर या अनिाने में न्यूनानधक मात्रा में हम सब पर इन नवचार द्धियों ंका प्रभाव होता है। यह प्रभाव उतनी ही रानि में होता है नितने न्यूनानधक पररमाण में हमारी अनुभव-िद्धि बढ़ी होती है या नितने अंिमें हम आध्याद्धत्मक नवषय में िून्य होते हैं और बाह्य प्रभावों ंको िल्दी ग्रहण करते हैं। इन्हीं ंरानियों ंसे यह ननश्चय हुआ करता है नक कौन-कौन से प्रभाव हमारे नवचार-साम्राज्य में प्रवि करेंगे और हमारे िीवन पर प्रभाव िालेंगे।

चाहे निस प्रकार का नवचार अपने सार् नलये रहें और िब तक आप उसे अपने सार् रखें, चाहे िैसे भी आप पृथ्वी या समुि पर घूमें, आप ननरन्तर िाने या अनिाने में केवल वही वस्तुु अपनी ओर खीचेंगे िो आपके नवचार के प्रधान लक्षण से नमलतीि्ुलती होगी। नवचार आपकी ननिी सम्पनत्त है और यनद आप द्धस्र्रता से अपने सामथ्यथ को पहचान लें तो आप उन्ें अपनी रुनच के अनुसार ननयद्धन्त्रत कर सकते हैं। अपने नवचारों ंका क्रम और उनके द्वारा आकृष्ट प्रभावों ंका क्रम ननश्चय करना सवथर्ा आपके ही हार् में है और पररद्धस्र्नतयों ंके लचकदार द्धखलौने नहीं ंहैं िब तक आप स्वयं ही ऐसे बनना पसन्द न करें।

सशिचार और कुशवचार

सनद्वचार तीन प्रकार से सफल होता है। प्रर्मतिः निस मनुष् के मन में उठता है. उसके मनोमय किो में सुधार करके उसे पनवत्र करता है। नद्वतीयत: निस व्यद्धि के - सम्बन्ध में वह नवचार होता है, उसे लाभदायक होता है और अन्त में समस्त माननसक वातावरण को सुधार कर सारी मानव िानत को लाभ पहुँचाता है।

इसके नवपरीत कुनवचार तीन प्रकार से अनभिाप लाता है। पहले वह नवचार करने वाले मनुष् के मनोमय किो को क्षत करके उस मनुष् के नलए हाननकारक होता है।. दूसरे निस मनुष् के नवषय में वह नवचार नकया िाता है, उसे हाननकारक होता है और तीसरे समस्त माननसक वातावरण को दूनषत करके सारी मानव िानत को हानन पहुँचाता है।

नकसी मनुष् की ओर भेिा हुआ प्रत्येक कुनवचार उसके नलए तलवार के समान होता है। यनद आपके मन में घृणा के नवचार हैं तो निसके प्रनत आपकी घृणा है, वास्तव में आप उसके हत्यारे हैं। इस प्रकार आप स्वयं अपनी हत्या करते हैं; क्ोंनक ये नवचार आप पर ही प्रनतनक्रया करते हैं।

निस मन में खोटे नवचार भरे हों,ं वह इसी प्रकार के नवचार अपनी ओर खींचंने में चुम्बक का काम करता है और इस प्रकार आनद बुराई को और भी बढ़ा लेता है।

माननसक वातावरण में भेिे हुए कुनवचार उसके ग्राही मनों ंको नवषाि कर देते हैं। कुनवचार में लगे रहने से उससे नवरद्धि क्रमििः कम होती िाती है और मनुष् उस नवचार के अनुरूप ही कायथ करने को प्ेररत होता है।

शवचार-सतशत

यही बात पयाथप्त नहीं ंहै नक आपके नवचार बुरे नहीं ंहै। आपको अपने बुरे नवचारों ंको सनद्वचारों ंमें बदलना आवश्यक है। आपकी साधना का यह प्रर्म अंग है। आपको उन्ें सहायक नवचार बनाना चानहए। िब उन्ें बाहर भेिा िाये तो वे इस योग्य हो नक आपके पडोनसयों ंऔर पीनडत मानव-समाि की अनधक-से-अनधक भलाई कर सकें।

नवचार आपके अपने ही सच्ेचे बच्ेचे हैं। नवचारों ंकी सन्तनत के नलए सचेत रहें। सुपुत्र अपने नपता को सुख, नाम और यि देता है। कुपुत्र बदनामी और अपयि देता है। इसी प्रकार सनद्वचार आपको सुख तर्ा प्रसन्नता देता है और कुनवचार दुिःख तर्ा कष्टष पहुंचाता है। िैसे आप अपने बच्चों ंका पालन बडी सावधानी से करते हैं इसी प्रकार आपको सावधानी से अच्ेछे और उच्च नवचारों ंका पालन करना होगा।

शवचार सोंक्रामक है

नवचार बडा ही संक्रामक, यहाँ तक नक फूलू से भी अनधक संक्रामक होता है। नवचार गनतिील है। यह वास्तव में मद्धस्तष्क से ननकल कर घूमता रहता है और दूसरों ं के मद्धस्तष्क में भी प्रवेि करता है। आपका सहानुभूनतपूणथ नवचार उन लोगों ंमें भी सहानुभूनत उत्पन्न करता है िो आपके सम्पकथ में आते हैं। क्रोध का नवचार क्रोधी व्यद्धि के चतुनदथक् रहने वालों ंमें भी क्रोध उत्पन्न कर देता है। यह एक मनुष् के मद्धस्तष्क से ननकल कर दूर देि में रहने वालों ंके मद्धस्तष्क में प्रवेि कर िाता है और उन्ें अनुप्रानणत करता है। एसन्नता का नवचार इसी प्रकार दूसरों ंमें भी प्रसन्नता का संचार कर देता है। िब आप खेलते-कूदते प्रसन्न बालकों ंके झुण्ड को देखते हैं तो आप भी प्रसन्न हो िाते हैं।

आकािवाणी के प्रसारण में गायक कलकत्ता में सुन्दर गाने गाता है। नदल्ली में अपने मकान में रेनियो द्वारा आप उन्ें अच्छी प्रकार सुन सकते हैं। बेतार यन्त्र के द्वारा सारे सन्ेदि प्राप्त नकये िाते हैं। इसी प्रकार आपका मन बेतार यन्त्र के समान है। िाद्धन्त, समत्व, एकरसता और आध्याद्धत्मक स्पन्दनों ंसे सम्पन्न एक सन्त िगत् में िाद्धन्त और एकान्त के भाव प्ेरेनषत करता है। वे चारों ंओर बडी तीव्र नवद्युत्-गनत से दौडते हैं और हिारों ं मनुष्ों ंके मन में प्रवेि करते हैं तरा उनमें भी िाद्धन्त और एकता के वैसे ही नवचार उत्पन्न कर देते हैं। परन्तु निसके मन में ईष्ाथ, प्रनतकार और घृणा भरी हुई है ऐसा संसारी मनुष् नवसंवादी नवचार ही बाहर भेिता है िो हिारों ंके मन में प्रवेि करके वैसे ही घृणा और भेद के भाव पैदा कर देता है।

नवचार अतीव संक्रामक होता है। भले और ईमानदार मनुष् को नकसी चोर के सार् रखें तो वह भी चोरी करने लगता है। निा न करने वाले मनुष् को िराबी के सार् रखें तो वह भी मनदरा पीने लगता है।

शवचार समे्प्रेषण

वह कौन-सा माध्यम सम्भव है निसके द्वारा नवचारों ंकी गनत एक मन से दूसरे मन तक होती है? इसकी सबसे उत्तम व्याख्या यही हो सकती है नक आकाि की भाँनत मनस्तत्त्व भी समस्त देि या स्र्ान में व्याप्त है और इसी के द्वारा नवचारों ंकी गनत होती है, निस प्रकार भावों ंकी प्रगनत प्राण के द्वारा होती है, उष्णता, ज्योनत (तेि) और नवद्युत् की गनत आकाि के द्वारा होती है और िब्द की गनत वायु के द्वारा होती है। आकाि की भाँनत मन भी नवभु अर्ाथत् व्यापक है; इसीनलए नवचार समे्प्रेषण सम्भव है।

यनद हम सरोवर में पत्थर का टुकडा फेंक दें, तो इसमें केन्द्रीय लहरे उस प्रभानवत स्र्ान से चारों ंओर को अनुक्रम से उठती है। इसी प्रकार दीपक की ज्योनत से भी ईिर में स्पन्द की लहरे उस दीपक के चारों ंओर फैलती है। इसी रीनत से भला या बुरा कोई एक नवचार एक मनुष् के मन में उठता है तो यह माननसक वातावरण में स्पन्दन (कम्पन) उत्पन्न कर देता है िो चारों ंओर दूर-दूर तक िाते हैं।

नवद्युत् की गनत एक सेकण्ड में १,८६,००० मील होती है; परन्तु नवचारों ंकी गनत में कुछ समय नहीं ं लगता। नवद्युत् के माध्यम आकाि से मन अनधक सूक्ष्म है, इसनलए नवचारों ंकी गनत नवद्युत् से नविेष अनधक होती है।

नवचार भी वस्तुओं ंके समान हुआ करते हैं। िैसे आप अपने नकसी नमत्र को नारंगी दे देते हैं और नफर उसे वापस ले लेते हैं इसी प्रकार आप अपने नमत्र को एक उपयोगी और बलिाली नवचार दे सकते हैं और नफर उसे उसे वापस ले सकते हैं। नवचार का उपयोग तरा उसके व्यवहार करने की सम्यक् कला आपको अवश्य िान लेनी चानहए। यह नवज्ञान बडा रोचक और सूक्ष्म है संकट में पडे हुए अपने नमत्र की सहायता सान्त्वना के नवचार भेि कर कर सकते हैं। निस नमत्र को सत्य की खोि है, उसकी सहायता उन सच्चाइयों ंके स्पष्ट तरा नननश्चत

नवचार भिे कर कर सकते हैं निनको आप िानते हैं। आप माननसक वातावरण में ऐसे नवचार भिे सकते हैं निनसे उनके संवेदनील व्यद्धियों ंको प्रेरणा, पनवत्रता और उन्ननत नमलेगी।

यनद आप नकसी अन्य व्यद्धि के नलए प्रेम और सहायता का भाव भिेते हैं तो वह आपके मस्तक से ननकल कर सीधा उस व्यद्धि के पास िाता है, निसके मन में इसी प्रकार का प्रेमभाव उत्पन्न करता है और दोगुनी द्धि के सार् आपके पास वापस आता है। ऐसे ही यनद आप नकसी मनुष् के प्रनत घृणा का भाव भिें तो वह उस मनुष् पर आघात करता है और िब दोगुनी िद्धि के सार् वापस आता है तो आपको भी आहत कर देता है। इसनलए नवचार के ननयम को समझ लें। केवल दया, प्रेम और कृपा के ही नवचार अपने मन में उत्पन्न करें और सदा सुखी रहें।

बि दूसरों ंकी सहायता के नलए आप कोई उपयोगी सहायक नवचार भिें तो उसका कोई ननननश्चत उिेय और लक्ष्य होना चानहए। तभी वह आकांनक्षत पररणाम उत्पन्न करेगा। तभी वह नवचार कुछ ननननश्चत कायथ करेगा।

साधककेकतछव्य

आपको दूसरे मनुष्ों ंऔर सारे िगत् को प्रेमपूणथ और सहायक नवचार भिेने की रीनत सीखनी चानहए। आपको िानना चानहए नक नचत्तनवक्षेप को हटा कर सारे सनद्वचारों ंको दुिःखी मानव-समाि की भलाई के नलए इकट्ठा करके सहायक सेना के रूप में नकस प्रकार भिा िाता है। नवचार सम्प्रेषण बडा सुन्दर नवज्ञान है। यह यर्ार्थ नवज्ञान है।

िैसे गंगा िी का प्रवाह उसके तट पर रहने वालों ंको ीतलता और आनन्द प्रदान करता है इसी प्रकार आपके प्रेम और िाद्धन्त के िैसे नवचारों ंका प्रवाह भी नचन्ता, परोनी, उतुसुकता, दुिःख आनद से सन्तप्त मनुष्ों ंको सान्त्वना, िाद्धन्त और सुख देने वाला होना चानहए।

साधु प्रकृनत वाले सद्गृहस्र् भी कभी-कभी सनद्वचार मन में रखते हैं और वे िगत् में सहायक नवचार भिेते हैं। सत्य के मागथ में साधक के नलए यह पयाथप्त नहीं ंहै। उसके मन से ननरन्तर सहायक नवचारों ंका प्रवाह वेग से चलता रहना चानहए। यह प्रेम और सहायतापूणथ नवचारों ंका अनन्त और आरोग्यकारी प्रवाह होना चानहए। उसमें िद्धि होनी चानहए नक बीस मनुष्ों ंकी टोली में, सैकडों ंऔर हिारों ंमनुष्ों ंके समूह में प्रेम, सुख और प्रसन्नता भर सके। उसमें दृनष्टमात्र से और र्ोडे से मधुर िद्धिाली िब्दों ंसे उनमें उत्साह, उच्च भावना और उन्नत मनोदा से चलायमान करने की सामथ्यथ होनी चानहए। यह आत्म-बल और इच्छा-द्धि है।

सोंन्यासी अपने शवचार-स्पन्दनो ोंके िारा सोंसार की सेवा कैसे करते हैं?

भारतवानसयों ंने भी पाश्चात्य देों ंकी प्रचार ैली को ग्रहण कर नलया है और नचल्ला रहे हैं नक सन्यानसयों ंको भी कायथ-क्षेत्र में आ कर सामानिक तर्ा रािनैनतक प्रवृनत्तयों ंमें भाग लेना चानहए। यह दुिःखद भूल है। संन्यासी या योगी को नकसी संस्र्ा का प्रधान अर्वा नकसी सामानिक या रािनैनतक आन्दोलन का नेता बनने की

आवश्यकता नहीं ंहै। यह मूखथतापूणथ तर् बचकाना नवचार है। सच्चा संन्यासी अपने नवचार-स्पन्दन द्वारा ही सब कुछ कर सकता है।

यह आवश्यक नहीं ंहै नक संन्यासी संसार की सहायता करने के नलए उपदिे देने तर् िनता का मन उन्नत करने के नलए सभा-मंच पर आये। कुछ सन्त अपने िीवन के उदाहरण द्वारा उपदिे देते हैं। उनका िीवन ही साकार उपदिे होता है। उनका दिथन मात्र ही सहस्रों ंलोगों ंके मन को उन्नत बनाता है। सन्त दूसरों ंके नलए ईश्वर प्राद्धप्त की सिीव प्रत्याभूनत है। पूतात्मा सन्तों ंके दिथन से अनेक लोग पे्ररणा प्राप्त करते हैं। सन्तों ंके नवचार-स्पन्दनों ंको कोई रोक नहीं ंसकता। उनके िुि, सबल नवचार-स्पन्दन बहुत दूर तक िाते हैं, संसार को पनवत्र बनाते हैं तर् अनेक सहस्र लोगों ंके मन में प्रविे करते हैं।

नहमालय की गुफा में रहने वाला ऋनष एक प्रबल नवचारधारा अमेररका के कोने में पहुँचा सकता है। िो व्यद्धि संसार में ननष्काम कमथयोग की साधना करता है, वह ननष्काम सेवा द्वारा अपने को पनवत्र करता है तर् िो नहमालय की गुफा में ध्यान का अभ्यास करता है तर् अपने को िुि बनाने का प्रयास करता है, वह वसुतुतिः अपने आध्याद्धत्मक स्पन्दनों ंद्वारा संसार में पनवत्रता फैला कर िगतीतल की सहायता करता है। िो मनुष् उसके नवचारों ं को ग्रहण करना चाहते हैं, उन तक उसके पनवत्र नवचारों ंको पहुँचने में कोई बाधा नहीं ंिाल सकता। सांसाररक कायथकताथ इस बात को नहीं ंसमझ सकते।

सुस्पष्ट शवचारणा कैसे शनष्पाशदत की जाती

साधारण मनुष् गम्भीर नवचार के तत्त्व को नहीं ंिानते। उनके नवचार अननयद्धन्त्रत हो िाते हैं। कभी-कभी उनके मन में बडी अस्त-व्यस्तता रहती है। उनकी मनोमूनतथयाँ नवकृत होती हैं। नवचारकों,ं दिथनिास्त्रवेत्ताओं ंऔर योनगयों ंकी मनोमूनतथयाँ सुनननश्चत तर् सुष्पष्ट होती हैं। वे नदव्य दृनष्ट के द्वारा देखी िा सकती हैं। िो धारणा और ध्यान का अभ्यास करते हैं, उनकी मनोमूनतथयाँ बहुत स्पि तर् सुसंघनटत हो िाती हैं।

आपके अनधकतर नवचारों ंका सुदृढ़ आधार नहीं ंहोता। वे आते और चुपके से चले िाते हैं। इसनलए वे अस्पष्ट तर् अनननश्चत होते हैं। उनके नचत्र स्पष्ट, सबल और सुसंघनटत नहीं ंहोते। स्पष्ट, ननरन्तर और गम्भीर नवचार-नक्रया द्वारा आपको उन्ें सम्बनलत करना होगा। नवचार, मनन और ध्यान द्वारा आपको नवचारों ंको द्धस्र्र करना होगा तर् उन्ें एक नननश्चत रूप देना होगा। तभी दािथननक नवचार दृढ होंगें। सम्यक् नवचार, तकथ, अन्तननथरीक्षण और ध्यान के द्वारा आपको अपने नवचारों ंको स्पष्ट करना होगा। तब अस्त-व्यस्तता नमट िायेगी तर् नवचार द्धस्र्र और दृढ़ हो िायेंगे।

नवचार स्पष्ट रूप से करें। बार-बार अपने नवचारों ंको स्पष्ट करें। एकान्त में ननरीक्षण करें। अपने नवचारों ं को यर्ेष्ट मात्रा में पनवत्र बना लें। नवचारों ंको िान्त कर लें। मन को उबलने मत दें। एक नवचार की लहर उठने दें और उसे िान्त हो िाने दें। तब दूसरे नवचार को प्रविे करने दें। निस नवषय पर आप एक समय में एक नवचार करते हैं, उससे असम्बि सारे बाह्य नवचारों ंको दूर भगा दें।

स्वतन्त्र तर् मौशलक शवचारणा

इस संसार में नवचारक बहुत ही अल्प संख्या में हैं। हममें से बहुत लोग नहीं ंिानते नक सभ्य नवचार कैसे करते हैं। अनधक संख्या में लोगों ंके नवचार उर्ले होते हैं। गम्भीर नवचार के नलए तीव्र साधना (अभ्यास) की आवश्यकता है। मन के यर्ोनचत उनद्वकास के नलए अनेक िन्म चानहए । तब ही यह गम्भीर और ठीक-ठीक नवचार कर सकेगा। िो मनुष् सत्य बोलता है और निसमें नैनतक पनवत्रता है, उसके नवचार सवथदा िाद्धन्तपूणथ होते

हैं। निसने दीघथ अभ्यास द्वारा क्रोध का ननग्रह कर नलया है, उसमें बडी भारी नवचारर्–द्धि होती है। अत्यन्त
र्ीद्धिाली नवचारों ंवाला योगी यनद एक िब्द भी कहेगा तो उसका प्रभाव मनुष्ों ंपर बहुत भारी पडेगा।

वेदान्ती तो स्वतन्त्र और मौनलक नवचार-नक्रया का आश्रय नलया करते हैं। वेदान्त की साधना के नलए
कुिाग्र बुद्धि चानहए। ठोस नवचार, दृढ़ता से रहने वाले नवचार, साफ नवचार, सारी समस्याओं ंकी िड तक पहुँचने
वाली नवचार-द्धस्र्नतयों ंको मूल तक िानने वाले नवचार और समस्त नवचारों ंकी पूवथ कल्पनाओं ंतक को िान लेने
वाले नवचार ही वेदाद्धन्तक साधना के सार हैं। िब आपको नकसी पुराने नवचार के स्र्ान में कोई नया उन्नत नवचार
नमल िाये, तो आप उस पुराने नवचार को त्याग दें, चाहे वह नकतना ही दृढ़ और गहरा हो। यनद आपमें इतना
साहस नहीं ंहै नक अपनी नवचार-नक्रया के पररणाम को और नबचार के ननष्कषथ को ग्रहण कर सकें, चाहे उसका
प्रभाव आपके व्यद्धित्व पर कुछ भी क्ों ंन हो, तो आपको दिथनिास्त्र में कष्ट नहीं ंकरना चानहए। भद्धि मागथ
ग्रहण कर लें।

प्रायोशगक शवचार तर्ा अशवन्च्छन्न शवचार

प्रायोनगक नवचार-नक्रया मन को नवषय पर लगाती है और अनवद्धच्छन्न नवचार- नक्रया मन को ननरन्तर लगाये रखती
है। उस उन्ननतिील मन का आनन्द और नवस्तार हषोन्माद द्वारा होता है निसकी नवक्षेपहीनता का उद्देश्य
इन दोनों ं नवचार-नक्रयाओं ं द्वारा पूणथ हो चुका है। ि ब प्रायोनगक और अनवद्धच्छन्न नवचार-नक्रया द्वारा
हषाथनतरेक,
आनन्द और नचत्त की एकाग्रता हो िाती है, तब ही ध्यानावस्र्ा सम्पन्न हो सकती है।
नवचार बडी िद्धि है। इसमें नविाल बल है। यह िान लेना बडे महत्त्व की बात है नक इस िद्धि को
सबसे उत्तम नवनध से और अनधक-से-अनधक फल के नलए नकस प्रकार उपयोग नकया िाये। ध्यान के अभ्यास से
यह सवोत्तम प्रकार िाना िाता है।

परररचे्छेद- १९

शवचार-सोंसृ्कशत

यनद हमारे िूते में एक ककड घुस िाये और पीडा देने लगे तो उसे ननकाल देते हैं। िूता उतारते हैं और
नहला कर कंकड नगरा देते हैं। यनद नवषय को भलीभाँनत समझ नलया िाये तो नकसी बलात् प्रवेि करने वाले
अनप्रय नवचार को भी मन से हटाना इतना ही सुगम है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ंहोना चानहए, दो मत नहीं ंहोने
चानहए। बात नबलकुल प्रकट, सुस्पष्ट तर्ा ननभ्राथन्त है। अनप्रय नवचार को मन से ननकाल देना भी उतना ही सुगम
होना चानहए नितना िूते में से ककड ननकाल देना और िब तक मनुष् इतना नहीं ंकर सके, उसे प्रकृनत के ऊपर

नविय पाने और उससे ऊपर उठ ि◌ाने की बात करनी मूखथता है। वह चमगादड के पंख ि◌ैसी आकृनत वाले उन नवचारों ◌ंका ही दास और निकार है ि◌ो उसके मद्धस्तष्क में चक्कर लगाते रहते हैं। ऐसे मनुष्ों ◌ंका भाग्य भी िोचनीय है।

शवचार- शनयन्त्रण के लाभ

नवचार ही कमथ की ओर ले ि◌ाता है। नवचार ही सारे कमों के स्रोत हैं। नवचारणा ही असली कमथ है। यनद आप प्रारम्भ में ही दूनषत नवचारों ◌ंका उनूमूलन कर देंगे तो आप कोई दुष्कमथ नहीं ◌ंकरेंगे। यनद आप इन्ें प्रारम्भ में ही कुचल देंगे तो आप संसार की नवपनत्तयों ◌ंतरा् क्िलेिों ◌ंसे छूट ि◌ायेंगे। अन्तननथरीक्षण और ि◌ाग्रत रह कर अपने नवचारों ◌ंको देखें।

नवचार ही सच्चा कमथ है। मन की नक्रयाएँ वास्तनवक कमथ हैं। यनद मन का नवक्िेप दूर हो ि◌ाये तो आपको अच्छी ननष्ठा नमलेगी तरा् मन बहुत ही ि◌ान्त हो ि◌ायेगा। मन की मनलनताओं ◌ंसे रनहत हो ि◌ायें। मन के ऊपर संयम रखें, तब ि◌न्म और मृतुयु सनहत संसार के सारे दुि:खों ◌ंका अन्त हो ि◌ायेगा। यनद आप अपने को मन के पंिि ◌ं से छुडा लेंगे तो मोक्ष स्वयं ही आ ि◌ायेगा, इसमें कुछ भी संिय नहीं ◌ंहै।

बुद्धिमान् मनुष् अपने नवचारों ◌ंपर ननग्रह रखता है और सारे कुनवचारों ◌ंको ि◌ैसे ही वे उठते हैं, मन के ऊपर की तह पर से हटा देता है। इसनलए वह सुखी रहता है। उसके नवचार सदा िि◌ु रहते हैं। परमात्मा का ध्यान करने से मन में िि◌ु नवचार प्रकट होते हैं; क्ोंनक परमात्मा ननत्य िि◌ु है।

यनद आपको अपने नवचारों ◌ंपर वनित्व है तो आप गम्भीर एकाग्रता से बहुत कायथ सम्पन्न कर सकते हैं। सब प्रकार की माननसक व्यरा्एँ, नचन्ताएँ और क्िलेि दूर हो ि◌ाते हैं। और ि◌ो ि◌ाद्धन्त प्राप्त होती है, उसका तो उनचत रीनत से वणथन ही नहीं ◌ंहो सकता।

निनको अपने नवचारों ◌ंऔर वाणी पर रो्डा-सा भी संयम होता है उनका मुख ि◌ान्त, गम्भीर, सुन्दर और मनोहर; वाणी कोमल और आूँखें देदीप्यमान्, द्युनतमान् तरा् श्वेत होंगी। ि◌ैसे अगरबत्ती से ननरन्तर मधुर सुगद्धन्ध ननकलती रहती है, ऐसे ही उस योगी मे, निसने अपने नवचारों ◌ंका ननग्रह कर नलया है और ि◌ो ननरन्तर ब्रह्म-नचन्तन करता रहता है, नदव्य सुगद्धन्ध और नदव्य तेि ननकलते रहते हैं। उसके मुख का तेि और सुगद्धन्ध ब्रह्मवचथस कहलाता है। ि◌ब आपके हार् में चमेली, गुलाब और चम्पक पुष्पों ◌ंका बना गुच्छा होता है तो उसकी मधुर सुगद्धन्ध सारे कक्ष में फैल ि◌ाती है और सबको समान रूप से प्रसन्न करती है, इसी प्रकार निस योगी ने अपने नवचारों ◌ंका ननग्रह कर नलया है, उसकी यि और कीनतथ-रूपी सुगन्ध दूर-दूर तक फैल ि◌ाती है वह नवश्व के नलए ि◌द्धि बन िाता है।

रेनियम बडा दुलथभ पदार्थ है। सारे ि◌गत् में केवल १६ ग्रेन है। निन योनगयों ◌ंने अपने नवचारों ◌ंका संयम नकया हुआ है, वे इस संसार में रेनियम के समान दुलथभ हैं।

शवचारि–न्क्त का सोंरक्षण तरा् उशचत उपयोग

ि◌ैसे व्यर्थ बातचीत करने में और गपिप में ि◌द्धि क्षीण होती है उसी प्रकार ननरर्थक नवचार रखने में भी िद्धि क्षीण होती है। इसनलए आपको एक भी नवचार व्यर्थ नहीं ◌ंखोना चानहए। ननरर्थक नवचारों ◌ंमें अपनी तननक भी िद्धि नष्ट मत करें। सारे माननसक बल को संग्रह करें। इसको नदव्य ध्यान, ब्रह्म-नचन्तन और ब्रह्म-नवचार में उन्नत

आध्याद्धत्मक उदे्देश्यों ◌ंके नलए उपयोग करें। आपको सारी नवचारि–द्धि सुरनक्षत रखनी चानहए और उसका उपयोग ध्यानाभ्यास और लाभदायक लोक-सेवा में करना चानहए।

अपने मद्धस्तष्क में अनुपयोगी ◌ानकारी मत भर लें। मन को अमना करना सीखें। ◌ो कुछ आपने सीखा है, उसे भुला दें। अब ये सब आपके नलए व्यर्थ हैं। तभी आप अपने मन को नदव्य नवचारों ◌ंसे भर सकते हैं। आपको नवीन मनोबल प्राप्त करना होगा; क्ोंनंक मन की सारी नबखरी हुई नकरणें अब प्रकृनतस्् हो गयी हैं।

भौनतक नवज्ञान में एक ◌िब्द आता है 'अनुस्ापनि–द्धि । यद्यनप ◌िद्धि का ◌िव्यमान वतथमान होता है, नफर भी नवद्युत्-प्रवाह नहीं ◌ंचलता। ◌िब यह चुम्बक (मैगनेट) के सार् संयुि नकया ◌ाता है तो अनुस्ापनि–द्धि के द्वारा नवद्युत्-प्रवाह चलने लगता है। इसी प्रकार माननसक ◌िद्धि ◌ो अनेक व्यर्थ के सांसाररक व्यवहारों ◌ंमें अपव्यय और अपनननदथि होती है, उसे उपयुि आध्याद्धत्मक मागथ में सुनननदथष्ट करना चानहए।

नकारात्मक शवचार

अपने मन से सारे अनावश्यक, अनुपयोगी और घृनणत नवचारों ◌ंको भगा दें। ननरर्थक नवचार आपकी आध्याद्धत्मक उन्ननत में बाधा ◌ालते हैं, घृनणत नवचार आध्याद्धत्मक प्रगनत में रुकावट होते हैं। ◌िब आप अपने मन में ननरर्थक नवचारों ◌ंको प्रश्रय देते हैं तो आप परमात्मा से दूर हो ◌ाते हैं। भगवत्सम्बन्धी नवचारों ◌ंको प्रनतस्ानपत करें। केवल उपयोगी और सहायक नवचारों ◌ंको ही रखें। उपयोगी नवचार आध्याद्धत्मक उन्ननत के सोपान है। मन को पुराने मागों में मत दौडने दें और इसको अपनी मनमानी मत करते हैं। सदा इस पर ननगरानी रखें।

अन्तननरीक्षण के द्वारा आपको सब प्रकार के नीच नवचार, ननरर्थक नवचार, अयोग्य नवचार, अनुनचत नवचार, कामुक नवचार तर्ा दे्वष, घृणा और स्वार्थ के नवचार को अवश्य ननकाल देना चानहए। आपको असामंस्यि और कलह के नवघटनात्मक नवचारों ◌ंको दूर करना होगा। आपको नवचार-संसूकृनत का नवकास करना चानहए अर्ाथत् अचे्छे, पे्रेमपूणथ उन्नत नदव्य नवचारों ◌ंको बढ़ाना चानहए। प्रते्येक नवचार रचनात्मक होना चानहए। यह दृह नननश्चत और सकारात्मक होना चानहए। उसकी मनोमूनतथ सुस्पष्ट और सुननधाथररत स्वरूप वाली होनी चानहए। आपको सनद्वचारों ◌ंका नवकास करना चानहए। प्रते्येक नवचार दूसरों ◌ंके नलए ◌ाद्धन्त और सान्त्वना देने वाला होना चानहए। यह नकसी के नलए तननक भी कर और दुिःख लाने वाला न हो तब आप पृथ्वी पर धन्य बन ◌ायेंगे। आप भूलोक में महान् ◌िद्धिाली हो ◌ायेंगे। आप ईसामसीह और बुि के समान अनेकों ◌ंकी सहायता कर सकते हैं, हिारों ◌ंको ननरोग कर सकते हैं और बहुसंख्यक मनुष्ों ◌ंको आध्याद्धत्मक बना कर उन्नत कर सकते हैं।

आप ◌ैसे उद्यान में चमेली, गुलाब, नरनगस और अन्य प्रकार के फूल लगाते हैं। वैसे ही आपको अन्तिःकरण के नविाल उद्यान में पे्रेम, दया, कृपा और पनवत्रता के ◌ाद्धन्तप्रद नवचार रूपी पुष्पों ◌ंको उगाना चानहए। आपको अन्तननरीक्षण के द्वारा इस मन रूपी उद्यान को ध्यान और उन्नत नवचारों ◌ंके ◌ल से सींचंना होगा और ननरर्थक कलह के नवचारों ◌ंके अपतृणों ◌ंको हटाना होगा।

असोंगत शवचार

साधारणतया अप्रनिनक्षत मनुष् के मन में चार-पाँच प्रकार के नवचार एक ही समय में ननवास करते हैं। पररवार के नवचार, व्यापार के नवचार, कायाथलय के नवचार, ◌िरीर के नवचार, खान-पान के नवचार, ओिा और प्रत्यािा, धनोपािथन की योिनाओं ◌ंके नवचार, नकसी प्रकार के प्रनतकार के नवचार, मल-मूत्र त्याग और स्नानानद के कुछ स्वाभानवक नवचार ये एक ही समय में मन को घेर लेते हैं। ◌िब ३-३० बिे सायंकाल को आप बडे ध्यान से नकसी पुस्तक को पढ़ रहे होते हैं, तो ४ बिे नक्रकेट का खेल देखने के आनन्द का नवचार आपके अध्ययन में

समय-समय पर बाधा िालता है। एकाग्र नचत्त बाला योगी ही एक समय में एक नवचार रख सकता है और अपने इच्छानुसार उसे चाहे नितनी देर तक बनाये रख सकता है।

यनद आप मन पर सावधानी से ननगाह रखें, तो आप देखेंगे नक बहुतेरे नवचार होते हैं। मन ननसे्देश्य यदृच्छया घूमता नफरता है। कुछ नवचार िरीर और इसकी आवश्यकताओं ंके सम्बन्ध में, कुछ नवचार नमत्रों ंके सम्बन्ध म कुछ खाने-पीने के सम्बन्ध में, कुछ नवचार बचपन के सम्बन्ध में होते हैं। यनद आप मन का अध्ययन कर के और अन्य सब प्रकार के नवचारों ंका बनहष्कार करके एक ही नवषय से संगत नवचार रख सकें तो यह बडी भारी उपलद्धि है, नवचार-संयम में उन्ननत की ओर महान् नकया है। साहस मत छोडें।

पाप के सतापकारी शवचार

कुछ लोगों ंको पाप के नवचार सन्ताप देते रहते हैं। एक व्यद्धि सदा यह सोचता रहता है, "मैंने िघन्य पाप नकया है। मेरी समझ में नहीं ंआता नक मैं क्ा करूँ।" बारम्बार यही एक नवचार उसके मन में आता रहता है। यह आदत बुरी है। उन्ें ज्ञान नहीं ंहोता नक अपने मन को नकस प्रकार दूसरी नदिा में ले िायें। वे इन सन्तापकारी नवचारों ंके निकार बन िाते हैं। पुण्य और पाप सापेक्ष िब्द हैं। मन ही इनकी सृनष्ट करता है। पाप तो केवल एक भूल है। भगवन्नाम का िप, दान और अनाहार व्रत से बडे-से-बडे पाप भी नष्टष हो िाते हैं। आप िरते क्ों ंहैं? बुरे से बुरा पापी भी मोक्ष प्राप्त कर सकता है और सबसे पावन बन सकता है। वाल्मीनक, िधाई, मधाई और अिनमल की प्रारम्भ में क्ा दिा री? क्ा वे ननकृष्ट श्रेणी के दुष्ट नहीं ंरे् ? प्रणव और राम नाम का उच्चारण करें और साहसपूवथक कहें नक 'मैं अब पनवत्र हूँ, मैं अब पावन हूँ।' ननरािा के नलए स्ान कहाँ है? नकसी को ननरािा नहीं ंहोना चानहए। धमथ-कायथ करें, सदा प्रभु को याद रखें। अन्तयाथमी के प्रनत सचे्चे बने रहें।

शवचार- शनयन्त्रण की प्रशवशध

नवचारों ंको संयत करने के नलए नीचे कुछ आत्म-सुझाव नदये िाते हैं-

(१) मैं नकसी वसु्तु का ध्यान नहीं ंकरूँगा।

(२) यनद मैं नकसी वसु्तु का ध्यान नहीं ंकरूँगा तो मुझे िाद्धन्त नमलेगी।

(३) मेरी इच्छा दृढ़ होती िा रही है। मैं अपने नवचारों ंको संयत कर सकता हूँ।

(४) बि मैं नवचार रनहत हो िाऊँगा तो मुझे पूणथ िाद्धन्त नमलेगी। में उ ननननवथचारावस्ा के नलए बडी उतु्सुकता से लालानयत हूँ।

प्रते्येक नवचार स्वतिः दुबथल होता है; क्ोंनंक मन एक ही समय में प्रनतक्षण बदलते हुए अगनणत नवचारों ंसे नवनक्षप्त रहता है। नितना अनधक नवचारों ंको संयत नकया िाता है, मन उतना ही एकाग्र होता िाता है और फलतिः इसकी िद्धि बढ़ती िाती है। एक-एक करके बुरे नवचारों ंको नष्ट कर देना चानहए। ननिःसने्देह इसके नलए बडे धैयथपूवथक कायथ करने की आवश्यकता होती है।

िैसे ही प्रातिः काल धीरे-धीरे िागते हैं, प्रर्म नवचार िो प्रकट होता है वह अपने अद्धस्तत्व का होता है नक 'मैं हूँ।' नफर गत सायंकाल की घटनाओं ंकी सूमृनत आती है। िो िद्धििाली नवचार अिा सायंकाल में मन के

ऊपर तैरते हैं, वे आगामी नदवस को प्रातिःकाल नबस्तर से उठते ही ििनैःि–नैः प्रकट होते हैं और आकार प्राप्त करते हैं। नफर वे नवचार आते हैं िो नदन-भर में नक्रया-रूप में सम्पन्न होने वाले हैं। इसको सतकथ हो कर देखें।

बि कोई नवचार मन में मूँरिये, उसे पूरा कर लें। उसे दीघथ काल तक लटकने मत दें। यह बार-बार नफर आयेगा और आपके नलए दुिःखमय नसि होगा। िब कभी नकसी नमत्र को पत्र भिैने का नवचार मन में आये, इस काम को उसी समय समाप्त कर लें। इसमें नविेष नवलम्ब मत करें।

दूनषत नवचारों ंको दूर करने के चार उपाय हैं। ज्ञानयोगी ओंकार अर्वा सत्य में रह कर इसे करता है। यह नवचार और उदासीन वृनत्त के द्वारा दूनषत नवचारों ंको नष्ट करता है। वह कहता है, "इसका मुझसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं ंहै। मैं सद्धच्चदानन्द-स्वरूप हूँ। **शिवोऽहम्, शिवोऽहम्।** ये चेष्टाएँ मन की हैं। मैं मन से नभन्न हूँ।" भि इसे प्रार्थना और आत्म-ननवेदन से नष्ट करता है। वह कहता है, "परमात्मन्। मैंने स्वयं अपने को, कमों के फल को और कमों को भी आपको समनपथत कर नदया है। मुझे िद्धि दीनिए नक इन दूनषत नवचारों ंको दूर भगा और नष्ट कर दूं।" उसे परमात्मा से आत्मननवेदन के द्वारा सहायता नमलती है। ईश्वर काम-वासना का सत्व अर्वा ओिौ में उदात्तीकरण कर देते हैं। रियोगी या तो उठती हुई वृनत्तयों ंका निा करके या प्रनतपक्ष-भावना द्वारा, साद्धत्त्वक प्रकृनत के नवरोधी तर्ा सकारात्मक नवचारों ंको प्रनतस्र्ानपत करके बुरे नवचारों ंको नष्ट करता है।

ब्रह्म- शवचार

सबसे प्रर्म और अग्रणी नवचार 'अहन्ता' का है। इसकी उत्पनत्त के पीछे ही और सब नवचारों ंकी उत्पनत्त होती है। पहले उत्तम पुरुष सवथनाम 'मैं' मन में प्रकट हो िाता है, उसके पीछे ही प्रर्म पुरुष सवथनाम 'वह' और मध्यम पुरुष सवथनाम 'तुम' प्रकट होते हैं। यनद मैं' का लोप हो िाये तो 'तुम' और 'वह' का भी लोप स्वयं हो िायेगा। यर्ायोग्य बाह्य- नवचार की इस भ्रमपूणथ तुच्छ 'मैं' को ननकाल दें, इसके अनतररि और कोई मागथ है ही नहीं।ं

नवचार करने वाला नवचार से नभन्न है। इससे पता चलता है नक आप मन से नभन्न हैं तर्ा मन में उठने वाले नवकारों ंके मूक साक्षी हैं। आप कूटस्र् ब्रह्म हैं। आप प्रत्यगात्मा है।

सोंकल्प-शवनाि

योगशश्चत्तवृशत्तशनरोधिः ——रियोग नचत्त वृनत्त ननरोध नसखाता है। नचत्त की वृनत्तयों ंका ननग्रह योग है। यह आपको बल देता है निससे आप नवचारों ंको ननकाल सके और यनद आवश्यक हो तो उन्ें वहाँ पर ही मार भी सकें। स्वाभानवक है नक इस कला के नलए भी अभ्यास आवश्यक है; परनुतु दूसरी कलाओं ंकी भाँनत िब एक बार इसे सीख नलया िाये तो इसमें कोई रहस्य या कनठनाई नहीं ंहै। यह तो अभ्यास करने योग्य ही है।

देद्धखए! एक संकल्प का ही र्ोडे से समय में कैसा नवस्तार हो िाता है। मान लीनिए, आपके मन में नमत्रों ं की चाय-गोष्ठी करने का संकल्प उठता है। चाय के एक नवचार के सार्-सार् एकदम ही चीनी, दूध, प्याले, मेि, कुरनसयाँ, मेिपोि, रूमाल, चम्मच, नमठाइयाँ, नमकीन आनद अनेक पदार्ों के नवचार आ िाते हैं। यह संसार संकल्पों ंके नवस्तार के अनतररि और है क्ा? नफर नवचारों ंसे स्वतन्त्र संसार कुछ वसुतु ही नहीं ंहै। मन के नवचारों ं का पदार्ों की ओर नवस्तार कर लेने से बन्धन हो िाता है। संकल्पों ंका त्याग ही मोक्ष है। संकल्प के सूत्र में अगनणत नवचार माला की मनणकाओं ं की तरह गुँर्े हुए हैं। यनद सूत्र टुकडे-टुकडे कर नदये िाये तो आप स्वषयं सोच सकत हैं नक इसमें भी हुई नवचाररूपी मनणकाओं ंकी क्ा दिा होगी । आपको सदा सचेत रहना चानहए नक िैसे ही मन में संकल्प उठे तत्काल ही उन्ें नष्टष कर दें । तभी आप सचमुच सुखी होगे। मन छल करता है।

आपको उनचत है नक इसके स्वषरूप, स्वभाव और कायथ नवनध को भली प्रकार समझ लें। तब आप इसे सुगमता से वि में कर सकेंगे।

प्राणायाम

प्राण मन का बाहरी लबादा है। सूक्ष्म प्राण के स्पन्द से नवचार बनता है। प्राणायाम से भी आप मनोबल को बढ़ा सकते हैं और नवचार-ननग्रह तर् नवचार संसूकृनत का नवकास कर सकते हैं। इससे धारणा और ध्यान में सहायता नमलती है, मन द्धरूर होता है, रिगुण और तमोगुण दूर हो िाते हैं तर् मन का मल िल िाता है।

प्रशतपक्ष भावना

यनद आप अपनवत्र वसुतुओं ंको बार-बार सोचेंगे, तो दोहराये िाने से बुरा नवचार िद्धि प्राप्त कर लेगा। उसको संवेग-बल नमल िायेगा। ऐसे नवचारों ंको तुरन्त भगा देना चानहए। यनद ऐसा करने में कनठनाई प्रतीत हो, तो उसके नवपरीत ईश्वर-सम्बन्धी नवचार धारण करें। उदात्तष तर् उन्तकारी नवचारों ंका सम्पोषण करें तब बुरे नवचार स्वयं ही नष्टष हो िायेंगे। उच्च नवचार कुनवचारों ंको प्रभावहीन बनाने के नलए प्रभावकारी प्रनतकारक का काम करते हैं। प्रर्म नवनध से यह अनधक सुगम है। ननत्य हिारों ंबार परमात्मा का नाम अपने से सनद्वचारों ंको बल नमलता है। ननत्य हिार बार **'अहों ब्रह्मान्'** कहने से यह नवचार दृढ़ हो िाता है नक आप आत्मा हैं तर् यह नवचार नक आप देह है, ननबथल होता िाता है।

रीर तर् वाणी पर शनयन्त्रण

यनद आप नकसी दूनषत नवचार के संयम में समर्थ नहीं ंहैं, तो पहले िरीर और वाणी का ननग्रह करें। िनैः-िनैः आपको मनोबल और इच्छा–द्धि प्राप्त होंगें और धीरे-धीरे आप नवचारों ंका ननग्रह कर सकेंगे। यनद र्ोडी देर के नलए आप यह सोचें नक आप नकसी कुनवचार पर नविय नहीं ंप्राप्त कर सकेंगे तो तुरन्त उठ खडे हों ंऔर िारीररक पररश्रम का कायथ करने लग िायें। एक के बाद दूसरा प्रयत्न करते-करते कायथ सुगम हो िायेगा और र्ोडे नदनों ंमें आपको नवचारों ंपर पूणथ वनित्व प्राप्त हो िायेगा।

पहले स्रूल िरीर और वाणी का संयम करें। नफर धीरे-धीरे नवचारों ंका ननग्रह करें। दूसरों ंकी बुराई मत करें। निहे्वेद्धन्द्रय को पहले वि में करें। धीरे-धीरे मन में दूसरों ंकी बुराई का नवचार नहीं ंआयेगा। मन अपने-आपसे कहेगा, "िब निह्वा मेरे नवचारों ंको प्रकट करने के नलए तैयार नहीं ंहै तो मैं दूसरों ंकी बुराई क्ों ंसोचूँ।" िब आपमें नैनतक सदाचार दृढ़ हो िाये तभी आप अपने कमों का ननग्रह कर सकते हैं। िब आप नकसी की बुराई करते हैं तो कई मनुष्ों ंके मन में नवष घोल देते हैं। दूसरों ंकी बुराई करना अधम काम है; नकनु्तु कभी-कभी घृणा और द्वेष के नबना न्यायपूणथ आलोचना की िा सकती है।

ननरर्थक या दूनषत नवचारों ंको िब्दों ंमें नवकनसत मत होने दें। वाणी का ननग्रह करें। तुरन्त मन को कुछ सनद्वचारों ंकी ओर लगायें। गीता के कुछ श्लोकों ंको याद करने की चेष्टा करें। कुछ प्रार्थना करने लगें। 'ॐ हरर', 'ॐ निव', 'ॐ नारायण' आनद कुछ िब्द-मूनतथयाँ बनाये रखें। ननत्य कुछ घण्टों ंके नलए मौन पालन बोलने और नवचारने की स्वाभानवक प्रवृनत्त को रोकेगा, िद्धि का संचय करेगा और ध्यान, नवचार-ननग्रह तर् नवचार-संसूकृनत में सहायक होगा।

सतकछता

कुनवचारों ंके भारी नवनिाकारी पररणाम को स्वयं िान लें। इसमें िब कभी कुनवचार आयेंगे तो आप सचेत हो िायेंगे। निस क्षण ऐसे नवचार आयें, तुरन्त ही अपने मन को नदव्य नवचारों, ं प्रार्थनाओं ंअर्वा िप में लगाने का प्रयास करें। बुरे नवचारों ंको दूर भगा देने की सच्ची लगन रहने से आप सचेत रहेंगे, यहाँ तक नक यनद स्वप्न में
भी कोई कुनवचार प्रकट होगा तो आप तुरन्त िाग उठेंगे। यनद आपके िागते रहने पर िुरु प्रकट हो और आप यरेष्ट सचेत रहें तो उससे सामना कर लेना बहुत कनठन नहीं ंहोता है।

मन को पूणछत: व्यि रखें

बि मन िून्य होता है तो कुनवचार प्रवेि करने की चेष्टा करते हैं। मैरुन का प्रारम्भ ही कुनवचारों ंसे होता है। कामपूणथ दृनष्ट से नकसी की ओर देखने से ही आपने हृदय में मैरुन कर नलया। माननसक नक्रयाएँ ही सचे्चे काय थ हैं। यह स्मरण रखें नक ईश्वर मनुष् का न्याय उसके माननसक भावों ंके अनुसार करता है और संसारी मनुष् उसके बाहरी स्थूल कमो से करते हैं। । िब आप मनुष् के आन्तररक भावों ंको देखेंगे, तब आप गलती नहीं ंकरें । मन को पूणथ रूप से व्यस्त रखेंगे तो बुरे नवचार मन में नहीं ंआयेंगे। अकमथण्य मद्धस्तष्क िैतान की कायथिाला है। मन को प्रनतक्षण देखते रहें। अपने को नकसी-न-नकसी काम िैसे सीना, बगीचा लगाना, बरतन मांनिा, झाड़ू लगाना, पानी भरना, पढ़ना, ध्यान करना, िप करना, परमात्मा के भिन गाना, प्रार्थना करना, बडों ंकी या रोनगयों ंकी सेवा में संलग्न रखें व्यर्थ की गपिप से बचे। मन में गीता, उपननषद् योगवानसष्ठ आनद के उत्कृष्ट नवचार भरें।

शवचार की सान्त्वक पृष्ठभूशम

बहुत से मनुष् सदा नकसी स्थूल पदार्थ की आवश्यकता मानेंगे निसके सहारे अपने नवचार मन में द्धस्थर कर सकें, िो उनके नवचार स्वरूप का केन्द्र-नबन्दु बन सके। यह मन का—स्वभाव है। मन को द्धस्थर करने के नलए नवचारों ंकी पृष्ठभूनम चानहए।

साद्धत्वक पृष्ठभूनम ही रखनी चानहए। मन निस पदार्थ को तत्परता से सोचता है. उसी का रूप बन िाता है। यनद वह सन्तरे का ध्यान करता है तो सन्तरे का रूप बन िाता है और यनद वंिीधारी श्रीकृष्ण का ध्यान करता है तो उनका ही रूप बन िाता है। आपको उनचत है नक मन को यर्ावत् प्रनिनक्षत करें और आत्मसात् करने के नलए इसके सामने उनचत साद्धत्त्वक पदार्थ ही रखें।

लक्ष्य तक पहुँचने के नलए आपको अपने नवचारों ंकी पृष्ठभूनम साद्धत्वक बनानी चानहए। यनद आप भगवान् कृष्ण के भि हैं तो आपको उनके रूप-स्मरण और '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' का िप करने की पृष्ठभूनम बनानी चानहए। ननगुथण उपासक (वेदान्ती) को ओंकार-नचन्तन और उसके अथथ-स्मरण (सद्धच्चदानन्द, व्यापक, पररपूणथ आत्मा) की पृष्ठभूनम बनानी चानहए। संसार में कायथ करते रहें और निस क्षण भी नचत्त को अवकाि नमले, अपने नवचारों ंकी पृष्ठभूनम का नचन्तन प्रारम्भ कर दें चाहे वह आपकी रुनच, स्वभाव और सामथ्यथ के अनुसार सगुण हो या ननगुथण । ननरन्तर नचन्तन से एक स्वभाव बन िाता है और मन नबना प्रयास के ही नवचार की पृष्ठभूनम की ओर दौडने लगता है।

यह बडे खेद की बात है नक बहुसंख्यक लोगों ंका कोई आदिथ िीवन का कोई कायथक्रम और नवचार की पृष्ठभूनम ही नहीं ंहोती। वे नीि की ओर ही िाते हैं। साधारणतः नववानहता स्त्री के नवचारों ंकी पृष्ठभूनम कामपूणथ होती है। वृि माता के नवचारों ंकी पृष्ठभूनम अपने पुत्रों ंऔर पौत्रों ंकी ओर प्रेमपूणथ होती है। बहुसंख्यक मनुष्ों ंके नवचारों ंकी पृष्ठभूनम अनधकतर ईष्र्थ और द्वेष की होती है। नवश्वनवद्यालयों ंसे सम्मानपत्र प्राप्त निनक्षत कहलाने वाले लोगों ंका भी कोई लक्ष्य (उद्देश्य), कायथक्रम और नवचार का आधार नहीं ंहोता नक ज्ञान के सामने तो

नवश्वनवद्यालयों ंकी यह निक्षा भूसे के ही है। सहायक उपायिु को िब ननवृनत्तवेतन नमलता है तो वह तीसरा नववाह कर लेता है और नकसी ररयासत में दीवान पद पर ननयिु हो िाता है।

सारी मनुष् यौन नवचारों ंऔर घृणा, क्रोध और प्रनतकार के नवचारों ंका निकार रहता है। यही दो प्रकार के नवचार उसके मन पर अनधकार बनाये रखते हैं। वह इनका ही दास बना रहता है। वह इनसे मन को हटा कर नकसी उत्तम नवचारों ंमें लगाने का उपाय नहीं ंिानता। वह नवचारों ंका ननयम नहीं ंिानता। वह मन के स्वभाव और इसकी िनटल नक्रयाि्ली से अननभज्ञ होता है। संसारी सम्पनत्त और नवश्वनवद्यालय में प्राप्त नकये हुए पुस्तकीय ज्ञान के रहते हुए भी उसकी दिा बडी िोचनीय हो िाती है। उसकी नवद्या देकर है। उसमें नववेक का उदय नहीं ंहुआ है। उसे सन्तों,ं िास्त्रों ंऔर ईश्वर में श्रिा नहीं ंहै। अपनी दुबथल इच्छाि्द्धि के कारण वह अपनी दुवाथसनाओं,ं तृष्णाओं ंतरा् प्रलोभनों ंको रोक नहीं ंसकता। उसके संसारी मद, संसारी मोह और संसारी भ्रम को दूर करने के नलए ननरन्तर सत्संग ही एकमात्र प्रभावकारी औषनध है।

िीनवका - वृनत्त से ननवृत्त हो िाने पर प्रत्येक मनुष् को अपने नवचारों ंका एक आधार बनाना चानहए और अपना समय दािथननक स्वाध्याय और दैवी ध्यानाभ्यास में नबताना चानहए। असम्बि नवचार की पुरानी आदत को अच्छे नवचारों ंकी नवीन आदत बना कर बदल देना चानहए। पहले अच्छे नवचारों ंकी ओर झुकाव होगा। अभ्यास िारी रखने से धानमथक सहायक नवचारों ंकी ननननश्चत आदत पड िायेगी। आपको बहुत अनधक प्रयास करना पडेगा। पुरानी आदतें बार-बार लौट कर आने की चेष्टा करेंगी। िब तक आप सनद्वचारों ंकी आदत में दृढ़ता से द्धस्त्रत नहीं ं हो िाते, आपको बारम्बार मन में माद्धन्वक नवचार, दैवी नवचार, गीता के नवचार, भगवान् कृष्ण के, भगवान् राम के, उपननषद् आनद के नवचार करने होंगें। अब नये-नये मागथ और नानलयाँ बन िायेंगी िैसे ग्रामोफोन की सुई प्लेट में एक छोटा-सा ननिान बनाती है इसी प्रकार साद्धत्त्वक नवचार मन और मद्धस्तष्क में नयी-नयी स्वस्र् नानलयाँ बनायेंगी, नये संस्कार बन िायेंगे।

ननशवचार योगी की मशहमा

ननरन्तर और तीव्र अभ्यास के द्वारा आप नवचार-हीन हो सकते हैं। नवचार-रनहत संसार में कायथ करने वाले पुरुष से अनधक संसार की सहायता करता है। साधारण मनुष् इस बात को कनठनाई से समझ सकते हैं। िब आप वृनत्त रनहत (नवचार रनहत) होते हैं तो आप संसार के प्रत्येक कण में व्याप्त हो िाते हैं और सारे संसार को उन्नत कर देते हैं। िडभरत और वामदेवि्से वृनत्त-रनहत ज्ञाननयों ंके नाम आि भी स्मरण नकये िाते हैं। उन्होंनें कभी आश्रम नहीं ंबनाये, कभी व्याख्यान नहीं ंनदये कभी पुस्तकें नहीं ंछपवाय और कभी निष् नहीं ंबनाये नफर भी इन वृनत्त-रनहत ज्ञाने लोगों ंके मन पर नकतना भारी प्रभाव िाला रा्। ऐसे वृनत्त रनहत ज्ञाननयों ंकी िय हो।

परिच्छेद-२०

वासनाएँ

वासनाएँ कैसे प्रकट होती हैं

मन के सरोवर में ो लहर उठती है, उसे वासना कहते हैं। वासना का अनधष्ठान कारण–रीर है। वहाँ
यह बी-रूप में रहती है और मन-सरोवर में प्रकट होती है। ैसे बी में पुष्प नछपे रहते हैं वैसे ही अन्तिःकरण में
वासनाएँ, अन्तनहथत रहती हैं। ननत्य नये-नये पुष्प प्रसुफुनटत होते हैं। एक-दो नदन में वे मुरझा ाते हैं। इसी प्रकार
नयी-नयी बासनाएँ एक-एक करके उन्नत होती हैं, मन की सतह पर बाहर आती हैं, ीवों ंके मन में सकल्प उत्पन्न
करके उन्‌ भोग-पदार्‌ों को प्राप्त करने और भोगने की प्ेरेरणा करती है। बासनाएँ कमथ की नननमत्त बनती हैं और कमथ
वासनाओं ंकी पुनष्ट करते हैं। यही दुश्चक्र है। ब्रह्मज्ञान के उदय होने पर सभी वासनाएँ भस्म हो ाती हैं।
वास्तनवक ितुरु अन्तद्धरस्त बासनाएँ हैं। उन्‌ नष्ट करें। उनका उनूमूलन करें। वे दृढमूल हैं।

बी के अन्दर सूक्ष्म रूप से आम का समूपूणथ वृक्ष ाखा और पनत्तयों ंसनहत नछपा हुआ है। इसके प्रकट
होने के नलए समय की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार बाल्यावस्‌ा में काम-वासना नछपी रहती है, १८ वषथ की
अवस्‌ा में प्रकट होती है, २५ वषथ की आयु में सारे रीर में व्याप्त हो ाती है, २५ वषथ से ४५ वषथ तक बडा अनर्थ
करती है और नफर िनैः िनैः क्षीण होने लगती है। मनुष्‌ २५ से ४५ वषथ तक की अवस्‌ा में बहुत से अपराध तर्‌ा
अननष्ट करते हैं। यह ीवन का बडा क्राद्धन्तकारी काल होता है। छोटी अवस्‌ा में बालक और बानलकाओं ंके
स्वभाव में कोई नविेष भेद नहीं ंहोता। यौवनारम्भ होने पर वे अपने-अपने स्वभाव को प्रकट करते हैं।

चपलता

चपलता मृदु प्रकार की वासना है। यह र्‌ोडे समय तक ही रहती है। दो प्रकार की मुख्य चपलताएँ होती
हैं। एक निह्वा-चपलता है निसमें बार-बार अनेक पदार्थ खाने की इच्छा होती है। यह नवकृत कुषुधा का रूप है। ो
धनी मनुष्‌ नवलासपूणथ ीवन यापन करते हैं, उनको निह्वा-चपलता हुआ करती है। दूसरी उपस्‌-चपलता होती है निसमें
निनेद्धन्द्रय रनत-सम्भोग (स्पिथ) का सुख बार-बार चाहती है।

वासना अिान्त तर्‌ा बन्धन उत्पन्न करती है

धन की अिाद्धन्त वासना के कारण होती है। ज्यों–ही वासना प्रकट होती है, त्यों–ही मन और पदार्थ के बीच नवषय-वृनत्त-
प्रवाह के द्वारा एक घननष्ठ सम्बन्ध हो ाता है। िब तक मन को यह पदार्थ न नमल ाये और उसे भोग
न लें तब तक यह पीछे नहीं ंहटता है। िब तक उस पदार्थ का भोग प्राप्त नहीं ंहोता मन की अिाद्धन्त बनी रहती है।
िब एक नवषय-पदार्थ प्राप्त नहीं ंहो ाता और भोग नहीं ंनकया ाता, तब तक वृनत्त करावा पदार्थ की ओर
बहती रहती है। साधारण मनुष्‌ अपनी दुबथल इच्छा के कारण नकसी वासना को दबा नहीं ंसकता।

मन की वासनाओं ंके कारण ही नवषय-पदादो की ओर आकषथण होता है और उन वासनाओं ंके लोप से
बन्धन का भी लोप स्वभावतिः हो ाता है। यनद मन के अन्दर कोई वासना न हो तो बाहर भी नकसी पदार्थ के नलए

आकषथण, अनुराग या उते्तिना नहीं ंहोती। आपके सारे दुिःखों ंतर्ा के्लिीं ंका कारण वासनाएँ हैं। ईश्वर-सृनष्ट (ईश्वर के बनाये हुए पदार्थ) से कोई कष्ट नहीं ंहोता। िल आपकी तृषा िान्त करता है, वायु आपको सुख देती है, धूप से
ििन नमलता है, अनग्न से गरमी नमलती है; नकनु्तु िीव-सृनष्ट से ही मनुष् बन्धन में पडता है। अहंकार, क्रोध, अनभमान, आसद्धि-ये सब िीव-सृनष्ट हैं। िुि संकल्प रखें; परनु्तु वासना को मत रहने दें।

केवल सदाचार-पालन से ईष्ाथ, राग, दे्वेष, काम, क्रोधानद को दबाया िा सकता है; परनु्तु उनका पूणथतया उनूमूलन नहीं ंनकया िा सकता। इन अपनवत्र अिुभ वासनाओं ंको सदाचार-संसूकृनत के द्वारा दुबथल नकया (तनु-अवस्र्ा में रखा) िा सकता है। उनका रूप सूक्ष्म हो िाता है। वे नकसी व्यद्धि की हानन नहीं ंकर सकीं।ं वे पूणथ संयम में रहती है।

दमन नही,ों वरन् उनूमूलन ही समुशचत उपाय है

कोई साधक र्ोडे समय के नलए वासना को दबा सकता है, नकनु्तु उपयुि अवसर नमलते ही यह नफर दूनी प्रबलता के सार् प्रकट हो िाती है। िैसे मन्त्री राि की आज्ञा मानते हैं वैसे ही पाँचों ंइद्धन्द्रयाँ मन के
आदेिानुसार कायथ करती हैं। इसनलए अपने ही िुि मन और उनचत प्रयत्नों ंद्वारा आपको पदार्ों ंकी वासनाओं ंका उनूमूलन करना चानहए। संसार-सागर में भ्रमती हुई मनुष्-रूपी नौका को वासनाओं ंकी रस्सी ने बाँध रखा है, आपको उनचत है नक दृढ़ प्रयत्न द्वारा इस लम्बी रस्सी को तोड कर फेंक दें। वासना को मूल से उखाड फेंकना चानहए। यनद नवचार और नववेक के द्वारा इन वासनाओं ंका क्षय कर नदया िाये तो ननत्य चंचल मन उसी प्रकार िान्त हो िायेगा िैसे घी के नबना दीपक िान्त हो िाता है।

वासनाओ ंको कैसे नष्ट करें

िम

साधक के नलए नवज्ञानमय-कोि बडे दुगथ का काम देता है। वहाँ से वह वासनाओं ंपर, िब कभी वे कारण–िरीर से मन में ननकलने का प्रयत्न करें, आक्रमण कर सकता है। नवज्ञानमय-कोि की सहायता से, िम के अभ्यास से साधक एक-एक करके वासनाओं ंका नाि कर सकता है। िैसे ही वे नसर उठाने की कोनिि करें, साधक को उनें कुचल देना चानहए। उनें अंकुररत होने का अवसर नहीं ंदेना चानहए। यह वासना-त्याग है। यह
युि अन्दर से ही होता है।

िब कोई वासना या संकल्प मन में उठता है तो मन अन्दर इद्धन्द्रयों ंको एक धक्का-सा देता है। यही धक्का अन्तर इद्धन्द्रयों ंसे बाह्य करणों–िैसे हार्, पाँव, आँख, कान आनद-तक पहुँचता है। िम का अभ्यास इसी धके्के को रोकता है िो नक सारी इद्धन्द्रयों ंऔर बाह्य करणों ंकी गनत का मूल कारण है।

वासनाओं ंके उनूमूलन से िो नचत्त को िाद्धन्त होती है, उसे िम कहते हैं। िमयुि पुरुष का अन्तिःकरण नहम से भी अनधक िीतल होता है। उसकी िीतलता की समता चन्द्रमा की िीतलता भी नहीं ंकर सकती। संसारी मनुष् का अन्तिःकरण साधारणतिः धधकती हुई भट्टी के समान होता है। िमयुि पुरुष इष्ट वसु्तु की प्राद्धप्त से हनषथत नहीं ं होता और अननष्ट वसु्तु के प्राप्त होने पर िोक नहीं ंकरता। उसका मन सदा सनु्तुनलत रहता है। उसका कोई ितु्रु नहीं ंहोता। िमयुि पुरुष के आध्याद्धत्मक परमानन्द की तुलना में एक सम्राट् का सुख भी तुच्छ होता है। मोक्ष के चार प्रहररयों ंमें से एक िम है। यनद आपमें िम है तो इसके िेष तीनों ंनमत्र अर्ाथत् सन्तोष, नवचार और सतं्संग भी आपके पास स्वयमेव आ िायेंगे।

दम

इन पर आक्रमण बाहर से भी करना चानहए। बाह्यवृनत्त-ननग्रह दम के द्वारा होना चानहए। बाहर से नवषय-स्पन्दनों ंको इद्धन्दयों ंके मागथ से मन में प्रविे करने नहीं ंदेना चानहए। अकेला िम पयाथप्त नहीं ंहै। दम के द्वारा इद्धन्द्रयों ंको कुद्धण्ठत कर देना चानहया उदाहरणार्थ नमठाई की वासना को उसके अन्तर में उठते ही िम के द्वारा
वासना-त्याग से नाि करना चानहए और नमठाई को देखने से िो बाह्य वृनत्त उठती है, उसको बाािर में चलते हुए नमठाई की ओर से दृनष्ट हटाने से और चीनी खाना छोड देने से कुचल देना चानहए। मन के संयम में दम िम का पूरक है। वासनाओं ंके पूणथ उनूमूलन में दस सहायक है।
यनद आप चाय पीने की पुरानी आदत को छोड दें तो कहा िा सकता है नक आपने स्वाद को नकसी हद तक वि में कर नलया है, एक वासना को क्षीण कर नदया है। इससे आपको र्ोडी िाद्धन्त नमलेगी; क्ोंनक आप चाय, दूध, चीनी आनद प्राप्त करने के नवचार और प्रयत्न से मुि हो गये हैं। दाथननक और साधक के नलए नवचार करना, देखना और सुनना सभी दुिःखदायी हैं। संसारी मनुष्ों ंके नलए यह सुखदायक है। िो िद्धि आपको चाय के नलए दौडने को बाध्य कर रही र्ी, वह अब इच्छा–िद्धि में पररणत हो चुकी है। एक वस्तु के त्यागने से आपको िाद्धन्त और इच्छा–िद्धि नमलती है। यनद आप पन्दरह वस्तुओं ंका त्याग कर दें तो आपकी माननसक िाद्धन्त तर्ा इच्छा–िद्धि और भी प्रबल हो िायेगी। यह त्याग का फल है। इसनलए त्याग में आपको हानन नहीं ंहोती। आपको नविेष ज्ञान, आनन्द और िद्धि नमलती है। नकसी उच्चतर पदार्थ के नलए आप साधारण पदार्थ का त्याग करते हैं। क्ा कोई मनुष् ऐसा है िो चीनी के नलए गुड को नहीं ंत्याग देगा? यनद आप एक बार एक वासना का संयम कर लें तो दूसरी वासनाओं ंका संयम भी आपके नलए सुगम हो िायेगा; क्ोंनक इससे आपको िद्धि प्राप्त होगी।

स्वाध्याय तर्ा ध्यान

प्रारम्भ में अपनी िास्त्र-वासना को बढ़ायें। अपने मन को प्रामानणक दाथननक ग्रन्ों ंके अध्ययन में लगायें। इस प्रकार आप देह-वासना और लोक-वासना को घटा सकते हैं। बाद में आपको िास्त्र-वासना भी त्याग देनी होगी। आपको अपना सारा समय तर्ा अपनी सारी िद्धि केवल ध्यान के अभ्यास में ही लगानी चानहए। भली प्रकार नकये हुए नवचार, ब्रह्म-ध्यान, वैराग्य और त्याग के द्वारा वासना-क्षय होता है।

शवचार तर्ा ब्रह्म-भावना

ज्ञानी िानते हैं नक वासनाओं ंसे युि मन बन्धन में ले आता है और वासना से सवथधा िून्य मन मुि ही कहलाता है। िैसे नपंिरे में बन्द हुआ नसंह उसकी िलाकाओं ंकी तोड कर बाहर ननकल आता है इसी प्रकार ज्ञानी नवचार, नननदध्यासमकाओं ंकसे -भावना द्वारा वासनाओं ंका क्षय करके इस िरीर रूपी नपंिरे से नवियी हो कर बाहर नवकल आता है। आप स्वरूप-भावना के द्वारा नितना अपनी वासनाओं ंको क्षीण करेंगे उतना ही अनधक आप सुखी होंगें। नितनी-नितनी वासनाएँ, दुबथल होती है उसी अनुपात में मन भी क्षीण होता िाता है। मन नसवाय वासनाओं ंकी गठरी के और कुछ नहीं ंहै। पुनिथन्म की अनन्त शृंखलाओं ंको उत्पन्न करने वाली वासनाओं ंके नसवा मन कुछ भी नहीं ंहै। मन का वास्तनवक स्वरूप वासनाएँ हैं। मन और वासना एक ही हैं।

अहोंकार पर शवजय

यनद आप अहंकार का निा करके इद्धन्द्रयों ंको वि में कर लें तो वासनाओं ंका स्वयमेव क्षय हो िाता है। सारे दुिःखों ंका मूल कारण अहंकार ही है। निस प्रकार कुटुम्ब के अन्य लोग नपता के आनश्रत रहते हैं वैसे ही सारी तृष्णाएँ, वासनाएँ, कामनाएँ आनद िरीर-रूपी कुटुम्ब के प्रधान, अहंकार के आनश्रत रहती हैं।

साद्धत्वक मन-रूपी भण्डार में से बराबर **'अहों ब्रह्मान्ि'**-वृनत्त (ब्रह्माकार-वृनत्त) बनाते रहें। यह अचूक औषनध है। इसे बराबर अपने पास रखें और िब कभी अहंकारमय 'मैं-पन' के नमथ्या नवचार दबाने लगें, इसी ब्रह्माकार-वृनत्त के प्रयोग से रोगमुि हो िायें। िब आप मन के इस दुिःखदायक अहंकार का निा करेंगे और इद्धन्द्रय-रूपी ितुरुओं ंको िीत लेंगे, तभी िाग्रत रहने वाली वासनाएँ िान्त होंगी।

मोक्ष का अर्छ

सैकडों ंिन्मों ंके अभ्यास से िो भ्रमपूणथ संसारी वासनाएँ उत्पन्न हो चुकी हैं, वे दीघथ काल तक योगाभ्यास के नबना कभी नष्ट नहीं ंहोतीं।ं इसनलए हे साधको! नववेकपूणथ प्रयत्नों ंके द्वारा भोग-कामना को दूर हटा कर मन की उस अवस्ा का अभ्यास करें निसमें यह वासनाओं ंसे नबलकुल िून्य हो िाता है।

मोक्ष का अर्थ यह नहीं ंहै नक समस्त संसारी कायों से भौनतक नवयोग कर नलया िाये; अनपतु इसका अर्थ ऐसी माननसक द्धस्नत है िो सारी मनलन वासनाओं ंसे रनहत हो कर संसारी वसुतुओं ंमें सामान्य रूप से कायथ करता रहे। संसार में रहते हुए संसार के द्वारा ही ईश्वर-प्राद्धप्त करनी चानहए। गीता का मुख्य उपदेि यही है- "ननगृहीत नचत्त पुरुष रागदेेषानद से रनहत स्व-विीभूत इद्धन्द्रयों ंद्वारा नवषय-समूह को ग्रहण करता हुआ भी आत्म-प्रसाद प्राप्त करता है" (गीता : २-६४)। योगवानसष्ठ का भी मुख्य उपदेि यही है।

ब्रह्म में कोई वासना नहीं ंहै। वासनाओं ंका पूरा-पूरा निा केवल नननवथकल्प समानध में ही हुआ करता है। केवल नननवथकल्प समानध ही अिुि वासनाओं ंके बीि को पूणथतया नवदग्ध कर सकती है। ब्रह्म-ज्ञान के द्वारा नवषय-भोग की कारण-भूत कामनाओं ंका निा होता है। िब सभी वासनाएँ लुप्त हो िाती हैं तो मन उसी प्रकार िान्त हो िाता है। िैसे घी-रनहत दीपक।

पररचे्छेद- २१

कामनाएँ

अपने मानस-दक्षेत्र को स्वच्छ कर उसमें अपने पे्रम-पात्र प्रभु को आसीन करने का स्ान बनायें। सारे सांसाररक नवचारों ंको बाहर ननकाल दें निससे उनका नसंहासन उनके अनुरूप हो। लाखों ंकामनाओं,ं आकांक्षाओं ंतरा उदे्देश्यों ंने आपको घेर रखा है। ये कामनाएँ प्रभु के क्षेत्र (हृदय) को खाली नहीं ंकर देती तब तक आप प्रभु के बि तक ये क नलए स्ान कैसे बना सकते हैं?

कामना क्या है?

भावात्मक मन का एक स्वरूप कामना है। इसमें मन को बनहगाथमी बनाने की िद्धि है। इच्छा ईंधन है और नवचार अनग्न है। इच्छा-रूपी ईंधन द्वारा नवचार-रूपी अनग्न िलती रहती है। यनद ईंधन ननकाल नदया िाये तो नवचार की अनग्न अपने गभथ में प्रवेि कर िाती है। यनद इच्छाओं ंको भेद कर नवचार को रोक नदया िाये तो मन ब्रह्म में वापस लौट िाता है।

मन की िुद्धि तब होती है िब वह सारी कामनाओं ंसे हीन हो कर सुख और दुिःख में उदासीन रहे और कोई वसुतु इसको आकृष्ट न कर सके। तब ही यह माया के फनै्दे से वैसे ही मिु हो िाता है िैसे नपंिरे से ननकला हुआ पक्षी, िो इच्छानुसार आकाि में घूमता है।

इच्छा, नवचार और अहंकार एक दुश्चक्र है। यनद उनमें से एक को भी नष्ट कर दें तो िेष दोनों ंस्वयं ही मर िाते हैं। मन-मद्धन्दर के ये तीनों ंस्तम्भ हैं। ये मनश्शशृंंखला की तीन कनडयाँ हैं। इनमें से एक कडी के टूटने से सारी िंिीर टूट िाती है।

कामनाएँ क्यो ंउत्पन्न होती हैं?

मन में कामनाएँ क्यों ंउत्पन्न होती हैं? आनन्द-अभाव के कारण। कामना का कारण बाह्य पदारों् का अद्धस्तत्व है। उतुसुकता ही मन में कामना बन िाती है। अनभरुनच और भाव कामना से पहले आते हैं। आिा और अपेक्षा से कामना पुष्ट होती है।

शवक्षेप मन का स्वभाव ही है

िैसे ताप अनग्र से अपृर्क्करणीय है वैसे ही नवक्षेप मन से अपृर्क्करणीय है। यह साधकों ंको बहुत दुिःख देता है। यह दृढ़ इच्छाि–द्धि वाले पुरुषों ंके ननश्चय को भी अचानक ही नष्ट कर िालता है। यनद नवक्षेप न रहे तो मन का अद्धस्तत्व नहीं ंरहता। यह नवक्षेपयिु मन संसार की रचना करता है। मल भी सुगमता से दूर नकया िाता है; परन्तु नवक्षेप दूर करने के नलए साधक को दीघथ काल तक बडा सुदृढ़ प्रयत्न करने की आवश्यकता है। िब ननभीक उद्दालक नननवथकल्पावस्र्ा में प्रविे करने का प्रयत्न कर रहे र्े तो उन्ें इस नचत्त-नवक्षेप के कारण बहुत कष्ट सहना पडा र्ा। िाि भतृथहरर िब दुिःखदानयनी नवक्षेपि–द्धि पर प्रभुत्व पाने का प्रयत्न कर रहे र्े तब उनको भी ऐसी ही कनठनाई का सामना करना पडा र्ा। नवक्षेप माया है। नवक्षेप िािु वासना है। ननरन्तर उपासना, योगाभ्यास या ब्रह्म-नवचार द्वारा नवक्षेपि–द्धि का नाि करना होगा, तब िाद्धन्त स्वयं ही आ िायेगी।

कामनाओ ंके प्रकार

मन के अन्दर कामना का होना ही सच्ची मनलनता है। कामवासना, प्रनतिानत के प्रनत अनिष्ट आकषथण ननकृष्टतम मनलनता है। इससे ही वास्तनवक बन्धन होता है। आप स्त्री, सन्तान तर्ा धन का पररत्याग कर सकते हैं; परन्तु नाम और यि की कामना को त्यागना बहुत कनठन है। मोक्ष के मागथ में यह कामना बडी बाधा होती है। यह माया का सवाथनधक प्रबल ितुरु है निससे वह संसारी मनुष्ों ंका वध करती है। यनद नाम और यि की र्ोडी-सी भी कामना रहती है तो सत्य प्रकट नहीं ंहोता। सत्य तो स्वयं ही प्रकानित हो िाता है। इसको नवज्ञापन की आवश्यकता नहीं ंहोती। यह सारे प्रानणयों ंऔर पदार्ों का आत्मा ही है।

अशनबुछि कामनाएँ

िब आप सारी कामनाओं ंका त्याग भी कर चुके हों,ं नफर भी मन में कई सूक्ष्म अज्ञात कामनाएँ नछपी रहती हैं िो पहचानी नहीं ंिा सकीं।ं वे बडी भयानक होती हैं। अतएव आपको अत्यन्त सावधान रहना होगा। यनद आप सतकथ नहीं ंरहेंगे तो कामनाओं ंके अन्तप्रवाह आपको नकसी क्षण भी पटक देंगे, आपका वैराग्य नष्ट कर देंगे और अन्त में आपका पतन कर देंगे। मैंने ऐसे बहुत से योगभ्रष्टों ंको देखा है निनका इन सूक्ष्म नननहत वासनाओं ंके अनभभूत करने वाले प्रभाव के कारण योग से पतन हो गया। िब तक आपमें सुक्ष्म समानध प्राप्त करने की िाि नहीं ंकर सकते। आपमें वास्तनवक परवैराग्य भी समि नहीं ंहो सकता।

तृष्णा

चाहे आप वृि हो िायें, आपके बाल श्वेत हो िायें; परन्तु मन तो युवा ही रहता है। िद्धि भले ही क्षीण हो िाये; परन्तु बडी अवस्र्ा में भी तृष्णा बनी रहती है। तृष्णा िन्म का वास्तनवक कारण है। तृष्णा के बीि से संकल्प और कमथ उत्पन्न होते हैं। संसार-चक्र इन्ीं ंतृष्णाओं ंके कारण चलता रहता है। तृष्णा को प्रारम्भ में ही कुचल दें, तभी आप सुरनक्षत रह सकते हैं। आपको मोक्ष प्राप्त हो िायेगा। ब्रह्म-भावना, ब्रह्म-नचन्तन, ओंकार का ध्यान और श्रिा-यिु भद्धि इन दृढ़ तृष्णाओं ंके बीि को उखाड फेंकेंगे। इनको चारों ंओर से खोद ननकालना होगा और ऐसा भस्म करना होगा नक ये नफर न उभर सकें। इसके बाद ही आपके प्रयत्न नननवथकल्प समानध का फल प्रदान करेंगे।

'प्रेम करो, मार िालो', 'नववाह करो और ब्रह्मचयथ पालन करो', 'इच्छा-रनहत हो कर नवषय-भोग करो', 'फल की वांछा नबना कमथ करो' -ये नवरोधाभास-यिु िब्द हैं। स्थूल व्यावहाररक बुद्धि-यिु मनुष् कनठनाई से इसका तात्पयथ समझ सकता है। इसके नलए सूक्ष्म िुि बुद्धि की आवश्यकता है। मान लें, आप गत पन्दरह वषों से

अत्यनधक नसगरेट पीते रे्। नफर आपने पाँच वषथ तक नसगरेट पीना छोड नदया। नसगरेट पीने की बासना भी मर गयी। छठे वषथ में आपका कोई नमत्र आपको नसगरेट देता है। अब आपको नसगरेट पीने की वासना भी नहीं ंहै। यनद आप अब नसगरेट स्वीकार करके अपने नमत्र को प्रसन्न करने के नलए पी लें तो यह ि्ु भोग कहलायेगा। आपने नबना नकसी वासना के इसका भोग नकया है। ईश्वर ि्ु भोग भोगता है।

कामनाओ ोंकी तृन्प्त केवल भ्रामक सुख प्रदान करती है

कामना मन और इद्धन्द्रयों ंको भडकाती है। िब इष्ट पदार्ों के भोग से कामना तृप्त हो िाती है, तो मन को क्षनणक तृद्धप्त नमल िाती है। इद्धच्छत पदार्ों की प्राद्धप्त से उत्पन्न हुई प्रसन्नता को हषथ कहते हैं। िो-कुछ प्राप्त हुआ है, उसका रसास्वाद आनन्द कहलाता है। िहाँ हषथ है वहाँ आनन्द भी है; परन्तु िहाँ आनन्द है वहाँ हषथ का होना आवश्यक नहीं ंहै। हषथ तो उस र्के हुए पनर्क के समान है िो दूर से चलने के बाद िल का िब्द सुनता है या छायादार िंगल देखता है। आनन्द उसको पीना और िंगल की छाया में प्रवेि करना है।

बि कामना होती है, तभी सुख होता है। सुख का कारण कामना है। िब कामना नहीं ंहोती तो सुख नहीं ं हो सकता। िब कभी भोग की इच्छा होती है, तभी उसमें सुख होता है। भूख नहीं ंहो तो सुस्वादु भोिन आपको सुख नहीं ंदे सकता। प्यास न हो तो सूर्फ़ूनतथदायक पेय भी कुछ फल नहीं ंदे सकता। इसनलए भूख ही सबसे अच्छा स्वाद देती है। गरम दूध का एक प्याला आनन्द देता है, दूसरे प्याले से अरुनच होने लगती है। भोग के पश्चात् ही तृद्धप्त नमलती है। इसनलए दूसरा प्याला पीने के बाद अरुनच उत्पन्न होती है। दूध में सच्चा आनन्द नहीं ंहोता, आनन्द तो आत्मा में होता है। भ्राद्धन्त और अनवद्या के कारण ही पदार्थ (दूध) में सुख का आभास नदखायी पडता है। यह भ्राद्धन्त-सुख है। यनद दूध में सच्चा सुख होता तो यह सदा सब मनुष्ों ंको सुख पहुँचाता; परन्तु ऐसी बात नहीं ंहै।

मन में एक कामना उठती है। अब यह एक वृनत्त-रूप में है। यह वृनत्त िब तक आप इष्ट पदार्थ को भोग कर तृद्धप्त प्राप्त नहीं ंकर लेते तब तक आपके मन में उद्वेग पैदा करती रहती है। भोग के उपरान्त िाद्धन्त या आनन्द होता है। मन में एक और कामना उठती है। पहली कामना के तृप्त होने और दूसरी कामना के उठने के बीच के समय में ि्ु आनन्द रहता है; क्ोंनक इस समय मन होता ही नहीं।ं मन नवश्राम में होता है। आप ब्रह्म के सार् संयुि होते हैं। दोनों ंकामनाओं ंके बीच में ि्ु आनन्द की अवस्ा ब्रह्म है। यनद आप साधना द्वारा ब्रह्म-नचन्तन िारी रख कर और दूसरी कामनाओं ंको न उठने दे कर इस आनन्द के काल को बढ़ा सकें तो आप समानध में रहेंगे। दोनों ंवृनत्तयों ंके बीच का समय वास्तनवक सद्धन्ध है।

कामनाएँ अतोषणीय होती हैं

मन कामनाओं ंके द्वारा बडा अनर्थ करता है। िब कोई कामना होती है, तब आप सोचते हैं नक इसकी प्राद्धप्त से आपको पूणथ सुख नमल िायेगा। आप अभीद्धित पदार्थ की प्राद्धप्त के नलए प्रयत्न करते हैं। िैसे ही आपको वह नमल िाता है तो र्ोडी-सी नमथ्या तुनष्ट होती है। नफर मन अिान्त हो िाता है। इसे नये संवेदन की आवश्यकता होती है। ि्ुगुप्सा तर्ा असन्तोष का अनुभव होने लगता है। नफर इसे भोग के नलए नवीन पदार्थ चानहए। इसी कारण वेदान्ती इस संसार को कल्पना-मात्र कहते हैं।

कामनाएँ असंख्य, अतोषणीय और अिेय होती हैं। नवषय-भोगों ंसे तृद्धप्त नहीं ंनमल सकती। ऐसा सोचना भूल है नक भोग से तृद्धप्त नमलती है। भोग से इच्छा भडकती है।

भोग से तुनम की आिा करना अनग्न में घी िालने के समान है। भोग से कामना बलवती, पुष्ट और तीव्र हो िाती है। प्राचीन काल के रािा ययानत का उदाहरण देखें। उसने सहस्रों ंवषथ तक काम वासना की तृद्धप्त के नलए

अपने पुत्र से उसकी युवावस्र्ा माूँग ली र्ी। अन्त में अपनी वृिावस्र्ा में उसने बडी कटुता से कहा, "िोक है, मैं कैसा मूखथ हैं। अब मेरी काम-वासना बढ़ती िा रही है। कामनाओं ंका अन्त नहीं ंहै। है परमात्मा। भन अपना िीवन ही व्यर्थ गंवा नदया। मुझ पर दया करो। मुझे इस संसारपंक से उबार लो।" यह महाभारत में नमलता है। गीता के तृतीय अध्याय के उनतानलसवें श्लोक में नलखा है, **"कामरूपेण कौतेय दुषूपूरेणानलेन च"** अर्ाथत् कामना अनग्न-ज्वाला के समान दुषूपूर है-तृप्त नहीं ंहो सकती।

ज्ञान-प्रान्प्त के शलए शनष्कामता आवश्यक है

यनद आप इद्धन्द्रय-भोग की वासनाओं ंऔर मन की अनैनतक वृनत्तयों ंसे मुि हैं तो आप ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। ज्ञान की प्राद्धप्त के नलए िरीर का ऐद्धन्द्रय पदार्ों से नवलगाव तर्ा मन का अनैनतक द्धस्र्नत से अलगाव आवश्यक है। तभी नदव्य ज्योनत प्राप्त होती है। िैसे राष्टरपनत के स्वागत के नलए बूँगले के सारे िाले साफ नकये िाते हैं और बगीचे से िंगली घास ननकाल दी िाती है, उसी प्रकार परब्रह्म के स्वागत के नलए मन-रूपी महल को भी सारे दोषों,ं इच्छाओं ंऔर बुरी वासनाओं ंसे साफ करना चानहए।

िब मन में इच्छा होती है तो संसारी मनुष् उसका स्वागत करके उसे पूणथ करने का प्रयास करता है; परन्तु साधक नववेक द्वारा उसे उसी क्षण त्याग देता है। ज्ञानी िन कामना के छोटे से सुफुनलंग को भी बहुत बडी बुराई समझते हैं; इसनलए वे नकसी भी कामना को प्रश्रश्रय नहीं ंदेते। वे आत्मा में ही प्रसन्न रहते हैं।

कामनाओ ंोंका शनयन्त्रण कैसे करें

इस संसार-सागर में इच्छाएूँ मगर-रूप हैं। िैसे ही वे मन के उपररस्तल पर उभरें, उनको नष्ट कर दें। उनके आगे मत झुकें। अपनी परीक्षाओं ंमें ननरिा मत हों।ं िुि साद्धत्वक मन को नमत्र बनायें और उसकी सहायता से अिुि मन का नाि कर दें। अपने मन को आनन्दपूणथ आत्मा में नवश्राम करने दें। नववेक और ननभीक तर्ा अर्क प्रयत्न से कामनाओं ंको उभरते ही नष्ट कर दें।

िब कभी मन में कामना उत्पन्न हो तो सदा नववेक से परामिथ लें। यह फौरन बतलायेगा नक इच्छा के सार्-सार् दुःख है। यह केवल मन का भ्रम है। केवल वैराग्य और त्याग ही मन को तृद्धप्त और िाद्धन्त पहुूँचा सकते हैं। यह आपको परामिथ देगा नक इच्छा को तत्काल त्याग दें और उपननषदों ंका स्वाध्याय करें, ओंकार का उच्चारण और नवत्र गंगातट पर एकान्त में समानध-ननष्ठा बनायें। बार-बार गम्भीरता से नवचार करें नक क्ा यह नयी इच्छा आपको नविेष सुख और आद्धत्मक लाभ पहुूँचाने में समर्थ है? ज्ञान-मागथ के साधक के नलए नववेक और दृढ़ इच्छा–द्धि इस दुष्ट मन को नष्ट करने के नलए और छोटी-बडी सारी बाधाओं ंको भगा देने के नलए अमोघ िस्त्र हैं।

कभी नकसी से, अपने घननष्ठ नमत्र से भी भेंट स्वीकार न करें। इससे दासत्वबुद्धि और आसद्धि बढ़ेगी तर्ा इच्छा–द्धि दुबथल बनेगी। नकसी से कुछ माूँगना ही भीखारीपन है। नकसी की नसफाररि करना भी नभखारीपन है। नभखारी स्वतन्त्रता और आध्याद्धत्मक साधना के सवथर्ा अयोग्य है।

िैसे पानी से न सींचंने पर पौधा सूख िाता है, इसी प्रकार यनद मन बार-बार नचन्तन करे तो दुवाथसनाएूँ भी मुरझा िाती हैं। िब तक आप नकसी वस्तु का स्वरूप नहीं ंिान लेते तब तक उसके नलए आपमें इच्छा उत्पन्न नहीं ं होती। िब आप उसे देख लेते हैं, स्पिथ कर लेते या सुन लेते हैं, तब उसके नलए कामना उपिती है। इसनलए मनुष् के नलए सबसे उत्तम यही नसिान्त है नक िो वस्तु उसकी कल्पना को कलुनषत करने वाली हो, उसको

ग्रहण न करे, न स्पिथ ही करे और न उसको देखे। आपको ननश्चयपूवथक अवधान और कल्पना को नवषय से दूर हटाना होगा। समय पा कर सारी अवांछनीय कामनाएँ मर िायेंगी।

मन में इच्छा रहने से िरीर नमला है। इच्छा का स्वभाव संस्कारों ंके गुणों ंपर ननभथर है। अचे्छे संस्कार होंगें तो अच्छी इच्छा बनती है और बुरे संस्कारों ंसे बुरी इच्छा बनती है। बुद्धि भी कायाथनुसाररणी होती है। िास्त्रों ंके पनवत्र आदेिों ंके अनुसार नवचार और कायथ करने के नलए इसे बराबर प्रयत्न करके प्रनिनक्षत करना पडता है। इच्छा ही नवचार बन िाती है और नवचार कमथ बन िाता है। बुरी इच्छा से बुरे नवचार और बुरे कमथ बन िाते हैं। सदा सत्कमथ करने से; दान, तप, िप, दम, ध्यान और स्वाध्याय करने से; नननषि कमों को छोड देने से और सदा सत्संग करने से मन के बुरे संस्कार बदल िाते हैं। इसके नलए यह एक अमोघ उपाय है।

अधथपररपक्व ज्ञानी के मन को सभी वासनाओं ंका त्याग करते हुए बडी तीव्र बेदना होती है। वह प्रार्थना करके उन्नत आत्माओं ंसे सहायता की याचना करता है।

संसारी इच्छाओं ंकी प्रनतपक्ष-भावना, ईश्वर-प्राद्धप्त की इच्छा पैदा कर लेने से सभी सांसाररक वासनाओं ं का नाि हो िायेगा। सनदच्छाओं ंके द्वारा बुरी इच्छाओं ंका दमन करना चानहए, सनदच्छाओं ंको भी एक ही दृढ़ इच्छा-मुमुकु्षत्व द्वारा त्याग दें और अन्त में इस ईश्वर-प्राद्धप्त की इच्छा को भी त्याग दें। अिुभ वासना को िुभ वासना द्वारा द्वारा त्याग दें। नववेक के उदय से वासना का लोप हो िायेगा। िब वासना का लोप हो िायेगा तो िीवत्व का भी लोप हो िायेगा।

ब्रह्म-नचन्तन सारी कामनाओं ंको नष्ट कर देता है। ब्रह्म में कामनाएँ नहीं ंहोतीं।ं ब्रह्म नवमथलता है। प्रणव का िप करें और कहें- 'मैं सवथ पनवत्रता हूँ।' सारी कामनाएँ, नवलीन हो िायेंगी।

नवचारों ंका हनन करें। नननवथचारावस्र्ा का अभ्यास करें। आप वासनाओं ंको नष्ट कर सकते हैं। कामुक नवचारों ंकी तृद्धप्त से सम्बि मन मनुष् को नवषय-सुखों ंकी खोि के नलए पे्रररत करता है। अननयद्धन्त्रत नवचार सारे अनर्ों का मूल कारण है। उतृ्कष्ट नवचार ननम्न अधम नवचारों ंको सुगमता से नष्ट कर सकते हैं। अधम नवचारों ंको प्रश्रय न दीनिए।

वासनाओ ोंका नाि आत्मानन्द की उपलन्ब्ध कराता है

वासना-सनहत मन का होना बन्धन है। कामना-रनहत मन मुि है। कामनाएँ स्वयं ही दुिःख हैं। कामना-रानहत्य स्वयं िुि आत्मानन्द है। माया का नाि ही मोक्ष है। कुद्धत्सत संकल्पों ंका नाि कर देने से अनवद्या का नाि हो िाता है। यनद दृश्य पदार्ों के नलए सारी कामनाएँ समाप्त हो िायें तो मन का इस प्रकार का त्याग ही अज्ञान का नाि है। ऐसा आनन्द मनुष् के अपने ही प्रयत्न से उत्पन्न होता है। पुरुषार्थ के समान कोई वसुतु नहीं ं है। पुरुषार्थ से ही माकथणे्डय का भाग्य बदल गया र्ा। वह नचरंिीनव बन गया र्ा।

कामना िाद्धन्त की ितुरु है। इच्छाओं ंके कारण ही आप नभखारी बन गये हैं। इच्छा-रनहत मनुष् संसार में सच्चा धनवान् है। मन ही मनुष् को धनवान् बनाता है।

कामना-रूपी ग्राहों ंके दृढ़ पाि से अपने को मुि करें। परीक्षाओं ंमें साहस न खोयें। नहम्मत रखें। नसंह की भाँनत उठ खडे हों।ं िुि मन की सहायता से अिुि मन का नाि कर दें। साद्धत्त्वक मन से नमत्रता करें और िाद्धन्तपूवथक आत्मा में द्धस्र्त रहें।

परिच्छेद- २२

राग‍ि‍ष

रागिषशवयुक्तैतु शवषयाशनन्यैश्चरन्।
आत्मवश्यैशवछधेयात्मा प्रसादमशधगच्छशत ।।

"परनुतु अपने अधीन नकये हुए अन्त:करण बाला साधक अपने वि में की हुई राग-द्वेष से रनहत इद्धन्द्रयों ‍ंद्वारा नवषयों ‍ंमें नवचरण करता हुआ अन्तिःकरण की प्रसन्नता को प्राप्त होता है" (गीता : २-६४)।

राग‍ि‍ष बन्धन के कारण हैं

राग, द्वेष और तटस्था-ये मन की मुख्य तीन वृनत्तयाँ हैं। राग और द्वेष मन में दो प्रवाह होते हैं ‍ि‍ो मनुष् को ‍ि‍न्म-मरण-रूपी संसार-चक्र से बाँधे रखते हैं। ये मन के दोष हैं। इनके ही कारण आपको संसार में आना पडा है। बन्धन का स्वरूप राग-द्वेष है। अज्ञान का स्वरूप राग-द्वेष है। सारी भावनाएँ राग-द्वेष की श्रेणी के ही अन्तगथत हैं। ये दोनों ‍ंप्रवाह मन के धमथ हैं, आत्मा के नहीं।‍ं सुख-दुिःख, हषथ और ‍ि‍ोक राग-द्वेष के कारण हुआ करते हैं। यनद मन में से राग और द्वेष ननकल ‍ि‍ायें तो हषथ‍ि‍ोक भी ‍ि‍ाते रहेंगे।

स्वार्ी प्रेम तर्ा शदव्य प्रेम

बि समान गुणों ‍ंऔर बल वाली दो ‍ि‍द्धियाँ नमलती हैं तो एक तीसरी ‍ि‍द्धि बनती है। ‍ि‍ब समान बल और गुणों ‍ंवाले दो मनुष् एक-दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं तो उनके बीच में एक तीसरी ‍ि‍द्धि बनती है निसे प्रेम कहते हैं। प्रेम को बताने का यह वैज्ञाननक ढंग है। एक आकषथण‍ि‍द्धि होती है और एक नवकषथण‍ि‍द्धि होती है। बि मैं दूसरे मनुष् में अपनी ही आत्मा को देखता हूँ, ‍ि‍ब मैं उसको अपनी ही आत्मा-सा देखता हूँ तो मैं उससे अपने ही समान प्रेम करने लगता हूँ। ‍ि‍ब मैं आपमें कोई चिी देखता हूँ ‍ि‍ो मेरे पास भी है तो मैं स्वभावतिः आपकी ओर आकनषथत होता हूँ और आपसे प्रेम करने लगता हूँ। प्रेम को बताने का यह वेदाद्धन्तक ढंग है। अपने प्यार को दूसरे पर उँडेल देना प्रेम कहलाता है। प्रेम ईश्वर है। प्रेम दो प्रकार का होता है। एक स्वार्थपूणथ या भौनतक, दूसरा नदव्य प्रेम ‍ि‍ो ननिःस्वार्थ और नचरस्र्ायी होता है। पहले प्रकार का प्रेम आसद्धि-सनहत प्रेम है। दूसरी प्रकार का प्रेम नबना आसद्धि के है। ‍ि‍ो वेदान्त-मागथ का सच्चा साधक है, निसको अपनी आत्मा ही सब कहीं ‍ंप्रतीत होती है और ‍ि‍ सिच्चा भि है, ‍ि‍ो हर एक वसुतु में नारायण वही वास्तव में दूसरों ‍ंसे प्रेम कर कोई सुख के नलए या अपने ‍ि‍ीवन के नलए दूसरे के आनश्रत रहता है तो भौनतकीन मनुष् अपन हो ‍ि‍ाती है। आसद्धि से दास-बुद्धि और इच्छा‍ि‍द्धि दुबथल होती है। आसद्धि मृतुयु है, भौनतक प्रेम मृतुयु है। **"असोंगिेण दृढेन शत्त्त्वा"** सब प्र आसद्धि आसद्धियों ‍ंको दृढ़ असंग-रूपी तलवार से काट दें (गीता : १५-३)।

राग उतना ही दुिःखदायी है शजतना ‍ि‍ेष

मन के अन्दर राग भी उतना ही भयानक है नितना द्वेष। िहाँ भी राग होता है, वहाँ देष भी होता है। न केवल द्वेष-वृनत्त ही अनपतु राग-वृनत्त भी मनुष् को दुिःख पहुँचाती है। यनद नकसी पदार्थ से सुख नमलता है तो आपमें उसके नलए राग उत्पन्न होता है; परन्तु िब उसी पदार्थ से नवयोग होता है, िैसा नक नप्रय पत्नी या पुत्र की मृतुयु से, तो आपको अत्यन्त कष्ट होता है निसका वणथन नहीं ंहो सकता। मान लें नक आपको भोिन के बाद फल खाने की आदत है। फलों ंसे आपको सुख नमलता है। आपको फलों ंसे राग हो गया है; परन्तु यनद नकसी स्र्ान पर फल नहीं नमल सकते तो आपको दुिःख होता है।

िहाँ कहीं ंआनन्द और राग होते हैं, वहीं ंभय और क्रोध भी रहते हैं। क्रोध केवल इच्छा का नवकार है। भय तर्ा क्रोध आनन्द और राग के पुराने सार्ी हैं। राग में भय और क्रोध नछपे रहते हैं। ये बराबर मन को सताते रहते हैं।

राग में भय नछपा रहता है। िब आपको िरीर के नलए राग होता है तो मृतुयु का भय आ िाता है। िब धन के नलए राग होता है तो धन के नाि का भय आ िाता है; क्ोंनक भोग-पदार्ों की प्राद्धप्त में धन ही कारण (नननमत्त) होता है। िब स्त्री के नलए राग होता है तो आप उसकी रक्षा करने में सवथदा सतकथ रहते हैं। भय राग का बहुत पुराना तर्ा घननष्ठ सार्ी है।

रागिेष की शवशभन्न अवस्र्ाएँ

राग-द्वेष की चार अवस्र्ाएँ होती हैं-दग्ध, तनु, नवद्धच्छन्न और उदार। इनमें से प्रर्म दो अवस्र्ाएँ योनगयों ंमें होती हैं। और नपछली दो संसारी मनुष्ों ंमें होती है। पूणथ योगी में ननननवथकल्प समानध द्वारा ये वृनत्तयाँ भस्मीभूत हो िाती हैं। वे दग्ध होती हैं। योगाभ्यास करने वाले योनगयों ंमें राग और द्वेष के संस्कार बहुत तनु रूप से रह िाते हैं। वे सूक्ष्मावस्र्ा में होते हैं। उनको इन दोनों ंवृनत्तयों ंपर पूणथ अनधकार होता है। भोग-वासना मैं नलप्त साधारण मनुष्ों ंमें ये वृनत्तयाँ नवद्धच्छन्न और उदार पायी िाती हैं। नवद्धच्छन्न-अवस्र्ा में ये नछपी रहती हैं। िब स्त्री अपने पनत से प्रेम करती है तब राग-वृनत्त कायथ करती है और उसकी क्रोध और घृणा की वृनत्तयाँ उस समय दबी रहती हैं। िब वह नकसी कारणवि पनत से अप्रसन्न हो िाती है तब द्वेष-वृनत्त के संस्कार अनुकूल वातावरण पा कर बडे नक्रयािील हो िाते हैं। संसारी मनुष् इन दो वृनत्तयों ंका दास होता है। वह इन वृनत्तयों ंसे इधर-उधर आलोनडत होता रहता है।

सुषुद्धप्त में ये दोनों ंभावनाएँ मनुष् में बीिावस्र्ा में रहती हैं। उनका नाि नहीं ंहोता। ज्यों-ंही मनुष् ननद्रा से िागता है, वे नफर नक्रयािील हो िाती हैं।

बालकों ंमें ये युगल प्रवाह र्ोडे ही काल के नलए प्रकट होते हैं और नफर लोप हो िाते हैं। वे एक क्षण में लडते हैं और दूसरे क्षण प्रसन्नता से आपस में नमल िाते हैं। वे अपने मन में दुभाथवनाएँ नहीं ंरख छोडते और वे दूसरों ंद्वारा की हुई बुराइयों ंका अनधक नचन्तन नहीं ंकरते। वे कुछ मनोमानलन्य नहीं ंरखते। लहर आती है और गिर िाती है। ज्यों-ंज्यों ंबालक बडा होता िाता है, ये दोनों ंप्रवाह बार-बार की पुनरुद्धि से गम्भीर रूप धारण कर लेते हैं और दृढ़ हो िाते हैं।

िब छोटा बच्चा दूसरे वषथ में प्रवेि करता है तो धीरे-धीरे द्वैत भाव बढ़ने लगता है। एक वषथ से कम आयु के बालक को नकसी भी स्र्ान में रख दें; वह वहाँ निलाखण्ड की भाँनत रहेगा। वह हँसेगा और सब लोगों ंको नबना राग-द्वेष के समान रूप से ही देखेगा। दो वषथ के बच्चे को बैठने को कहें तो वह खडा हो िायेगा। उसे पास आने को कहें तो वह पीछे हट िायेगा। बच्चे को कहें, बािार मत िाना तो वह तुरन्त बािार को ही िाता है। वह नवरुि आचरण करेगा; क्ोंनक अब उसमें द्वैत का नवकास हो रहा है।

रागिेष के कारण

अनुकूल-प्रनतकूल ज्ञान के कारण राग-द्वेष उपिते हैं। अनुकूल वसुतुओं ंके नलए राग होता है और प्रनतकूल वसुतुओं ंके नलए द्वेष । िब यह अनुकूल-प्रनतकूल ज्ञान, िो भेद-ज्ञान के आधार पर है, लोप हो िाता है तो राग-द्वेष भी नष्ट हो िाते हैं।

राग-द्वेष अनभमान (अहंकार) के कारण भी उत्पन्न होते हैं। िैसे ही अनभमान प्रकट होता है, राग-द्वेष भी आ िाते हैं। िैसे ही आप पनत होने का नवचार करते हैं, आपके अन्दर पत्नी के प्रनत आसद्धि (राग) हो िाती है। िैसे ही आप ब्राह्मण होने का नवचार करते हैं, ब्राह्मणत्व का राग आ िाता है। यनद राग-द्वेष को ननकाल देना चाहते हैं तो अनभमान छोड दें। यनद अनवद्या का फल-रूप अनभमान दूर हो िाये तो राग-द्वेष भी नष्ट हो िायेंगे।

कोई मन राग के द्वारा आपका नचन्तन करता है तो कोई मन द्वेष के कारण नचन्तन करता है। रावण का मन द्वेष और भय के कारण श्रीराम का नचन्तन नकया का नचन्तन बरसार तीव्र नचन्तन के द्वारा वह श्रीराम को सब कहीं,ं प्रत्येक पदार्थ में देखता र्ा। इसी नवकार कंस का मन भी श्रीकृष्ण का नचन्तन नकया करता र्ा। यह भी एक प्रकार की भारतक (बैर-भद्धि) होती है। नकसी-न-नकसी प्रकार उनके मन परमात्मा का नचन्तन करते रहते र्े।

रागिेष से विाशवक कमछ बनते हैं

मन में राग-द्वेष ही वास्तनवक कमथ हैं। यही आद्य कमथ हैं। िब राग-द्वेष के प्रवाहों ंद्वारा मन गनतिील होता है तो वास्तनवक कमथ प्रारम्भ होता है। वास्तनवक कमथ मन के संकल्प से उपिता है। मन की नक्रयाएँ ही सच्चे कमथ कहलाती हैं। बाह्य नक्रयाएँ तो पीछे प्रकट होती हैं। इच्छा से मन गनतिील होता है। कामना के सार्-ही-सार् मन में राग और द्वेष रहा करते हैं। इच्छा प्रेरक िद्धि होती है। भावना और आवेग कामना के सहवती है।

अनवद्या से अनववेक होता है, अनववेक से अहंकार और अनभमान होते हैं और अनभमान से राग-द्वेष होते हैं। राग-द्वेष से कमथ आता है। कमथ से िरीर नमलता है। िरीर से दुिःख नमलता है। यह सात कनडयों ंवाली बन्धन-शृंखला है। यही दुिःख-शृंखला है।

यनद आप दुिःख नहीं ंचाहते तो िरीर धारण न करें। यनद िरीर नहीं ंचाहते हैं तो कमथ न करें। यनद कमथ नहीं ंकरना चाहते तो राग-द्वेष और अनभमान छोड दें। अनभमान को छोडना चाहते हैं, तो अनववेक का त्याग कर दें, अनवद्या का त्याग कर दें। यनद आप अनवद्या नहीं ंचाहते हैं तो ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त करें।

राग-द्वेष, पुण्य-पाप और सुख-दुिःख रूपी छह अरों ंवाले चक्र से यह संसार चलता है। यनद मूल कारण मूलानवद्या को ज्ञान-प्राद्धप्त के द्वारा नष्ट कर नदया िाये तो अनभमान, राग, द्वेष, कमथ, िरीर, पुण्य-पाप, सुख-दुिःख की सारी शृंखला अदृश्य हो िायेगी। इसकी एक कडी दूसरे के आनश्रत रहती है। ज्ञान प्राप्त हो िाने पर कनडयाँ पूणथतया टूट िाती हैं। भगवती शुरुनत कहती है: **"ऋते ज्ञानान्न मुन्क्तिः"**-ब्रह्म-ज्ञान के नबना मोक्ष नहीं ंनमलता है।

रागिेष का अभाव मोक्षदायक है

निस योगी या ज्ञानी ने राग तर्ा द्वेष इन दोनों ंही वृनत्तयों ंका नाि कर नदया है, वह तीनों ंलोकों ंमें सवोत्तम मनुष् है। वह रािाओं ंका रािा है और महारािाओं ंका महारािा है। िीवन्मुि का मुख्य लक्षण राग और द्वेष से रनहत होना है। यनद ज्ञानी या योगी में कभी-कभी क्रोध की झलक प्रकट होती भी है तो यह आभास-मात्र होती है।

ोैसे िल में लकडी से बनायी हुई रेखा तुरन्त ही नमट िाती है, इसी प्रकार यद्यनप ज्ञानी में क्रोध प्रकट होता है तो वह पल-मात्र में ही दूर हो िाता है। संसारी मनुष् इस बात को नहीं ंसमझ पाते।

निसके भीतर राग का भाव नहीं ंहै और िो सहनिील (नतनतकुषु) है वह चाहे िो-कुछ कर सकता है, चाहे िहाँ िा सकता है। वह आकािमण्डलीय वायु के समान स्वच्छन्द रहता है। उसके आनन्द, स्वतन्त्रता और िाद्धन्त असीम होते हैं। उनके नवस्तार की कल्पना भी नहीं ंकी िा सकती। बेचारे कुषुि नवचार वाले सांसाररक लोग ऐसे संन्यानसयों ंकी स्वतन्त्रता तरा आनन्द की कल्पना भी नहीं ंकर सकते। गृहद्धस्र्यों ंको तो राग और भोग ने ही दुबथल बना रखा है।

रागि-ेष का शवनिा ही आध्यान्त्मक साधना का सार है

मैं आपको आध्याद्धत्मक साधना का सार बताता हूँ। नवचार और ब्रह्म-नचन्तन के द्वारा राग और द्वेष के दोनों ंप्रवाहों ंको नष्ट कर दें। द्वन्द्वों ंसे अतीत हो िायें। आपको ननत्य, अनन्त आनन्द और िाद्धन्त नमलेगी। आपको ब्रह्म-ज्योनत प्रकानित करेगी। आप ब्रह्म बन िायेंगे। आप ब्रह्म हैं।

ोैसे अनग्न से उष्णता मन्त्र और औषनध के द्वारा दूर की िा सकती है इसी प्रकार मन के ये दोनों ं(राग और द्वेष) भी योग-नक्रया के द्वारा दूर नकये िा सकते हैं। ननननवथकल्प समानध अर्वा असम्प्रज्ञात समानध के द्वारा राग-द्वेष को समूल भस्म नकया िा सकता है।

मन की नवनवध वृनत्तयों ंमें राग, द्वेष और मोह बहुत ही बिमूल हैं। उनके उनूमूलन के नलए बडे श्रमसाध्य अनवरत प्रयत्न की आवश्यकता होती है। अपने माननसक िीवन में या तो आप पतवार को पकडे रह कर अपनी नौका की नदिा, संसगथ में आने वाले स्र्ान आनद का ननश्चय कर सकते हैं या इसमें असफल हो कर इधर-उधर वायु के झोंकों ंसे फेंके हुए, प्रत्येक भावना, तुच्छ राग-द्वेष आनद के प्रवाह से बहाये िाते रहेंगे।

परररचे्छेद-२३

सुख तर् दुिःख

सुख तर् दुिःख का सम्बन्ध मन से है

मुख तर् दुिःख पुण्य और पाप के फल हैं। ये दो प्रकार के भाव हैं, निनका केवल इन के सार् ही सम्बन्ध है। मन ही अपने ऊपर सुख और दुिःख लाता है और पदार्ों ंकी और अपनी अत्यनधक आसक्ति होने कारण उनको (सुख-दुिःखानद को) भोगता है। दुिःख सेैन नसमट िाता है और सुख में फैल िाता है।

अहंकार िरीर नननमथत करता है। प्राण सब प्रकार की चेष्टा करता है। मन सुख और दुख का अनुभव करता है। यनद आप ननमथल मन के द्वारा अकताथ और ननष्काम भाव से किथ करेंगे तो आपका िरीर फलभागी नहीं ं होगा।

बाहर तो केवल पदार्थ, स्पन्द या नक्रयाएँ हैं। प्रकृनत उदासीन और अन्धी है। पदार्ों में सुख-दुिःख कुछ भी नहीं ंहै। यह सब मन की ही सृनष्ट, मन का बोध, माया की िादूगरी है। पदार्ों के प्रनत माननसक अनभवृनत्त अर्वा नननश्चत प्रकार का माननसक व्यवहार ही हषथ तर् िोक, सुख और दुिःख लाता है। मन की कल्पना में माया का दृढ़ आसन है।

सारे दुिःख समान रूप से अनुभव नहीं ंहोते। ननिा में दुिःख नहीं ंमालूम होता। केवल उसी समय दुिःख का अनुभव होता है, िब मन का िरीर के सार् सम्बन्ध होता है। अनवद्या–िननत अनभमान के कारण मन और िरीर को एक मानने से दुिःख का अनुभव होता है।

बि मन में नकसी वसु्तु के नलए अनत तीव्र अनुराग हो तो प्राणान्त होते हुए भी कट का संवेदन नहीं ंहोता। बि मन नकसी पदार्थ में पूणथतया ननमग्न होता हो तो अन्य कौन िरीर की नक्रयाओं ंको देखे और इनसे दूर भागे?

लि के ऊपर एक बूँद तेल िालने से वह सारे िल में फैल िाती है और पानी को तेलमय बना देती है, इसी तरह नवलासी मनुष् को र्ोडा-सा भी दुिःख उसके सारे सुख को नबगाड देता है और उसे आनन्द के सारे पदार्थ दुिःखमय प्रतीत होते हैं। िब आपको तीव्र कष्ट हो तो दूध या चाय के प्याले से आनन्द नहीं ंनमलता। िब आपको तीव्र वेदना हो तो िो संसार स्वस्् रहने की दिा में आपको आनन्दपूणथ लगता र्ा, अब वह ननरा िुष्क नदखायी देगा। िब आप गम्भीर रूप से रुग्ण हों ंतो संसार का आकषथण िाता रहता है।

यनद ननरािावादी मनुष् अपना माननसक व्यवहार बदल दें तो उन्ें संसार आनन्दपूणथ ही नदखायी देगा।

क्योंनंक मन आनन्द-ब्रह्म से उत्पन्न हुआ है; इसीनलए यह सदा आनन्द के पीछे भागता है। आप आम को इसनलए पसन्द करते हैं नक आम आपको आनन्द देता है। सब वसुतुओं ंमें आप अपने-आपको सबसे अनधक प्रेम करते हैं, इसी से पता लगता है नक आनन्द आत्मा ही का धमथ होगा।

आत्मा को कोई सुख-दुिःख नही ोंहोता

रीर और मन के बन्धन से रनहत होना आत्मा का वास्तनवक स्वरूप है। इसनलए आत्मा में पुण्य और पाप की कोई सम्भावना नहीं ंहै, नफर आत्मा को इनके प्रभानवत करने की सम्भावना तो और भी कम है। अतएव सुख तर्ा दुिःख आत्मा को स्पि थ भी नहीं ंकरते। आत्मा असंग, अनासि और नननलथप्त है, यह मन के सुख और दुिःख-रूपी दो नवकारों ंका साक्षी है। मन भोिा है, आत्मा साक्षी है। इसको सुख और दुिःख से कोई प्रयोिन नहीं।ं

ऐन्द्रिक सुख केवल मन का धोखा है

सुख और दुिःख, सुन्दरता और असुन्दरता मन की झूठी कल्पनाएँ हैं। िब मन ही भ्राद्धन्तिनक पदार्थ है तो उसके नवकार क्यों ंन भ्राद्धन्तिनक होंगें। ये मृगतृष्णा के समान हैं। िो आपके नलए सुन्दर है, वह दूसरे के नलए कुरूप हो सकता है। सुन्दरता और भद्दापन-ये दोनों ंसापेक्ष िब्द हैं। सौन्दयथ केवल माननसक संकल्पना है। यह मन का प्रक्षेपण है। केवल सभ्य मनुष् ही सुिौल िरीर, अच्छी आकृनत, मनोहर चाल, सद्व्यवहार आनद की नविेष चचाथ करता है। अफ्रीका के हबनियों ंको इन सब बातों ंका नवचार भी नहीं ंहोता। सच्चा सौन्दयथ तो केवल आत्मा में ही है। सुख और सौन्दयथ मन में ही रहते हैं, पदार्ों ंमें नहीं।ं आम में नमठास नहीं ंहोती, अनपतु आम के नवचार में नमठास होती है। यह केवल वृनत्त है। सब मन का भुलावा, मन की संकल्पना और मन की सृनष्ट है। वृनत्त का नाि कर देने से सौन्दयथ का भी लोप हो िाता है। पनत सौन्दयथ के अपने भाव अपनी कुरूप पत्नी में ननवेि करता है और काम के बि उसे अतीव सुन्दरी पाता है। िेक्सपीयर ने इस भाव को अपनी 'नमि समर नाइट्स िरीम' में क्ा ही अच्छी तरह प्रकर नकया है-"कामदेव को नचत्रकारों ंने अन्धा बनाया है। यह हेलेन के सौन्दयथ को नमश्र दिे की रमनणयों ंमें भी पा लेता है।"

बाह्य पदार्ों से नमलने वाला सुख क्षणभंगुर, अननत्य तर्ा अल्पकानलक होता है। यह केवल नानडयों ंकी गुदगुदाहट और माननसक भ्रम होता है। िीव मन और वृनत्तयों ंके सार् नमल कर नवषयों ंको भोगता है। िो वसुतु आपको सुख देती है, वही दुिःख भी देती है। "ये नह संस्पिथिा भोगा दुिःखयोनय एव ते"-िो भोग इद्धन्द्रयों ंऔर पदार्ों के समागम से प्राप्त होते हैं, उनमें ननश्चय ही दुिःख भरा होता है। िरीर दुिःख और रोग का स्र्ान है। धन उपािथन करने और उसकी रक्षा करने में बडा कष्ट होता है। प्रत्येक संसगथ में दुिःख ननकलता है। द्धस्त्रयाँ ननरन्तर सन्ताप की िड होती हैं। खेद है, नफर भी मनुष् आध्याद्धत्मक आनन्द-पर् को छोड कर संसार के दुिःख-पर् पर िाना पसन्द करते हैं।

संसारी वसुतुओं ंके भोग से सच्ची, स्र्ायी तृद्धप्त नहीं ंनमलती। यह िान कर भी नक संसारी पदार्थ अननत्य हैं और संसार दुिःखपूणथ है, मनुष् संसारी पदार्ों की ओर ही दौडते हैं। यही माया है। िब मन आत्मा में द्धस्र्र हो िायेगा तब ही ननत्य तृद्धप्त नमलेगी; क्योंनंक आत्मा पररपूणथ है। आत्मा में आपको सब-कुछ नमल िाता है। यह स्वतिःपूणथ है। आत्म-साक्षात्कार से सारी इच्छाएँ तृप्त हो िाती हैं।

कोई कहते हैं नक बच्चे बहुत सुखी हैं। यह ठीक नहीं ंहै। वे बहुत अनधक उल्लनसत हो िाते हैं। उनमें गम्भीर प्रनतनक्रया भी होती है। उनका मन साम्य-भाव में नहीं ंहोता। वे नबना नकसी बात के भी घण्टों ंतक रोते रहते हैं। सनुतुनलत मन वाला व्यद्धि ही सच्चा सुखी हो सकता है।

सुख वृशत्त-लय से उत्पन्न होता है, ऐन्कि पदार्ों से नही ों

वसुतुत: पदार्ों में सुख नहीं ंहै। आत्मा मन को धकेल कर उसे गनतील बनाता है। बासना के बल से मन में एक वृनत्त उठती है। मन में क्षोभ होता है और वह उस पदार्थ की ओर दौडता है। िब तक मन को उसका इष्ट पदार्थ नहीं ंनमल िाता, तब तक यह क्षोभ िान्त नहीं ंहोता। यह बार-बार उसी पदार्थ का नचन्तन करता रहता है। उस पदार्थ को प्राप्त करने के नलए यह अनेक युद्धियाँ और उपाय सोचता है और सदा बेचैन रहता है। यह सदा पदार्थ का ही आकार बनता रहता है। ज्यों–ंही पदार्थ प्राप्त हो िाता है और यह उसका उपभोग कर लेता है।
इसकी वह वृनत्त िो मन में क्षोभ उत्पन्न करती रहती री, वह िान्त हो िाती है; तभी िाद्धन्त प्राप्त होती है। यह ाद्धिन्त और आनन्द वृनत्त-लय हो िाने पर स्वरूप अर्वा अन्तरात्मा से प्राप्त है, बाह्य पदार्थ से नहीं।ं ज्ञानी मनुष् बाह्य पदार्ों ंको सुख का कारण बताते हैं। यह बडी भारी भूल है।

संसार के नकसी पदार्थ में सुख नहीं ंहै। यह सोचना कोरी अज्ञानता है नक हमको नवषय-पदार्ों से अर्वा मन से सुख प्राप्त होता है। िब कभी हमें वासना-तृद्धप्त का अनुभव होता है तो हम देखते हैं नक मन नचत्त की ओर, आत्मा की ओर िाता है और आत्म-सुख का आनन्द लेता है। सुख में भी मन की गनत होती है। यह फैलता और अन्तमुथख हो कर अपने अनधष्ठान, अपने मूल स्रोत आत्मा की ओर िाता है और आत्म-सुख को भोगता है।

सच्चा सुख अन्दर है

हे संसारी मूखों!ं आप व्यर्थ ही बाहरी पदार्ों कंचन, कानमनी, पद, सम्मान, नाम और यि–ो नमथ्या, बेकार और गोबर के सदृि हैं- में अपने सुख की खोि क्ों ंकरते हैं? आपको इनमें सुख नहीं ंनमल सकेगा। आप भूल कर रहे हैं। हृदय के अन्दर, सारे आनन्द के स्रोत अपने आत्मा में ही सुख की खोि करें।

सच्चा आनन्द आपके ही अन्दर है। यह आत्मा में है। यह आत्मपरक है। यह सत्त्वगुण में है और सत्त्व से भी अतीत है। यह मन के एकाग्र होने पर प्रकट होता है। िब इद्धन्द्रयों ंका प्रत्याहार नकया िाता है, िब मन एकाग्र होता है, िब वासनाक्षय और मनोनाि हो िाता है, िब आप ननष्काम तरा ननननवथचार होते हैं तो आत्मानन्द का उदय होने लगता है, आध्याद्धत्मक आनन्द भाव-नवह्वल करने लगता है।

आसन्क्त तरा सुख

भ्रामक पदार्ों में आसद्धि का कारण मन ही है। सारे कमों का सूत्र भी मन ही है। यह ननत्य ही हमारे स्रूल िरीर को कायथ करने और भोगने के नलए नवनवध नवषय-पदार्ों को प्राप्त करने के नलए बाध्य करता है।

मन सदा ही कुछ-न-कुछ करते रहना चाहता है। िब वह अपनी इष्ट वसुतुओं ंमें आसि होता है तो इसे मनोरंिन और आनन्द नमलता है। ताि के खेल में कुछ नहीं ंहै, नकनुतु िो अवधान और आसद्धि इसमें रखनी होती है, उससे ही आनन्द नमलता है।

आसद्धि के नबना भी आकषथण हो सकता है। आप गुलाब के फूल या सुन्दरी युवती के प्रनत आकनषथत हो सकते हैं, परनुतु यह आवश्यक नहीं ंहै नक आपको उस गुलाब के फूल या सुन्दरी युवती से आसद्धि हो िाये। प्राद्धप्त और भोग के पश्चात् ही आसद्धि होती है।

आसद्धि, प्रेम और आनन्द-ये सब सार्-सार् चलते हैं। आप अपनी पत्नी और सन्तान में आसि रहते हैं, आप उन्ें प्रेम भी करते हैं; क्ोंनक ये आपको आनन्द देते हैं। यह संसार भ्रममूलक है और भ्राद्धन्त से ही दुि:ख सुख

के समान भासता है, इसनलए, आप ारी सांसाररक ममता को ननदेयता से काट कर अपने प्रेम और आसद्धि उस तत्त्व-पदार्थ अनधष्ठान-रूप ब्रह्म की ओर लगायें ो मन और सारे पदार्ों के पीछे रहता है और ो बुद्धि में होने वाली नक्रयाओं ंका साक्षी है।

ीमिन बाल्यावस्ा से ही बाह्य पदार्ों में आनन्द खिोने की बुरी आदत में पड गया है, उसे इस स्वभाव से फेरना कनठन है और आप िब तक इसके आमोद के नलए कोई उत्तम पदार्थ नहीं ंदेंगे तब तक यह सदा ऐसा ही करता रहेगा।

सुख के भेद तर्ा कोशटयाँ

इद्धन्द्रयिन्य सुख से बुद्धिन्य सुख उत्तम है। ध्यानिन्य सुख बुद्धिन्य सुख से उत्तम है। आध्याद्धत्मक सुख–ो आत्म-साक्षात्कार से प्राप्त होता है- अपररद्धच्छन्न, अपररमेय और असीम होता है। यह आनन्दधन होता है।

स्वशणछममध्यमागछ

मन को नमताचार अर्वा सुखमय स्वनणथम मध्यमागथ में रखें। मन में अनतरेक न होने दें। हषथ और ोक के अनतरेक से ठेस लगने पर मनुष् की मृतुयु हो ाती है। मन में सदा उिषथ उत्पन्न न होने दें। उिषथ अनतिय प्रमोद को कहते हैं। मन सदा अनत की ओर-या तो अनत-उदासी या अनत-प्रसन्नता की ओर भागता है। अनत नमलते हैं। अनत प्रनतनक्रया उत्पन्न करता है। मन अत्यनधक आह्लाद में कभी भी ान्त नहीं ंरह सकता है। मन प्रसन्न नकन्तु ान्ति रहे।

सदा प्रसन्न रहें। हूँसते और मुस्कराते रहें। ननरुत्साह तर्ा उदास मन ईश्वर का नवचार ही कैसे कर सकता है! आपका स्वभाव ही प्रसन्नता है। इसे अनवसाद कहते हैं। सब साधकों ंको यह प्रसन्नता का स्वभाव बना लेना चानहए।

धानमथक ग्रन्ों ंका स्वाध्याय करें। सदा सत्संग करें। ननत्य २१,६०० बार भाव-सनहत प्रणवोच्चार करें। इसमें तीन घण्टे लगते हैं। आत्मा या कृष्ण का ध्यान करें, ब्रह्म-प्राद्धप्त कर लें। केवल यही आपको सांसाररक दुिःखों ंसे छुटकारा नदलायेगा और अनन्त ाद्धन्त, ज्ञान और आनन्द प्रदान करेगा।

मन की वृद्धि के सार् दुिःख भी बढ़ते हैं, इसके ननराकरण से बडा आनन्द नमलता है। मन के ऊपर प्रभुत्व प्राप्त करके अपने को दृश्य िगत् से मुि करें निससे नक आप ज्ञान-स्वरूप हो ायें। आपके मन के सनुतुलन को भंग करने वाले अनेक सुखद तर्ा दुिःखद पदार्ों से नघरे हुए रहने पर भी सब वसुतुओं ंको समनचत्तता से ग्रहण करते हुए आप निला के समान दृढ़ रहें। िब मन ननरंनि ब्रह्म में लीन होता है उस समय इसे ो सुख अनुभव है, वह ान्त और मधुर हूँसी द्वारा प्रकट होता है।

परिच्छेद- २४

शववेक

शववेक क्या है?

बि आपको इस दुिःखद तर्ा सापेक्ष िगत् में मानव िीवन के दुिःखों ंकी महत्ता का पूरा ज्ञान हो िायेगा तो आप स्वभावतिः ही सत् और असत् पदार्ों में नववेक करने लगेंगे। ब्रह्म सत् है, िगत् असत् है। यही नववेक है। नफर श्रिा बढ़ेगी और ईश्वर-प्राद्धप्त के नलए दृढ़ इच्छा उत्पन्न होगी। तब आपको सत्य को सदा स्मरण रखना होगा और बराबर 'अहं ब्रह्माद्धस्म'- 'मैं ब्रह्म हूँ की घोषणा करनी होगी। सतत अभ्यास से नाम, रूप और संकल्प का लोप हो िायेगा और आप ब्रा-साक्षात्कार कर लेंगे। यह वेदान्त का साधन है। नववेक, श्रिा, सदा सत्य का स्मरण, दृढ़ कर्न और साक्षात्कार-ये ब्रह्म-साक्षात्कार के नवनवध सोपान अर्वा साधन हैं।

शववेक के सहायक

सत्संग और िास्त्रों ंके श्रवण से नववेक िाग्रत होता है। निन्ोंने पूवथिन्मों ंमें असंख्य सुकृत नकये हैं, उन्ें ही भगवत्कृपा से महात्मा, साधु, भि, योगी, ज्ञानी और संन्यानसयों ंके सत्संग का सौभाग्य नमलता है।

शववेक के लाभ

एक बार नकये हुए भोग को मन नफर भी चाहता है। मन में भोग की स्मृनत उठती है। स्मृनत कल्पना और नचन्तन को प्रेररत करती है। इस प्रकार आसद्धि उत्पन्न होती है। बार-बार एक नवषय का भोग करने से स्वभाव पड िाता है। इसी स्वभाव के कारण तीव्र तृष्णा उत्पन्न होती है। नफर बेचारे, ननिःसहाय दुबथल इच्छा वाले संसारी मनुष्ों ंपर मन अपना िासन चलाता है। परन्तु िैसे ही नववेक िाग्रत होता है, मन की िद्धि क्षीण हो िाती है। नफर मन पीछे मुडता है और हृदय में नवश्राम लेने को लौटने लगता है। इसके नवषैले दाँत नववेक द्वारा उखाड नलये िाते हैं। नववेक के सामने यह कुछ नहीं ंकर सकता। यह अपदस्र् हो िाता है। नववेक के िाग्रत होने पर इच्छा-िद्धि अनधकानधक प्रबल होती िाती है। नववेक के कारण हम दुिःखमय संसार से मुि होने योग्य बनते हैं।

परिच्छेद-२५

वैराग्य और त्याग

वैराग्य क्या है?

यनद मन बराबर चाय का नचन्तन करे और चाय न नमलने पर इसको कष्ट हो तो कहते हैं नक आपको चाय के नलए आसद्धि है। यही आसद्धि बन्धन में ले िाती है। वैराग्य का अभ्यास चाहता है नक आप इस चाय की आसद्धि को त्याग दें। केवल चाय पीना छोड देना वैराग्य का सार नहीं है।

योगवानसष्ठ में वैराग्य-प्रकरण पढ़ें। आपको वैराग्य के यर्ार्थ स्वरूप का भली प्रकार ज्ञान हो िायेगा। उसमें श्रीराम की वास्तनवक नवरि मनोदिा का नविद वणथन नदया हुआ है। स्वादु भोिन, उत्साहवधथक पेय-पदार्थ, प्रेमी माता-नपता, भ्राता, नप्रय नमत्र, हीरे-मोती, फूल, चन्दन, आभूषण, कोमल िय्या, उद्यान आनद उनको आकृष्ट नहीं कर सके; अनपतु उनके दिथन मात्र से ही उन्हें अतीव कष्ट होता र्ा।

वैराग्य में ब्रह्मचयथ अन्तगथत है। मन, वचन और कमथ से ब्रह्मचयथ होना वैराग्य में अन्तनवथष्ट है।

दो प्रकार का वैराग्य

वैराग्य दो प्रकार का होता है: (१) कारण वैराग्य िो कुछ नवपनत्तयों के कारण हो िाता है और (२) नववेकपूवथक वैराग्य िो सत् और असत् वस्तु के नववेक से उत्पन्न होता है। निस मनुष्य को प्रर्म प्रकार का वैराग्य होता है, उसका मन केवल अवसर की प्रतीक्षा करता रहता है और मौका नमलते ही पूवथ में त्यागे हुए पदार्थों को नफर भोगने लगता है। उसका पतन हो िाता है और वह पूवाथवस्था में चला िाता है। नवषय अनर्थ कर िालता है और प्रनतनक्रया के कारण दोगुने बल से प्रनतिोध लेने के नलए उस पर आक्रमण करता है परन्तु दूसरा पुरुष निसने नववेक के कारण, पदार्थों के भ्रामक स्वरूप के कारण उनके भोग को त्याग नदया है, वह आध्याद्धत्मक मागथ में उन्ननत प्राप्त करता है। उसका पतन नहीं होता।

वैराग्य कैसे उदय होता है?

देद्धखए, मन में वैराग्य कैसे उठता है। पदार्थों की अननत्यता तर्ा क्षणभंगुरता से सबके मन में घृणा पैदा होती है और अपने-अपने स्वभाव की सूक्ष्मता के अनुसार संसार से नवमुख होने की यह प्रनतनक्रया प्रत्येक व्यद्धि के मन में न्यूनानधक वेग के सार् काम करती है। हमारे मन में अप्रनतरोध्य भावना हो िाती है नक तुच्छ और नश्वर पदार्थ हमारे अनन्त और अनवनािी स्वरूप को कभी तृप्त नहीं कर सकते।

िब आप धननकों के िीवन से प्रभानवत नहीं होते तो उनका िीवन आपको आकृष्ट नहीं कर सकता। िब आप इस नवचार से प्रभानवत हो िायें नक मांस और मनदरा से आनन्द नहीं नमल सकता तो इनके प्रनत आपके मन में आकषथण नहीं होगा। ऐसी दिा में यनद आपको मद्य, मांस और धननकों का-सा िीवन न नमले तो आपके मन को व्यर्ा नहीं होगी। आप युवती सुन्दर स्त्री की ओर क्यों आकृष्ट होते हैं? अनवद्या के कारण आपमें नमथ्या नवचार

उत्पन्न होता है नक उससे आपको आनन्द नमलेगा। यनद आप नववेक का आश्रय लें तो आपको तुरन्त मालूम होगा नक उस स्त्री से आपको असीम दुिःख नमलेगा। तब आपका मन स्त्री-पदार्थ से नफर िायेगा।

वैराग्य-रशहत साधना व्यर्छ जाती है

मन में वैराग्य प्रकट होने से नदव्य ज्ञान का द्वार उद्घानटत होता है। संसारी नवषयों ंऔर भोगों ंसे नवरि होने से िुभेच्छा होने लगती है। इससे अन्यमनस्कता होने लगती है और नफर धारणा आती है। धारणा से ध्यान होता है। ध्यान से समानध होने लगती है। नबना नवरद्धि या वैराग्य के कुछ भी सम्भव नहीं ंहै।

ैसि पर्रीली और क्षार-युि भूनम में खेती नबलकुल ननष्फल होती है, इसी प्रकार नबना वैराग्य के योगाभ्यास और आत्म-नवचार ननष्फल हो िाते हैं। िैसे खेती में नदया हुआ पानी यनद चूहों ंके नबल में चला िाये और खेत में न फैले तो व्यर्थ होता है और िस्यों ंकी वृद्धि नहीं ंकरता, इसी भाँनत वैराग्य के गुण के अभाव में साधक के प्रयत्न ननष्फल हो िाते हैं। उसे आध्याद्धत्मक उन्ननत प्राप्त नहीं ंहोती।

मोक्ष के शलए तीव्र वैराग्य आवश्यक है

साधकों ंके मन में साधना-काल में तीव्र वैराग्य होना आवश्यक है। योग में सफलता प्राप्त करने के नलए केवल माननसक ननष्ठा ही पयाथप्त नहीं ंहै। मोक्ष की उत्कट इचषछा और साधना के नलए सामर्षथय का होना परम आवश्शषयक है। तभी उनको नननवथकल्प समानध औरमोक्ष प्रापषत होगे। रिा िनक और प्रह्ललषाद को तीव्र वैराग्य र्ा । िीघ्र साक्षात्कार प्राप्त करने के नलए इसी प्रकार के वैराग्य की आवश्यकता होती है। मन्षद वैरागषय से संसार-सांगर को पार करना बहुत कनठन है। नवषयों ंऔर भोगों ंका तृष्णषा-रूपी मगर साधकों ंकी गरदन पकड कर िोर से खीचं लेगा और आधे मागथ में िुबा हुआ देगा।

वैराग्य के िुतुरु राग और अशभिाप

राग से मोह पैदा होता है। बहुधा देखा िाता है नक यनद नबल्ली नकसी का पालतू मुगाथ खा िाती है तो उसे बडा दुिःख होता है। परन्तु िब नबल्ली कोई चूहा या नचनडया खा िाती है निसमें उस मनुष् का कोई राग नहीं ंहोता तो उसे तननक भी दुिःख नहीं ंहोता। इसनलए आपको चानहए नक नमथ्या आसद्धि से उत्पन्न हुए इस राग को नबलकुल नष्ट कर दें। िरीर में बहुत से िीवाणु बनते रहते हैं निन्हें दूर करने के नलए लोग उत्सुक रहते हैं। परन्तु एक कार के िीवाणुओं ंको वे सन्तान का नाम देते हैं निनके नलए अपना िीवन भी नबता देते है। समार का मोह ऐसा ही है।

राग और पे्रम के पीछे दुिःख और िोक हैं। राग के सार् िोक नमला हुआ है। सुख के पीछे दुिःख है। सुख के सार् दुिःख नमला हुआ है। पे्रम के नाम से मनुष् दुिःख का नवषैला बीि बोता है निससे िल्द ही राग की कोंपलें फूटती हैं निनमें नबिलीसी भयानक अनग्न रहती है। इन कोंपलों ंसे दुिःख के वृक्ष उगते हैं निनकी अनेक िाखाएँ होती िो ढके हुए फूस के ढेर की भाँनत िलते हुए धीरे-धीरे िरीर को भस्म कर देते हैं।

दीघथ काल तक सेवन से राग की ग्रद्धन् पक्की हो िाती है। इसने मनुष्ों ंके हृदय पर अपना िाल फैला रखा है। इससे छुटकारा पाने का मुख्य उपाय यही है नक मानवीवन की नश्वरता पर नवचार नकया िाये। इस नविाल संसार में नकतने ही करोड माता-नपता, द्धस्त्रयाँ-बचे्च, चाचा-दादा गुिर चुके हैं। आपको अपने नमत्रों ंके

समिा को क्षनणक नबिली की चमक के समान निावान् समझना चानहए और अपने मन में बार-बार इस पर नबचार करके सच्चा आनन्द प्राप्त करना चानहए।

अिा तर्ा प्रत्यिाा

अिा तर्ा प्रत्यिाा का वैराग्य तर्ा त्याग से नवरोध है। वे मन को पुष्ट करते हैं। नबलकुल अिा-रनहत होना दाियननक की एक बडी ऊँची अवस्र्ा है। परन्तु संसारी मनुष् इसको अच्छा नहीं ंमानते। वे बडी घृणा के सार् कहते हैं नक अमुक बडा ननकम्मा है। संसारी मनुष् और दाियननक परस्पर नवरोधी मागों ंपर चलते हैं।

वैराग्य का शवकास कैसे करें ?

िी अपने आत्मा के अन्तगथत वैराग्य का सुगमता और सुखपूवथक नवकास नहीं ंकरते, वे मनुष्-रूप में अन्न के िाक िुत्तु हैं। िब मक्खी देखती है नक उसके पाँव िहद में नचपक गये हैं तो वह धीरे-धीरे कई बार अपने पाँव को चाट लेती है और नफर आनन्द से उड िाती है। इसी प्रकार राग और मोह द्वारा िननत देहाध्यास और सन्तान के आसद्धि-रूप िहद में मन की नचपकन से वैराग्य और ध्यान के द्वारा अपने को बाहर ननकाल लें और हाड-मांस के इस नपंिरे से मूल स्रोत ब्रह्म की ओर उड िायें।

कुछ बच्चों ंका दूध छुडवाना बडा कनठन होता है। ये तीन-चार वषथ के हो िाने पर भी माता का स्तन पीते रहते हैं। माता अपने स्तनों ंमें नीम पीस कर लगा देती है। तब बच्चा िल्दी स्तन पीना छोड देता है। इसी प्रकार मन को नवषयों ंसे छुडवाने के नलए भी आपको नीम के पीसे के समान औषनध प्राप्त करनी होगी। एकान्त कमरे में बैठ िायें। संसारी िीवन के क्लेि, नचन्ता, भूख, प्यास, पाप, प्रलोभन, काम, कलह, भय, दपथ, रोग, मृत्यु, वृिावस्र्ा, िोक, हानन, असफलता, ननरािा, वैर, नबचूछू के िंक, मच्छरों ंके काटने आनद पर नवचार करें। यह प्रभावयुि नीम के पीसे का काम करेगा और संसार में मन को छुडाने में सहायक होगा। इस प्रकार आपको प्रनतनदन नवचार करना चानहए।

इस भौनतक िीवन में अनेक प्रकार के दुःखों ंको सदा ध्यान में रखें। गीता का यह वाक् दोहराते रहने से मोह का लोप हो िायेगा है : 'िन्ममृत्युिराव्यानध- दुःखदोषानुदियनम्' िन्म, मृत्यु, िरा, व्यानध तर्ा दुःख-रूप दोष का पुनः पुनः नवचार करना। बराबर मन को यही समझायें नक संसार में केवल दुःख-ही-दुःख है। इस संसार की अननत्यता पर ननरन्तर नवचार करें। मुमुक्षुओं ंके नलए यह प्रर्म साधन है। इससे वैराग्य की वृद्धि होती है। मन पदार्ों से दूर हो िायेगा, धीरे-धीरे नवषय-भोग के पदार्ों से ममता दूर हो िायेगी।

त्याग मोक्ष-प्रदायक है

संसारी पदार्ों से अनग्न, नवष या नवष्ठा के समान बचें। सारी वासनाओं ंऔर इच्छाओं ंको त्याग दें। यही मोक्ष है। कामनाओं ंके त्याग से मन का नाि हो िाता है। इससे माया का नाि होता है; क्ोंनक मन ही माया है। मन की कल्पना में माया का नसंहासन है। यह नकतनी चालाक है। नववेक इसकी चालों ंको खूब िानता है। त्यागी और आत्म-नवचार-युि करती है। मनुष् से: यह बहुत िरती है। । यह उसको दोनों ंहार् िोड कर प्रणाम करती है ।

सच्चा त्याग क्या है?

मन ही सब-कुछ है और इसके संयम से सबका त्याग हो िाता है। केवल नचत-त्याग ही सबका त्याग कहलाता है। सच्चा त्याग मन के संयम में है। इसमें सारी कामनाओं ंऔर अहंकार का त्याग करना होता है, संसार की सत्ता का नहीं।ं इस प्रकार के माननसक त्याग के द्वारा आप सारे दुिःखों ंसे मुि हो िायेंगे। तब िीवन में अमृतत्व या अहकार से रनहत ब्रह्म में सबकी एकता पर द्धस्त िीवन का असीम आनन्द प्राप्त होगा।

सोंन्यास-एकमानशसक दिा

संन्यास केवल माननसक दिा है। वास्तव में तो मन को गेरुआ रंगने की आवश्यकता है, कपडों ंको नहीं।ं िो अहंकार और बासनाओं ंसे रनहत है तर् निसमें सारे साद्धत्त्वक सद्‌गुण हैं, वह यद्यनप संसार में पररवार के सार् भी रहता है तो भी वह सच्चा संन्यासी है। रानी चुिाला एक संन्यानसनी रानी र्ी, यद्यनप वह एक राज्य का कायथभार सूँभालती र्ी। िो संन्यासी िंगल में रह कर भी वासनाओं ंसे भरा हुआ है, वह गृहस्र् और संसारी मूखथ से भी गया बीता है। निद्धखर्ध्िकई वषों तक िंगल में नंगा रहता रहा तो भी वह संसारी ही बना रहा।

सारी वासनाओं,ं अहंकार और काम का त्याग ही सच्चा त्याग है। यनद आपका मन ननमथल है; आसद्धि, वासना और अहंकार से रनहत है तो चाहे आप िंगल में रहें या नगर में, श्वेेत वस्त्र पहनें या गेरुआ, निर मूुँडवा लें या िटा बढ़ा लें, आप संन्यासी ही हैं।

मन को मूँड दें। नकसी ने गुरुनानक से पूछा- "महात्मा िी! आपने निर क्ों ंनहीं ंमूुँडवाया? आप तो संन्यासी हैं।" उन्ोंनें उत्तर नदया- "मेरे प्यारे नमत्र! मैंने अपने मन को मूँड नदया है।" वास्तव में मन का मुण्डन बहुत साफ होना चानहए। सारी आसद्धि, कामना, अहंकार, मोह, काम, लोभ, क्रोध आनद से बचना ही मन का मुण्डन है। िब तक अन्दर तृष्णा बनी हुई है, बाहर से निर मूुँडवाने का कोई अर्थ नहीं ंहै।

बहुत से मनुष्ों ंने सचे्च त्याग का अर्थ नहीं ंसमझा है। भौनतक पदार्ों का त्याग कोई त्याग नहीं ंहै। अहंकार को त्यागना ही सच्चा त्याग है। यनद आप अहंकार को त्याग दें, तो आपने संसार की सारी वसु्तुओं ंको त्याग नदया है। यनद सूक्ष्म अहंकार को त्याग नदया िाये तो देहाध्यास स्वतिः ही चला िायेगा।

वेदान्त आपसे यह नहीं ंकहता नक दुननया को छोड दें। यह तो चाहता है नक आप अपनी मनोवृनत्त को बदल दें और इस झूठी भ्रमपूणथ अहन्ता और ममता को त्याग दें। संपेरा साँूप के केवल दो नवषेले दाँूत ही उखाडता है। साँूप वैसा ही रहता है। यह फुंकार मारता है, फन भी उठाता है और दाँूत भी नदखाता है। वास्तव में यह सब कायथ पूवथ की भाँूनत ही करता है। सूँपेरे ने सपथ की ओर अपनी मनोवृनत्त को बदल नदया है। अब उसमें यह भावना है नक इसके नवषैले दाँूत नहीं ंहैं। इसी प्रकार आपको भी मन के दोनों ंही नवषैले दाँूतों–ंअहन्ता और ममता को उखाड िलिना चानहए। तब मन को िहाँू यह चाहे, िाने दे सकते हैं। तब आपकी सदा समानध ही रहेगी।

आपको त्याग का अनभमान भी छोड देना चानहए। त्याग का अनभमान बडी दृढ़ता से बिमूल होता है। आपको यह भाव ननकाल देना चानहए नक 'मैंने प्रते्येक वसु्तु का त्याग कर नदया है। मैं बडा त्यागी हूँ।' साधुओं ंका यह अनभमान गृहद्धस्यों ंके इस अनभमान से भी बुरा है नक 'मैं पृथ्वीपनत हूँ, मैं ब्राह्मण हूँ इत्यानद।

परिच्छेद- २६

इन्यि-सोंयम

इन्यिाँ मन का प्रवशधछत रूप हैं

पदार्थ-स्वरूप वासनाएँ इद्धन्द्रयाँ हैं। देखने की इच्छा आँख है। सूँघने की इच्छा कान हैं। इद्धन्द्रयों की दो अवस्ाएँ होती हैं : एक गनतिील (Dynamic) और दूसरी ननश्चल (Static)। िब वासना अपना काम प्रारम्भ करती है तो इद्धन्द्रयाँ प्रवृनत्तिील हो िाती हैं। यह गनतिील अवस्ा है। िैसे ही वासना की पूनतथ हो िाती है, इद्धन्द्रयों की तृद्धप्त हो िाने से वे संकुनचत हो िाती हैं। यह ननश्चल अवस्ा है।

मन और इद्धन्द्रयाँ एक हैं। मन का प्रवनधथत रूप इद्धन्द्रय है। समुि ननदयों से भरा िाता है; नबना ननदयों के समुि की द्धस्नत नहीं रह सकती। इसी प्रकार मन इद्धन्द्रयों द्वारा पूणथ होता है; नबना इद्धन्द्रयों के मन का अद्धस्तत्व नहीं रह सकता। िो इद्धन्द्रयों को वि में कर लेता है, वह मन को पहले ही वि में कर चुका होता है। इद्धन्द्रय मन का एक नाम है।

मन इद्धन्द्रयों का समूह है। मन इद्धन्द्रयों से श्रेष्ठतर िद्धि है। मन समानहत इद्धन्द्रय है। इद्धन्द्रय मन का अनभव्यि रूप है। िैसे मन्त्री रािा की आज्ञा का पालन करता है वैसे ही पंच-ज्ञानेद्धन्द्रयाँ मन के आदेिानुसार कायथ करती हैं। मन में खाने की वासना निह्वा, दाँत और उदर के रूप में प्रकट हुई है। मन में चलने की वासना पैर के रूप में प्रकट हुई है। यनद मन को वि में कर नलया िाये तो इद्धन्द्रयाँ वि में हो िाती हैं।

आँखें केवल देख सकती हैं। कान केवल सुन सकते हैं। निह्वा केवल स्वाद ले सकती है। त्वचा केवल स्पिथ कर सकती है। नाक केवल सूंघ सकती है। परन्तु मन देख सकता है, सुन सकता है, स्वाद ले सकता है, स्पिथ कर सकता है और सूंघ सकता है। मन सामूनहक संवेदी है। पाँचों इद्धन्द्रयाँ वहाँ नमली हुई हैं। यह इद्धन्द्रयों से स्वतन्त्र रह कर सीधे देख, सुन तरा सूंघ सकता है, स्वाद ले सकता है तरा स्पिथ कर सकता है। यह पाँचों ज्ञानेद्धन्द्रयों का समुच्चय है। पाँचों ज्ञानेद्धन्द्रयों की िद्धियाँ मन में नमली होती हैं। योगाभ्यास से आप मन के द्वारा सीधे देख और सुन सकते हैं। इससे पाश्चात्य मनोवैज्ञाननकों के प्रनतबोधवाद (Theory of Perception) का ननराकरण हो िाता है।

गीता में मन को छठी इद्धन्द्रय भी कहा है : **'मनिः षष्ठानीन्यािण'** (गीता : १५-७)। पाँच इद्धन्द्रयाँ ज्ञानेद्धन्द्रयाँ हैं और छठी इद्धन्द्रय मन है।

सब इद्धन्द्रयों के अनुभव की मूल भूनम अराथत् आयतन मन ही होता है। यनद मन का सम्बन्ध इद्धन्द्रयों के सार न रहे तो वे कुछ भी नहीं कर सकतीं। िब आप नकसी रोचक समाचार-पत्र को पढ़ने में पूणथतिः लीन हों तो अपने नमत्र की िोर की पुकार भी नहीं सुनते। आपको पता नहीं लगता नक कब घण्टे ने पाँच बिाये। यह प्रत्येक

व्यद्धि का ननत्य का अनुभव है। उस समय मन कहीं ंऔर ही लगा हुआ र्ा। यह श्रवणेद्धन्द्रय के सार् नहीं ंर्ा। गहरी ननिा में नेत्र भले ही पूरे खुले रहें; परनुतु वे कुछ देखते नहीं;ं क्ोंनक उस समय मन सार् में नहीं ंहोता।

सहोदरा इन्यिााँ

नानसका और गुदा सहोदरा इद्धन्द्रयााँ हैं। वे दोनों ंही पृथ्वी-तन्मात्रा से उत्पन्न हुई हैं-नाक साद्धत्त्वक अंिसे और गुदा रािनसक अंिसे। ये दोनों ंइद्धन्द्रयााँ सबसे कम हाननकर हैं। गने्धेद्धन्द्रय तर्ा गन्धचेता अनधक दुिःख नहीं ं देती हैं और इनका संयम भी सरलता से हो सकता है।

निह्वा और उपस्र् (िननेद्धन्द्रय) िल-तन्मात्रा से उत्पन्न हुई हैं- पहली साद्धत्त्वक अिंसे और दूसरी रािनसक अंिसे। ये सहोदरा इद्धन्द्रयााँ हैं। भोिन से िननेद्धन्द्रय को िद्धि नमलती है।

चकु्षु और पैर अनग्न-तन्मात्रा से उत्पन्न हुए हैं-नेत्र साद्धत्त्वक अंिसे और पैर रािनसक अंिसे। ये सहोदरा इद्धन्द्रयााँ हैं। आाँख दृश्य देखना पसन्द करती है और पैर उसे वहााँ ले िाने को तैयार रहते हैं।

त्वचा और हार् वायु-तन्मात्रा से उत्पन्न हुए हैं-त्वचा साद्धत्त्वक अंिसे और हार् रािनसक अंिसे। ये सहोदरा इद्धन्द्रयााँ हैं। त्वचा को रेिम और दूसरे कोमल पदार्थ उपभोग के नलए चानहए और हार् वही पदार्थ प्राप्त करने को तैयार रहते हैं।

वाक्-इद्धन्द्रय और कान दोनों ंआकाि-तन्मात्रा से उत्पन्न हुए हैं-कान साद्धत्वक अंिसे और वाक् रािनसक अंिसे। ये सहोदरा इद्धन्द्रयााँ हैं। ये एक-दूसरे की सम्बन्धी और सहायक हैं।

आप देखेंगे नक बाँगले में दो सदर फाटक हुआ करते हैं-एक आने के नलए और सरा िाने के नलए। हमारी देह भी भगवान् के नलए अच्छा बंगला है। आाँखें और कान रूप और िब्द के प्रवेि-द्वार हैं। ये इद्धन्द्रय-ज्ञान के मागथ हैं। उपस्र् इद्धन्द्रय और गुदा नवणथम-द्वार हैं। इनसे मल और मूत्र बाहर ननकलते हैं।

शजह्वा का सोंयम सवाछशधक कशिन है

सबसे अनधक चंचल और दुिःखदायी िननेद्धन्द्रय है। उससे कम निह्वा, उससे वाक्-इद्धन्द्रय, नफर कान और आाँख हैं। निह्वा का संयम िननेद्धन्द्रय के संयम से भी अनधक कनठन है; क्ोंनक िन्म से ही सुस्वादु पदार्थ खाते रहने का अभ्यास होता है। काम-वासना अट्ठारहवें वषथ में प्रकट होती है। यौन-सुख का सेवन तो अल्प काल तक ही नकया िाता है; परनुतु भोिन तो िरीणाथवस्र्ा में भी करना पडता है। निह्वा के संयम से ही सारी इद्धन्द्रयों ं का संयम होता है।

गाना, नसनेमा, सैर, तमािो आनद का उपभोग मनुष्-िन्म में ही नकया िाता है। चींनटयााँ और चूहे नसनेमा नहीं ंदेखते। चकु्षुररद्धन्द्रय इतनी प्रबल नहीं ंहोती नितनी निह्वेद्धन्द्रय होती है।

चकु्षु-इद्धन्द्रय रसनेद्धन्द्रय की नप्रय सहकारी है। आम का पीला-पीला रूप देखते ही मन में गुदगुदी होती है। आाँख सुन्दर आम को देखती है और अनेक प्रकार के भोिन को भी िो सामने रखा िाता है, देखती है। तत्काल निह्वा-ग्रसनीचेता उद्दीप्त होने लगती है। आपको भोिन की अच्छी रुनच होती है। भोिन अनधक स्वानदष्ट और ग्राह्य हो िाता है। अन्धे मनुष् को भोिन से इतनी अच्छी रुनच नहीं ंहोती नितनी नक तीव्र दृनष्ट वाले मनुष् को होती है।

इन्यिो ोंको बशहगाछमी होने से रोकना ही साधना का उदे्देश्य है

आूँख, कान और निह्वा- ये तीनों ंइद्धन्द्रयाूँ मन को बनहमुथखी कर देती हैं और मनुष् पूणथतिः संसारी हो िाता है। आूँख और कान वृनत्त-ज्ञान के मागथ हैं। आूँखें बन्द कर लें और कानों ंको रुई की िाट लगा कर या दोनों ंअूँगूठों ंसे बन्द कर लें (इसे योननमुिा कहते हैं)। अब आपने संसार के पाूँच में से दो द्वार नष्ट कर नदये हैं। इन दोनों ंज्ञानेद्धन्द्रयों ंके द्वारों ंमें से नकसी भी चीि को मन में प्रवेि न करने दें।

साधन का उिेय आत्मननरीक्षण अर्वा अन्तमुथखी वृनत्त द्वारा मन को अन्तमुथखी करके अपने अन्दर ही सत्य का अनुभव करना है। आूँख, कान और निह्वा-इन तीन इद्धन्द्रयों ंका संयम करें, तब आप इस मन को वि में करके इसकी िद्धि को बाहर िाने से रोक सकते हैं। ये इद्धन्द्रयाूँ ही मन को उिान्त बनाती है। इन पर संयम िद्धि को अन्दर केद्धन्द्रत करने में सहायक होता है।

सच्चा क्षनत्रय वही है िो मन के सार् आन्तररक युि छेडता है, िो स्वभाव और इद्धन्द्रयों ंके सार् नववेक और इच्छा–िद्धि द्वारा आन्तररक युि करता रहता है और मन पर पूणथ नविय प्राप्त कर लेता है। िो सत्वगुण की वृद्धि करके बुरे संस्कारों ंऔर बुरे नवचारों ंसे, रिोगुण और तमोगुण से युि छेडता है, वही सच्चा क्षनत्रय है। निसका िस्त्र इच्छा–िद्धि और अस्त्र नववेक है निसका युि-क्षेत्र मन के ही अन्दर है, निसका मारू बािा प्रणव-ध्वनन और छान्दोग्य उपननषद् का उद्गीर् है और निसका कवच नववेक, वैराग्य और मुमुक्षुत्व हैं, वही सच्चा क्षनत्रय है।

इन्यि-सोंयम कैसे करें ?

इद्धन्द्रयों ंको वि में करने के छह उपाय हैं: (१) नवचार द्वारा, (२) इच्छा–िद्धि द्वारा, (३) कुम्भक द्वारा , (४) दम द्वारा, (५) प्रत्याहार द्वारा और (६) वैराग्य तर्ा त्याग द्वारा। पूणथ संयम केवल नवचार द्वारा ही हो सकता है।

दम

केवल दम से इद्धन्द्रयों ंका संयम नहीं ंहो सकता। इद्धन्द्रयाूँ यनद प्रबल हों ंतो वे अचे्छे-अचे्छ साधकों ंके मन को भी इसी प्रकार प्रचण्ड वेग से उडा ले िाती हैं, िैसे समुि के झंझावात में प्रबल वायु िलपोत को ले िाती है (गीता: २-६७)। मन की सहायता से सनद्वचार द्वारा उनका पूणथ संयम हो सकता है।

िब आप मिास में माउण्ट रोड पर टहलते हैं, तब आपकी प्रते्यक इद्धन्द्रय अपने-अपने उपभोग तर्ा आमोद-प्रमोद के पदार्थ प्राप्त करने का यर्ािक् प्रयत्न करती है। यनद आप इद्धन्द्रयों ंको वे पदार्थ प्राप्त नहीं ंकरा देते तो वे बडा प्रबल उपिव मचाती हैं। निह्वा आपको काफी होटल या होटलिी एंनिलस की ओर खीचंती है। त्वक् कहती है : 'चलो! बम्बई सेठ की दुकान पर चलें और बनढ़या चाइना नसि ले आयें।' कान कहते हैं : 'आओ! एक हारमोननयम या ग्रामोफोन खरीदें।' नाक कहती है: 'हमें ओटो िी रोज़ की एक बोतल ले दो।' इन सब इद्धन्द्रयों ंको भडकाने वाला मन है। पाूँचों ंइद्धन्द्रयों ंमें बडा उग्र आन्तररक युि चलता है और प्रते्यक अपने-अपने उपभोग के नलए बडा नहस्सा लेने को उतु्सक रहती है। सदा नववेक से काम लें। इद्धन्द्रयाूँ आपको प्रलोभन दे कर धोखे में िालती हैं। इद्धन्द्रयाूँ ऐन्द्रिानलक हैं। माया भी इद्धन्द्रयों ंऔर मन के द्वारा अपना मोह–िाल फैलाती है। मंदा सचेत रहें। वैराग्य और वासना-त्याग के द्वारा दम की अभ्यास करें। इद्धन्द्रयों ंऔर पन की उपरनत से आनन्द प्राप्त होता है। नवताई के बािारों ंमें खूब पैसा ले कर िायें। चन्दरह नमनट इधर-उपर टहलते रहें। भाूँनत-भाूँनत की नवियो को लोभमची दृनष्ट से देखें। कोई चीि न खरीदें और घर को वापस आ िायें। उस नदन या या यनद स्वानदष्ट भोिन भी

नदये ियें तो उन्हें ग्रहण न करें। सादा भोिन करें। ऐसा करने से निह्वा वि में कर लेंगे िो सभी कल्मोिं ंका मूल है। अन्ततिः मन को भी वि में कर सकेंगे और आपकी इच्छािक्ति भी बढ़ेगी।

सारे रािसी भोिन और इद्धन्द्रयों ंके उपभोग के सारे पदार्थ छोड दें। तीव्र तप का अभ्यास करें। तप से इद्धन्द्रयाँ दुबथल हो िाती हैं और अन्त में मन भी वि में हो िाता है। यनद आप चाय पीना छोड दें तो आपने वस्तुतिः मन के अल्पांि को वि में कर नलया। निह्वा-संयम का अर्थ मन का संयम है।

प्रत्याहार

िब इद्धन्द्रयाँ पदार्ों का पररत्याग कर देती हैं तो वे मानसिव्य का रूप बन िाती हैं। वे मन में लीन हो िाती हैं। यह प्रत्याहार कहलाता है। िब इद्धन्द्रयाँ अपने-अपने नवषयों ंसे अलग हो िाती हैं तो इद्धन्द्रय-प्रत्याहार होता है। िब मन इद्धन्द्रयों ंसे अलग हो िाता है तो माननसक प्रत्याहार होता है। प्रत्याहार एक सामान्य िब्द है निसमें दम भी अन्तनवथष्ट है। दम का पररणाम प्रत्याहार है।

यनद आप संज्ञानपूवथक इच्छानुसार प्रत्याहार कर सकते हैं अर्ाथत् मन को इद्धन्द्रयों ंके सार् संयुि अर्वा नवयुि कर सकते हैं तो आपने मन का बहुत ननग्रह कर नलया है। आप नकसी समय भी मन की बनहगाथमी वृनत्तयों ं को रोक सकते हैं। आन्तररक आध्याद्धत्मक िीवन के नलए प्रत्याहार प्रर्म सोपान है। िो प्रत्याहार में सफल हो गया, वह सुगमता से दीघथ काल तक मन को एकाग्र कर सकता है। यनद प्रत्याहार पूणथ हो तो धारणा और ध्यान स्वयं ही आ िाते हैं। प्रत्याहार पर पूणथ अनधकार प्राप्त करने के नलए साधक को बडा प्रयास करना पडता है। प्रत्याहार में सफलता के नलए वैराग्य का होना आवश्यक है। कुछ वषों तक ननरन्तर पररश्रम-सनहत प्रयास करते रहने से आपको सफलता नमल सकती है। योगसूत्र में कहा है नक िब प्रत्याहार पूणथ हो तो सारी इद्धन्द्रयों ंका सबसे उत्कृष्ट विीकरण होता है- **'ततिः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम्'** (पातंिल योगसूत्र : २-५५)।

साधना-काल में अनधक न नमलें-िुलें, अनधक बात-चीत न करें, अनधक चलें नहीं, ं अनधक भोिन न करें तर्ा अनधक सोयें नहीं। ं इन पाँचों ंननषेधों ंका सावधानी से पालन करें। नमलने-िुलने से मन में उद्वेग होता है। अनधक बोलने से मन की एकाग्रता भंग होती है। अनधक चलने से र्कान और कमिोरी होती है। अनधक भोिन से आलस्य और तन्द्रा आती है।

शवचारो ोंपर शनयन्त्रण एक महान् माँग है

यनद घोडों ंकी लगाम आपके हार् में हो तो आपकी यात्रा कुिलतापूवथक होगी। इद्धन्द्रयाँ घोडे हैं। इद्धन्द्रयों ंपर यनद आपका अनधकार हो तो मोक्ष-मागथ में आपकी यात्रा सकुिल हो सकती है। मन की सहायता के नबना इद्धन्द्रयाँ कुछ नहीं ंकर सकतीं। ं इद्धन्द्रय-ननग्रह का अर्थ केवल मन का ननग्रह है। नवचारों ंके संयम से मन और इद्धन्द्रयों ंका भी ननग्रह होता है। इससे अपार आनन्द और अमर िीवन नमलता है। नवचार का संयम अपररहायथ है और सबके नलए अत्यन्त अपेनक्षत है।

अपने मूल शनवास का िरण करें

हे मन! इद्धन्द्रयों ंऔर उनके नवषयों ंकी संगनत में पड कर तुम अपना सवथनाि मत करो। पयाथप्त हो चुका है। अब अपने को ब्रह्म-स्वरूप पर एकाग्र कर लो। वही तुम्हारा मूल स्र्ान है। वह तुम्हारा वास्तनवक सुखमय घर है। िब ॐ का उच्चारण करो तब इस बात का ध्यान रखो। इससे ब्रह्माकार अर्वा अखण्डाकार-वृनत्त उत्पन्न

होगी। क्ोंनंक तुम अपना वास्तनवक स्वरूप बार-बार भूल िाते हो, इसनलए मुझे इसे बार-बार दोहराना पडता है नक स्वरूप तुम्हारा असली घर है। तुमने स्वरूप से ही िन्म नलया है। सतत नननदध्यासन से उत्पन्न हुई ब्रह्माकार-वृनत्त की सहायता से, तैलधारावत् महावाक् के अनुसन्धान से अपने वास्तनवक स्ान में लौट िाओ। तब अनवद्या का नाि हो िायेगा और तुम हर प्रकार के सन्ताप और दुःखों ंसे मुि हो कर परमानन्द-पद प्राप्त कर लोगे। िब स्वरूपाकार-वृनत्त पैदा होगी तो तुम्हारे सब नमथ्या संकल्प भी नष्ट हो िायेंगे। तुम सहिानन्द के सार् तुरीयावस्ा को पहुँच िाओगे। हे मन! तब तुम िन्म-मरण से मुि हो िाओगे और यह हाड-मांस का नपंिर गन्दा िरीर तुम्हें नहीं नमलेगा। तुम अपने अनधष्ठान सद्विद्ानन्द ब्रह्म में लीन हो िाओगे।

परररचे्छेद-२७

मौन तर्ा आत्मशनरीक्षण

मौन, उसका अभ्यास तर्ा उसके लाभ

नमलीिुली अनेक प्रकार की बातचीत करना बहुत बुरा स्वभाव है। इससे मन अपकृष्ट रहता है। यह मन को सदा बनहमुथख बनाता है और मनुष् आध्याद्धत्मकता से हट िाता है। सप्ताह में एक बार मौन-व्रत का पालन अवश्य करना चानहए। बोलने से बहुत िद्धि का अपव्यय होता है।

वाक्-इद्धन्द्रय मन को बुरी तरह अपकृष्ट करती है। छान्दोग्य उपननषद् में कहा गया है-"वाणी मन-रूपी ब्रह्म का चौर्ा चरण है, क्ोंनंक वाणी-रूपी चरण के द्वारा ही आप उनद्दष्ट गाय, बकरी आनद पदार्ों ंतक पहुँच पाते हैं। इसनलए वाणी मन का एक चरण है; क्ोंनंक नानसका के द्वारा ही सूँघने योग्य पदार्ों को आप प्राप्त करते हैं। इसी प्रकार चकु्षु और श्रोत्र भी मन के चरण हैं। यह मन-ब्रह्म के चार चरणों ंका स्वरूप है" (छा. उ. ३-१८-१ से ६)।

वाक्-इद्धन्द्रय से नकसी बात को बाहर न आने दें। मौन रहें। इससे आपको सहायता नमलेगी। मौन रहने से अतुल िाद्धन्त नमलती है। वाक्–द्धि औि–द्धि में बदल िाती है। संकल्प बहुत घट िाते हैं। इच्छा–द्धि बलवती हो िाती है। अब आपने उपिव का एक बडा कारण बन्द कर नदया। अब आपको िाद्धन्त नमलेगी। अब दृढ़ ननश्चय के सार् ब्रह्म का ध्यान करें।

आध्याद्धत्मक साधकों ंको ननत्य ही कुछ घण्टों ंके नलए मौन रखना चानहए।

बोलने से पहले अपने िब्दों ंको चुनने में सतकथ रहें। बोलने से पहले दो-तीन बार सोच लें। नवचार करें नक आपके िब्द दूसरे के मन पर क्ा प्रभाव िालेंगे ? कुछ वषों तक मौन रहें। यह वाङ्मय तप है।

अनावश्यक नववाद न करें। नववाद से नवरोध, उते्तिना बढ़ते हैं और िद्धि क्षीण होती है। प्रते्येक व्यद्धि का अपना-अपना मत, नवचार, भाव और नवश्वास होता है। दूसरों ंके मत को बदलना अनत कनठन है। दूसरों ंको नवश्वास नदलाने का प्रयत्न न करें। िब तक आप साधक हैं और धानमथक नवषयों ंमें िानकारी प्राप्त ही कर रहे हैं, बि तक आपके नवचार परररपक्व और द्धस्र न हो िायें, दूसरे से नववाद न करें।

मन का अनुमान सदा बात को बढ़ाया करता है। अतुयुद्धि एक प्रकार का असत्य है। साधकों ंको अतुयुद्धि नहीं ंकरनी चानहए। उन्ें गनणतीय तरा् वैज्ञाननक परििुिता से िब्द बोलने चानहए।

साधक को संग छोडने और मौन रहने का इसनलए आदेि नदया िाता है; क्ोंनंक राग के कारण वह बहुत लोगों ंसे िानकारी बढ़ायेगा और द्वेष के कारण कुछ अनप्रय िब्द बोल कर कुछ लोगों ंको अप्रसन्न कर देगा। निह्वा में तलवार होती है। िब्द तीर के समान होते हैं। वे दूसरों ंके भाव को चोट पहुँचाते हैं। मौन रहने और संगनत छोड देने से मनुष् वानगद्धन्द्रय का संयम कर सकता है। तब मन िान्त हो िाता है।

संग से १५ दोष उत्पन्न होते हैं, इसनलए साधना-काल में साधक को अकेले रहना ही उनचत है। संग-दोष ये हैं : (१) नासमझी, (२) कुभाव, (३) अप्रसन्नता, (४) राग-द्वेष, (५) ईष्ाथ, (६) अहंकार, (७) आसद्धि, (८) दूसरे के दुिःख के माननसक भाग, (९) दूसरे की आलोचना, (१०) अनात्म नवषयों ंकी चचाथ, (११) बोलने का स्वभाव, (१२) बनहमुथख वृनत्त, (१३) द्वैत का भाव और संस्कार, (१४) दासत्व की मनोवृनत्त तरा् दुबथल इच्छा-िद्धि और (१५) घृणा। र्ोडा पे्रम करें, परनु्त दीघथ काल तक।

बि आप मौन-व्रत लें तो अन्दर से बार-बार कभी न कहें, "मैं बोलूंगा नहीं, ं मैं बोलूँगा नहीं। ं" इससे मद्धस्तष्क में र्ोडी गरमी पैदा हो िायेगी; क्ोंनंक मन आपसे प्रनतिोध लेना चाहता है। केवल एक बार ननश्चय कर लें और नफर िान्त रहें। दूसरी बातों ंको देखें। सदा यही न सोचते रहें, "मैं बोलूंगा नहीं, ं मैं बोलूँगा नहीं। ं"

बि आप मौन व्रत रखते हैं तो प्रारम्भ में आपको कनठनाई मालूम होती है। वृनत्तयों ंका बडा तीव्र आक्रमण होगा। अनेक प्रकार के नवचार उठेंगे और आपको मौन भंग करने के नलए बाध्य करेंगे। यह सब मन की व्यर्थ कल्पना है, मन का भुलावा है। साहसी बनें। सारी िद्धियाँ ईश्वर में केद्धन्द्रत कर दें। मन को पूणथ रूप से नवचार में लगाये रखें। बात करने और संगनत करने की इच्छा िाती रहेगी। आपको िाद्धन्त नमलेगी। वाक्-इद्धन्द्रय मन को बहुत चलायमान कर देती है।कहा

मन का मौन

मन का मौन वाणी के मौन से उत्तम है। मौन स्वयं ही आना चानहए। यह स्वाभानवक होना चानहय। बलपूवथक करने से मन के सार् झगडना पडता है. प्रत्य काना पडता है। यनद आप सत्य में ननवास करें तो भौन स्वतिः ही आयेगा। तब ही पूणथ िाद्धन्त होगी ।

प्राकृनतक मौन और माननसक नाता होनी चानहए। िारीररक िमता ननरर्थक है। यह मुखों ंको हामनसक तप है निसका िास्त्र और बुद्धि अनुमोदन नहीं ंकरते हैं। िीवनु्मि है भूत स्वाभानवक हो िाती है, िब वह सप्तम भूनमका में पहुँच कर ब्रा में लीन रहता है।

आत्मशनरीक्षण क्या हैऔर यह क्या करता है?

स्वयमूभू ब्रह्म ने मन और इद्धन्द्रयों ंको बनहमुथखी बनाया है। स्मरणातीत काल से बनहमुथख होना मन की बडी हाननकर आदत है। इसनलए आप बाह्य िगत् को देखते हैं; नकनुतु अन्तरात्मा को नहीं ंदेखते। नवक्ेषेपि–द्धि या माया आपको बाहर की ओर खीचंती है। बचपन से ही आपको बाह्य िगत् को देखना नसखाया िाता है और अन्तर के सामनहक िगत् की ओर नबलकुल ही ध्यान नहीं ंनदया िाता। आपने अन्तननथरीक्षण की कला को नबिुल खो नदया है। मन के अन्दर क्ा चल रहा है। इसको भली प्रकार िान लेने के नलए िि्ु बुद्धि और अन्तननथरीक्षण की सूक्ष्म बुद्धि की आवश्यकता होती है। आपको मन को अन्तमुथखी करना होगा। नफर इसकी सारी िद्धियों ंको इकट्ठा करके स्वय कान के ऊपर िाल देना होगा निससे नक मन अपना स्वरूप िान िाये और नवशे्लेषण कर ले। यह रियोग है।

स्वयं अपने अन्तिथगत् में खूब छानबीन करें। अपने मन और इद्धन्द्रयों ंपर नवश्वास न करें। श्री और धन आपके ितुरु हैं। ये दोनों ंमहान् बुराइयूाँ हैं।

अन्तननथरीक्षण में मन ही स्वाध्याय का नवषय होता है। मन का एक भाग िेष मन का अध्ययन करता है। उच्च मन ननम्न मन की परीक्षा करता है। अन्तननथरीक्षण आत्मबोध है। िैसे आप मिदूर का काम देखते हैं, इसी प्रकार मन का एक अंि िेष मन की नक्रयाओं ंको देखता है। यनद आप मन को अपने से अनभन्न िानते हैं, यनद आप मन से सादात्म्य करते हैं तो आप अपने दोषों ंको नहीं ंिान सकते। यनद आप मन के साक्षी बनें तो आपको अपने अनेक दोषों ंका पता चल िायेगा।

ध्यानपूवथक ननरीक्षण से बहुत से दोष मालूम पडते हैं और उपयिु साधन से वे दूर नकये िाते हैं। एकान्त कमरे में बैठ िायें, ननत्य १५ नमनट प्रात:-सायं मौन हो िायें और ध्यानपूवथक मन का अन्तननथरीक्षण नकया करें। मन या तो नवचार करता होगा या यिोना बनाता होगा या िानता होगा या इच्छा करता होगा या इद्धन्द्रय-ज्ञान प्राप्त करता होगा।

अन्तननथरीक्षण से आपको मालूम करना होगा नक नकस समय पर मन क्ा कर रहा है? इसका अभ्यास करने के नलए अन्तमुथखी वृनत्त, आत्मननष्ठ मन तरा सूक्ष्म बुद्धि की आवश्यकता है। दिथनिास्त्र के स्वाध्याय, सत्संग, इद्धन्द्रय-ननग्रह और माद्धत्त्वक भोिन से बुद्धि को सूक्ष्म बनाया िा सकता है। हरर ॐ, नारायण, राम, निव आनद परमात्मा के पनवत्र नामों ंका ननरन्तर उच्चारण करते रहने से मन िि्ु होता है और अन्तमुथख होने में सहायता नमलती है।

अतशनछरीक्षणकैसे करें?

आप ही अपने मन के सबसे अचे्छे ननणाथयक हैं। एक घणे्टे अकेले रह कर या िान्त कमरे में चुप बैठ कर ननरीक्षण करें। एकान्त कमरे में नेत्र बन्द करके बैठ कर मन की नक्रयाओं ंको देखें। तब आपको मन के दोष और दुबथलताओं ंका भली प्रकार ज्ञान हो िायेगा।

तत्पश्चात् आपको उनें् ननकाल देने की आवश्यकता मालूम होनी चानहए। आपका स्वभाव भी पररवतथन के अनुकूल बन िाना चानहए। दोषों ंको दूर करने का ठीक-ठीक उपाय भी आपको मालूम होना चानहए और वह उपाय बार-बार काम में लाना चानहए। तभी सुधार आरम्भ होगा। साधना का ननरन्तर उपयोग अपररहायथ

आवश्यकता है। कभी-कभी सप्ताह में, पक्ष में या मास में एक बार अपनी उन्ननत को भी देखते रहना चानहए। अपनी उन्ननत के नववरण के नलए आध्याद्धत्मक दैनद्धन्दनी अवश्य रखनी चानहए। ध्यान से देखें नक आप अध्यात्म-मागथ में उन्ननत कर रहे हैं, िहाँ रे् वहाँ ही हैं या पीछे हट रहे हैं, आपका मन एकाग्र है या नवनक्षप्त है। यनद मन में नवक्षेप है तो धैयथपूवथक उपयिु प्रयत्नों ंसे इस नवक्षेप के कारणों ंको एक-एक करके दूर करना होगा। यनद एक उपाय से इष्ट उन्ननत न प्राप्त हो तो दो उपायों ंको (योगनवनध तरा नवचार को) नमला कर काम में लाना चानहए।

आत्म-नवश्लेषण, स्वावलम्बन, आत्म-ननणथय-इस नत्रपुटी को याद रखें। आपकी आध्याद्धत्मक साधना में यह आपको अतीव लाभकारी होगी। अन्तननथरीक्षण के द्वारा आत्म-नवश्लेषण करें। अपनी वृनत्तयों ंके लक्षण खिो लें। मालूम करें नक नकस समय में कौन-सा गुण-सत्त्व, रि या तम-प्रधान है। आपका मन लक्ष्य (ईश्वर, ब्रा, कोई नवचार, पदार्थ बाह्य या अभ्यन्तर) पर ननरन्तर द्धस्र्र रह सकता है। सारे पदार्ों को छोड कर केवल गुलाब पर ही आपका मन नकतने काल तक द्धस्र्र रह सकता है। दो नमनट, पाँच नमनट या आधा घण्टा ? यह आत्म-नवश्लेषण कहलाता है। अपने ऊपर ननभथर रहें। आप अपने ही तारक या उिार करने वाले हैं। कोई आपको मोक्ष नहीं ंदे सकता। एक-एक पग करके आध्याद्धत्मक पर् पर आपको स्वयं ही चलना होगा। पुस्त के और गुरु तो आपको मागथ बता सकते हैं। यह आत्मावलम्बन है। दृढ़ ननश्चय करें नक ईश्वर को प्राप्त करूँगा। मैं अनननश्चत भनवष् में नहीं ंबद्धि इसी क्षण आत्म-सो नक मैं या ब्रह्मानुभव प्राप्त कर लूंगा।' यह आत्म-ननणथय कहलाता है।

संसारी मनुष्ों ंको कुछ नमनटों ंके नलए भी िीवन की समस्याओं ंतरा िीवन के रहस्यों ंपर नवचार करने का समय नहीं ंनमलता। राग के कारण उसका मन नवषय-भोग के पदार्ों की ओर दौडता है। उनकी माननसक िद्धियाँ देह के नवचारों,ं खाने और पहनने के नबचारों,ं स्त्री, बच्चों ंऔर नमत्रों ंके नवचारों ंतरा कायाथलय और व्यापार-सम्बन्धी नवचारों ंमें व्यय होती है और इस प्रकार नदन पूरा हो िाता है। नदन-प्रनत-नदन, सप्ताह-प्रनत-सप्ताह यही क्रम चलता रहता है। वषों बीत िाते हैं और िीवन व्यर्थ चला आता है। यह बडी िोचनीय बात है।

िो अन्तमुथख वृनत्त के द्वारा मनन और अन्तननथरीक्षण करता है, केवल वही पुरुष अपनी संसारी प्रकृनत को बदल सकता है। केवल उसी मनुष् में ब्रह्म का भाव स्र्ायी रूप से ठहर सकता है।

पररचे्छेद- २८

कुवृशत्तयााँ तर्ा उनका उनूमूलन

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सयथ, दपथ, दम्भ, असूया, ईषाथ, अहंकार, राग और दे्वष-ये कुछ कुवृनत्तयाँ हैं। ये मनुष् को संसार-बन्धन में िालती हैं। अनभमान, प्रम और इच्छाएँ मन को बाँधने के नलए नकतनी ही रद्धस्सयाँ हैं।

काम एक िन्क्तिाली िन्क्त है

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सयथ-ये मन के छह नवकार हैं। यनद काम पर नविय प्राप्त हो िाये तो लोभानदक सहायक िस्त्र भी बेकार हो िायेंगे। यनद इस पुराने ितुरु काम का नाि कर नदया िाये तो इसका पररवार बडी सुगमता से िीता िा सकता है। यनद सेनाध्यक्ष को पहले ही मार नदया िाये तो नसपानहयों ंको मारना नबलकुल सहि हो िाता है। यनद काम से, िो समस्त भोगों ंकी िड है, छुटकारा नमल िाये तो सारे सांसाररक बन्धन, निनका अनधष्ठान मन है, स्वयं छूट िायेंगे। त्याग के नबना आप नवरल ननननवथकल्प समानध अर्वा ब्रह्मननष्ठा की आिा कैसे कर सकते हैं?

काम उस मनुष् में उत्पन्न होता है िो प्रनतिानत में आसद्धि रखता है। काम का सबसे बडा िस्त्र नारी है। इसनलए प्रनतिानत में आसद्धि बढ़ानी नहीं ंचानहए।

पनत और पत्नी का पे्रम मुख्यतः िारीररक होता है। यह स्वार्थपूणथ, अस्र्ायी और पररवतथनिील होता है। निसने आत्म-साक्षात्कार कर नलया है, केवल वही पुरुष सबको सचे्च हृदय से पे्रम कर सकता है। मन और बुद्धि की समानता के आधार पर बनाया हुआ दो साधकों ंका पे्रम सच्चा और स्र्ायी होता है। स्वार्थ-रनहत हो िायें।

स्वार्थ बडा प्रधान मल है। यह बुद्धि को आच्छानदत कर लेता है। इसे ननिःस्वार्थ सेवा, दान, वेदान्त-सानहत्य के स्वाध्याय और सत्संग द्वारा दूर कर दें।

ज्ञानी पुरुष में काम-वासना नबलकुल नष्ट हो िाती है। साधक पुरुष में यह भली प्रकार संयत रहती है। गृहस्ी पुरुष में यनद इसका संयम नहीं ंनकया िाये तो यह बडा उपिव करती है। उन लोगों ंमें यह अपने पूणथ नवकनसत रूप में रहती है। वे इसका नवरोध नहीं ंकर सकते। वे ननस्सहाय हो कर इसके वि में हो िाते हैं; क्ोंनंक उनकी इचछषाि–द्धि दुबथल होती है और उनमें दृढ़ ननश्चय का अभाव होता है।

यनद आप सुवणथ के प्याले में नीबू या इमली का रस भरें तो प्याला खराब नहीं ंहोता। यनद आप पीतल या ताँबे के बरतन में भरेंगे तो रस एकदम खराब हो िायेगा अऔर हनषथता बन िायेगा। इसी प्रकार यनद नकसी मनुष् के िि्ु मन में नवषय-वृनत्तयाँ हों ंतो ये उसको मनलन नहीं ंकरतीं ंऔर नवकार उत्पन्न नहीं ंहोता। यनद मनलन पुरुषों ं के मन में नवषय-वृनत्तयाँ हों ंतो िब वे नवषयों ंके समुमुख आते हैं, उनमें उत्तिेना होती है।

स्षत्री की मूनतथ का ध्यान मन को नवचनलत कर देता है। िब िेर को एक बार मनुष् रि का स्वाद नमल िाता है तो वह सदा मनुष्ों ंको ही निकार बनाता है। इसी प्रकार अर् मन को एक बार यौन सुख का स्वाद नमल िाता है तो यह सदा स्त्री के पीछे भागता रहता है। काम बडा बलवान् है। इसके पास पुष्प-धनुष और मोहन, स्तम्भन, उन्मादन, िोषण और तापन ये पंचिर हैं।

भगवद्गीता में बताया गया है नक इद्धन्द्रयाँ, मन और बुद्धि काम के अनधष्ठान हैं। प्राणमय-कोि इसका दूसरा स्ान है। वासना सारे िरीर में व्याप्त रहती है। िरीर का प्रत्येक कोिाणु, प्रत्येक परमाणु, प्रत्येक अणु, प्रत्येक नवद्युदणु वासना से पूणथ हो िाता है। काम-सागर में प्रत्येक प्रकार की स्ूल, सूक्ष्म, बाह्य, आन्तररक धाराएँ बहती हैं। आपको चानहए नक इनमें से प्रत्येक का भली प्रकार नाि कर दें।

कामवासना का नाि करने में सचेत रहें। सचेतन मन को वि में कर लेना सुगम है, परनुतु अवचेतन मन (अन्तिःकरण) को वि में करना अत्यन्त कनठन है-चाहे आप संन्यासी हों ंअर्वा सदाचारी। आपको देखना चानहए नक स्वप्न में मन की गनतनवनध कैसी रहती है। आप स्वप्न में चोरी करने लगते हैं, परस्त्रीगमन करते हैं, कामुक भाव, आकांक्षाएँ, नीच भावनाएँ-ये सब आपमें िमी हुई होती हैं िो अवचेतन मन में बिमूल होती हैं; इससे अवचेतन मन और इसके संस्कारों ंको नवचार, ब्रह्म-भावना तर्ा प्रणव के अर्थ-सनहत ध्यान के द्वारा नष्ट करें। िो मनुष् माननसक ब्रह्मचयथ में द्धस्त है उसको स्वप्न में एक भी कुनवचार नहीं ंआ सकता। उसको कभी दुिःस्वप्न नहीं ंआ सकता। स्वप्न में नववेक और नवचार नहीं ंहोता। इसी कारण यद्यनप िाग्रतावस्ा में नववेक और नवचार के द्वारा आप पनवत्र रहते हैं तो भी आपको दुिःस्वप्न नदखायी देते हैं।

मन की वह अवस्ा, निसमें एक भी यौन-नवचार मन में प्रवेि नहीं ंकर पाता, माननसक ब्रह्मचयथ कहलाती है। भीष्म को यह अवस्ा प्राप्त र्ी। यनद आप माननसक ब्रह्मचयथ में द्धस्त नहीं ंहो सकते तो िब यौन-आवेग दुिःख दे तो कम-से-कम िरीर को संयत करने का प्रयास करें।

साधको ोंके शनरतर सोंकट का स्रोत

द्धस्त्रयों ंकी उपद्धस्नत या उनका ध्यान संसार से नवरि और आध्याद्धत्मक साधना में तत्पर तपद्धस्वयों ंके मन में भी प्रायिः अपनवत्र नवचार उत्पन्न कर देता है और इस प्रकार उनकी तपश्चयाथ के फल से उन्ें वंनचत कर देता है। दूसरे मनुष्ों ंके मन में, नविेषकर आध्याद्धत्मक साधकों ंके मन में, सूक्ष्म कामवासना की उपद्धस्नत को िान लेना बडा कनठन है, यद्यनप दृनष्ट, स्वर, भाव, गनत, आचरण आनद से कुछ पता लग िाता है।

जैशमशन का दृष्टात

एक समय श्री वेदव्यास अपने निष्ों ंको वेदान्त पढ़ा रहे रे्। उन्ोंनें बताया नक 'युवा ब्रह्मचाररयों ंको
बहुत सावधान रहना चानहए और युवनतयों ंसे नहीं ंनमलना चानहए; क्ोंनंक अपनी सतकथता रखते हुए भी वे काम के
निकार बन सकते हैं। कामदेव बडा बली है।' पूवथ-मीमांसा का रचनयता ि ैनमनन उनका निष् बडा धृष्ट र्ा। उसने कहा, "गुरु ि ी महारिा! आपकी बात गलत है। मुझे कोई स्त्री आकृष्ट नहीं ंकर सकती। मैं ब्रह्मचयथ में द्धस्र्त हूँ।" व्यास ने कहा, "ि ैनमनन, तुम्हें ि ीघ्र ही मालूम हो ि ायेगा। मैं वाराणसी ि ा रहा हूँ। तीन मास के भीतर लौट कर आऊँगा। तुम सावधान रहना। अहंकार से फूल मत ि ाना।" अपनी योगि–द्धि के द्वारा श्री व्यास ने एक सुन्दर युवती का रूप बना नलया, बडी तीखी आँखें, मनोहर मुख और रेिमी वस्त्रों ंसे सुसद्धज्जत। सूयाथस्त के समय वह युवती वृक्ष के नीचे खडी र्ी। बादल नघर आये, वषाथ होने लगी। संयोगवि ि ैनमनन उसी वृक्ष के पास से हो कर ि ा रहा र्ा। उसने उस कन्या को देखा और दया करके उससे कहने लगा, "हे सुन्दरी! तुम मेरे आश्रम में आ कर रह सकती हो। मैं तुम्हें आश्रय दूँगा।" युवती ने पूछा, "क्ा आप अकेले रहते हैं? क्ा कोई स्त्री वहाँ रहती है?" ि ैनमनन ने उत्तर नदया, "मैं अकेला हूँ; परनुतु मैं पूणथ ब्रह्मचारी हूँ। मुझे कामवासना का प्रभाव नहीं ंहो सकता। मैं प्रत्ेयेक प्रकार के नवकार से मुि हूँ। तुम वहाँ रह सकती हो।" युवती ने आपनत्त की, "कुमारी युवती के नलए ब्रह्मचारी के सार् रानत्र में अकेले रहना उनचत नहीं ंहै।" ि ैनमनन ने कहा, "सुन्दरी, भय मत करो। मैं तुम्हें पूणथ ब्रह्मचयथ का वचन देता हूँ।" तब युवती मान गयी और रानत्र को उसके आश्रम में ठहर गयी। ि ैनमनन बाहर सोया और वह युवती कमरे के अन्दर सो रही र्ी। रानत्र के नपछले प्रहर में ि ैनमनन के मन में कामदेव का संचार होने लगा। प्रारम्भ में वह नबलकुल पनवत्र र्ा। उसने दरवािा खटखटाया और कहा, "हे सुन्दरी ! बाहर हवा चल रही है। मैं ठण्डी वायु नहीं ंसह सकता। मैं अन्दर सोना चाहता हूँ।" युवती ने द्वार खोल नदया। ि ैनमनन अन्दर सो गया; क्ोंनंक वह एक श्री के अनत-ननकट र्ा और उसकी चूनडयों ंका ि ब्द सुन रहा र्ा, इसनलए वासना कुछ अनधक तीव्र हो गयी। तब वह
उठा और युवती का आनलंगन करने लगा। तुरन्त श्री व्यास ि ी ने अपना दाढ़ीदार वास्तनवक रूप प्रकट नकया और कहा : "हे नप्रय ि ैनमनन! कहो, अब तुम्हारा ब्रह्मचयथ का बल कहाँ है? क्ा तुम पूणथ ब्रह्मचयथ में द्धस्र्त हो ? ि ब इस नवषय पर मैं व्याख्यान दे रहा र्ा तो तुमने क्ा कहा र्ा।" ि ैनमनन ने लज्जा से निर झुका नलया और कहा : "गुरु िी! मुझसे भूल हुई। कृपया मुझे क्षमा कर दीनिए।"

ईसामसीह को भी ि ैतान ने लुभा नदया र्ा। बुि को ननवाथण प्राप्त करने से पहले मार (काम) के सार् बडा युि करना पडा र्ा।

माया से सावधान रहें-साधको ोंको एक चेतावनी

इसनलए नप्रय साधको! आपको अत्यन्त सतकथ रहना होगा। साधना-काल में द्धस्त्रयों ंकी संगनत से बचना ही श्ेरेयस्कर है। आप नकतने भी दृढ़ क्ों ंन हों, ं आपको युवनतयों ंका संग कभी नहीं ंकरना चानहए। माया ऐसे चुपके-चुपके सूक्ष्म संचारों ंके द्वारा काम करती है नक आपको अपने वास्तनवक पतन का पता भी नहीं ंलगेगा।

मन को आध्याद्धत्मक कायों में पूरा-पूरा लगाये रखें। इसनलए प्रत्ेयेक उस वसुतु से अतीव दूर रहें ि ो आपकी वासनाओं ंको ि ाग्रत कर दे। तभी आप सुरनक्षत रहेंगे।

गृहद्धस्र्यों ंके सार् कभी नहीं ंरहना चानहए। ि ब आप पर् पर प्रारद्धम्भक अवस्र्ा में हैं तो अपने आत्मबल और पनवत्रता की कभी परीक्षा न करें। आध्याद्धत्मक पर् के नवीन पनधक को यह नदखाने के नलए नक उसमें पाप और मनलनता का सामना करने के नलए साहस है, कभी कुसंगनत में नहीं ंपडना चानहए। यह बडी भारी भूल होगी।

आप महान् आपनत्त में पड िायेंगे और िीघ्र ही आपका अध:पतन हो िायेगा। छोटी-सी अनग्न को रेत की ढेरी बडी आसानी से बुझा देती है।

मन में अनुकरण करने की बडी िद्धि है। इसनलए आध्याद्धत्मक साधक को गृहद्धस्थ्यों ंसे नमलना वनिथत है। उसका मन भी संसारी मनुष्यों ंके मन का अनुकरण करने लगेगा। फलस्वरूप उनका पतन आरम्भ हो िायेगा।

यनद कोई साधक धननकों,ं िमीदारों ंऔर रािाओं ंके सार् रहता है तो उसका मन इनकी नवलासपूणथ प्रकृनत का अनुसरण करने लगता है और िीघ्र ही उसका अनिाने में अध:पतन हो िाता है। उसमें कुछ बुरी आदतें पड िाती हैं और उसे इनको दूर करना कनठन प्रतीत होता है। चालीस वषथ की अवस्था के बाद पुरानी आदतों ंको दूर करना और नयी स्वस्थ् आदतें बनाना कनठन होता है।

आवश्यक बुलावा होने पर साधक अपने िन्म-स्थान में र्ोडे समय तक रह सकता है। चाहे वह स्थान उसको नकतना ही अनुकूल हो और वैराग्य चाहे नकतना भी बढ़ा हुआ हो, यौनगक ननयम उसको अनत दीघथ काल तक वहााँ रहने की आज्ञा नहीं ंदे सकते। संस्कारों ंका बल बडा भारी होता है। िब तक सारे संस्कार असम्प्रज्ञात समानध या नननवथकल्प अवस्था के द्वारा पूणथतया भस्म न हो िायें, उसके नलए अपने िन्म-स्थान में दीघथ काल तक रहना सुरनक्षत नहीं ंहै। अभी वह भय-प्रदेि में ही है।

पााँच वषथ एकान्तवास करने के उपरान्त साधक को अपनी माननसक अवस्था की िााँच संसार में आ कर और संसारी मनुष्यों ंके सार् रह कर करनी चानहए। यनद वस्तुओं ंकी ओर आकषथण नहीं ंहोता तो उसे ननश्चय समझ लेना चानहए नक वह तीसरी ज्ञान-भूनमका-तनुमानसी को प्राप्त कर चुका है निस अवस्था में मन धागे के समान पतला हो िाता है।

कामवासना कैसे शवकशसत होती तर्ा शवनाि करती है

संस्कारों ंऔर वासनाओं ंकी क्यारी में सूमृनत के द्वारा कल्पना प्रकट होती है। नफर आसद्धि होती है। कल्पना के सार्-सार् भाव और मनोवेग आते हैं। ये दोनों ंसार्-सार् रहते हैं। नफर काम-सम्बन्धी उत्तेिना, काम- नपपासा मन में उद्वेग और िरीर में तपन उत्पन्न होती है। मन का उद्वेग और ताप सारे िरीर में फैलता है िैसे घडे के अन्दर का पानी घडे के बाहर व्याप्त हो िाता है। यनद आप बहुत सावधान रहें तो प्रारम्भ में ही कल्पना को भगा सकते हैं और इस प्रकार इस भय का ननवारण कर सकते हैं। यनद कल्पना-रूपी चोर प्रर्म द्वार में प्रवेि कर भी िाये तो िब उद्वेग पैदा हो तो दूसरे द्वार पर सावधान रहें। अब आप तपन को रोक सकते हैं। आप तीव्र कामवासना को भी इद्धन्द्रय तक िाने से सुगमतापूवथक रोक सकते हैं। उनड्डयान और कुम्भक द्वारा काम–िद्धि को ऊपर खीचं लें। बल-सनहत प्रणव का माननसक िप करें। मन को दूसरी ओर लगायें। प्रार्थना करें। ध्यान करें।

कामवासना का शनयन्त्रण

िैसे आप िरीर के हार् और पैर में खुिली का ननग्रह करते हैं, उसी प्रकार कामवासना की खुिली का ननग्रह भी नववेक, नवचार, ब्रह्म-भावना, साद्धत्त्वक हलका भोिन, उपवास, प्राणायाम, उनड्डयान-बन्ध, सत्संग आनद के द्वारा करना चानहए। आपको आध्याद्धत्यक आनन्द का अनुभव तभी हो सकता है।

शवचार तर्ा ब्रह्म-भावना

सतत नवचार और ब्रह्म-भावना के द्वारा ही मन को कामपूणथ नवचारों ंतरा् प्रवृननयाँ से यिु नकया िा सकता है। आपको न केवल कामवासनाओं ंतरा् कामप्रवृनतयों ंको दूर करना चानहए, अनपतु यौन-आकषथणों ंको भी त्यागना चानहए। नववानहत िीवन और अकी भाँनत-भाँनत की उलझनों ंतरा् बन्धनों ंसे आपको नकतने नकतने क्लेि नमलते है, तननक इस पर तो नवचार करें। मन को बार-बार आत्म-सुझाव द्वारा भली प्रकार समझायें नक यौन सुख व्यर्थ, नमथ्या, भ्रामक और दुिःखपूणथ है। मन के सामने आध्याद्भत्मक िीवन के लाभ, आनन्द, िुद्धि और ज्ञान रखने चानहए। उसे समझाना बानहए नक उच्चतम ननत्य िीवन केवल आत्मा में ही है। िब यह लगातार इन लाभदायक सुझावों ंको सुनता रहेगा तो धीरे-धीरे अपनी पुरानी आदतों ंको छोड देगा। िनैः–िनैः यौन-आकषथण भी िान्त हो िायेगा। तभी यौन-उदात्तीकरण होगा और आप ऊर्ध्थरेता बन िायेंगे।

आत्मा नपुंसक है। पंचतत्त्वों ंमें नलंग भेद नहीं ंहै। मन ही यह यौन-नवचार उत्पन्न करता है। िुकदेव में यौन-नवचार नहीं ंरा्। यह समझें नक स्त्री पंचतत्त्वों ंका संघात है। नवद्युदणुओं ंतरा् अणुओं ंका घन है। यौन-नवचार धीरे-धीरे नष्ट हो िायेगा।

िुभ शिववेक

मन में दो प्रकार की िुद्धियाँ होती हैं- एक अनुकूल या सहायक और दूसरी प्रनतकूल या नवरोधी। कामवासना नवरोधी िुद्धि है िो आपको नीचे की ओर घसीटती है। िुभ नववेक सहायक िुद्धि है िो आपको ऊपर उठा कर देवत्व प्राप्त कराता है। इसनलए ननमथल आनन्द और परब्रह्म का ज्ञान प्राप्त करने के नलए िुभ नवचार का नवकास करें। कामवासना अपने-आप नष्ट हो िायेगी।

सान्त्त्वक भोजन

लघु, साद्धत्त्वक आहार यरा् दूध, फल इत्यानद का भोिन करें। इस प्रकार कामवासना का संयम नकया िा सकता है। बुद्धिमान् पुरुषों ंका कहना है नक आहार की िुद्धि से मन की िुद्धि होती है।

उपवास

उपवास करने से िननेद्धन्द्रय में दुबथलता आती है निससे काम की उत्तेिना नष्ट होती है। कामी युवक और युवनतयों ंको यरा्वकाि उपवास करते रहना चानहए। यह बडा लाभदायक नसि होगा।

प्राणायाम

प्राणायाम द्वारा मन स्रू्ल पदार्ों ंसे सूक्ष्म की ओर िाता है। इसनलए प्राणायाम काम के उद्वेग को भली प्रकार रोकता है। िब कभी कोई दुनवथचार आपके मन को बेचैन करे, तुरन्त पद्मासन या नसिासन में बैठ िायें और प्राणायाम का अभ्यास करें। दुनवथचार आपको तुरन्त ही छोड देगा।

सत्संग और स्वाध्याय

स्वच्छन्दतावादी उपन्यास न पढ़ें। यौन नवषयों ंपर बातचीत न करें। ऐसे मनुष्ों ंका संग न करें िो रत्यात्मकता का आनन्द अनधक लूटते हैं। ऐसे बाहरी पदार्ों से िो काम-नवषय की वासनाओं ंको उकसाते हैं,

अपना मन और नेत्र दूर रखने का यर्ासम्भव प्रयत्न करें। साधु और संन्यानसयों ंका सत्संग करें। गीता, उपननषद्, योगवानसष्ठ आनद उतृकृष्ट पुस्तकें पढ़ें। मन्त्र िप और प्राणायाम का अभ्यास करें।

मन को सदा व्यि रखें

मन को पूणथ रूप से कायथ में लगाये रखें। इस प्रकार आप माननसक और िारीररक ब्रह्मचयथ में द्धस्र्त हो सकते हैं। मैं आपको कायथक्रम बताता हूँ : रात को १० बिे से सबेरे ४ बिे तक छह घण्टे सोने का समय रखें। ४ बिे से ७ बिे तक और सायंकाल ७ बिे से १० बिे तक ध्यान के नलए छह घण्टे ननयत कर लें। इसके अनतरर स्वाध्याय छह घण्टे, दरर और रोनगयों ंकी ननष्काम सेवा चार घण्टे तर्ा व्यायाम, सैर इत्यानद दो घण्टे प्रनतनदन नकया करें। ये कायथ आपके मन को सदा काम में लगाये रखेंगे।

ब्रह्मचयछ के लाभ

मन, प्राण और वीयथ तीनों ंएक ही शृंखला की कनडया हैं। ये िीवात्मा-रूपी महल के तीन स्तम्भ हैं। एक भी स्तम्भ के टूट िाने से महल टूट िायेगा। यनद बारह वषथ तक अखण्ड ब्रह्मचयथ व्रत का पालन कर लें तो नबना नकसी प्रयास के आप स्वतः ही ननननवथकल्प समानध प्राप्त कर सकते हैं। मन का संयम अपने-आप ही हो िायेगा। वीयथ में प्रबल िद्धि है। बारह वषथ तक अखण्ड ब्रह्मचयथ-पालन करने वाला व्यद्धि **"तत्त्वमशस"** तुम वही (ब्रह्म) हो-महावाक् सुनते ही ननननवथकल्प अवस्र्ा प्राप्त कर लेता है। उसका मन अतीव िुि, िद्धििाली और एकाग्र हो िाता है। उसको बार-बार श्रवण और भनन के अभ्यास की आवश्यकता नहीं ंरहती।

रि की ४० बूँदों ंसे वीयथ का एक नबन्दु बनता है। एक बार के मैर्ुन में नकतनी िद्धि व्यय होती है, वह माननसक पररश्रम के २४ घण्टे की िद्धि अर्वा िारीररक पररश्रम के तीन नदन की िद्धि के बराबर होती है। इससे आप समझ सकते हैं नक वीयथ नकतना बहुमूल्य पदार्थ है। इस िद्धि का अपव्यय न कीनिए। इसका संरक्षण कीनिए। आपको आश्चयथकारक िद्धि और सामर्थ्थ प्राप्त होगी। इसे यनद उपयोग न नकया िाये तो यह ओि-िद्धि में रूपान्तररत हो िाती है और मद्धस्तष्क में संनचत हो िाती है। पाश्चात्य नवनकत्सक इस महत्त्वपूणथ बात को नहीं ंिानते। आपके बहुत से रोगों ंका कारण वीयथक्षय ही है।

मन, कमथ और वचन से सच्चा ब्रह्मचारी अद्भुत नवचार–द्धि रखता है। वह संसार को नहला सकता है। यनद आप पूणथ ब्रह्मचयथ का नवकास कर लें तो नवचार–द्धि और धारणा–द्धि भी संवनधथत हो िाती है। यनद मनुष् बार-बार पािनवक वृनत्तयों ंके अधीन होने से इनकार कर दे और पूणथ ब्रह्मचारी रहे तो वीयथ–द्धि की गनत मद्धस्तष्क की ओर ऊपर को होने लगती है और ओि िद्धि बन कर संनचत होती है। इससे मेधा–द्धि अत्यन्त तीव्र हो िाती है। िो सावधानी से वीयथ की रक्षा करते हैं, उनकी स्मरण–द्धि वृिावस्र्ा में भी अच्छी रहती है। निस ब्रह्मचारी की वीयथ–द्धि ओि–द्धि में रूपान्तररत हो गयी है, उसे कामवासना नफर नहीं ंसतायेगी। ऐसा ब्रह्मचारी ऊर्ध्रेता कहा िाता है। हनुमान्, भीष्म, लक्ष्मण, स्वामी दयानन्द तर्ा स्वामी नववेकानन्द ऊर्ध्थरेता योगी र्े।

क्रोध कैसे उत्पन्न होता है ?

क्रोध उस मनुष् में उत्पन्न होता है िो अपने ित्रु का नचन्तन करता है। यनद आप सन्तापन को भूल भी गये हैं तो भी यह मन के भीतर सुप्तावस्र्ा में नछपा रहता है। इसका प्रभाव कुछ काल तक बना रहता है। यनद आप इसी प्रकार के ईष्याथ, द्वेष अर्वा घृणा के नवचार एक ही मनुष् के बारे में बार-बार दोहराते रहें तो उनका

प्रभाव अनधक समय तक रहता है। क्रोध-भाव को दोहराने से द्वेष की वृद्धि होती है। साधारण-सी दुभाथवना भी क्रोध को दोहराते रहने से तीव्र द्वेष में बदल िाती है।

निन नदनों ंआपको प्रात: से सायं तक बहुत-सी कनठनाइयाँ, कष्ट तऱ् नचन्ताएँ घेरे रहती हैं तो छोटी-सी बात भी मन में बडी झुंझलाहट उत्पन्न कर देती है। ऱ्ोडी-सी बात से भी मन की साम्यावस्ऱ्ा नबगड िाती है। एक भी कठोर िब्द आपको अधीर कर देता है। परन्तु िब आप नदन-भर िान्त रहते हैं तो बडी-से-बडी गाली और भारी-से-भारी आलोचना भी आप पर कोई प्रभाव नहीं ंकरती।

क्रोध रहता तो है नलंग िरीर में; नकन्तु िैसे मृनत्तका पात्र में रखा हुआ िल नछिों ंसे उसके बाहर भी छलक आता है, वैसे ही क्रोध स्ूल िरीर में फैल िाता है।

क्रोध का दुष्प्रभाव

िैसे अनग्न से िीा नपघल िाता है, अनग्न और सुहागे से सोना नपघल िाता है, ऐसे ही काम और क्रोध मन को तपा कर नपघला देते हैं। िब आप कुरुि होते हैं तो मन में हलचल पैदा होती है। इसी भाँनत मन के कुषुि हो िाने से िरीर में भी क्षोभ हो िाता है निससे समस्त स्नायु-मण्डल उनद्वग्न-सा हो िाता है। उस समय आप िुद्धिहीन हो िाते हैं।

क्रोध मद्धस्तष्क, स्नायु-तन्त्र और रुनधर को नवकृत कर देता है। िब मन में क्रोध की लहर उत्पन्न होती है तो प्राण का कम्पन तीव्र हो िाता है, आप में क्षोभ तऱ् उत्ेतिना आ िाती है, रि गरम हो िाता है तऱ् रि में बहुत से नवषैले अवयव बन िाते हैं। िब रि में उत्ेतिना आ िाती है तो उसका प्रभाव वीयथ पर भी पडता है।

एक समय एक स्त्री बडे क्रोध में भरी ऱ्ी। बचे्चे ने उसका स्तन-पान नकया और माता के रि में तीव्र नवष हो िाने के कारण बच्चा तुरन्त ही मर गया। क्रोध का ऐसा सवथनािकारी पररणाम होता है। तीन नमनट के क्रोध से भी आपके स्नायु-तन्त्र में ऐसे दोष पैदा हो सकते हैं निनकी क्षनत पूरी करने में कई सप्ताह या महीने लग िायेंगे।

क्रोध बुद्धि को आच्छानदत कर देता है। िब मन में बडी वेगवान् उर्ल-पुर्ल होती है तो एक पुस्तक के नकसी पररचे्छेद को आप साफ-साफ नहीं ंसमझ सकते। आपकी नवचार-िली ठीक और ननमथल नहीं ंरह सकती। आप िान्त नचत्त से एक पत्र भी नहीं ंनलख सकते। िैसे वायु में दीप-निखा िब नझलनमलाती रहती है तो आप पदार्ों को साफ-साफ नहीं ंदेख पाते। इसी प्रकार िब क्रोध के द्वारा बुद्धि उनद्वग्न होती है तो बुद्धि में अव्यवस्ऱ्ा हो िाती है और आप नवषयों ंको भली प्रकार देख और समझ नहीं ंसकते। बुद्धि समूपूणथ प्रकाि-रूप है।

िो मनुष् क्रोध का दास है वह भले ही स्नान कर ले, चन्दन-लेपन कर ले, बाल सँवार ले, उज्ज्वल वस्त्र पहन ले, नफर भी क्रोध के वि में रहने के कारण वह भद्दा (कुरूप) ही है। मन में यनद क्रोध हो तो वह मुँह पर झलक आता है। यनद आपको क्रोध आता है तो आप िीवन-संग्राम में हार िायेंगे। यनद आपका मन सहि ही उत्ेतिनील है तो आप अपने दैननक कतथव्य तऱ् व्यवसाय कुिलतापूवथक नहीं ंकर सकेंगे।

क्रोध को कैसे वि में शकया जाय

काम और क्रोध की वृनत्तयों ंको नाि करने के तीन उपाय हैं: (१) आप उसको इच्छा-िद्धि के द्वारा भगा सकते हैं। ननःसने्देह यह कनठन तऱ् श्रमसाध्य है। इससे आपकी िद्धि बहुत व्यय होती है। (२) प्रनतपक्ष-भावना का उपाय : नवरोधी नवचार अर्ाथत् पनवत्रता और पे्रम के नवचार बनायें। यह सुगम है। (३) ब्रह्म या सत्य में रहें। ब्रह्म

में कोई वृनत्त नहीं ंहै; ब्रह्म नननवथकार, नननवथकल्प और ननत्य ि्ु है। यह उपाय पूणथ और बलवान् है। वृनत्तयाँ नबलकुल नष्ट हो िाती हैं।

काम को िीत लें। नफर क्रोध को िीतना सुगम हो िायेगा, क्ोंनंक यह तो इसका एक अनुचर ही है।

क्रोध का संयम प्ेरेम के द्वारा करना चानहए। क्रोध एक बडी ि्द्धि है निसका व्यवहारी बुद्धि ननग्रह नहीं ं कर सकती; परन्ुतु साद्धत्त्वक बुद्धि या नववेक-नवचार से ही इसका ननग्रह नकया िा सकता है।

नकसी नदन आपका नौकर आपको ननयमानुसार दूध देना भूल िाता है और आप क्रोध करने लग िाते हैं; तब अपने मन में प्रश्न करें: "मुझे दूध का दास क्ों ंहो िाना चानहए?" तब स्वभावतिः क्रोध की लहर दब िायेगी। यनद आप नवचारपूणथ और सावधान रहेंगे तो यह अन्य अवसरों ंपर भी नहीं ंउठेगी।

क्षमा, दया, धैयथ, सहनिीलता, नवश्व-प्ेरेम, नवनम्रता, नववेक, नवचार आत्मभाव, उदासीनता, ननरनभमानता तर्ा इसी प्रकार के अन्य सद्गुणों ंसे क्रोध का िमन करना चानहए। िो मनुष् आपको हानन पहुँचाए, उसे क्षमा कर दें और उस पर अनुकम्पा करें। आक्ेषेप और कटाक्ष को आिीवाथद, भूषण और अमृत समझें, मानें और सहन करें। भत्सथना सहें। सेवा, दान तर्ा ब्रह्मभाव के द्वारा नवश्व-प्ेरेम की वृद्धि करें। यनद ऐसा न हो तो आप नकसी िान्त और पनवत्र अवस्र्ा का स्मरण करें िो एक बार मन में आने पर द्ेवेष को दबा देती है और नचत्त की द्धस्र्रता लाती है। आप िब क्रोध पर नविय प्राप्त कर लेंगे तो उद्दण्डता, अनभमान और ईष्ाथ स्वयं ही नष्ट हो िायेंगे। प्रार्थना और भद्धि से क्रोध को ननमूथल नकया िा सकता है।

प्रनतपक्ष-भावना अर्ाथत् नवरोधी नवचार लाने का अभ्यास करें। िब आपको क्रोध आये तो मन में प्ेरेम के भाव और यनद आप द्धखन्न हों ंतो आनन्द और प्रसन्नता के भाव भर लें।

बि आपको अत्यन्त क्रोध आये तो उस स्र्ान को आधे घण्टे के नलए एकदम छोड दें और बहुत दूर टहलते हुए ननकल िायें। 'ॐ िाद्धन्त' का पावन मन्त्र १०८ बार उच्चारण करें। आपका क्रोध िान्त हो िायेगा। एक और सुगम उपाय है। िब आपको क्रोध आये तो १ से ३० नमनट तक नगनती नगनें। क्रोध िान्त हो िायेगा।

बि क्रोध प्रकट होने का प्रयत्न करता है तो मौन हो िायें। चुप रहें। कठोर वाणी या गन्दी बात न ननकालें। अन्तिःकरण से ननकलने से पहले ही उसे कुचल देने का प्रयत्न करें। आपको बहुत सचेत रहना होगा। यह अकस्मात् ही ननकलने की चेष्टा करता है। क्रोध के प्रकट होने से पूवथ मन में उद्ेवेग होता है। उद्ेवेग के स्रू ल रूप; िैसे मुख का स्नायु-मण्डल नसकुड िाना, दाँतों ंका पीसना, आँखों ंका लाल हो िाना इत्यानद धारण करने से पूवथ ही आपको उसे मूल से उखाड फेंकना चानहए। आपको मन को भी दण्ड देना होगा। िब कभी मन में उद्ेवेग प्रकट हो तब ही आपको एक नदन का उपवास करके आत्म-दण्ड और आत्म-ननग्रह करना होगा।

यनद आप क्रोध को दबाने का सच्चा प्रयत्न करें तो द्ेवेष िाता रहेगा। क्रोध का भाव चले िाने के बाद भी र्ोडी अधीरता बची रहती है। इसको भी ननकाल देना चानहए। िो मनुष् दैवी िीवन नबता रहा है, उसके नलए यह बडी त्ुरुनट है।

नचडनचडापन मन की कमिोरी है। यनद आप िरा-सी बात से भी द्धखि उठते हैं तो सम्भव है नक आप बहुतों ंके सार् अन्याय कर बैठें। धैयथ, नतनतक्षा, सहनिीलता, करुणा, प्ेरेम, ब्रह्म-भाव, नारायण-भाव आनद के अभ्यास से इसको दूर कर दें।

मन की ननस्तिता ब्रह्म-प्राद्धप्त का सीधा उपाय है।

कोई मनुष् अपने आचरण में िान्त होता है। वह अपना छोटा या बडा कतथव्य सुचारु रूप से पूणथ करता है। सब कोई उसकी िाद्धन्त को देखते हैं। कोई दूसरा मनुष् अपनी वाणी और व्यवहार में िान्त होता है। उसकी ाद्धिन्त को प्रते्येक व्यद्धि देखता है; क्ोंनक वह स्वभाव से ही सबका नमत्र, मधुरभाषी, अनुकूल, सरल मुख-मण्डल और अनभवादनिील होता है। आपको तीनों ंअवस्ाओं ंमें िान्त रहना चानहए। ऐसे मनुष् में प्रे्रम का नवकास कनठन नहीं ंहोता है।

आपमें मन को सनु्तुनलत तरा अनुकूल रखने की दक्षता होनी चानहए। नेत्र मूँद लें। उस नदव्य स्रोत में गहरा गोता लगायें। उसकी सत्ता को अनुभव करें। सदा उसका स्मरण रखें। उसकी मनहमा का वणथन करें। काम करते हुए भी उसी का नाम गायें। आपको असीम आत्म-िद्धि नमलेगी। लोगों ंसे नमलने-ि ुलने से पहले प्रातिःकाल में ध्यान करें। िो हिारों ंचीिें आपको ननत्य के िीवन में उते्तिना दे सकती हैं, उनसे ऊपर उठें। तभी आप ाद्धिन्तपूवथक प्रनतनदन नवस्मयिनक कायथ कर सकते हैं।

रृणा तरा उसके शवकार

घृणा और दे्वष ये बहुत प्रबल भाव हैं। ये इतने गहरे िमे हुए हैं नक इनको ननकाल देना बहुत कनठन है। घृणा और दे्वष-भाव नितने भयंकर हैं उतना भयंकर अनभमान का भाव नहीं ंहै। िब कोई मनुष् ऊँचे पद पर पहुँच िाता है और बहुत-सा रुपया अनिथत कर लेता है तो सब लोग उसका आदर और सम्मान करने लगते हैं। पररणाम स्वरूप वह अनभमानी हो िाता है। नफर िब वह पद से नगर िाता है और उतना सारा रुपया अनिथत नहीं ं
कर सकता तो उसका अनभमान िाता रहता है। परनु्त घृणा और दे्वष इतने प्रबल भाव हैं नक इनको उखाडने के नलए सतत और दृढ़ प्रयत्न की आवश्यकता होती है।
पूवाथग्रह, असनहषु्णुता, धृष्टता, उिपन, नतरस्कार, अवहेलना-ये सब घृणा के नवकार हैं। िरा से सने्दह को भी दोहराते रहने से दे्वष पैदा हो िाता है निससे घृणा और सनहषु्णुता बढ़ती है। घृणा नवदे्वष का मृदु रूप है। यनद बारम्बार घृणा को दोहराया िाये तो वह दे्वष में बदल िाता है। बारम्बार दोहराया गया दे्वष ईष्ाथ में बदल िाता है।

पक्षपात

पक्षपात अर्वा दे्वष, पूवाथग्रह और सनहषु्णुता ये तीन अवांछनीय मनोवृनत्तयाँ हैं। पक्षपात से मन कठोर हो िाता है। मन ठीक-ठीक नवचार नहीं ंकर सकता। यह एक प्रकार का माननसक फोडा है। यनद मुसलमानों ंके नवरुि आपको पक्षपात है तो कुरान में नदये हुए मुहम्मद साहब के उपदेिों ंको आप ठीक-ठीक नहीं ंसमझ सकते; क्ोंनक पक्षपात ने मन को कठोर बना नदया है, इसनलए कुरान के आध्याद्धत्मक उपदेिों ंको ग्रहण करने के नलए मन और मद्धस्तष्क एकरस हो कर स्पन्द नहीं ंकरेंगे।

पक्षपात भौनतक िरीर पर खुले हुए फोडे के समान है निससे मनुष् की इच्छा-िद्धि क्षीण होती रहती है। अपना मत ननश्चय करने में उदार बनें। प्रते्येक दिथन-िास्त्र और धानमथक नवचार को स्ान दें। नकसी िानत-नविेष का धमथ उसके उनद्वकास की अवस्ा, िन-स्वभाव और सामथ्यथ के अनुपात के अनुकूल होता है। आयथसमाि, ब्रह्मसमाि, नवीन नवचार-िैली-आन्दोलन, रहस्यवाद और अनेक प्रकार के मतमतान्तर अपनी-अपनी उपयुि सेवा करते हैं। पक्षपात तो केवल अनववेकपूणथ अरुनच है। इसको प्रयत्न और सम्यक् नवचार द्वारा दूर करना चानहए।

असशहषुणुता

संकुनचत नवश्वास, धारणा और नवचारों ्से उत्पन्न हुई संकीणथ-हृदयता को असनहषुणुता कहते हैं। अपने मत द्धरूर करने में आपको ननतान्त अनासि और गम्भीर होना चानहए। असनहषुणुता से आपका मन अत्यनधक कुषिु हो ायेगा। आपका मत दूसरे के मत के सवथर्ा नवरुि भले ही हो तो भी आपमें पूरी सहनिीलता होनी चानहए। सहनिील मनुष् का हृदय नविाल होता है। इससे स्ायी िाद्धन्त नमलती है।

उद्दण्डता

उद्दण्डता उित स्वभाव है। यह दूसरों ्के सार् घृणा का व्यवहार करने से प्रकट होने वाली अहंकारपूणथ स्वयं-माननता है। यह पिानवक उितपन है। यह बडी ननष्ठुर और अनादरपूणथ प्रकृनत है। सामानिक व्यवहार के प्रनतनष्ठत ननयमों ्का उल्लंघन उद्दण्ड व्यवहार से होता है। उद्दण्ड मनुष् के अन्दर दूसरों ्की भावनाओं ्के प्रनत आदर नहीं ्होता। वह ऐसे िब्दों ्या कायों से, निनसे दूसरों ्पर नविय या घृणा प्रकट होती है अन्य मनुष्ों ्पर व्यद्धिगत कटाक्ष करता रहता है।

रृणा का उनूमूलन कैसे करें

बि तक मन में द्वेष, पक्षपात, ईष्ाथ, क्रोध, कामानदक रहते हैं, तब तक समानध नहीं ्हो सकती। इन दोषों ्को प्रेम, नतनतक्षा, ब्रह्म-भावना, आत्म-दृनष्ट, सत्संग, नवचारानद से दूर करें। पृथ्वी में प्रेम सबसे बडी िद्धि है, करुणा सबसे उच्चतम साधना है। दूसरों ्को दुिःख मत दें और दुिःद्धखयों ्का दुिःख ननवारण करें; यह करुणा है।

िो दूसरों ्से प्रेम करता है, वह स्वयं अपने से ही प्रेम करता है। िो नकसी ननधथन व्यद्धि को नवपनत्त के समय पाँच रुपये दान देता है, वह अपने-आपको ही देता है; क्ोंनक संसार में उसके अपने अनतररि कोई अन्य वसुतु नहीं ्है। िो नकसी को चोट पहुंचाता है, घृणा करता है और गाली देता है, वह स्वयं अपने को ही चोट पहुँचाता, घृणा करता और गाली देता है। वह अपनी कब्र खोदता है।

मन में िब कभी प्रनतिोध और घृणा के नवचार उठें तो िरीर और वाणी का संयम करें। नकसी से बुरे और कठोर िब्द मत कहें, नकसी की ननन्दा मत करें, नकसी को कष्ट पहुँचाने का प्रयत्न मत करें। यनद कुछ महीनों ् तक आप यह अभ्यास करने में सफल हो गये तो प्रनतिोध लेने के नवचार बाहर प्रकट होने का अवसर न पा कर आप ही नष्ट हो ायेंगे। िरीर और वाणी को वि में नकये नबना प्रारम्भ से ही ऐसे भावों ्को वि में करना बहुत कनठन है।

सतत नवचार और इनके भाव प्रेम, दया और करुणा के नवकास द्वारा घृणा तर्ा ईष्ाथ-ये दोनों ्प्रबल कुवृनत्तयाँ दूर की ा सकती हैं।

बि कभी घृणा प्रकट होती है तो प्रेम के मधुर पररणाम का नवचार करें। धीरे-धीरे घृणा ाती रहेगी। प्रेम के अनेक फल हैं। वह मनुष् सुख से सोता है, सुख से रहता है। बुरे स्वप्न नहीं ्देखता। वह समान रूप से नप्रय होता है। वह अवमानवीय िीवों ्को भी नप्रय होता है। देव उसकी रक्षा करते हैं। अनग्न, नवष और तलवार उसके ननकट नहीं ्ा सकते। वह िीघ्र ही मन को एकाग्र कर लेता है। उसका भाव िान्त रहता है। वह िाद्धन्तपूवथक मरता है और ब्रह्मलोक को ाता है।

नकसी को ितुरु मत बनायें। नकसी मनुष् ने यनद आपका कोई अपराध कर भी नदया है, तो उसकी ओर तुिरुता का भाव मत रखें। िब आप अपने ितुरु की सोच रहे हैं, यनद अपने प्रनत नकये गये उसके अपराधों ंका स्मरण करें तो मन में घृणा उत्पन्न होगी। आपको उसके प्रनत बारम्बार प्रेम का नचन्तन करके घृणा-भाव को ननकालना होगा। बार-बार कल्पना करें नक वह आपका घननष्ठ नमत्र है और प्रयत्नपूवथक उसके प्रनत प्रेम की प्रबल धारा उठायें। अपने मन में प्रेममयी तरा अन्य भावनाएँ लायें निससे प्रेम तरा कोमलता उत्पन्न होती है। 'भि-नविय' में नलखी हुई पवहारी बाबा की और 'गीत-गोनवन्द' के रचनयता पद्धण्डत ियदेव की करा याद रखें निसने उसके हार् काट देने वाले ितुरु िाकू के नलए भगवान् से मोक्ष की हानदथक प्रार्थना की री।

निस मनुष् से द्वेष करते हैं, उसकी सेवा करें। िो आपके पास हो, उसमें उसको भी सहभागी बनायें। उसको कुछ चीिी खाने को दें। उसकी टाँगें दबायें। सच्चे हृदय से प्रणाम करें। तुम्हारा द्वेष कम हो िायेगा। वह भी तुमसे प्रेम करने लगेगा। उपहार और मधुर िब्दों ंसे उित मनुष् भी वि में हो िाते हैं। इनके द्वारा मनुष् निर झुकाते हैं।

यनद अननच्छापूवथक नकसी दररि को आप कम्बल दें तो यह दान नहीं ंहै। यह स्वार्थयुि कमथ है। मन अवसर आने पर कम्बल लौटा लेने का रास्ता देखता रहेगा। िो-कुछ भी दें, स्वेच्छापूवथक दें।

समदृशष्ट की साधना

सबमें नवरािमान प्रभु की सेवा करें। सबसे प्रेम करें। सबका आदर करें। नवश्व-प्रेम की वृद्धि करें। आत्म-भावना तरा आत्म-दृनष्ट रखें। सम-दृनष्ट रखें। इससे सब प्रकार की घृणा दूर हो िायेगी। सम-दृनष्ट की साधना बडी कनठन है; परन्तु ननरन्तर और प्रबल प्रयत्न करते रहने से अन्ततिः सफलता अवश्य ही नमलती है।

िो साधक भेद की रेखा को नमटाना चाहते हैं उन्हें तुरन्त ही एक अत्यन्त नप्रय मनुष् के नलए, उसके पीछे एक उदासीन मनुष् के नलए और नफर एक ितुरु के नलए प्रेम का नवकास करना चानहए। और, ऐसा करने में उनको हृदय के प्रत्येक नवभाग को कोमल तरा स्नेहमय बनाना चानहए; और तत्पश्चात् तत्काल ही ध्यान का अभ्यास भी करना चानहए।

आपको चोर और ईमानदार मनुष् में अन्तर िानना चानहए; परन्तु चोर से प्रेम करना चानहए। संसारी मनुष् चोर से द्वेष करता है, उसे अपने से बाहर देखता है और सोचता है नक वह चोर से नबलकुल अलग है; नकन्तु ज्ञानी चोर को अपनी ही आत्मा समझता है और उसे अपने ही अन्दर देखता है।

िब आप याद करेंगे नक उिो का बबथर अर्वा दुष्ट भनवष् का सन्त है और उसमें सम्भानवत रूप में सारे नदव्य गुण नवद्यमान हैं तो आप प्रत्येक मनुष् को प्रेम करने लगेंगे। िनैःिनैः घृणा िाती रहेगी। केवल समय आने पर ही दुष्ट अर्वा बबथर अपना साद्धत्त्वक नवकास करेगा।

िो साधक प्रेम, दया, सहानुभूनत और समता-इन चारों ंनदव्य गुणों ंके नवकास से प्रारम्भ करना चाहता है, उसे सारी बाधाओं ंको अलग करके सबसे पहले ध्यान का अभ्यास करके लघु आहार करना चानहए। नफर भोिन के पीछे के आलस्य को भगा कर एकान्त-स्थान में एक सुव्यवद्धस्त आसन पर सुखपूवथक बैठ कर द्वेष के दोषों ं और सनहष्णुता तरा क्षमा के अनेकानेक लाभों ंपर नवचार करना चानहए। ननिःसन्देह इस अभ्यास से घृणा िनैःिनैः दूर हो कर सहनिीलता बढ़ िायेगी। निस मनुष् का मन द्वेष से अभ्याक्रनमत होता है और िो स्वयं द्वेष से

परानित होता है, वह प्रानणयों ंकी हत्या करता है। धैयथ सवोत्तम गुण है। क्षमा से बढ़ कर कुछ नहीं ंहै। िो मनुष् क्षमा में दृढ़ है, वह अवश्य ही नदव्य पुरुष है।

इस सापेक्ष िगत् में न तो कोई वसु्तु सवथर्ा ननदोष है और न सवथर्ा सदोष ही। ननदोष तर्ा सदोष- ये दोनों ंभाव मन के बनाये हुए हैं। प्रते्येक व्यद्धि अपनी-अपनी दृनष्ट के अनुसार ठीक होता है। प्रते्येक वसु्तु में सच्चाई का अंहिोता है। प्रते्येक मनुष् के िीवन में उसका दृनष्टकोण ही ननधाथरी तत्त्व होता है। िब ज्ञान से बुद्धि आलोनकत होती है तो दृनष्टकोण नविाल और पूणथ हो िाता है। िब बुद्धि अज्ञान से कलुनषत हो िाती है तब दृनष्टकोण भी संकुनचत, पररद्धच्छन्न और एकपक्षी होता है। नविाल दृनष्टकोण हृदय की उदारता का सूचक है। नविाल दृनष्टकोण का मनुष् सने्देह, पक्षपात, पूवथधारणा और अनेक प्रकार की असनहषु्णुताओं ंसे मुि होता है। नवदेि यात्रा, अचे्छे कुल में िन्म, सद्ग्रन्ों ंका स्वाध्याय, लोक-सेवा, नवनवध अनुभव, ध्यान आनद से नविाल दृनष्टकोण बनता है। नविाल दृनष्ट वाला मनुष् वसु्तुओं ंको उनके पूणथ रूप और उपयुि सम्बन्ध में देखता है। नविाल दृनष्ट सामंिस्य और मैत्री बनाती है; संकुनचत दृनष्ट वैमनस्य और मतभेद बनाती है।

प्रत्यािा तर्ा धनलोलुपता

अतीत की सृ्मनत और भनवष् की प्रत्यािा करना- ये दोनों ंप्रकार की कुवृनत्तयाँ हैं िो भले ही संसारी मनुष् के नलए लाभदायक हों;ं परनु्तु आध्याद्धत्मक साधना में हाननकर हैं। प्रत्यािा और पररग्रह मन में दो वृनत्तयाँ होती हैं िो आपको नभखाररयों ंका भी नभखारी बनाती हैं और आपकी इच्छा–िद्धि को नष्ट कर देती हैं। नकसी वसु्तु के नलए पहले से आिा मत बाँधें। प्रत्यािा मन को पुष्ट (मोटा) बनाती है और मन में अिाद्धन्त पैदा करती है। नकसी वसु्तु की आिा मत करें। आिा मन में उपद्रव पैदा करती है। यनद आिा नहीं ंकरेंगे तो ननरािा नहीं ंहोना पडेगा। प्रते्येक सांसाररक बात को भुला दें। यनद नवलानसता देने वाली कोई वसु्तु नमलती भी है तो उसे तुरन्त ही छोड दें। इससे आप िद्धिवान् बनेंगे। केवल परमात्मा को ही याद रखें। इस संसार की अन्य प्रते्येक वसु्तु स्वप्नवत् है। यह संसार एक दीघथ स्वप्न है।

लोलुपता को सन्तोष, सत्यननष्ठा, उदासीनता और दान के द्वारा नष्ट करें। आिाएँ मत बनायें। आपको कभी ननरािा नहीं ंहोना पडेगा। सन्तोष मोक्ष-राज्य के चार प्रहररयों ंमें से एक है। सन्तोषी मन सदा तृप्त रहता है। यनद आपको सन्तोष होगा तो दूसरे तीन प्रहरी अर्ाथत् िम, नवचार तर्ा सत्संग भी आपको सहायता करेंगे। इन चारों ंकी सहायता से आप िीवन के चरम लक्ष्य ब्रह्मज्ञान को प्राप्त कर सकते हैं।

मोह तर्ा उसका उपचार

माया का एक दृढ़ िस्त्र मोह है। मेरे नमत्र! ऐसा न कहें नक कामना मोह से अनधक िद्धििानलनी है। मोह कामना से कहीं ंअनधक िद्धििाली तर्ा खतरनाक है। यह तीन काम करता है। यह ममत्व यर्ा मेरी पत्नी, मेरा पुत्र, मेरा घर इत्यानद का भाव उत्पन्न करता है। यह िरीर पत्नी, पुत्रानद के नलए अन्ध पे्रम तर्ा आसद्धि उत्पन्न करता है। यह संसार के नश्वर पदार्ों में ननत्य-बुद्धि उत्पन्न करता है नक ये सदा ही द्धस्थर रहेंगे और देहात्म-बुद्धि बनाता है नक िरीर ही आत्मा है। यह नमथ्या पदार्थ को सत्य-सा भासता हुआ नदखाता है। मोह के कारण ही संसार सत्य प्रतीत होता है। मोह के भ्रामक प्रभाव के कारण ही देह को भूल से आत्मा मान नलया िाता है।

यद्यनप आप भलीभाँनत िानते हैं नक स्त्री का िरीर मांस, हड्डी, त्वचा, बाल, रि, मूत्र और मल का बना हुआ है; नफर भी आप कामान्ध हो कर रूप को पकडते हैं। क्ों?ं राग, मोह, संस्कार, वासना और कल्पना के बल से। िब नवचार और नववेक द्वारा वासना-क्षय हो िाता है तो आपको स्त्री की ओर आसद्धि नहीं ंरहती।

बाह्य त्याग (संन्यास) के द्वारा स्त्री, धन और सन्तान के अनधक मोह से छुटकारा पा लें। यनद बाहर पररवतथन होगा तो भीतर भी अवश्य बदलेगा। बाहरी त्याग अत्यन्त आवश्यक है।

दीप्त प्रकाि, सौन्दयथ, बुद्धि, भाँनत-भाँनत के रंग और रोचक िब्दों ंसे मन आकृष्ट होता है। इन तुच्छ वसुतुओं ंसे भ्रम में मत पडें। अन्दर खोि करें नक इन सब वसुतुओं ंका अनधष्ठान अर्वा पृष्ठभूनम क्ा है? मन और इस प्रतीनतमात्र नवषयि–गत् के पीछे एक सारतत्त्व है िो पररपूणथ और आत्म ननभथर है। वह तत्त्व उपननषदों ंका ब्रह्म है। वही तत्त्व, प्यारे पाठको ! आप हैं। "तत्त्वमनस" तुम वही हो।

अशभमान

दूसरों ंसे अपने अचे्छेपन और बडेपन का भाव अनभमान है। यह नौ प्रकार का होता है : (१) िारीररक बलिाली होने से; (२) बुद्धिगत-बुद्धिमान् होने से; (३) नीनतगत-सदाचारी होने से; (४) योगि–ननत-ऋद्धि, नसद्धि प्राप्त होने से; (५) आद्धत्मक-आध्याद्धत्मकता होने से; (६) कुलानभभान-उत्तम कुल में िन्म होने से; (७) सम्पदानभमान-धन, िानादक होने से; (८) रूपानभमान-सुन्दर रूप होने से; तर्ा (९) रािमदानभमान राज्य-सम्पदा होने से। इन सब प्रकार के अनभमानों ंको पूणथतया परानित कर देना चानहए।

नववेक द्वारा अनभमान से मुि हो िायें। प्रते्येक वसुतु अननत्य है। आप व्यर्थ ही अनभमान से क्ों ंफूले हुए हैं?

अनभमान का एक रूप मद है। इसके कारण मनुष् अपने को बहुत बडा मान लेता है और इसनलए दूसरों ंसे अपने नलए नविेष आदर-मान चाहता है।

व्यर्थ का नदखावा दपथ है। यह व्यर्थ का प्रदिथन है। व्यद्धि के पास कुछ भी न हो तो भी वह फूल कर बडा बन िाता है। अनभमानी मनुष् के पास कुछ तो होता है; परनु्तु दपथ में कुछ होता ही नहीं।ं अनभमान और दपथ में यही अन्तर है। दपथ अनतरंनित अनभमान है।

यह व्यद्धि िो नहीं ंहै वह होने का ढोंग है। यह स्वाँग भरना है। यह अपने असली स्वरूप को नछपाना है। गीता में िो सद्गुण अदद्धम्भत्व बताया है उसका यह नबलकुल नवपरीत है। दम्भी व्यद्धि दूसरों ंसे धन, सम्मान, नाम या अन्य वसुतु प्राप्त करने के नलए वह िो नहीं ंहै वह होने का बहाना करता है।

दम्भ, असत्य, धोखा, लोभ और तृष्णा बहुत ननकट के सम्बन्धी हैं। लोभ से दम्भ उत्पन्न होता है। दम्भ से असत्य पैदा होता है। दम्भ और असत्य दोनों ंएक-सार् रहते हैं। तृष्णा (माता), लोभ (नपता) और असत्य पुत्र के नबना दम्भ क्षण-भर भी नहीं ंरह सकता। िब सांसाररक पदार्ों के नलए लालसा होती है तो पैसे का लोभ आता है। नबना पैसे के नकसी भी चीि का उपभोग नहीं ंनकया िा सकता। पैसे की आवश्यकता को पूरा करने के नलए मनुष्ों ंको नमथ्याचार करना पडता, झूठ बोलना पडता और दूसरों ंको धोखा देना पडता है। इन सबका कारण भोग-लालसा है। लोभ और घृणा के पुराने सार्ी कपटपूणथ कूटनीनत तर्ा असत्यता हैं।

आत्म-ननभथरता मन का एक नवनचत्र नवकार है। यह नमथ्यानभमान, अहंकार और दम्भ का कायथ है। यह रािगुणी वृनत्त है। इसे सम्यक् नवचार और नवनम्रता की प्रनतपक्ष-भावना द्वारा दूर करें।

असूया तर्ा उसके शवकार

ननरन्तर रहने वाले क्रोध का एक रूप असूया है। ईष्ाथ एक प्रकार की असूया है। ननन्दा करना, दोषारोपण करना, नकल उतारना, उपहास करना, अनुनचत नछिान्वेषण करना, ननन्दा करना, नुकताचीनी करना, बदनाम करना, चुगलखोरी, नपुिनता, गप लडाना, अवगुण ढूँढ़ना, पररवाद-ये सब बातें सूक्ष्म अर्वा स्रू्ल असूया, िो घृणा के अनेक प्रकारों ंमें से एक है, से ननकलने लगती हैं। इनसे मनुष् की सम्यक् माननसक संस्रूकृनत के अभाव तर्ा उसकी तुच्छता का पता लगता है। इन बातों ंको दूर कर देना चानहए।

कटाक्ष व्ंयंगात्मक ननन्दा है। नचढ़ाना या छेडना हूँसी के द्वारा सताना या कुषि करना है। ताना मारना नाक चढ़ाने-िैसी मुख-मुिा से नतरस्कार प्रदनिथत करना है। अप्रसन्नता व्यि करना क्रोध के समय भौंहें चढ़ाने-िैसा है। नकल उतारना उपहास में द्भखल्ली उडाना या हूँसी में नकल करना है। उपहास नकसी को हूँसी का नवषय बनाने की वाद्भिदग्धता है। यह नठठोली अर्वा स्वाूँग है। यह नकसी को आमोद-प्रमोद का नवषय बनाता है। उपहास एक चतुर अपमान है। िब आप और लोगों ंकी संगनत में रहें तो इनसे आपको बचना चानहए; क्ोंनक इन सबसे नमत्रों ंमें मनमुटाव हो िाता है। भावनाएूँ उत्तेनित होती हैं और नवद्वेष-भाव उत्पन्न होता है। मृदु िब्द और अकाट्य युद्भि से बात करनी चानहए। यनद कठोर िब्द होंगें तो इससे ितुरुता हो िाती है। एक भी कठोर िब्द से वषों की नमत्रता क्षण-मात्र में टूट िाती है। िब्द अर्वा ध्वनन में बडी िद्भि होती है। यह िब्द-ब्रह्म है। यह िद्भि है।

न्यायपूणथ समालोचना और ननन्दा में बडा भेद है। न्यायपूणथ समालोचना ननन्दा नहीं ंहै। यह अनुज्ञेय है। यह अननवायथ भी है। आप इससे तभी बच सकते हैं िब आप अकेले सुदूर नहमालय की गुफा में बन्द हो िायें। यनद आपको मनुष् से घृणा नहीं ंहै, यनद आप उससे द्वेष नहीं ंकरते, यनद आप अपने नमत्र से बातचीत में उस मनुष् के गुण और दोष बताते हैं नक 'अमुक व्यद्भि खरा है, प्रेम करने वाला, दयालु, नम्र तर्ा सत्यवादी है; परन्तु वह बडा नचडनचडा और तीव्र स्वभाव का है।' तो यद्यनप आपने उस मनुष् के दोष भी बताये; परन्तु यह ननन्दा नहीं ंहै। ननन्दा करने में आप नकसी मनुष् को बदनाम करते हैं। आप केवल उसके दोष ही बताते हैं। आप उसकी कमिोररयों ं को बढ़ा कर कहते हैं। नबना पूछे ही अपनी इच्छा से प्रत्येक व्यद्भि से यह दोष प्रकट कर देते हैं। अपने हृदय के अन्दर आप उस पुरुष से द्वेष करते हैं। आप उसको बदनाम करना चाहते हैं।

यनद आप सदा दूसरों ंके दोष देखेंगे तो बार-बार उनका नवचार करते-करते आप वास्तव में उन दोषों ंको आत्मसात् कर लेंगे। सदा मनुष् की अच्छी बातें देखनी चानहए। उसके दोषों ंको भुला दें। इससे घृणा दूर हो िायेगी और प्रेम की वृद्भि होगी।

नछिान्वेषण, नुकताचीनी तर्ा चुगलखोरी अवगुण हैं। अवगुण तर्ा दुबथलताएूँ, दो पृर्क् नविेषताएूँ हैं। क्रोध अवगुण है। चाय पीने की आदत दुबथलता है। अनधक भावुक होना एक दुबथलता है। अवगुण तर्ा दुबथलताएूँ दोनों ंको ही उनके नवरोधी गुणों ंको प्रनतस्र्ानपत कर दूर करना चानहए।

ईष्याछ को नष्ट करने के उपाय

ईष्ा को नष्ट करने के तीन उपाय हैं :

(१) नमथ्या-दृनष्ट (दोष-दृनष्ट): "भोग, धन और नवलास के रनहत सारा संसार भ्रमपूणथ है। मैं दूसरे से ईष्ाथ करके क्ा लाभ पाऊूँगा ?" िब कोई इस प्रकार गम्भीरता से नदन में कई बार सोचता है तो ईष्ाथ की वृनत्त िनैः-िनैः मर िाती है। यह वृनत्त सारे क्लेिों ंकी िड है। यह अत्यन्त दृढ़ता से बिमूल है।

(२) भ्रातृ-भाव : आप अपने घननष्ठ नमत्र और नप्रय भाई से ईष्ाथ नहीं ंकरते। आपके नमत्र और भाई के सार् एक ही बन गये हैं। अन्दर से आपको मालूम होता है नक िो-कुछ इनका है, वह आपका भी है। इसी प्रकार की भावना सबके सार् रखनी होगी। प्रतेय्क व्यद्धि को अपने भाई या नमत्र के समान पे्रम करना चानहए। तभी आपकी ईष्ाथ-वृनत्त नहीं ंरहेगी।

(३) यह नवकनसत अवस्ा है। मन में यह सूत्र बार-बार दोहरायें, 'मैं ही यह सब हूँ, मैं सवथस्व हूँ।' अपने को सब कहीं ंअनुभव करें। भावना करें नक आपकी अपनी आत्मा के अनतररि कहीं ंऔर कुछ है ही नहीं।ं इस आत्म-भाव को धारण करने से धीरे-धीरे ईष्ाथ दूर हो िायेगी। आपको सदा इस नवचार को प्रश्रय देना चानहए-"वासुदेविः सवथनमनत" (वासुदेव सब-कुछ है)। 'वासुदेव' का अर्थ है सवथव्यापी। आपको अनन्त आनन्द नमलेगा निसका वणथन नहीं ंहो सकता। यह केवल अनुभव से ही िाना िा सकता है।

यनद आप नकसी कुते्त के सामने एक बडा दपथण और एक रोटी रख दें, तो कुत्ता दपथण में अपना प्रनतनबम्ब देख कर तत्काल भौंकता है। वह मूखथताविे यह समझता है नक वहाँ दूसरा कुत्ता है। इसी प्रकार मनुष् अपने ही मन-मुकुर में सारे मनुष्ों ंमें अपना ही प्रनतनबम्ब देखता है; परनु्त कुते्त के समान मूखथता से समझता है नक वे उससे नभन्न हैं और घृणा तर्ा दे्वष से उनसे झगडा करता है।

भय-एक भीषण रोग

भय एक बडा मानव-अनभिाप है। यह एक गुण हीन अभावात्मक नवचार है। यह आपका सबसे बुरा ितु्रु है। उसके अनेक रूप हैं यर्ा रोग-भय, मृतु्य-भय, लोक-समालोचना का भय, धन-सम्पनत्त-नविाि का भय आनद। भय के कारण अनेक िीवनों ंपर पाला पड िाता है, लोग दुिःखी हो िाते हैं और अपने प्रयत्न में असफल हो िाते हैं।

कुछ लोग वीरता से रणभूनम में गोले या गोनलयों ंका सामना कर सकते हैं; परनु्त िन-समाि की आलोचना तर्ा लोकमत से भयभीत रहते हैं। कुछ लोग ननभथय हो कर वन में चीते का सामना कर सकते हैं; परनु्त वह िल्य नचनकत्सक (सिथन) की छुरी और अस्त्रों ंसे िरते हैं। आपको सब प्रकार के भय से रनहत होना चानहए।

मन में कल्पना–िद्धि भय को तीव्र करती है। मोह तर्ा अनवद्यािननत स्थूल भौनतक िरीर की ममता के कारण भय होता है। देहाध्यास (िरीर का मोह) सारे भयों ंका कारण है। िो योग या ज्ञान के द्वारा स्थूल िरीर (अन्नमय कोि) को फेंक सकता है, वह भय से मुि हो िाता है। निसने भय को िीत नलया है, उसने सब-कुछ िीत नलया है। उसे मन पर प्रभुत्व प्राप्त हो गया है।

कुछ व्यद्धि िब अनधक मात्रा में रि देखते हैं तो अचेत हो िाते हैं। कोई-कोई िाक्टरी चीरा-फाडी की नक्रया को नहीं ंदेख सकते हैं। वे अचेत हो िाते हैं। ये सब माननसक दुबथलताएँ हैं। कई मनुष् ऐसे हैं नक यनद उनके ननकट ही टट्टी या उल्टी की हुई पडी हो तो वे भोिन नहीं ंकर सकते। सभी माननसक दुबथलताओं ंको नवचार द्वारा दूर • करना चानहए।

िान्ति मन का अर्थ है साहस। आप नबना नकसी भय के आध्याद्धत्मक पर् की कनठनाइयों ंऔर परीक्षाओं ं का सामना कर सकते हैं। इसकी िड आत्मा की एकता पहचानने में है। दैवी सम्पदाओं ंमें से एक 'अभय' है। सवथदा सोचें नक आप आत्मा हैं। िनैिः–िनैिः आपमें अत्यनधक साहस की वृद्धि होगी। आप अमर आत्मा हैं- एक यही नवचार सब प्रकार के भयों ंको भली-भाँनत नष्ट कर सकता है। भय के इस घातक रोग के नलए एक यही रामबाण

औषनध है। यही नवचार रखें नक आप अमृत अभय आत्मा हैं। िनैः–नैः भय दूर हो िायेगा। सत्तात्मक सद्गुण 'साहस' का नवकास करें। भय िनैः–नैः अदृश्य हो िायेगा।

सोंयि

संयि मन को बडा कष्ट देने वाला है। इसका अपना ही माननसक िगत् होता है। यह मनुष् को बारम्बार दुिःख देता है। सने्देहों ंका अन्त नहीं ंहोता। यनद एक संयि दूर कर नदया िाये तो दूसरा इसकी िगह ले लेने को तैयार खडा रहता है। यह मन का धोखा है। संयि की ग्रद्धन्यों ंको ज्ञान की तलवार से काट दें। उसको िान लें िो सने्देह करता है। उसके अद्धस्तत्व में नकसी को संयि नहीं ंहोता। यनद ब्रह्म-ज्ञान के द्वारा सारे संयि दूर हो िायें तो मन का नाि हो िायेगा।

नचन्ता और भय के नवचार हमारे अन्दर भयानक िद्धियाँ हैं। ये िीवन-स्रोत को नवषैला कर देते हैं और रीर के िद्धि, बल, सामथ्यथ और मेल को नष्ट कर देंगे। िब नक प्रसन्नता, आनन्द और साहस के नवचार इन द्धियों ंकी पुनष्ट और वृद्धि करते हैं और माननसक बल को भी बढ़ाते हैं। सदा प्रसन्न रहें, मुस्कराते रहें, हूँसते रहें।

कुवृनत्तयाँ ही आपकी वास्तनवक ितुरु हैं - उनें् नष्ट करें आपका सच्चा ितुरु कौन है? बुरी वृनत्तयों ंके कारण अपना ही अन्तिःकरण आपका ितुरु है। िो मन आसद्धि, भ्रम, घृणा, काम-लालसा, स्वार्थ और क्रोध से रनहत है उसे ही ननरन्तर ईश्वर की सूमृनत रह सकती है। यनद दपथण मैला हो तो आपको अपना मुख साफ-साफ नहीं ंनदख सकता। इसी प्रकार यनद काम-क्रोधानदक ष्ठिनवकारों ंके इकट्ठा हो िाने से मन-रूपी मुकुर मैला हो िाये तो मन में ब्रह्म की छाया नहीं ंनदखायी देती। िब यह पूणथतिः ननमथल कर नदया िाये और साद्धत्त्वक बना नदया िाये तो यह ब्रह्म का प्रनतनबम्ब ग्रहण करने योग्य (योगयिु) बन िाता है।

आप कमथयोग, भद्धियोग तर्ा रियोग में से चाहे निस योग-मागथ का अभ्यास करें आपको राग, द्वेष, अहंकारानद रनहत होना तर्ा इद्धन्द्रय-दमन करना चानहए। नचत्त–िुद्धि और यम-ननयम का पालन सारे योगों ंमें समान रूप से आवश्यक है। यनद मनुष् में आत्म-संयम नहीं ंहै और वह अत्यन्त स्वार्ी है तो वह कमथयोग में क्ा कर सकता है? यनद आप प्रते्येक वसु्तु अपने ही नलए चाहते हैं तो आप दूसरे के नलए कोई पदार्थ कैसे त्याग सकते हैं। आप नवश्व के सार् पे्रम, ननिःस्वार्थ सेवा और दान के द्वारा ही नमल सकते हैं। क

साधकों ंको इन उपयुथि सभी कुवृनत्तयों ंको त्यागना चानहए। ये कुवृनत्तयाँ आसुरी सम्पद् कहलाती हैं। यनद आपका मन कुषि है तो चाहे आप नगर में रहें या नहमालय की गुफा में, आपके नलए एक ही बात है; क्ोंनक बि आप अपने को सुदूर एकाकी गुफा में भी ले िायेंगे तो भी आप अपने नवचार तो अपने सार् ही ले िायेंगे। मन वैसे ही बना रहेगा। िाद्धन्त तो अन्दर से आती है। नचडनचडापन, क्रोध, अधैयथ, प्रनतोध, सने्देह, पूवाथग्रह, मनोमानलन्य, द्वेष, असनहषु्णुता, अिाद्धन्त, उदासी, उते्तेनित भावना-इन सबको आध्याद्धत्मक साधना, साद्धत्वक गुणों ं के नवकास, ओंकार के ध्यान और सतत नवचार द्वारा पूणथतिः दूर करना चानहए। तभी िाद्धन्त प्राप्त हो सकती है। करुणा, सत्य, अनहंसा, ब्रह्मचयथ, दया आनद दैवी सम्पद् की वृद्धि करने से आसुरी सम्पद् पर नविय प्राप्त होती है।

प्रशतपक्ष-भावना

यह प्रनतपक्ष-भावना का उपाय है। िब काम-वासना का नवचार आये तो मन में पनवत्रता का नवचार प्रनतस्र्ानपत करें; गीता और उपननषद् पढ़ें, हारमोननयम पर भगवान् का भिन गायें, इससे अपनवत्र नवचार भाग िायेंगे। िब घृणा आये तो पे्रम के नवचार प्रनतस्र्ानपत करें। निससे घृणा करते हों,ं उसके सद्गुणों ंका नवचार करें;

उसके कृपापूणथ कायों को बार-बार याद करें। उसे नमठाई, फल और दूध दें। उसससे मधुर िब्द कहें। उसके सार् हूँसें। उसके चरण दबायें। िब उसकी सेवा करें तो उसे भगवान् िंकर या नारायण का रूप समझें। घृणा िाती रहेगी। िब भय हो तो साहस के नवचार मन में भरें। िब नचडनचडापन आये तो धैयथ, सन्तोष और आत्म-संयम का ध्यान करें। बुरे नवचार स्वयं क्षीण हो िायेंगे। यनद आपका मन उदास हो तो मन में आनन्द और हषथ का नवचार भर लें। यनद रोगी हों ंतो स्वास्थ्य, बल, िद्धि तर्ा तिेद्धस्वता के नवचारों ंसे मन को भर लें। इसका अभ्यास कीनिए। इसी में आपके नलए बडा भण्डार भरा हुआ है।

प्रत्येक नवचार या भावना या अनभवृनत्त िरीर के प्रत्येक किोाणु में एक बलवान् स्पन्दन उत्पन्न करती है और उसका दृढ़ अंक छोडती है। यनद आपको उसके नवपक्षी नवचार बनाने की रीनत मालूम हो, तभी आप िाद्धन्त और िद्धि से पूणथ आनन्दमय एकरस िीवन व्यतीत कर सकते हैं। प्रेम-भाव तुरन्त ही घृणा के नवचार को ननष्प्रभाव कर देता है। साहस का भाव तुरन्त ही भयपूणथ नवचार का प्रनतकार कर देता है।

नवचार से ही संसार बनता है। इसी से व्यद्धि का अद्धस्तत्व होता है। नवचार कामना नवकनसत और वासनाओं ंको प्रदीप्त करता है। इसनलए इच्छा और वासनाओं ंका नाि करने वाला नवरोधी नवचार उनको पूणथ करने के पूवथ-नवचार को प्रभावहीन कर देता है। इसनलए िब कभी मनुष् ऐसे नवचार से प्रभानवत हो तो इसका नवरोधी नवचार उसे कामनाओं ंऔर वासनाओं ंको नष्ट करने में सहायक होगा।

आप बुरे नवचारों ंकी कैसे उपेक्षा कर सकते हैं? केवल भुला देने से। उन्हें भूल कैसे सकते हैं? नफर उनमें ननमग्न न होने से। मन को नफर उनमें ननमग्न होने से कैसे रोक सकते हैं? नकसी और अनधक रुनचकर पदार्थ का नचन्तन करने से। उपेक्षा करें, भुला दें और नकसी अन्य रोचक वसुतु का ध्यान करें। यह बडी साधना है। गीता के उच्च नवचारों ंको मन में स्र्ान दें और उपननषद् तर्ा योगवानसष्ठ में सनन्ननवष्ट अनभित तर्ा आत्मोत्थानकारी नवचारों ंको स्मरण रखें। अन्दर ही आत्मपरक तकथ करें, सोचें। नचन्तन करें तर्ा ननगमनात्मक तकथ करें। सारे संसारी नवचार, िुतुरुता, घृणा, प्रनतिोध, क्रोध, सम्भोग के नवचार सब नष्ट हो िायेंगे।

िब िरीर के किोाणुओं ंमें दूनषत नवचार, नचन्ता, भय, घृणा, द्वेष और कामुक नवचारों ंके कारण रोग, अनमेल या असामंिस्य होते हैं तो आप उन्नत, िीवनदायी, आत्मा को िाग्रत करने वाले, साद्धत्त्वक नदव्य नवचारों,ं ओंकार के उच्चारण के स्पन्दनों ंद्वारा, भगवान् के अनेक नामों ंके उच्चारण, कीतथन, प्राणायाम, गीता और िास्त्रों ंका स्वाध्याय, ध्यान आनद के द्वारा इन रुग्ण तर्ा दूनषत किोाणुओं ंके नवष को ननष्प्रभाव कर सकते तर्ा उनमें िाद्धन्त, मेल, स्वास्थ्य और नवीन िद्धि स्र्ानपत कर सकते हैं। आप सदा यही नवचार करें नक आप िुि, सद्धच्चदानन्द, व्यापक आत्मा हैं। सारे दुगुथण दूर हो कर सद्गुण आप-ही-आप प्रकट हो िायेंगे।

काम, क्रोध, द्वेषानद नवनभन्न वृनत्तयों ंको नाि करने के नलए प्रयत्न न करें। यनद आप एक ही वृनत्त अर्ाथत् अहंकार को नष्ट कर सकते हैं तो अन्य सारी वृनत्तयाँ स्वयं ही नष्ट हो िायेंगी। अहंकार िीव-रूपी भव की आधारनिला है। यनद आधार-निला को हटा नलया िाये तो यह सारा भवन नगर िायेगा। यही रहस्य है।

आप काम-क्रोधानद से क्यों ंिरते हैं? ये आपके सेवक हैं। आप सद्धच्चदानन्द आत्मा हैं। आत्मा की नविालता और मनहमा को बारम्बार ननश्चयपूवथक कहें।

परिच्छेद- २९

सद्गुणो ोंका सोंवधछन

मैत्री, करुणा, दया, नवश्व-प्रेम, क्षमा, धृनत, नतनतक्षा और सहनीलता-ये मन के साद्धत्वक गुण हैं। इनसे मनुष्ों ंमें सुख और िाद्धन्त फैलती है। इनकी वृद्धि नविेष रूप से करनी चानहए।

प्रेम और दया मन को कोमल बनाते हैं। दया में यह लक्षण होता है नक वह दुिःख-ननवारण का उपाय ननकालती है, नकसी को कष्ट पाता हुआ देख नहीं ंसकती, नकसी को चोट नहीं ंपहुँचाती और िो दुिःख सन्तप्त हों,ं उनकी आवश्यकताओं ंको देखती रहती है। इसकी पूणथता दुिःख पहुँचाने की वृनत्त को दबा देने में है और इसकी असफलता िोक की उत्पनत्त में है।

आत्म-साक्षात्कार में सफलता प्राप्त करने के नलए धैयथ, दृढ़ता, उत्साह तर्ा ननश्चय अपररहायथ हैं। आध्याद्धत्मक साधकों ंको इन सद्गुणों ंको बडी ऊँची हद तक बढ़ा लेना चानहए। िब आप ओंकार का ध्यान करते हैं और प्रात:कालीन ध्यान में अपने ब्रह्म होने का दावा करते हैं तो आपको अद्भुत िद्धि नमलती है। निस साहस की आध्याद्धत्मक मागथ में उन्ननत के नलए आवश्यकता होती है, इससे वही साहस प्राप्त करने में सहायता नमलती है। नतनतक्षा और धैयथ के द्वारा सन्मागथ पर बहुत-सी कनठनाइयों ंको पार करना होता है। ये गुण साहस के ही रूप हैं। धैयथ नतनतक्षा की माननसक िद्धि को कहते हैं। यह संकट का सामना करने में दृढ़ता है। यह प्रनतरोधि–द्धि है।

धमछ के दि लक्षण

मनुसूमृनत (६-९२) में धमथ के दि लक्षण बताये हैं:

धृशतिः क्षमा दमोऽर्योंं ि ौचशमन्यिशनग्रहिः ।
धीशवछद्यासत्यमक्रोधो दिकों धमछलक्षणम्।।

अर्ाथत् धैयथ, क्षमा, दम, असेतेय, बाह्य और आन्तररक पनवत्रता, इद्धन्द्रय-ननग्रह, ि ास्त्रों ंका ज्ञान, आत्म-ज्ञान, सत्यता तर् क्रोध-रनहत होना-ये धमथ के दि लक्षण हैं।

आपके नवचार और ि ब्दों ंमें समानता होनी चानहए। इसे आिथव या सरलता कहते हैं। इसका अभ्यास करें, आपको आश्चयथिनक लाभ होगा। यनद बारह वषों तक सत्य का अभ्यास करें तो आपको वाद्धक्सद्धि नमल ियेगी। आप ि ो कुछ कहेंगे, वही होगा। नबन्ता दूर हो ि ायेगी। सत्य बोलने से आप बहुत से पाप कमों से बच ियेंगे।

धैयथ, अध्यवसाय, लगन, रुनच, श्रिा, उत्साह, उमंग और ननश्चय साधना-काल में आवश्यक हैं। श्रिा और भद्धि-ये उदात्त वृनत्तयाँ हैं, ि ो मनुष् को बन्धन-मुि होने में सहायता देती हैं। इन सद्गुणों ंकी वृद्धि करनी होती है। तभी सफलता हो सकती है। मागथ में ि ो अनेक कनठनाइयाँ उत्पन्न हो ि ाती हैं, उन्ें देखें। आध्याद्धत्मक पर् दुगथम है। गीता के अनुसार सहस्रों ंमनुष्ों ंमें से कोई एक ही इस पर् पर चलता है। उनमें भी बहुत कम सफल होते हैं। कोई-कोई आधे मागथ में ही साधना छोड देते हैं, क्ोंनक उनके नलए लक्ष्य तक आगे चलना कनठन हो ि ाता है। धृनत, धैयथ और उत्साह सनहत धीर साधक ही सद्धच्चदानन्द-रूप लक्ष्य को पहुँचते हैं। ऐसी नवरल उच्च आत्माएँ धन्य हैं!

परररचे्छेद-३०

मन के शनग्रह की शवशध

*"***मनोजय एव महाजयिः***"*-मन पर नविय महत्तम नविय है। नहन्दी में कहावत है*:* **"मन जीता, जग जीता***"* - यनद आपने मन को िीत नलया तो समस्त संसार को िीत नलया।

नहन्दू-िास्त्रों ंमें आपको िब्दों ंका अर्थ सदा दो प्रकार का नमलेगा-एक तो गुह्य अर्थ और दूसरा लोक-प्रचनलत अर्थ। गुह्य अर्थ, आन्तररक अर्थ को समझना बडा कनठन होता है। इसनलए गुरु की आवश्यकता होती है। हठयोग की पुस्तकों ंमें नलखा है : "गंगा और यमुना के संगम में एक कुमारी नवधवा बैठी है।" आप इसका क्या अर्थ ननकालेंगे? इसे समझना कनठन है। बाल-नवधवा सुषुम्ना नाडी है। गंगा नपंगला-नाडी है। यमुना इडा-नाडी है।

कठोपननषद् में आपको एक िब्द नमलेगा निसका अर्थ ईंट है; परनुतु यहाँ ईंट से देवता का तात्पयथ है।

रामायण का रहस्य

रामायण में भी रहस्य हैं। वह है मन का ननग्रह। लंका के दिमुख रावण को मारने का अर्थ है मन की दि कुवृनत्तयों;ं िैसे काम, क्रोध आनद; का नाि करना। सीता मन है। राम िुि-ब्रह्म है। लंका से सीता को लौटा लाना अर्ाथत् राम (ब्रह्म) में मन को लगाना है और नवषयों ंसे मोडना है। अयोध्या में सीता राम से नमलती है अर्ाथत् सहस्रार चक्र में मन ब्रह्म में लीन हो िाता है। यह रामायण का आध्याद्धत्मक अर्वा गूढ़ार्थ है।

मन पर प्रभुत्व ही मोक्ष का एकमात्र िार है

एक ओर प्रकृनत है और दूसरी ओर आत्मा या ब्रह्म है। मन इन दोनों ंके बीच में सेतु है। पुल पार कर लें (मन का ननग्रह कर लें); आप ब्रह्म-प्राद्धप्त कर लेंगे।

निसने मन को िीत नलया, वही सच्चा नवियी और महाराि है। निसने इच्छाओं,ं बासनाओं ंऔर मन को वि में कर नलया, वह सवाथनधक धनवान् है। यनद मन वि में है तो इसमें कुछ भेद नहीं ंहोता नक आप रािप्रासाद में रहें या ऋनषकेि से पन्दरह मील दूर वनसष्ठगुहा-िैसी नहमालय की गुफा में रहें, सनक्रय व्यवहार करें या मौन बैठे रहें।

िो नवक्षेप के संसगथ से प्रभानवत नहीं ंहोता, ऐसे मन का नमलना नवरल बात है। िैसे अनि से ताप अनभन्न है, वैसे ही मन को नगराने वाला नवक्षेप भी मन से अनभन्न है। इस नवक्षेप से रनहत हो कर मन का अद्धस्तत्व ही नमट िाता है। इसी नवक्षेप-िद्धि को ननरन्तर आत्मानुसन्धान के द्वारा नष्ट कर देना चानहए।

संकल्प-नवकल्प का कारण मन है। इसनलए आपको मन को अवश्य वि में करना चानहए। आपको इसे बाूँधना चानहए।

मन के मोह को दूर कर लेने पर सच्ची मुद्धि नमलती है। िैसे कुषि समुि में चन्द्रमा का प्रनतनबम्ब नदखायी नहीं ंदे सकता, इसी प्रकार नवक्षेप-युि मन पर पडी हुई आत्मा की छाया भी नदखायी नहीं ंदे सकती। आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने के नलए मनुष् को ननरन्तर मन के सार् इसकी िुद्धि और द्धस्रता के नलए संघषथ करते रहना चानहए। केवल इच्छा–द्धि से ही इसका नवक्षेप रुक कर ननग्रह हो सकता है। दृढ़ कामना, श्रिा और बलवती इच्छा–द्धि-इन तीनों ंसाधनों ंके द्वारा आप अपने प्रयास में प्रत्यानित सफलता प्राप्त कर सकते हैं। यनद मन सारे मलों ंऔर सांसाररक दूषणों ंसे िुि हो िाये तो यह अत्यन्त ननश्चल हो िायेगा। इसकी सारी चंचलता बन्द हो िायेगी। परम ननष्ठा प्राप्त होगी। तब सारा सांसाररक भ्रम अपने िन्म-मृत्यु-रूपी अनुचरों ंसनहत नष्ट हो िायेगा। तब आपको परम धाम की प्राद्धप्त होगी।

इस नविोही मन के ननग्रह के अनतरर इस संसार में और कोई ऐसा िलपोत नहीं ंहै निसके द्वारा िन्म-मरण के सागर को पार नकया िा सके। निन्ोंने वासनाओं ंसे पूणथ मन-रूपी सपथ का ननग्रह कर नलया है, केवल वही मोक्ष प्राप्त करेंगे।

िो मोक्ष चाहने वाले हैं, निन्ोंने िेय कामनाओं ंको नष्ट कर नदया है और िो अपने ही प्रयत्नों ंद्वारा मोक्ष तक का मागथ तय करने की चेष्टा करते हैं, उनके नलए इस दुःखप्रद मन को त्याग देना ही उनका लोकोत्तर पर् है और तब उनको ज्ञान होता है िैसे उनके निर से बडा भारी बोझ हट गया हो। अन्य कोई मागथ सच्चा लाभकारी नहीं ंहै।

यनद आपको मन के ऊपर पूणथ वनित्व हो िाये और इद्धन्द्रयों ंका दमन करके तर्ा अहंकार का नाि करके सच्चा ज्ञान प्राप्त हो िाये तो आप ननस्सन्देह िन्म-मरण के दुःखों ंसे छूट िायेंगे। 'मैं', 'तुम', 'वह' इत्यानद के भेद िाते रहेंगे। सारे दुःख, क्लेि, पीडा, िोक मन के नाि के सार् ही बन्द हो िायेंगे।

मन का शनग्रह कौन कर सकता है?

कोई मनुष् घास की एक पत्ती से एक-एक बूँद ननकाल कर समुि को खाली करने में लगा हुआ हो, नितने धैयथ और अर्क लगन की उसको आवश्यकता होती है, ठीक उतने ही धैयथ और लगन से मन का ननग्रह नकया िा सकता है।

एक पक्षी ने समुि के नकनारे अण्डे नदये। लहरें आयीं ंऔर अण्डों ंको बहा कर ले गयीं।ं पक्षी को बडा क्रोध आया। वह अपनी चोंच से समुि को खाली कर देना चाहता र्ा। उसने समुि को खाली करने में अपनी सारी िद्धि लगा दी। पनक्षयों ंके रािा को उस पर दया आयी और वह उसकी सहायता के नलए आया। िद्धन्त की स्र्ापना करने वाले नारद ऋनष भी वहाूँ आये और उन्ोंने पक्षी को कुछ उपदेि नदया। िब सागर के रािा ने यह सब देखा तो वह बडा भयभीत हो गया। वह पक्षी के अण्डे वापस ले आया और क्षमा-प्रार्थना तर्ा प्रणाम करके पक्षी को उसके अण्डे लौटा नदये। िो साधक मन के ननग्रह का प्रयत्न कर रहे हैं, उन्ें भी ऐसा ही मूखथतापूणथ धैयथ और अर्क लगन होनी चानहए िैसी उस पक्षी में र्ी िो अपनी चोंच से समुि को खाली कर देने का प्रयत्न कर रहा र्ा।

आपमें मन को साधने की दक्षता अर्वा अनभवृनत्त होनी चानहए। िेर या चीते को साधना मन को साधने से कहीं ंसुगम है। पहले अपने मन को साध लें। तब आप दूसरों ंके मन को सुगमता से साध लेंगे।

मन ही बन्धन तर् मोक्ष का कारण है

"मन एव मनुष्याणाों कारणों बन्धमोक्षयोिः" -मनुष्ों ंके बन्धन और मोक्ष के नलए मन ही कारण होता है। मन के दो स्वरूप होते हैं: एक नववेकिील, दूसरा कल्पनिील। अपने नववेकिील रूप से यह बन्धन-रनहत हो कर मोक्ष प्राप्त करता है और कल्पनिील रूप से यह संसार के सार् बंध िाता है।

मन ही मनुष् को इस संसार से बाँधे रखता है। िहाँ मन कायथ नहीं ंकरता, वहाँ बन्धन भी नहीं ंहोता। अनववेक और अज्ञान के द्वारा मन कल्पना करता है नक आत्मा इस देह में बँधा हुआ है और इसनलए यह आत्मा को बि मानता है। यह अपने को िीवात्मा से अनभन्न मानता है और स्वयं 'मैं' बन िाता है तर् सोचता है नक 'मैं बन्धन में हैं।' अहंकार-यिु मन ही बन्धन का कारण है। ननरहंकारी मन मोक्ष का कारण है।

मन के िारा मन को नष्ट करें

ज्ञानी ऋनषयों ंके द्वारा बतायी हुई मन के रोग दूर करने के नलए, सवथश्रेष्ठ अचूक औषनध मन के ही द्वारा प्राप्त हो सकती है। बुद्धिमान् पुरुष मैले वस्त्र को नमट्टी से ही साफ करता है। घातक अनग्न-अस्त्र का प्रनतघात वरुणास्त्र से होता है। सपथदंिका नवष दूसरे नवष के इंिक्शिन से ही दूर होता है। यही बात िीव के नलए भी सत्य है। नववेक की वृद्धि करके एकाग्र मन के द्वारा इस नवाितीय मन के भ्रमिाल का नाि कर दें िैसे लोहे से लोहा काटा िाता है।

मन िको िु करें

आपको मन के दूनषत नवकास और इसे अनुनचत मागथ में िाने से बचाना चानहए। मन नवनोदिील बच्चे के समान है। मन की अत्यावश्यक िद्धियों ंको सत्य के प्राकट्य के नलए उत्तम मागों ंकी ओर झुकाना चानहए। मन को सत्त्व से भरना चानहए। इसे ननरन्तर सत्य या ईश्वर के नचन्तन की निक्षा देनी चानहए।

योग-मागथ में यह आवश्यक है नक हम माननसक और आध्याद्धत्मक साधना-क्रम को पूरा करें। उपननषद् भी लक्ष्य को प्राप्त करने के नलए तीव्र तप-पालन पर िोर देते हैं। तप पापों ंका नाि करता है, इद्धन्द्रयों ंको दुबथल करता है, नचत्त को िि ु करता है और मन को एकाग्र कर देता है।

तप से माननसक मौन नमलेगा तर् मन की बेचैनी दूर होगी। यह मन की बेचैनी ज्ञान में महान् बाधक होती है। ब्रह्मचयथ का िीवन-निसमें गृहस्र् की कोई आसद्धि आपके मन में उद्वेग नहीं ंकरेगी, आपको आध्याद्धत्मक साधना में पूणथ अवधान देने योग्य बनायेगा। यनद आप सत्य और ब्रह्मचयथ का अभ्यास करें तो आप ननभथय हो ियेंगे। अन्त में आप ब्रह्म-प्राद्धप्त भी कर लेंगे। एक बात को िोंक की भाँनत दृढ़ता से पकड लें। श्रिा का होना आवश्यक है।

िि ु नकया हुआ संद्धखया (नवष) िब ठीक मात्रा में नदया िाये तो लाभदायक होता है। यह अनेक रोगों ंको दूर करता है। रि को िि ु करके उत्तम बनाता है। िब िि ु होता है और ठीक-ठीक मात्रा में नहीं ंनदया िाता तो इसके अनेक कुपररणाम होते हैं। इसी प्रकार मन को िब ननवथषय और िि ु कर नदया िाये तो यह मोक्ष तक पहुँचा देता है। िब यह िि ु और नवषयासि होता है तो बन्धन का कारण होता है।

निनके हृदय पनवत्र हैं, वे धन्य हैं; क्ोंनंक उनको भगवान् का दिथन हो िायेगा। हृदय पनवत्र होना चानहए। आँख की दृनष्ट भी पनवत्र होनी चानहए। आँख में एक रसना होती है। कामुक नेत्र नभन्न-नभन्न प्रकार के सौन्दयथ को अपनी पसन्द के नलए चखना चाहता है। नेत्र का काम (लालसा) उतना ही भयानक है नितना मांस का। प्रकृनत का सौन्दयथ भगवान् से ही प्रकट होता है। आँख को ठीक प्रकार साध लें, इसे सब कहीं ंआत्मा का दिथन करने दें।

योग-मागथ आपको उपदि देता है नक नकस प्रकार आप मन को िुि करके दपथण के समान ननमथल बना सकते हैं और काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, ईष्ाथ आनद मलों ंसे छूट सकते हैं। दान, िप, तप, व्रत, तीर्थयात्रा, सेवा, दया, स्वाध्याय, अनग्नहोत्र, यज्ञानद सारे सत्कमों का उद्देश्य मन की िुद्धि है।

रियोग के यम के अभ्यास का सार ईसामसीह के 'पवथतीय उपदि' (Sermon on the Mount) में है। इन उपदिों ंको चररतार्थ करना कनठन है; परनु्त यनद इनको अभ्यास में लाया िाये तो मन का ननग्रह सुगम हो िाता है। उस उपदि को संक्षेप में नीचे नदया िाता है :

(१) “भीरु पुरुष धन्य हैं; क्ोंनंक स्वगथ का राज्य उनका ही है।"

(२) "िो िोक करते हैं, वे धन्य हैं; क्ोंनंक उन्ें सान्त्वना नमलेगी।"

(३) “नवनीत पुरुष धन्य हैं; क्ोंनंक उनको पृथ्वी उत्तरानधकार में नमलेगी।"

(४) "िो धमथ के पीछे भूखे और प्यासे रहते हैं, वे धन्य हैं; क्ोंनंक वे पूणथ हो िायेंगे।"

(५) "दयावान् पुरुष धन्य हैं; क्ोंनंक उनको दया नमलेगी।"

(६) "निनका हृदय िुि है, वे पुरुष धन्य हैं; क्ोंनंक वे परमात्मा का दिथन करेंगे।"

(७) "िाद्धन्त कराने वाले धन्य हैं; क्ोंनंक वे ईश्वर के बचे्च कहलायेंगे।"

(८) "निन पुरुषों ंपर धमथ के नलए अत्याचार होता है, वे धन्य हैं; क्ोंनंक उनको स्वगथ का राज्य नमलेगा।"

(९) "तुम लोग धन्य होंगें िब लोग तुमको तंग करेंगे, तुम पर अत्याचार करेंगे और मेरे नलए तुम पर सब प्रकार के झूठे दोष लगायेंगे। आनन्द मनायें और अत्यन्त प्रसन्न हो िायें; क्ोंनंक स्वगथ में बडा इनाम नमलेगा। उन्ोंनें तुमसे पहले होने वाले पैगम्बरों ंपर भी इसी प्रकार अत्याचार नकये र्े।"

(१०) "लेनकन मैं तुमसे कहता हूँ नक तुम बुराई का प्रनतरोध न करो; नकनु्त िो कोई तुम्हारे दायें गाल पर मारे उसके आगे बायाँ गाल भी कर दो।"

(११) "और यनद कोई मनुष् तुम्हारे नवरुि अनभयोग चलाये या तुम्हारा कोट उत्तार कर ले िाये तो उसको अपना चोगा भी दे दो।"

(१२) "अपने ित्रुओं ंको अपने समान ही प्रेम करो। िो तुम्हें गाली दें, उनको आिीवाथद दो; िो तुमसे द्वेष करते हैं उनका भला करो और िो तुमको हानन पहुंचाते हैं और अत्याचार करते हैं उनके नलए प्रार्थना करो।"

ननत्यप्रनत काम पर िाने से पहले प्रातिःकाल सावधानी से भगवान् मसीह के इस पनवत्र उपदेि को पढ़ें और नदन में एक या दो बार इस उपदेि का स्मरण कर लें। कुछ समय में आप अपनी भावनाओं ंऔर मिाओं ंका संयम करने के योग्य हो िायेंगे और दोषों ंको ननकाल कर सद्गुणों ंकी वृद्धि कर सकेंगे। आपको असीम आनन्द
और इच्छाि–द्धि प्राप्त होगी।

आध्याद्धत्मक मागथ बडा ही ऊबड-खाबड, कूँटीला और ढालू है। श्रुनत ने बताया है, **"क्षुरस्य धारा शनशिता दुरत्यया दुगछ परि्त्कवयो वदन्त।"** वह मागथ छुरे की धार के समान तीि है और अगम्य है। ज्ञानी लोग बताते हैं नक उस पर चलना कनठन है। धैयथ और तत्परता से काूँटों ंको उखाडना चानहए। कुछ काूँटे आन्तररक हैं और कुछ बाहरी। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आनद आन्तररक काूँटे हैं। बाहरी काूँटों ंमें से कुसंगनत का काूँटा सबसे बुरा है। इसनलए कुसंगनत से दृढ़ता के सार् बचते रहें।

भलाई करें तर्ा आत्मशनरीक्षण करें

सदा धानमथक कायथ करें। मन पर दृनष्ट रखें और देखें नक यह क्ा कर रहा है। ये ही दोनों ंमागथ मन के ननग्रह के नलए पयाथप्त हैं।

सत्संग, िप आनद के द्वारा अपने आध्याद्धत्मक संस्कारों ंको िगायें, उनकी रक्षा करें, नवकास करें और पोषण करें। सत्संग मन के ननग्रह तर्ा मोक्ष की प्राद्धप्त का मागथ प्रिस्त करता है।

आत्मननरीक्षण करें। सदा आन्तररक िीवन रखें। मन के एक भाग और हार्ों ंको स्वाभानवक कायथ करने दें। नट की लडकी िब अपने खेल नदखाती है तो बािे के सार्-सार् नाचते हुए भी उसका ध्यान निर पर रखे हुए पानी के घडे पर लगा रहता है। इसी प्रकार धानमथक मनुष् भी सांसाररक व्यवहार करता हुआ भी अपनी दृनष्ट भगवान् के आनन्दपूणथ चरणों ंमें लगाये रखता है। यह कमथयोग और ज्ञानयोग का नमश्रण कहलाता है। इससे सवांगीण नवकास होता है। यही साम्यावस्र्ा है। यह सांश्लेनषक योग है। कुछ वेदाद्धन्तयों ंका एक एकांगी नवकास होता है। वह अच्छा नहीं ंहै।

कीतछन करें

सपथ को संगीत बडा नप्रय होता है। यनद आप मधुर स्वर से पुन्नगवरानल तान को गायें तो वह आपके सामने आ िायेगा। मन भी सपथ के समान है। इसको भी मधुर संगीत-ध्वननयाूँ बहुत पसन्द होती हैं। मधुर स्वरों ंसे इसे बडी सुगमता से फूँसाया िा सकता है।

कानों ंको बन्द करके हृदय से ननकलने वाली मधुर अनाहत ध्वनन पर इसे लगायें। इस रीनत से इसका ननग्रह बडी सुगमता से नकया िा सकता है। यह लययोग है। नपंगला गनणका ने अपना मन तोते की 'राम-राम' -ध्वनन पर लगा नदया र्ा और भाव-समानध प्राप्त कर ली र्ी। बंगाल के एक प्रनसि भि रामप्रसाद ने संगीत के द्वारा मन का ननग्रह नकया र्ा। अिान्त मन को िान्त करने में वाद्य का बडा अच्छा प्रभाव पडता है। अमेररका के नचनकत्सक अनेक रोगों ंको, नविेषतया स्नायु-सम्बन्धी रोगों ंको दूर करने के नलए वाद्य का प्रयोग करते हैं। वाद्य मन को भी उन्नत करता है।

नवधा-भद्धि में कीतथन भी एक प्रकार है। इससे भाव-समानध हो िाती है। यह सारे भारतवषथ में प्रचनलत है। यह ईसाइयों ंके स्तुनत-भिन-गायन के समान है। बंगाल के रामप्रसाद ने कीतथन के द्वारा ईश्वर-साक्षात्कार

नकया र्ा। उनके भिन बंगला में बहुत प्रनसि हैं। इस कनलयुग में परमात्मा को प्राप्त करने का सुगम उपाय कीतथन है। ननरन्तर भगवान् हरर का नाम गाते रहें। उनके गुणों ंका गान करते रहें। आपको उनका दिथन हो ियिेगा। िो अच्छा गाना िानते हैं, उनें् एकान्त में िा कर िुि भाव से मिु हृदय से गाना चानहए। समय पा कर उनें् भाव-समानध हो िायेगी। इसमें कुछ सने्देह नहीं ंहै।

सदा परमात्मा का शचतन करें

बराबर परमात्मा का नवचार करते रहें। आप बडी सुगमता से मन को िीत सकेंगे। यनद आप एक बार भी मन में भगवान् नवषु्णु या िंकर का ध्यान करते हैं तो साद्धत्त्वक पदार्थ र्ोड़ा-सा बढ़ता है। यनद आप करोड बार ध्यान करें तो मन में बहुत-सा सत्त्व बढ़ िायेगा। ईश्वर का ननरन्तर ध्यान मन को क्षीण करके वासनाओं ंऔर संकल्पों ंका नाि कर देता है।

अपने हृदय-कमल में िब आप भगवान् कृष्ण का ध्यान करते हैं, तो भगवान् की मूनतथ पर आपका ध्यान द्धस्र्र हो िाता है और ध्यान द्धस्र्र होते ही आध्याद्धत्मक प्रवाह बलने लगता है। िब ध्यान लग िाता है तो प्रवाह द्धस्र्र रूप से चलने लगता है और िब ध्यान अनत-गम्भीर हो िाता है तो समानध लग िाती है। भगवान् के सार् आपका तादालय हो िाता है। सारे संकल्प-नवकल्प बन्द हो िाते हैं। पूणथ नचत्त-वृनत्त-ननरोध हो िाता है।

प्राणायाम-साधना

मन का संयम करने के नलए दो बातों ंकी आवश्यकता है : प्राणननरोध और संग-त्याग अर्ाथत् संसारी पदार्ों में आसद्धि अर्वा राग न होना। पश्चादि से तात्पयथ न केवल संसार से वरन् सांसाररक पदार्ों की कामना अर्वा उनके प्रनत आकषथण से सम्बन्ध-नवचे्छेद भी है।

प्राणायाम से मन का वेग रुक िाता है और नवचार-नक्रया कम हो िाती है। यह मन के मल, रिोगुण और तमोगुण को दूर करता है।

मन के ननयन्त्रण के नलए कुम्भक अपररहायथ है। ननत्य कुम्भक का अभ्यास करना होगा। पूरक, कुम्भक और रेचक का ननयनमत तर्ा तालबि रूप से अभ्यास करें। तब मन एकाग्र हो िायेगा। नवनधपूवथक अभ्यास का पालन, ननयद्धन्त्रत आहार तर्ा उनचत आहार-सम्बन्धी ननयम (हलका, पौनष्टक, साद्धत्त्वक भोिन) करने से कुम्भक का काल बढ़ िायेगा। यह हठयोग-मागथ है। कुम्भक का अभ्यास पूणथयोगी गुरु के पर्प्रदिथन में करना चानहए।

िम और दम का अभ्यास

िम और दम के अभ्यास से मन की उपरनत आती है। वासनाओं ंके उमूमूलन से उत्पन्न मन की िाद्धन्त िम है। नववेक द्वारा वासना-त्याग िम-षट् सम्पनत्तयों ंमें से एक-का अभ्यास है। यनद मन में कोई इच्छा पैदा हो तो उसके वि में न हो िायें। यह िम का अभ्यास हो िायेगा। िम साधना द्वारा मन को हृदय में नटकाये रखना है। मन को बाहर आ कर पदार्थ नहीं ंबनाने देना दम है। बाह्य नक्रयाओं ंऔर इद्धन्द्रयों ंका ननग्रह दम का अभ्यास कहलाता है।

यनद आप आम खाने की इच्छा का त्याग कर दें तो यह िम है और यनद आम मोल लेने के नलए अपने पाँव को बािार तक न िाने दें, यनद आप आँखों ंको आम न देखने दें और यनद निह्वा को उनें् न चखने दें तो यह दम है।

नमठाई खाने की इच्छा उत्पन्न होती है। आप पैरों ंको नमठाई मोल लेने के नलए बािार न िाने दें, निह्वा को नमठाई न खाने दें तर्ा आँखों ंको नमठाई देखने भी न दें। इस प्रकार का इद्धन्द्रय-ननग्रह दम कहलाता है।

बि आप वासना-त्याग के द्वारा मन में नमठाई-सम्बन्धी कोई नवचार ही नहीं ंउठने देते तो यह िम कहलाता है। नवचार, ब्रह्म-नचन्तन, िप, ध्यान, प्राणायाम आनद के द्वारा वासनाओं ंका त्याग नकया िा सकता है।

मि आन्तररक ननग्रह है। दम इद्धन्द्रयों ंका ननग्रह है। यद्यनप िम के अभ्यास में दम का अभ्यास भी अन्तगथत है; क्ोंनक मन की सहायता नबना इद्धन्द्रयों ंकी गनत और नक्रया नहीं ंहोगी, तो भी दम का अभ्यास आवश्यक है। दम का अभ्यास िम के सार् ही होना चानहए। अकेला िम ही पयाथप्त नहीं ंहोता। कामना-रूपी ितुरु पर आन्तररक और बाह्य दोनों ंप्रकार का आक्रमण होना चानहए। तभी आप मन को सुगमता से वि में कर सकते हैं। तभी मन का ननग्रह पूणथ रूप से होता है।

वैराग्य शवकशसत करें

िो वैराग्य का अभ्यास करते हैं, सच्चे अर्ों में वे ही मन को साध सकते हैं। वसुतुओं ंके नलए कोई इच्छा न करें। इनसे बचें। वैराग्य मन को दुबथल बना देता है। यह मन का बडा भारी िोधक है। िब मन-रूपी चोर वैराग्य, त्याग, संन्यास िब्दों ंको सुनता है तो काँपने लगता है। इनका नाम सुनने से उसको सांघानतक प्रहार लगता है।

मन के सारे सुख-केन्द्र नष्ट कर दें। स्वादु वसुतुओं ंका बार-बार भोिन, ज्यादा गपि्प करना, सैर करना, गाना सुनना और द्धस्त्रयों ंकी संगनत में रहना िैसे मन के सारे सुख-केन्द्रों ंको धीरे-धीरे सावधानी से नष्ट कर िालें। आत्मज्ञान-सम्बन्धी पुस्तकों ंका स्वाध्याय, ध्यान और मनुष्िानत की सेवा-केवल इन तीन साद्धत्त्वक सुख-केन्द्रों ंको बनाये रखें। िब ध्यान में उन्ननत हो िाये तो सेवा और स्वाध्याय को भी कुछ काल के नलए छोड दें। िब ननननवथकल्प अवस्र्ा में पहुँच िायें तो गीता का ज्ञान-यज्ञ प्रारम्भ करें अर्ाथत् नदव्य ज्ञान का उपदेि करें। इसी का प्रचार करें और इसके नलए ही कायथ करें।

मन की रुनच निस वसुतु में नविेष हो, उसे ही त्यागना चानहए। मन निस पदार्थ पर ननरन्तर नवचार करता है, निसके नवषय में प्रायिः नचन्तन करता है, उसका पररत्याग करना चानहए। यनद आप बैंगन या सेब अनधक पसन्द करते हैं तो पहले उनको ही छोड दें। आपको बहुत िाद्धन्त, इच्छाि्द्धि और मन का ननग्रह प्राप्त होगा।

मान लें नक आपको चाय, आम, अंगूर और नमठाइयाँ बहुत पसन्द हैं। इन वसुतुओं ंको और इनके नलए कामनाओं ंको भी त्याग देने को महत्त्व दें। कुछ महीने पीछे इन वसुतुओं ंकी तृष्णा अर्वा वासना क्षीण हो िायेगी और धीरे-धीरे नष्ट हो िायेगी। आपको ननत्य तीन-चार घण्टे प्रार्थना, िप और ईश्वर के ध्यान में लगाने चानहए। िो उपयुथि पदार्थ आपको बहुत ही आकषथक लगते र्े, अब वे अत्यन्त हेय मालूम होते हैं। अब वे आपके भावों ंके नबलकुल उलटे भाव प्रसुतुत करते हैं। उनसे आपको तीव्र वेदना होती है। यह सच्चे वैराग्य और मनोनाि का द्योतक है।

यनद सारे सुन्दर नदखने वाले पदार्थ आँख का काँटा बन िायें और उनके प्रनत पूवथ के भावों ंके नवरोधी भाव पैदा होने लगें, तब िान लें नक मन का नाि हो गया। िब मन बदल िाता है तो िो पदार्थ पहले आनन्द देते र्े, वे दुिःख देने लगते हैं। मनोनाि का यही नचह्न है।

ाी बातें आपको ाीघ्र ाोन्त बना नदया करती र्ीं,ं वे अब आपको स्पिथ तक नहीं ंकरतीं।ं निन अवसरों ं पर आप खिी उठा करते र्े, उनसे अब ऐसा नहीं ंहोता। आपको बल, सहनाक्ति, प्रनतरोध की क्षमता और नवघ्नों ं को सुलझाने की सामथ्यथ नमल गयी है। दूसरों ंके कुछ कठोर ाब्द ाो आपको बेचैन कर नदया करते र्े, अब आपको दुाःख नहीं ंपहुँचाते और यनद आप खिी भी ाोयें और क्रोध के नचह्न प्रकट भी करें तो अब आप ाीघ्र ही प्रकृनतस्र् हो ााते हैं। ये सब बातें मनोबल और इच्छााक्ति प्राक्तप्त के नचह्न हैं। ध्यान के अभ्यास से ये सब लाभकारी फल प्राप्त होते हैं।

ौसे ााु श्वेत वस्त्र पर गुलाबी रंग अच्छा फैलता है, इसी प्रकार ाब मन ाान्त हो, सारे भोगों ंकी ओर से उदासीन हो, सारी इक्तन्द्रयाँ अन्तमुथखी हो ाायें और मन के अज्ञान का नाा हो गया हो, तभी सद्गुरु के उपदो-वाक् नाष् के मन में प्रवो करके प्रभाव नदखायेंगे।

सतोष रखें

मन सुख-स्नेही, आरामतलब और अलमस्त है। आपको इस स्वभाव को रोकना चानहए। मन में आराम और सुख की इच्छा ाामी होती है। साधकों ंको बहुत ही सावधान और सचेत रहना चानहए। अपनी इच्छाओं ंकी पूनतथ का प्रयत्न न करें। यह भी मन को ाीतने का उपाय है। निन वस्तुओं ंका आपने त्याग नकया है, उनको नफर से ग्रहण कभी न करें। ाब आप नकसी वस्तु को त्यागते हैं तो कुछ नदनों ंके नलए उस वस्तु की इच्छा तीव्र तर्ा बलवती हो ााती है। यह आपके मन को उनद्वग्न करती है। चुप रहें। दृढ़ बने रहें। यह दुबथल होती ााती है और अन्त में मर ाती है। ाब कभी मन-रूपी सपथ उन पदार्ों की ओर वापस ााने को फुंकार मारे निन्हें वह पहले त्याग चुका है, तो आप नववेक का ाण्डा सूँभालें। यह फण नीचा कर लेगा और ाान्त हो ाायेगा।

आपको मन के सार् कृपालु अर्वा सदय नहीं ंहोना चानहए। यनद आप अपनी आवश्यकताओं ंको एक भी वस्तु से बढ़ा देंगे तो नफर पदार्ों की संख्या में वृक्तद्ध होने लगेगी। एक-एक करके नवलानसता आने लगेगी। यनद आप इसे आा एक प्रकार की नवलास-सामग्री देंगे तो कल यह दो चाहेगा। इस प्रकार प्रनतनदन नवलानसता बढ़ेगी। यह अनधक लाड-दुलार में नबगडे हुए बच्चे के समान हो ाायेगा। बच्चे को ाूँटना बन्द कर दें तो वह नबगड ााता है-यही कहावत मन के नलए भी लागू होती है। इसकी प्रत्येक गम्भीर भूल के नलए आपको उपवास आनद के द्वारा इसे दण्ड देना चानहए। इक्तन्द्रयों ंको यर्ा-स्र्ान वा में रखें। उन्हें एक इंच भी न नहलने दें। ाब भी कोई इक्तन्द्रय अपना नार उठाने के नलए फुंकार करे, तभी नववेक का ाण्डा उठा लें। इस अभ्यास से आपका मन एकाग्र हो ाायेगा। ाो मनुष् पदार्ों की इच्छा नकये नबना उनसे बचे रहते हैं, वे मन का ननग्रह करने वाले कहे ाा सकते हैं।

ाो स्वेच्छा से प्राप्त हुई वस्तुओं ंसे सन्तुष्ट नहीं ंरहते, वे केवल दुबथल मन वाले होते हैं। सन्तोष अनत-महान् गुण है। **'सतोषात् परों लाभम्'** -सन्तोष से आपको बहुत लाभ होगा। यह मोक्ष के नवााल साम्राज्य के चार प्रहररयों ंमें से एक है। यनद आपमें सन्तोष है तो यही सत्संग, नवचार और ााक्तन्त प्राप्त करा देगा।

ाब आप कल के नलए वस्तुओं ंका संग्रह नहीं ंरखना चाहते तो इसे 'असंग्रह-बुक्तद्ध' कहते हैं। यह सच्चे संन्यासी की मनोदाा है। संन्यासी को कल का कोई नवचार नहीं ंहोता। इसके नवपरीत गृहस्र् को संग्रह-बुक्तद्ध हुआ करती है। हमें पक्षी की भाँनत स्वतन्त्र होना चानहए और संग्रह-बुक्तद्ध नहीं ंरखनी चानहए।

प्रत्येक वस्तु ानस रूप में प्राप्त हो, उसी रूप में ग्रहण करें

निकायत करने के बदले िो भी वसुतु, िैसी नमले, उसे वैसा ही ग्रहण करें। इस उपाय से मनुष् प्रते्येक अवसर को पकडता है। उसका नवकास बडी सुगमता से होता है। उसे अनधक मनोबल और समत्व प्राप्त होता है, उसका नचडनचडापन दूर हो िाता है तर्ा उसकी सहनि–द्धि और धैयथ बढ़ते हैं।

यनद आपको िोर के बीच रहना पडता है तो इसकी निकायत न करें, अनपतु इससे लाभ उठायें। मनुष् बाहरी उपिवों ंको धारणा के अभ्यास के नलए, उपयोग कर सकता है। आपको माननसक िद्धि का इतना नवकास करना चानहए नक आपके ननकट चाहे कुछ भी होता रहे, आप ननश्चल भाव से कायथ करते रहें। यह िद्धि अभ्यास के द्वारा आती है और नफर यह अनेक प्रकार से उपयोगी होती है। नभन्न-नभन्न पररद्धस्नतयों ंमें काम करते रहने का अर्थ उन्ननत है और यह बहुत ही मनोननग्रह से होता है।

सत्सोंग किीरण लें

मन के स्वभाव और स्वरूप का भली प्रकार ज्ञान हुए नबना आप इसका संयम नहीं ंकर सकते। ऊँचा नवचार मन को रोकता है और नीच नवचार मन को उते्तेनित करता है। यह अत्यन्त आवश्यक है नक धानमथक मनुष्ों ंकी संगनत रखी िाये और नीच मनुष्ों ंकी संगनत से बचा िाये।

साद्धत्त्वक पुरुषों ंका संग और अच्छा वातावरण मन को उन्नत करने में बहुत बडी भूनमका अदा करते हैं। मोक्ष-प्राद्धप्त में सत्संग बहुत सहायक होता है। अन्य कोई उपाय नहीं ंहै। यह मन को पूणथतया रूपान्तरररत कर ालिता है। यह मन की धारा तर्ा इसके रािनसक स्वभाव को बदल िालता है। यह मन के पुराने नवषय-संस्कारों ं को हटा कर उसमें साद्धत्त्वक संस्कार भर देता है। यह आध्याद्धत्मक, आनधभौनतक तर्ा आनधदैनवक तीनों ंप्रकार के तापों ंको दूर करके अन्तिःकरण को िीतल बना देता है तर्ा मोह का नाि कर देता है। यनद आपको सत्संग नमल सके तो नफर नकसी तीर्थ को िाने की आवश्यकता नहीं ंहै। यही तीर्ों का तीर्थ है। िहाँ कहीं ंसत्संग होता है, पावन नत्रवेणी तो वहाँ पहले से ही होती है।

ननरन्तर सत्संग द्वारा इस अज्ञान-रूप मन का नाि कर दें। सत्तात्मक सत्संग के अभाव में आत्मदिी पुरुषों ंकी नलखी हुई पुस्तकों,ं िैसे श्री िंकराचायथ के ग्रन्, योगवानसष्ठ, श्री दत्तात्रेय की अवधूतगीता, उपननषद्, ब्रह्मसूत्र, आत्मपुराण, सवथवेदान्त-नसिान्त-सार-संग्रह, श्री िंकराचायथ की अपरोक्षानुभूनत आनद-आनद सद्ग्रन्ों ंका सेवन करें।

प्रेरक पुस्तकों ंका स्वाध्याय आध्याद्धत्मक साधना में सहायक होता है; परनु्तु अनधक स्वाध्याय से मद्धस्तष्क गूँगॅदला हो िाता है। िब आप ध्यान से उठें तो र्ोडे समय के नलए अवधूतगीता, योगवानसष्ठ, कठोपननषद्, बृहदारण्यकोपननषद् िैसे ग्रन् पढ़ें। इससे मन उन्नत होता है।

यनद आप संन्यानसयों ंकी संगनत में रहें, योग और वेदान्त की पुस्तकें पढ़ें तो भगवद्-ज्ञान प्राप्त करने के नलए माननसक संलग्नता उपिती है; परनु्तु केवल इस माननसक संलग्नता ही से आपको अनधक सहायता नहीं ं नमलेगी। तीव्र वैराग्य, उग्र मुमुकुषुत्व, आध्याद्धत्मक साधना के नलए िद्धि, तत्परता से ननरन्तर अभ्यास और नननदध्यासन की आवश्यकता है। तब कहीं ंआत्म-साक्षात्कार सम्भव हो सकता है।

सोंकल्पो ोंको नष्ट करें

यह मनुष् और वह मनुष्, तुम और मैं, यह वसुतु और वह वसुतु-इस प्रकार के भेद के नवचार मन से ही सम्बन्ध रखते हैं। अभावना की तलवार से इस मन का अन्त कर दें। नकले में से ननकलते हुए नसपानहयों ंको एक-एक करके मार दें। अन्ततिः आप नकले पर अनधकार कर लेंगे। ऐसे ही ज्यों–ंज्यों ंमन में नवचार उठते िायें, एक-एक करके उनका नाि कर दें, आद्धखर में आप मन पर नविय प्राप्त कर लेंगे।

यनद आप सब प्रकार की कल्पना को क्षीण कर सकें तो िैसे प्रचण्ड झंझा से घने मेघ नछन्न-नभन्न हो िाते हैं वैसे ही मन अपने उद्गम स्ान, नचत्त में लीन हो िायेगा। तब आप सब प्रकार के दुिःख, नचन्ता और क्लेिों ंसे मुि हो िायेंगे। तब आपको ननत्य सुख और मोक्ष-धन प्राप्त होगा।

मन माया है। यनद मन नवषय-पदार्ों की ओर अन्धाधुन्ध दौडता है तो माया उस मनुष् पर दृढ़ अनधकार कर लेती है। माया मन के ही द्वारा अनर्थ करती है। यह नीच पिुबुद्धियुि मन आपको सब प्रकार के नवषय-भोगों ंमें नीचे की ओर घसीटता है और अनेक रीनतयों ंसे आपको भ्रम में िालता है। माया अपनी िद्धि से मन में लाखों ंसंकल्प उठाती है। िीव इन संकल्पों ंका निकार बन िाता है।

निनको सत् और असत् में दृढ़ नववेक है, उनके पास नीच मन नहीं ंफटक सकता। निन मनुष्ों ंमें नववेक और दृढ़ ननश्चय है, वे माया को िल्दी ही पहचान सकते हैं और आत्म-प्राद्धप्त कर सकते हैं। इन िद्धियों ं(नववेक और इच्छा) के द्वारा माया का संयम नकया िा सकता है।

उन्नत और साद्धत्त्वक मन के द्वारा आत्मा के ितुरु इस नीच मन को मार दें। िब कभी आपको पदार्थ धोखा दे कर दुिःखी करें तो नववेक, नवचार और ििु बुद्धि से काम लें। यद्यनप एक बार बुद्धि इद्धन्द्रयों ंके भ्रम को, निसने मन को ढका हुआ र्ा, दूर कर देती है;

परन्तु मन नफर उन्ीं ंबसुतुओं ंकी ओर िो मरीनचका के समान भ्रामक हैं, लौट कर आता है। ज्ञान में द्धस्त होने तक बार-बार बुद्धि का उपयोग करें। ननश्चय ही अनवद्या बडी प्रबल होती है।

कामनाओं ंको त्यागें। वसुतुओं ंके संकल्पों ंको त्यागें। वैराग्य बढ़ायें। इस तुच्छ झूठे 'मैं' को त्याग दें। सारे संकल्प इस मैं के चारों ंओर घूमते हैं और इसे आवृत कर लेते हैं। िरीर की ओर अनधक ध्यान मत दें। िरीर और उसकी आवश्यकताओं ंका नवचार नितना हो सके, उतना कम करें।

कोई संकल्प न रखें। नवक्षेप वाला मन स्वयं ही मर िायेगा। यह ब्रह्म में घुल (अरूप मनोनाि) िायेगा। तब आपको आत्मा का साक्षात्कार होगा। िब मन मर िाता है तो 'मैं', 'तुम', 'यह', 'वह', काल, देि, िीव और िगत्-ये सब लोप हो िाते हैं। अन्दर और बाहर का नवचार भी नष्ट हो िाता है। केवल एक अखण्ड पररपूणथ नचदाकाि का ही अनुभव रहता है। हृदय में ज्ञानोदय के द्वारा सारे संिय दूर हो िायेंगे।

अहों-वृशत्त को नष्ट करें

आपको न केवल संस्कारों ंका नाि करने की चेष्टा करनी चानहए, अनपतु मन का, अहं-वृनत्त का (िो देहाध्यास बनाती है) और व्यावहाररक बुद्धि का भी (िो िीव-भाव और संसार के अनेक भेद बनाती है) नाि करना चानहए। तब आप स्वरूप (अर्ाथत् सहि, सद्धच्चदानन्द, ननननवथकल्प) - अवस्ा में द्धस्त हो िायेंगे। वही वास्तनवक मौनावस्ा या अद्वैत ब्रह्म-ननष्ठा है। मन के ननग्रह में ही बुद्धि का संयम और इस तुच्छ अहन्ता का नविाि भी सद्धम्मनलत है।

प्रभु यिीु कहते हैं, "अपने को खाली करो और मैं तुमको भर दूँगा।" इसका अर्थ है नक अपने अहंकार का नाि करें। तुममें ईश्वरीय भाव भर िायेंगे। इसे खाली करने का तात्पयथ है, **"योगशश्चत्तवृशत्तशनरोधिः"** अर्ाथत् नचत्त की वृनत्तयों का ननरोध करना। यह ररि करने की नक्रया ननिःसन्देह बडी कनठन साधना है; परन्तु तीव्र प्रकार
के ननरन्तर अभ्यास से सफलता नमलेगी, इसमें कोई ननिःसन्देह नहीं ंहै। यह केवल बडी तीव्र साधना से ही हो सकता है नक आप अनुपम अपौरुषेय के उच्चतर निखर पर पहुँच िायें िहाँ से संसार की वर-प्राप्त आत्माएँ सुदूर
दृश्यों ंका दिथन करती हैं और उन्नत नदव्य िीवन का उपभोग करती हैं।

यनद मन को 'मैं' के सारे संकल्पों ंसे हीन कर नदया िाये तो गुरु से दीक्षा प्राप्त करके आत्म-नचन्तन के
द्वारा और वेदों ंके तत्त्व को िान कर मन को नवनवध दुिःखों ंकीओर से मोडा िा सकता है और स्वानुभूनतमूलक
आनन्दपूणथ आत्मा पर आनश्रत नकया िा सकता है।

ब्रह्म-शवचार का अभ्यास करें

मन के सार् संघषथ मत करें। इससे िक्ति का अपव्यय होता है। इससे मनोबल पर अनधक िोर पडता तर्ा वह क्षीण होता है। मन के सार् संग्राम न करें। सत्य में रहें। ॐ में रहें। नवचार, ब्रह्म-भावना और नननदध्यासन के द्वारा आत्मा में रहें। सारी बाधाएँ, सारे नवक्षोभकारी तत्त्व, सारे मनोनवकार स्वयं नष्ट हो िायेंगे। नवचार-नवनध का प्रयोग करें, प्रतीत करें तर्ा उसकी उपयोनगता को समझें। मन का पूणथ संयम तो केवल ब्रह्म-नवचार द्वारा ही हो
सकता है। प्राणायाम, िप और दूसरे साधन तो सहायक हैं।

असफलता से हतोत्साशहत न हो ों

असफलता से ननरुत्साह न हों।ं यर्ाक् अपना प्रयत्न करते चले िायें। अपनी भूलों ंऔर हारों ंपर अनधक नवचार मत करें। केवल अपनी असफलता का कारण िानने के नलए अपनी भूलों ंको देखें और नफर प्रयत्न करने लगें। ऐसा करने से आप अपनी उन वृनत्तयों ंको सुखा देंगे निनके कारण आपसे भूल हुई र्ी; परन्तु उन पर अनधक सोचते रहने से उन्ें नया बल नमलता है। छोटी-मोटी असफलताओं ंके नलए अनधक कोलाहल मत करें।
बैठे-बैठे उन पर नवचार मत करते रहें।

कुछ लोगों ंका स्वभाव ऐसा होता है नक एक काम की चेष्टा करते हुए भी नकसी और बात को नवचारते
रहते हैं। ऐसे मनुष् अपने कायथ में सफल नहीं ंहोते। मन का नवचारात्मक अंग और नक्रयात्मक अंग दोनों ंको सार्-
सार् कायथ करना चानहए। नकसी एक वसुतु की ओर ध्यान देते हुए हमारे नवचार दूसरी वसुतु की ओर नहीं ंिाने
चानहए। िब आप पढ़ रहे हों,ं तो पढ़ाई का ही नवचार रखें। उस समय नक्रकेट मैच का नवचार मत करें। निस
समय नक्रकेट मैच खेल रहे हों,ं उस समय पढ़ाई का ध्यान मत करें। असफलता का प्रानयक कारण यही होता है
नक एक समय में एक से अनधक नवषयों ंका नवचार करने का प्रयास नकया िाता है।

बि कभी आप ननयम का पालन करते हैं तो उसे दृढ़ता से अक्षरिः पालन करें। यह मत कहें, "मैं
यर्ासम्भव करूँगा।" 'यर्ासम्भव' िब्द मन को सदयता देता है। मन केवल अवसर की प्रतीक्षा करता रहता है
और िब कभी प्रर्म अवसर प्राप्त होता है, यह िीघ्र ही प्रलोभन के वि में आ िाता है। इसनलए दृढ़ बने रहना
चानहए।

मन की भ्रमणिीलता को रोकें

अनधकांिमनुष् अपने मन को से्वेच्छाचारी और उद्दण्ड बना देते हैं। यह सदा पररवतथनिील तर्ा चंचल है। यह एक वसु्तु से दूसरी वसु्तु पर कूदता रहता है। यह चपल है। यह अनेक प्रकार के पदार्थ चाहता है। एक ही प्रकार की वसु्तुओं ंसे इसे अरुनच हो • िाती है। यह मॉूँ-बाप के दुलार में नबगडे बालक या कुनिनक्षत पिु की भाूँनत होता है। हममें से बहुत से मनुष्ों ंके मन वन्य पिुओं ंकी पिुिाला के समान होते हैं, निनमें प्रते्येक अपने-अपने स्वभाव में बरतता हुआ अपने मनोनीत पर् पर चलता है। बहुसंख्यक मनुष् मन का ननग्रह करना नहीं ंिानते।

मन की भ्रमणिीलता अनेक प्रकार से प्रकट होती है। मन की इस चंचल वृनत्त को रोकने के नलए आपको सदा सचेत रहना होगा। गृहस्र् का मन नसनेमा, नर्येटर, सरकस आनद में भ्रमता है। साधु का मन कािी, वृन्दावन और नानसक में िोलता है। बहुत साधु साधना-काल में एक स्र्ान पर द्धस्र्र हो कर नहीं ंरहते। नवचार के द्वारा इसे द्धस्र्र तर्ा िुि करके मन की भ्रमणिीलता को ननयद्धन्त्रत करना चानहए। ध्यानाभ्यास के नदनों ंमें एक स्र्ान पर कम-से-कम पाूँच वषथ तक िम कर रहने का अभ्यास मन में िाल देना चानहए। इसी तरह योग के एक मागथ-कमथ, भद्धि अर्वा वेदान्त-का आश्रय तर्ा एक ही आध्याद्धत्मक लक्ष्य और गुरु रखने का अभ्यास करना चानहए। स्र्ान-स्र्ान पर भटकने बाला साधक नसद्धि प्राप्त नहीं ंकर सकता। िब आप एक पुस्तक को पढ़ने के नलए उठायें तो उसे समाप्त करने से पहले दूसरी पुस्तक नहीं ंलें। िब आप नकसी काम में लगें तो उसे पूणथ सावधानी से करके समाप्त कर दें, उसके बाद ही कोई दूसरा काम आरम्भ करें। एक समय में एक ही काम को भली प्रकार करना अच्छा है। यही योनगयों ंकी कायथ करने की रीनत है।

बकरी–िैसा मन या वेश्या का-सा हृदय मत रखें। कुछ सेकेण्डों ंतक बकरी हरी घास के एक टुकडे में चरती है और नफर तुरन्त ही दूर के दूसरे टुकडे में कूद िाती है। इसी प्रकार अद्धस्र्र मन एक साधना से दूसरी साधना, एक गुरु से दूसरे गुरु, भद्धियोग से वेदान्त, ऋनषकेि से वृन्दावन कूदता रहता है। साधक के नलए यह बडा हाननकारक है। एक ही गुरु, एक ही स्र्ान, एक प्रकार के योग, एक प्रकार की साधना में लगे रहें। द्धस्र्र और दृढ़ बने रहें। तभी आपको सफलता नमलेगी। अपने मन को द्धस्र्र और दृढ़ननश्चयी बनायें।

मन को सधाएूँ। उससे कहें- 'रे मन! द्धस्र्र हो िा। एक ही नवचार पर िम िा। ब्रह्म ही केवल सत्य है।" यनद मन चंचल हो, िाूँवािोल हो तो एकान्त में िा कर मुूँह पर दो-तीन तमाचे लगायें। यह द्धस्र्र हो िायेगा। आत्मदण्ड से मन का नवके्षेप बहुत-कुछ रोका िा सकता है। िब कभी मन लक्ष्य से हट कर चलायमान हो, िब यह कुनवचारों ंको प्रश्रश्रय दे तो इसे भय नदखायें-मानो आप इसे चाबुक या बेंत से मारेंगे।

मन आपको पदार्ों द्वारा लुभाता और धोखा देता रहता है। दूरी से दृनष्ट में लुभावनापन आ िाता है। िब तक आप भोग-पदार्थ को प्राप्त नहीं ंकर लेते, वह दूर से बडा आनन्ददायी प्रतीत होता है और िब आप उसे प्राप्त कर लेते हैं तो वह परेिानी और दुिःख का कारण बन िाता है। इच्छा के सार् दुिःख नमला हुआ रहता है। पदार्थ ऐसा धोखा देते हैं नक वह बुद्धिमान् मनुष्ों ंको भी भ्रम में िाल देते हैं। वही मनुष् बुद्धिमान् है िो इन पदार्ों की भ्रामक प्रकृनत को िाूँच सके।

मन आपको सदा ही अनेक दृश्य देखने के नलए लुभाया करता है। आपको अपने लक्ष्य से हटाने के नलए मन सब ननरर्थक चालें चला करता है। सदा नववेक से काम लें। मन से कहें-रे मूखथ मन! क्ा तुमने पहले अनेक स्र्ान और दृश्य नहीं ंदेखे हैं। दृश्य देखने में क्ा रखा है? अन्दर ही आत्मा में द्धस्र्त हो िा। वह स्वयं आप्तकाम है। वहाूँ तुमको सब-कुछ नदखेगा। वह पूणथकाम और पूणथरूप है। बाहर क्ा देखेगा? क्ा वही आकाि, वही पृथ्वी, वही लालसा, वही भोिन, वही श्मिान, वही िौचालय तर्ा मूत्रालय सवथत्र नहीं ंहैं।"

प्रारम्भ में मैं मन को बहुत ढील नदया करता र्ा। यह मुझसे कहता र्ा, "हमें प्रयाग के कुम्भ-स्नान के नलए िाने दो।" मैं कहता र्ा, "मेरे प्यारे नमत्र मन, तुम िा सकते हो।" िैसे ही मैं वापस आता, मैं पूछता, "कहो मन,

अब तो तुम सनुतुष्ट हो ? तुमने वहाँू क्ा आनन्द भोगा?" तब यह नछप िाता और लज्जा से निर झुका लेता र्ा। धीरे-धीरे इसने पुरानी आदतों ंको छोड नदया और यह मेरा सच्चा नमत्र, पर्-प्रदिथक और गुरु बन गया और परम-पद की प्राद्धप्त के मागथ में मुझे अच्छी-अच्छी सलाह देने लगा।

गली के कुते्ते के समान मन को इधर-उधर मत नफरने दें। इसको सदा अपने वि में रखें। तभी आप सुखी रह सकते हैं। यह आपकी आज्ञा पूरी करने के नलए सदा उद्यत रहना चानहए। यनद मन कहे, 'पूवथ को चलो', तो पनश्चम नदिा में चले िायें। यनद मन कहे, 'दनक्षण को चलो', तो उत्तर की ओर िायें। यनद मन कहता है, 'िीत ऋतु में चाय का एक गरम प्याला नपयें', तो एक प्याला ठण्ढा पानी पी लें। मछली के समान माननसक प्रवाह के नवरुि तैरें। आप मन को सुगमता से वि में कर लेंगे।

िो काम मन पसन्द नहीं ंकरता, उसको करने की आज्ञा उसे (मन को) दी िाये तो वह नविोह करने लगता है। प्यार से बहला कर यनद समझाया िाये तो यह तुरन्त मान लेता है।

यनद मन को सारे नवषय-पदार्ों के सुख-केन्द्रों ंसे िून्य कर नदया िाये तो यह वैराग्य और त्याग को ग्रहण कर लेता है और स्वभावतिः आत्मा की ओर चलता है। मन से प्रते्येक बसु्तु का पररत्याग कर दें और आत्मज्ञान-प्राद्धप्त के द्वारा मन को नष्ट कर दें। स्वयमूभू ब्रह्म-पद में द्धस्त हो िायें। ननभीक िुद्धि के द्वारा ही दुिःख-रनहत मोक्ष की ननध प्राप्त हो सकती है।

स्वभाव को बदलें

मन स्वभावों ंकी गठरी है। ठीक अवसर आने पर बुरे स्वभाव, िो अपनी प्रकृनत में नछपे रहते हैं, अवश्य ही मन के ऊपर आ िाते हैं। यनद आप अपने स्वभाव को बदल दें तो आप अपने चररत्र को भी बदल सकते हैं। कमथ से स्वभाव बनता है, स्वभाव से चररत्र बनता है और चररत्र से प्रारि बनता है। स्वभाव सचेतन मन से उत्पन्न होता है; और िब बारम्बार दोहराये िाने से वह अवचेतन मन (अन्तिःकरण) में प्रवेि कर िाता है तो मनुष् की प्रकृनत का अंग बन िाता है।

यद्यनप स्वभाव प्रकृनत का अंग ही है, यह नये, स्वस्, अनुकूल तर्ा बलवान् स्वभाव से बदला िा सकता है। धैयथपूणथ प्रयत्न और लगन के द्वारा आप नकसी भी स्वभाव को बदल सकते हैं। नदन में सोना, देर से उठना, ऊँूचे स्वर से बात करना इत्यानद स्वभाव नये-नये स्वभाव बना कर बदले िा सकते हैं।

नये अभ्यास से आप अपनी लेखनिैली को बदल सकते हैं। इस प्रकार नयी नवचारिैली के द्वारा आप अपने प्रारि को भी बदल सकते हैं। कुएँू की ईंटों ंकी मुंिेरी के सहारे रस्सी और िोल से िब पानी खीचंते हैं तो ईंट में एक लीक पड िाती है और उस लीक के सहारे रस्सी बडी सुगमता से िाती है। इसी प्रकार एक ही रीनत से बार-बार नवचार करने से िो लीक मद्धस्तष्क में पड िाती है, उसके सहारे मन बडी सुगमता से िाता है। अभी आप सोचते हैं, 'मैं िरीर हूँ।' इस नवचार को बदल कर सोचने लगें, 'मैं ब्रह्म हूँ।' कुछ काल बीतने पर आप ब्रह्म-भावना में द्धस्त हो िायेंगे।

आध्याद्धत्मक साधना, नवचार, ध्यान, प्राणायाम, िप, िम और दम से साधक को एक नया ही मन मद्धस्तष्क में नये भावों,ं नयी स्नायु-धाराओं,ं नयी वीनर्यों ंतर्ा नयी लीकों ंसनहत नमलता है। मन के नवचरण तर्ा भ्रमण के नलए नयी स्नायु-धारा, नवीन मद्धस्तष्क कोिाणु आनद होते हैं। वह ऐसे कायों का कभी नवचार नहीं ंकरेगा निनका पररणाम आत्म-प्रिंसा तर्ा आत्म-प्रनतष्ठा हो। वह संसार की भलाई के नलए ही नवचार करता है। वह एकात्मता के भाव में सोचता है, अनुभव करता तर्ा कमथ करता है।

एक ही नवचार के दास मत बन ि◌ायें। ि◌ब कभी आपको नये स्वस् नवचार नमलें, पुराने नवचारों ◌ंको अवश्य त्याग देना चानहए। बहुत संख्या में मनुष् रूनढ़यों ◌ंके दास हैं। उनमें मन के पुराने स्वभाव और नवचारों ◌ंको बदल देने की ि◌द्धि नहीं ◌ंहोती। ि◌ब आप कोई नया और आश्चयथिनक समाचार सुनते हैं तो आप चौंकं पडते हैं। ि◌ब आप नयी वसुतु देखते हैं तो चौंकं पडते हैं। यह स्वाभानवक है। नये नवचारों ◌ंके सार् तो नविेष रूप में ऐसा होता है। मन तो अपने पुराने मागथ पर, पुरानी लीकों ◌ंपर ही चलता है। मन नकसी रमणीय या प्रीनतभिान नवचार के सार् आसि रहता है। कभी-कभी वह एक नवचार से अनावश्यक ही गोंदं के समान नचपक ि◌ाता है और उसे छोडता ही नहीं।◌ं कोई नया नवचार ग्रहण करना मन के नलए बहुत कनठन हो ि◌ाता है। ि◌ब कभी आप मन के नकसी पुराने नवचार को दूर कर उसको नया स्वस् नवचार देना चाहते हैं तो मन इसके नवरुि झगडा करता और प्रबल नविोह कर बैठता है। लीक के पास ही नया नवचार रख दें तो धीरे-धीरे मन इसे ग्रहण कर लेता है। प्रारम्भ में यह इसको ग्रहण करने में प्रचण्ड नविोह करेगा। बाद में बहलाने तर्ा फुसलाने से यह उसको ग्रहण और आत्मसात् कर लेगा।

मन में स्वभाव और इच्छा, साधकों ◌ंकी पुरानी संसारी आदतें और नयी आध्याद्धत्मक आदतें, पुराने नवषय-संस्कार और नये आध्याद्धत्मक संस्कार, ि◌ुभ वासना और अिुभ वासना, नववेक और पिुबुद्धियिु मन तर्ा इद्धन्द्रयों ◌ंका आन्तररक युि ननत्य ही चलता रहता है। ि◌ब कभी आप बुरी आदत को छोड कर नयी आदत बनाने का प्रयत्न करेंगे तो आपकी इच्छाि–द्धि और स्वभाव में आन्तररक झगडा उठ खडा होगा। यनद आप काम, क्रोधानद को भगाने का प्रयत्न करते हैं तो वे कहते हैं, "हे ि◌ीव! तुमने हमें अद्धस्-मांस के इस मकान में दीघथ काल तक रहने की आज्ञा दी है। अब तुम हमें क्ों ◌ंननकालना चाहते हो? तुम्हारे उते्तिना और वासना के समयों ◌ंमें हमने तुम्हारी बडी सहायता की है। हमें यहाँ रहने का पूणथ अनधकार है, हम ि◌टे रहेंगे, हमें भगा देने के तुम्हारे प्रयत्नों ◌ंका हम सामना करेंगे, हम तुम्हारे ध्यान में बाधा ि◌ालेंगे और बारम्बार प्रकट होंगें।" स्वभाव पुरानी आदत को लाने का यरािक् प्रयत्न करेगा। कभी झुकें नहीं।◌ं अन्त में इच्छा की नविय नननश्चत है। यनद आप एक-दो बार असफल भी हो ि◌ायें तो कोई बात नहीं।◌ं नफर इच्छाि–द्धि से काम लें। इसमें कुछ सन्देह नहीं ◌ंहै नक अन्त में ि◌ुि और दृढ़ इच्छाि–द्धि ही सफल होगी। ि◌ब आपकी तकथ-बुद्धि बढ़ ि◌ाये, ि◌ब आप स्वाध्याय, सत्संग और ध्यान के द्वारा अनधक ज्ञानवान् और बुद्धिमान् हो ि◌ायें तो आपका मन हर समय नये स्वस्, बुद्धिसंगत नवचारों ◌ंको ग्रहण करने और पुराने दूनषत नवचारों ◌ंको ननकाल देने के नलए उद्यत रहना चानहए। यही मन की ठीक-ठीक उन्ननत है।

मन आपका उपकरण मात्र है, इसको भली प्रकार काम में लें

मन तो आपका उपकरण ही है। आपको इससे भली प्रकार काम लेना ि◌ानना बानहए। ि◌ब मन में नभन्न-नभन्न भावनाएँ, मिृ और भाव उत्पन्न हों ◌ं तो उनको अलग-अलग कर लें। उनकी प्रकृनत का अध्ययन करें, उनका नवचे्छेदन तर्ा नवश्लेषण करें। उनके सार् अपना तादात्म्य न करें। वास्तनवक 'मैं' तो उनसे नबलकुल पृर्क् है। यह मूक साक्षी है। अपनी अन्त:पे्ररणाओं,◌ं आवेगों ◌ंऔर नचत्तवृनत्तयों ◌ंपर प्रभुत्व प्राप्त करें और दास की अवस्ा से उठ कर आध्याद्धत्मक रािा बन ि◌ायें ि◌ो नक उन पर ि◌द्धि और अनधकार सनहत ि◌ासन कर सके। वास्तव में आप ननत्य स्ायी, सवथव्यापक आत्मा है। अपने को मन के अन्याय से छुडा लें। इस मन ने आपको अब तक तंग नकया है, आप पर िासिन नकया है और आपके इच्छानुसार आपका ि◌ोषण नकया है। नसंह के समान साहस कर उठ बैठें। अपनी सच्ची आत्मा की मनहमा का उद्घोष करें और मिृ हो ि◌ायें।

इस ि◌द्धिाली, सूक्ष्म मन-रूपी यन्त्र के चतुर संचालक बन ि◌ायें। अपनी सारी माननसक ि◌द्धियों ◌ंको अपने उत्तम लाभ के नलए उपयोग करें। ि◌ब आप इसको योग्यता से उपयोग करना ि◌ान लेंगे तो मन आपका अच्छा और सहषथ उतुसुक सेवक बन ि◌ायेगा। अवचेतन मन से भी काम लें। सुषुद्धप्त में अर्वा ि◌ाग्रतावस्ा में इसे काम करने के नलए आज्ञा दें। यह पल-भर में सारे आँकडे यर्ास्ान ठीक करके छूट देगा।

यनद आप मन से काम लेने का रहस्य िान लें तो निधर को आप चाहें उधर को ही इसे मोड सकते हैं। निन वसुतुओं ंको आप इस समय पसन्द करते हैं, उनके नलए अरुनच और निन्हें अत्यन्त नापसन्द करते हैं, उनके नलए रुनच पैदा कर सकते हैं।

मन निस काम को करना नहीं ंचाहता, वही काम करें। मन निस काम को करना चाहता हो, उसे नहीं ं करें। मन के ननग्रह और इच्छा–ि्धि को बढ़ाने की यह एक नवनध है।

सकारात्मक अशभवृशत्त रखें

मन में एक प्रकार की अनभवृनत्त रख कर अपने को सकारात्मक बनाने के द्वारा हाननकारक तरा अवांछनीय प्रभावों ंसे बन्द कर लेने की ि्धि प्राप्त करने की चेष्टा करें। ऐसा करने से आप अन्तरात्मा की सारी उच्चतर पे्ररणाओं ंऔर बाह्य िगत् के उन्नत प्रभावों ंऔर ि्धियों ंके ग्रहणिील बन िायेंगे। यह आत्म-सुझाव दें, 'मैं अपने को नीचे की सारी वसुतुओं ंके नलए सकारात्मक बनाता हूँ और ऊपर भी सारी उन्नत ि्धियों ंके नलए उद्घानटत करता तरा ग्रहणिील बनाता हूँ।' कभी-कभी अनभज्ञतापूवथक इस प्रकार का मनोभाव धारण करते रहने से ही वह स्वभाव बन िाता है। िीवन के दृष्ट तरा अदृष्ट अंगों ंसे सारे अवनत तरा अवांछनीय प्रभाव बन्द हो िाते हैं और सारे उच्चतर प्रभावों ंका आह्वान होता है और नितनी मात्रा में इनका आह्वान होता है, उसी अनुपात से ये मन में प्रवि करते हैं।

मन में िंका होती है। ननश्चय भी होता है। ईश्वर के अ्धस्तत्व के नवषय में िंका होती है। यह संयि-भावना कहलाती है। एक और िंका होती है नक मैं ब्रह्मसाक्षात्कार कर सकता हूँ या नहीं।ं तब एक पुकार कहती है: "ईश्वर अर्वा ब्रह्म सत्य है, वह हस्तामलक के समान सत्य है। वह प्रज्ञानघन, नचिन और आनन्दधन है। मैं उसे प्राप्त कर सकता हूँ।" हमने यह बात भली प्रकार समझ ली और ये नवचार खूब पक्के हो गये हैं। कुछ नवचार धुूँधले और अदृढ़ होते हैं। वे आते हैं और चले िाते हैं। हमें नवचारों ंको नवकनसत करना होगा और अन्तिःकरण में उनके दृढ़ता से िम िाने तक उन्हें स्रानपत करना होगा। नवचारों ंको साफ करने से मन का भ्रम और मोह िाता रहेगा।

बि कभी मन में िंका होती हो, 'ईश्वर है या नहीं,ं मैं आत्म-साक्षात्कार में सफल होऊँगा या नहीं' ं तो इसको भली प्रकार लगायी हुई भावनाओं ंसे दूर कर देना चानहए। िैसे 'यह सच है, मैं अवश्य सफल होऊँगा, इसमें कोई सनेदेह नहीं ंहै।' मेरे िब्दकोि में ये िब्द नहीं ंहैं: 'नहीं ंकर सकता', 'असम्भव है', 'कनठन है।' संसार में सब-कुछ सम्भव है। िब आप दृढ़ ननश्चय कर लें तो कोई काम कनठन नहीं ंहै। दृढ़ ननश्चय से प्रत्येक कायथ में सफलता अवश्य नमलती है।

सहायक ि्क्तयो ोंकी सामथ्यछ

आसुरी ि्धियों ंका नवरोध करने के नलए आपके अन्दर सहायक ि्धियाँ भी होती हैं। यनद आप एक बार 'ॐ' या 'राम' के दि नाम उच्चारण करें या एक बार पाँच नमनट के नलए ध्यान करने बैठें तो चाहे आप अनवद्या या माया के कारण आध्या्धत्मकता के नवषय में सब-कुछ भूल िायें तो भी इसका संस्कार आपको एक बार नफर बारम्बार मन्त्र का िप करने और कुछ काल तक नफर ध्यान में बैठने के नलए बानधत करेगा। काम-क्रोधानद नवरोधी ि्धियाँ आपको नगराने का प्रयत्न करेंगी और आध्या्धत्मक ि्धियाँ, सत्त्वगुण और िुभ वासनाओं ंकी ि्धियाँ आपको उन्नत करके ईश्वर तक ले िाने की चेष्टा करेंगी। स्मरण रखें नक दूनषत नवचार परस्त्रीगमन का श्रीगणेि है। यनद पहले आपके मन में सप्ताह में तीन बार कुनवचार आता रा और अब महीने में एक बार ही आता है; यनद पहले सप्ताह में एक बार क्रोध आता रा और अब महीने में एक बार आता है तो यह उन्ननत का नचह्न है।

यह बताता है नक आपकी इच्छा–द्धि बढ़ गयी है। यह आपके बढ़े हुए आत्मबल का द्योतक है। प्रसन्न रहें। आध्याद्धत्मक उन्ननत का दैननक लेखा रखें।

सवथदा ओिावादी, आत्म-नवश्वासी, साहसी और दृढ़ननश्चयी तर्ा अपने लक्ष्य पर लगा हुआ मन पंचतत्त्वों ंमें से अपनी कायथनसद्धि के नलए उपयोगी और सहायक पदार्थ तर्ा ि्द्धियाँ ग्रहण कर लेता है।

मनोशनग्रह की कुर् मागछदिछक रूपरेखाएँ

मन की संरचना ही कुछ इस प्रकार की है नक वह सुख और दुि:ख की चरम सीमाओं ंपर ि पहुँचता है। साधना के द्वारा इसे समता में लाना चानहए। यह प्रकृनत से ही एकपक्षीय है। माननसक संयम के द्वारा सवांगीण नवकास प्राप्त करना चानहए।

अपने अन्दर प्रबल तर्ा गम्भीर खिो करें। अपने मन और इद्धन्द्रयों ंपर नवश्वास न करें। वे आपके ितुरु हैं। कंचन और कानमनी आपके कट्टर ितुरु हैं। ये दोनों ंमहान् बुराइयाँ हैं।

मन आसद्धि, तृष्णा, संस्कार और वासनाओं ंके बल से मनुष् पर अपना साम्राज्य स्र्ानपत करता है। यह अनेक प्रकार की चाल चलता है। यनद आप एक बार इसके व्यवहार को िान लें तो यह चोर की भाँनत नछप िाता है। नफर यह आपको दुि:ख नहीं ंदेता।

मनोननग्रह के नलए आपको सात बातें करनी होती : (१) आपको सारी कामनाओं,ं वासनाओं ंऔर तृष्णाओं ं से रनहत होना चानहए। (२) आपको अपने आवेगों ंपर ननयन्त्रण करना चानहए, निससे आपको क्रोध और अधीरता का अनुभव न हो। (३) आपको स्वयं मन का संयम करना चानहए। आपको अपनी प्रकृनत को ननयद्धन्त्रत करना चानहए निससे नवचार सदा िान्त और उद्वेग-रनहत हो। (४) मन के द्वारा आपको नानडयों ंका ऐसा संयम करना चानहए नक वे नितनी हो सकें, उतनी ही कम उत्तेनित हों।ं (५) आपको अनभमान का त्याग कर देना चानहए। अनभमान से मन को बल प्राप्त होता है। अनभमान मन का बीि है। िब आप ननरनभमानी बन िाते हैं तो आलोचना, कटाक्ष और ननन्दा आपको कैसे प्रभानवत कर सकते हैं? (६) आपको सारी ममताओं ंका कठोरता से नाि कर देना चानहए। (७) आपको सारी आिाओं ंऔर पूवाथग्रहों ंका त्याग कर देना चानहए।

ननम्नांनकत बातें आपको ननश्चय ही मन की िाद्धन्त प्राप्त करायेंगी : (१) दुिथनों ंकी संगनत से बचें। (२) अकेले रहें। (३) अपनी माँगों ंको कम करें। (४) नववाद न करें। इससे नवरोध-भाव बढ़ता है। यह िद्धि का कोरा अपव्यय है। (५) अपनी तुलना दूसरों ंसे न करें। (६) िनता की आलोचना पर ध्यान न दें। (७) नाम और यि का नवचार छोड दें।

महनषथ पतंनिल के मतानुसार मैत्री, करुणा, मुनदता और उपेक्षा के द्वारा नचत्तप्रसाद अर्ाथ मन की िाद्धन्त नमलती है।

अपने साद्धत्त्वक मन के द्वारा आपको इस मन से बचना चानहए िो पदार्ों की ओर दौडता है और ऊपर को उन्ननत करते हुए मन में नबना नकसी अवसाद के उस अनवनािी परम-पद की प्राद्धप्त के नलए तपस्या का धन इकट्ठा करना चानहए। िैसे चक्रवती सम्राट् पृथ्वी के सारे रािाओं ंको अपने वि में कर लेता है ऐसे ही इस नवक्षेपयुि मन को अनवचल मन के द्वारा संयत कर लेना चानहए। तब यह अपने परम-पद को प्राप्त हो िायेगा।

परिच्छेद - ३१

धारणा

"तत्प्रशतषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासिः"

-मन के नवक्षेप को हटाने के नलए एक पदार्थ पर धारणा का अभ्यास करना चानहए।

(पातंजलयोगसूत्र : १-३२)

धारणा िान्त की कुंजी है

सांसाररक सुखों ंसे उपभोग की इच्छा तीव्र हो िाती है। इसनलए संसारी मनुष्ों ंका मन बहुत अिान्त रहता है। उन्ें तृद्धप्त और माननसक िाद्धन्त नहीं ंहोती। आप मन के नलए चाहे नकतना ही सुख-संचय कर लें; पर वह कभी भी तुष्ट नहीं ंहो सकता है। िो नितना ही सुख भोगता है, उसकी उतनी ही अनधक वासना बढ़ती है। इसनलए मनुष् अपने ही मन के द्वारा दुःखी तर्ा बेचैन बने रहते हैं। वे अपने मन से ऊब िाते हैं। इस बेचैनी और कष्ट को दूर करने के नलए ही ऋनषयों ंने मन को सारे ऐद्धन्द्रक सुखों ंसे हीन रखने को सवोत्तम माना र्ा। िब मन एकाग्र अर्वा समाप्त हो िाये तो यह दूसरे सुखों ंकी खोि के नलए मनुष् को परेिान नहीं ंकर सकता और सारे दुःख तर्ा नचन्ताएँ सदा के नलए दूर हो िाते हैं और मनुष् को सच्ची िाद्धन्त नमल िाती है।

मन में मूतथ रूप देने की िद्धि है निसे बनहमुथख-वृनत्त कहते हैं। संसारी मनुष्ों ंके मन की िद्धियाँ नछन्न-नभन्न रहती हैं और अनेक नदिाओं ंमें माननसक िद्धियाँ बँट िाती हैं। निस प्रकार प्रकाि की नकरणें नबखरी हुई होती हैं वैसे ही मन की िद्धियाँ नबखरी रहती हैं। ये अनेक पदार्ों की ओर द्धखंच िाती हैं। िब मन की रद्धश्मयाँ नवनभन्न पदार्ों पर नबखरी रहती हैं तो आपको दुःख होता है। िब अभ्यास द्वारा ये इकट्ठी तर्ा संकेद्धन्द्रत रहती हैं तो मन एकाग्र हो िाता है और आपको अन्दर से आनन्द प्राप्त होता है।

बि छह वषथ पश्चात् आप अपने नप्रय नमत्र से नमलते हैं तो िो आनन्द आपको प्राप्त होता है वह व्यद्धि-नविेष से नहीं ंआता, अनपतु आपके अन्दर से ही आता है। उस समय के नलए मन एकाग्र हो िाता है और अपने ही अन्दर से आपको आनन्द नमलता है।

बि आप कश्मीर में हों ंऔर गुलमगथ, सोममगथ, चश्मिाही, अनन्तनाग आनद स्र्ानों ंमें सुन्दर दृश्य देखने में व्यस्त हो रहे हों,ं उस समय यनद आपके इकलौते पुत्र के असामनयक ननधन का दुिःखद समाचार तार द्वारा प्राप्त हो तो उसके वज्रपात-समान दुिःख से आपका मन अकस्मात् नवकल हो िायेगा। नफर वे दृश्य आपको रुनचकर नहीं ंहोंगें। आपके नलए उनका आकषथण िाता रहेगा। अवधान अनुपद्धस्र्त है। उसका स्र्ान नवषाद ने ले नलया है। मन के धारणा और अवधान से ही आपको सैर-सपाटे में आनन्द नमलता है।

धारणा के नलए वैराग्य और अभ्यास, त्याग और तप के द्वारा धैयथ के सार् आपको मन की इन नबखरी हुई रद्धश्मयों ंको समेटना होगा और नफर साहस और अर्क िद्धि के सार् परमात्मा या ब्रह्म की ओर आगे बढ़ना होगा। सतत साधना द्वारा मन को मूतथ रूप देने से रोकना होगा तर्ा उसे उसके आद्य केन्द्र की ओर अग्रसाररत करना होगा।

मन के स्वरूप के दृष्टात

मन की तुलना पारे से की िाती है; क्ोंनक इसकी रद्धश्मयाँ नवनभन्न पदार्ों पर नबखरी रहती हैं। इसकी तुलना बन्दर से की िाती है; क्ोंनक यह एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर कूदता रहता है। इसकी तुलना गनतमान् वायु से की िाती है; क्ोंनक यह चंचल है। वासनामयी अनवचाररता के कारण इसकी तुलना अनत कुनि मस्त हार्ी से की िाती है। िैसे पक्षी एक टहनी से दूसरी टहनी पर, एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर फुदकता नफरता है, वैसे ही मन एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर कूदता रहता है। इसनलए इसे 'बडा पक्षी' भी कहते हैं। राियोग हमें अपने मन को एकाग्र करने और तदुपरान्त प्रकोष्ठों ंकी छानबीन करने की नवनध बतलाता है।

धारणा की शवशभन्न िेशणयाँ

नक्षप्त, मूढ़, नवनक्षप्त, एकाग्र और ननरुि-ये पाँच योग-भूनमकाएँ हैं। नक्षप्त-अवस्र्ा में मन की नकरणें अनेक पदार्ों पर नबखरी होती हैं। मन िान्त रहता है और एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर कूदता रहता है। मूढ़-अवस्र्ा में मन में अज्ञान और नवस्मृनत रहती है। नवनक्षप्त अवस्र्ा में मन एकाग्र होने का प्रयत्न करता है। कभी एकाग्र हो िाता है और कभी नबखरा रहता है। धारणा का अभ्यास करने से मन एकाग्र होने की चेष्टा करता है। एकाग्र-अवस्र्ा में पहुँचने पर यह एक स्र्ान पर द्धस्र्र हो िाता है। मन में केवल एक ही नवचार रहता है। ननरुि- अवस्र्ा में मन नबलकुल वि में हो िाता है। मन के नवकारों ंको बन्द करने के नलए धारणा का अभ्यास नकया िाता है।

धारणा-िद्धि

मन से चालाकी के सार् काम लेने से आप इसको अपने वि में ला सकेंगे, इससे इच्छानुकूल काम ले सकेंगे और इसे अपने आज्ञानुसार सारी िद्धियाँ इकट्ठी करने को नववि कर सकेंगे। निसने मन से चालाकी से काम लेना सीख नलया है, वह सारी प्रकृनत को अपने वि में कर सकता है। मानव-मन की िद्धि असीम है। यह नितना अनधक एकाग्र हो िाता है एक नवषय पर उतनी ही अनधक िद्धि लग िाती है।

एक वैज्ञाननक मनोननवेे के कारण बहुत-सी वसुतुओं ंका आनवष्कार करता है। धारणा के द्वारा वह स्रूल मन की परतें खोल कर इसके उन्नत प्रदेिों ंमें प्रवेि कर िाता है और गम्भीरतर ज्ञान प्राप्त करता है। वह अपने मन की सारी ितियों ंको एक ही केन्द्र पर एकनत्रत करता है और निन पदारोें का नवश्लेषण कर रहा होता है उसी पर लगा देता है और इस प्रकार उनके रहस्य को िान लेता है।

धारणा मनुष्य का मुख्य कतछव्य है

छान्दोग्य उपननषद् (७-२०-१) के भाष् में श्री िंकर ने नलखा है नक मनुष् का धमथ यही है नक वह इक्ष्न्द्रयों ंका ननग्रह करके मन को एकाग्र करे। मनुष् को उनचत है नक िब तक सारे नवचारों ंका पूणथतया नाि न हो िाये तब तक लगातार अभ्यास करके मन को एक समय में एक ही सत्य पर क्ष्रस्त करता रहे। ऐसे अनवरत अभ्यास से मन की एकाग्रता होने लगेगी और सारे नवचार-समूह नष्ट हो िायेंगे। धारणा और भोग-वासना का नवरोध है, आनन्द का हलचल तरा नचन्ता से नवरोध है, दीघथकालीन नवचार और असामंस्य का नवरोध है, प्रायोनगक नवचार का आलस्य और ननक्ष्ियता से नवरोध है, हषथ और वैर का नवरोध है।

आपको मनुष्-िन्म इसनलए नमला है नक नभन्न-नभन्न पदारोें पर नबखरी हुई मन की ितियों ंको समेट कर ईश्वर की ओर लगायें। यह आपका परम आवश्यक कतथव्य है। अपने कुटुम्ब, सन्तान, धन, पद, मान, नाम तरा यि के मोह के कारण आप इस कतथव्य को भूल िाते हैं।

मन की पनवत्रता के उपरान्त उसे ईश्वर पर एकाग्र कर देने से आपको सच्चा आनन्द और ज्ञान प्राप्त होगा। आपका िन्म ही इसनलए हुआ है। राग और मोह के द्वारा आप बाहरी पदारोें पर पहुँच िाते हैं।

मन को आत्मा पर एकाग्र करें। सवथव्यापी, िुि ज्ञान-स्वरूप, स्वयं-ज्योनत ब्रह्म में मन को लगायें और वहाँ ही अपने को क्ष्रस्त कर दें। तब आप ब्रह्मसंस्र् हो िायेंगे।

धारणा कैसे करें

मन की एकाग्रता (धारणा) का अभ्यास करें। इस अभ्यास में आपको मालूम होगा नक आपको स्वभावतिः मन में नवचार-मूनतथयाँ बनानी पडती हैं। आप इसका पररहार नहीं ंकर सकते हैं। मन को एक पदार्थ पर लगायें और यह िब-िब उस पदार्थ से दूर भागे, इसे बार-बार लौटायें और नफर से लक्ष्य पर लगायें। मन को सैकडों ंनवचारों ंकी मूनतथयाँ मत बनाने दें। अन्तमुथख हो कर नवचार करें और सचेत हो कर देखें। अकेले रहें, संगनत से बचें और नकसी से न नमलें। यह परमावश्यक है। ननरर्थक नवचारों,ं ननरर्थक नचन्ताओं,ं ननरर्थक भय और पूवाथभासों ंमें पड कर मन की ितियों ंका व्यर्थ अपव्यय न करें। ननरन्तर अभ्यास से मन को आधे घण्टे तक एक ही नवचार पर क्ष्रस्र बनायें। मन को अपने को एक आकार देने दें तरा ननरन्तर और अनवक्ष्च्छन्न अभ्यास द्वारा लगातार घण्टों ंतक उस आकार को बनाये रखने का प्रयत्न करें।

धारणाक्या है ?

"दिबन्धशश्चत्तस्य धारणा" - एक मूनतथ या पदार्थ में मन को द्धरूरता के सार् बहुत समय तक लगाये रखना धारणा कहलाती है (योगसूत्र : ३-१)। नकसी बाह्य पदार्थ, आन्तररक चक्र या नकसी नवचार-नविेष पर मन को एकाग्र करने को धारणा कहते हैं।

आतररक चक्रो ोंपर धारणा

एक रियोगी नत्रकुटी पर धारणा करता है िो नक िाग्रत अवस्र्ा में मन का स्र्ान है। इस स्र्ान पर धारणा करने से आप सुगमता से मन को एकाग्र कर सकते हैं। इस चक्र पर एकाग्र हो कर ध्यान करने से मन बडी सुगमता से वि में हो िाता है। आज्ञा चक्र पर धारणा और ध्यान से बडी सुगमता से मन पर ननयन्त्रण होता है। कुछ लोग नत्रकुटी पर धारणा करके एक ही नदन के अभ्यास से ज्योनत देखने लगते हैं। िो नवराट् का ध्यान करना चाहता है और संसार की सहायता करना चाहता है, उसे नत्रकुटी पर धारणा करनी चानहए।

भि को हृदय पर धारणा करनी चानहए, क्ोंनक वह भावनाओं ंऔर अनुभूनतयों ंका स्र्ान है। हृदय पर धारणा करने से बडा आनन्द नमलता है। निसे आनन्द-प्राद्धप्त की इच्छा हो, उसे हृदय पर धारणा करनी चानहए।

हठयोगी अपना मन सुषुम्ना नाडी पर द्धरूर करता है और मूलाधार, मनणपूर या आज्ञा चक्र पर ध्यान लगाता है। कोई-कोई योगी नीचे के चक्रों ंको छोड कर आज्ञा चक्र पर ही ध्यान लगाते हैं। उनका यह नसान्त है नक आज्ञा चक्र को वि में कर लेने से और सब चक्र स्वयमेव वि में हो िाते हैं। िब आप नकसी चक्र पर धारणा करते हैं तो उस चक्र से मन के सार् सूत्र-िैसा सम्बन्ध हो िाता है। नफर सुषुम्ना के द्वारा योगी एक चक्र से दूसरे चक्र पर चढ़ता िाता है। यह आरोह िनैः िनैः धैयथ के सार् प्रयत्न करने से होता है। सुषुम्ना-द्वार के साधारण से स्पन्दन से ही बहुत आनन्द नमलता है। आप मस्त हो िायेंगे और संसार को नबलकुल भूल िायेंगे। िब सुषुम्ना-द्वार र्ोडा-सा खुलता है तो कुण्डनलनी िद्धि सुषुम्ना में प्रविे करने का प्रयत्न करती है। उस समय बडा वैराग्य हो िाता है। मनुष् अभय हो िाता है। अनेक दृश्य सामने आते हैं। अन्तर्ज्योंनत का दिथन होता है। यह उन्मनी-अवस्र्ा कहलाती है। नभन्न-नभन्न चक्रों ंको वि में करने तर्ा उनका पररचालन करने से आपको नभन्न-नभन्न नसद्धियाँ, नाना प्रकार का आनन्द और अनेक प्रकार का ज्ञान नमलेगा। मूलाधार चक्र को वि में कर लेने से पृथ्वी वि में हो िाती है। मनणपूर-चक्र को वि में कर लेने से अनन पर नविय नमलती है; अनग्न आपको नहीं ंिला सकती। पंचधारणा (पाँच प्रकार की धारणा) नसि करने से आपको पाँचों ंतत्त्वों ंको िीत लेने में सहायता नमलेगी। इसको नकसी पूणथ योगी गुरु से सीखना चानहए।

एक चेतावनी

यनद निर में ददथ मालूम हो तो िरीर से बाहर धारणा का लक्ष्य बदल दें। यनद नत्रकुटी पर धारणा करने से दृनष्ट िमाने से पीडा होने लगे तो इसे तुरन्त छोड कर हृदय में धारणा करने लगें। यनद आपको हृदय, नत्रकूट या मूधाथ में धारणा करने में निरिः पीडा प्रतीत हो तो आप नकसी बाह्य वसुतु पर मन को लगा सकते हैं।

बाह्य पदार्छ पर धारणा

बाहरी पदार्ों पर मन को एकाग्र करना सुगम है; क्ोंनंक मन की स्वाभानवक वृनत्त बाहर की ओर रहती है। आप नीलाकाि, सूयथ की ज्योनत, सवथव्यापक वायु, आकाि, सूयथ, चन्द्रमा, तारागणों ंमें से नकसी पर धारणा कर सकते हैं।

धारणा का प्रशिक्षण

प्रारम्भ में मन को एकाग्र बनाने के नलए नभन्न-नभन्न उपायों ंसे प्रनिनक्षत करें। कान बन्द कर हृदय के अनाहत–ब्द पर धारणा करें। सोऽहम् का उच्चारण करके श्वास पर धारणा करें। नकसी स्थूल मूनतथ पर धारणा करें। नीलाकाि पर धारणा करें। सवथव्यापी सूयथ के प्रकाि पर धारणा करें। िरीर के नभन्न-नभन्न चक्रों ंपर धारणा करें। सत्यम्, ज्ञानम्, अनन्तम्, एकम्, ननत्यम् आनद भावों ंपर धारणा करें। अन्तिः में एक ही वस्तु को दृढ़ता से पकड लें।

धारणा में सहायक

श्रिा

चाहे कोई नवषय तकथ और मान्य प्रमाणों ंद्वारा नसि हो िाये, नफर भी मनुष्ों ंके मन स्थूल बाह्य पदार्ों से भरे रहते हैं, इसनलए नबना पूणथ श्रिा के सूक्ष्म सत्य-नसिान्तों ंको ठीक-ठीक समझ लेना सम्भव नहीं ंहै। िब श्रिा होती है तो मन को ज्ञातव्य नवषय में आसानी से केन्द्रित नकया िा सकता है और तब िल्दी ही समझ में आ िाता है।

प्राणायाम

प्राणायाम, िप, नवचार और भक्ति के द्वारा रिोगुण को, िो मन के सतोगुण को ढके हुए है, दूर कर दें। नफर मन धारणा के योग्य हो िायेगा। प्राणायाम सत्त्वगुण को ढकने वाले रिस् और तमस् के आवरण को दूर करता, नानडयों ंको िुि करता तर्ा मन को दृढ़ और स्थिर करके धारणा के योग्य बना देता है। िैसे स्वणथ की मैल उसे नपघलाने से ननकल िाती है इसी प्रकार प्राणायाम द्वारा मन की मैल दूर हो िाती है। हठयोगी प्राणायाम के द्वारा प्राण-ननरोध करके मन को एकाग्र करने का प्रयत्न करता है।

रिायोगी नचत्त-वृनत्त-ननरोध के द्वारा अर्ाथत् मन को अनेक पदार्थ-मूनतथयाँ न बनाने दे कर मन एकाग्र करने का प्रयत्न करता है। वह प्राणायाम की नचन्ता नहीं ंकरता। परन्तु िब मन का ननरोध हो िाता है तो स्वतिः ही प्राण-ननरोध अवश्यम्भावी होता है। हठयोग रिायोग की ही एक िाखा है।

अवधान

धारणा में अवधान बडा काम करता है। यह इच्छा की मूल नभनत्त है। िब अन्तमुथख होने के नलए इसको ठीक-ठीक चलाया िाये और ननन्दथष्ट नकया िाये तो यह मन का नवश्लेषण कर देगी और बडी-बडी अद्भुत बातों ं को आपके नलए प्रकानित कर देगी।

नितने िोर से कोई वसुतु मन से टकराती है, वह उस पदार्थ पर नदये हुए, अवधान की मात्रा के अनुकूल ही होता है। सूमृनत की महती कला भी अवधान में सनन्ननहत है और अनवधानी मनुष्ों ंकी स्मरण िद्धि क्षीण होती है। वृिावस्ा में यह िद्धि क्षीण हो िाती है।

चेतना को केद्धन्द्रत करना अवधान कहलाता है। यह सुसंसूकृत इच्छा–द्धि का एक नचह्न है। यह दृढ़ मन के मनुष्ों ंमें पायी िाती है और बडी अमूल्य िद्धि है। ब्रह्मचयथ इस िद्धि को अद्भुत रूप से बढ़ाता है। निस योगी में यह िद्धि होती है, वह अनप्रय पदार्थ पर भी सुदीघथ काल तक धारणा कर सकता है। ननरन्तर अभ्यास द्वारा अवधान की वृद्धि की िा सकती है। संसार के सारे महान् पुरुष, निन्ोंने महत्त्व प्राप्त नकया है, इसी िद्धि के कारण उन्नत बन सके हैं।

अवधान की िद्धि के द्वारा मन अपनी सारी नक्रयाएँ करता है। अवधान ही इच्छा–द्धि का मूलाधार है। इसनलए अवधान के बल को बढ़ायें।

अवधान दो प्रकार का होता है-आत्मपरक अर्ाथत् आन्तररक नवचार-सम्बन्धी और वसुतुपरक अर्ाथत् बाह्य पदार्थ-सम्बन्धी। आप िो कुछ भी काम कर रहे हैं उस समय उसी में अपना सारा अवधान लगा दें। निस पदार्थ को मन चाहता है उस पर धारणा करना तो सुगम है। अनप्रय होने के कारण निन कायों से आप पहले से बचते रहे हों ंउन पर अवधान का अभ्यास करें। अरुनचकर पदार्ों और नवचारों ंमें रुनच पैदा करें। उनको मन के समुमुख रखें। धीरे-धीरे रुनच प्रकट होगी, अनेक माननसक दुबथलताएँ दूर हो िायेंगी तर्ा मन अनधक बलवान् हो िायेगा।

एकाग्र मन से धारणा का एक दृष्टात

एक कारीगर तीर बनाया करता र्ा। एक समय वह अपने काम में बहुत ही व्यस्त र्ा। उसकी दुकान के सामने से रािा की सवारी बडी भीड-भाड के सार् ननकल गयी; परनुतु वह काम में इतना तल्लीन र्ा नक उसने उसे देखा तक नहीं।ं िब आप अपना मन परमात्मा में लगायें तो आपकी धारणा भी इसी प्रकार की होनी चानहए। आपको केवल ईश्वर का ही एक नवचार होना चानहए। एकाग्र मन से धारणा प्राप्त करने के नलए आपको बडा भारी प्रयत्न करना पडेगा। दत्तात्ेरय ने उस तीर बनाने वाले को अपना गुरु माना र्ा।

सामान्य भूल

िक्टिरी के कुछ नवद्यार्ी नचनकत्सा-महानवद्यालय में प्रवेि लेने के तुरन्त बाद ही उसे छोड देते हैं; क्ोंनक उन्ें फोडों ंमें से पीप धोना और मृतक िरीरों ंको चीरना घृणनत प्रतीत होता है। यह उनकी भारी भूल है। प्रारम्भ में घृणा होती है; परनुतु रोग-नवज्ञान-नचनकत्सा, िल्य नचनकत्सा, रुग्ण–रीर-रचना-नवज्ञान, िीवाणु-नवज्ञान का अध्ययन करने के उपरान्त अद्धन्तम वषथ में पाठ्य-नवषय बडा रुनचकर हो िाता है। बहुत से आध्याद्धत्मक साधक कुछ समय के पश्चात् धारणा का अभ्यास छोड देते हैं; क्ोंनक यह अभ्यास उनको कनठन िान पडता है। नचनकत्सा िास्त्र के नवद्यानर्थयों ंके समान ये भी भारी भूल करते हैं। अभ्यास के प्रारम्भ में िब आप देहाध्यास से ऊपर िाने की चेष्टा करते हैं तब यह अभ्यास अरुनचकर और क्लेिदायक िान पडता है। यह िारीररक मल्लयुि के समान होता है। भावनाएँ और संकल्प बहुत होते हैं। अभ्यास के तृतीय वषथ में मन िान्त, िुि तर्ा दृढ़ हो िायेगा। आपको अद्धन्तम आनन्द नमलेगा। ध्यान के अभ्यास द्वारा प्राप्त हुए आनन्द के सामने सारे संसार के आनन्द का समूह भी तुच्छ है। नकसी अवस्ा में भी अभ्यास न छोडें। प्रयत्न करते रहें और धृनत, उत्साह और साहस रखें। अन्त में आप

अपने प्रयत्न में सफल होंगें। कभी ननरािा न हों, गम्भीर अन्तननथरीक्षण द्वारा उन बाधाओं को खोि ननकालें निनसे धारणा में नवघ्न होता है और धैयथ-सनहत प्रयत्न करके उनको एक-एक करके दूर कर दें। नये संकल्पों और वासनाओं को उठने न दें। नववेक, नवचार और ध्यान के द्वारा उनको उठते ही कुचल िालें।

िब आप सदा प्रफुल्ल रहें और आपका मन साम्यावस्था में एकाग्र रहे, तो समझ लीनिए नक आप योग में आगे बढ़ रहे हैं और सत्त्व की वृद्धि हो रही है।

परररचे्छेद-३२

ध्यान

भगवान् श्री िंकराचायथ िी ने कहा है*:* **"अशचतैव परों ध्यानम्"** -नकसी भी वस्तु का नवचार न करना ही परम ध्यान है। **"ध्यानों शनशवछषयों मनि:"**–िब मन ननननवथषय हो िाता है अर्ाथत् इद्धन्द्रयों के नवषय और भोगों की नचन्ता से मुि हो िाता है तब ध्यान लग िाता है। *(*पातंिलयोगसूत्र*)*

ध्यान क्या है?

वेदान्त या ज्ञान-मागथ में 'मनन' और 'ननननदध्यासन' िब्दों का बाहुल्य से प्रयोग होता है। नवितीय-वृनत्त (सांसाररक नवषयों के सभी नवचारों) का नतरस्कार करके स्वितीय-वृनत्त (ब्रह्म-नवचार) का प्रवाह ले आना मनन कहलाता है। आत्मा के बार-बार स्मरण को ननननदध्यासन कहते हैं। यह तीव्र और गम्भीर नचन्तन है। यह अनात्म-वृनत्त-नववादन-रनहत आत्माकार-वृनत्त-द्धस्थनत होती है। मन ब्रह्म में पूणथतया द्धस्थत हो िाता है। अब कोई भी संसारी नवचार अननधकार-रूप से प्रवेि नहीं करेगा। ध्यान तैलधारावत् चलता रहेगा।

भगवत्साक्षात्कार के शलए ध्यान की अपररहायछता

दीघथ काल तक श्रम करने के बाद मन थक िाता है, इसनलए यह आत्मा नहीं हो सकता। आत्मा अनन्त िद्धियों का भण्डार है। मन तो केवल आत्मा का ही करण मात्र है। उसको भली-भाँनत अनुिानसत बना लेना चानहए। िैसे नवनवध िारीररक व्यायामों के द्वारा इस स्थूल िरीर को नवकनसत करते हैं उसी प्रकार माननसक प्रनिक्षण, माननसक संवधथन अर्वा माननसक व्यायाम के द्वारा मन को प्रनिनक्षत करना होता है। ध्यान और धारणा के अभ्यास में आपको मन को नाना प्रकार के उपायों से प्रनिनक्षत करना होगा। तभी यह स्थूल मन सूक्ष्म बन सकेगा।

लोहे की एक िलाका िलती हुई भट्ठी में रखें। यह आग के समान लाल हो िायेगी। हटा लेंगे तो इसका लाल रंग िाता रहेगा। यनद आप इसे सदा लाल रखना चाहते हैं तो इसे हमेिा अनग्न में रखे रहें। इसी प्रकार यनद आप मन को ब्रह्म-ज्ञान से पररपूणथ रखना चाहते हैं तो इसे ननरन्तर और तीव्र ध्यान के द्वारा ब्रह्म-ज्ञान की अनग्न में रखना होगा। ब्रह्म-चेतना का अनवरल प्रवाह सदा बहता रहने दें। तब आपको सहिावस्था प्राप्त होगी।

सदाचारी िीवन यापन करना ही ईश्वर-प्राद्धप्त के नलए पयाथप्त नहीं ंहै। मन को एकाग्र करना भी अत्यन्त आवश्यक है। साधुवृत्त, सदाचारी िीवन तो केवल मन को धारणा और ध्यान के उपयुि साधन बनाता है। धारणा और ध्यान अन्त में आत्म-साक्षात्कार प्राप्त कराते हैं।

परमात्मा इसी संसार में अन्तभूथत है; आपके हृदय-कमल में नवरािमान है। वह अन्यत्रवासी भूनमपनत है। आपको उसे िुि मन से धारणा और ध्यान के द्वारा ढूँढ़ना चानहए। यह 'आँखनमचौनी' का सच्चा खेल है।

सारे दृश्य पदार्थ माया हैं। आत्मा के ध्यान या ज्ञान के द्वारा माया का नतरोधान हो िायेगा। माया से मुि होने के नलए मनुष् को पररश्रम करना चानहए। माया मन के द्वारा बडा अननष्ट करती है। मन का नाि करने से माया का नाि होता है। माया को िीतने के नलए केवल ननदध्यासन ही एक उपाय है। भगवान् बुि, िाि भतृथहरर, दत्तात्रेय, गुिरात के अखौ इन सबने गम्भीर ध्यान के द्वारा ही मन और माया को िीत नलया र्ा। िाद्धन्त में प्रवेि करें। ध्यान करें। आत्म-साक्षात्कार के नलए एकान्तवास और तीव्र ध्यान ये दोनों ंपरम आवश्यक हैं।

मन को िून्य बना लें। दुःख के कठोर आघात लगने का मन माध्यम है। नवचारों ंको दबाना कनठन होता है और यनद एक बार नवचार को दबा भी नदया िाये तो नवचारों ंकी दूसरी धारा आरम्भ हो िाती है िो मन को दबा लेती है। मन को नकसी िान्त दृढ़ पदार्थ पर लगायें। आप मन को रोकने में सफल हो िायेंगे। िैसे ग्रीष्म ऋतु में मनुष् सरोवर में बैठ कर अपना िरीर िीतल करता है वैसे ही अपने सारे नवचारों ंको आत्मा में एकत्र कर लें। भगवान् हरर का बारम्बार ध्यान करें िो श्याम-वणथ हैं, अमूल्य हार गले में धारण करते हैं और निनकी भुिाओं, ंकानों ंऔर निर पर अलंकार लगे हुए हैं।

ध्यान की पूवाथपेक्षाएँ

ध्यान के नलए आपको सम्यक् प्रनिनक्षत उपकरण (मन) की आवश्यकता है। मन िान्त, स्वच्छ, िुि, सूक्ष्म, तीव्र, द्धस्र्र और एकाग्र होना चानहए। ब्रह्म िुि और सूक्ष्म है, इसनलए उसे प्राप्त करने के नलए िुि और सूक्ष्म मन की आवश्यकता है।

अत्यन्त प्रनिनक्षत मन ही, निसने िरीर का पूणथ ननग्रह कर नलया है, िीवन-पयथन्त ध्यान और नवचार कर सकता है और एक क्षण के नलए भी अपने खिो तर्ा नचन्तन के लक्ष्य (ब्रह्म) को नहीं ंभुलाता और इसे ऐनहक प्रलोभनों ंसे प्रच्छन्न नहीं ंहोने देता। यनद आप ध्यान-योग का अभ्यास करना चाहते हैं, यनद आप मन की धारणाओं ंके द्वारा ईश्वर-प्राद्धप्त करना चाहते हैं तो आपको पाँच-छह वषथ तक सारी भौनतक नक्रयाओं ंको एकदम छोड देना होगा, सारी आसद्धियों ंको ननमथम हो कर पूणथतः तोड देना होगा। समाचार-पत्र पढ़ना और नमत्रों ंतर्ा सम्बद्धन्धयों ंसे पत्र-व्यवहार नबलकुल त्यागना होगा; क्ोंनक इनसे मन का नवक्षेप होता है और सांसाररक भाव दृढ़ हो िाते हैं। पाँच-छह वषथ का एकान्तवास अननवायथ है।

ध्यान के नलए प्रत्येक वसुतु को साद्धत्त्वक बनाना चानहए। ध्यान का स्र्ान, भोिन, वस्त्र, संगनत, बातचीत, सुनने के िब्द, नवचार, प्रत्येक वसुतु साद्धत्त्वक होनी चानहए। तभी नवीन साधकों ंको साधना में अच्छी उन्ननत प्राप्त हो सकती है।

आध्याद्धत्मक स्पन्दनों ंसे पूणथ एकान्त स्र्ान, िीतल, साद्धत्त्वक और िीतोष्ण िलवायु वाले स्र्ान—िैसे उत्तरकािी, ऋनषकेि, लक्ष्मणझूला, कनखल, बदरीनारायण-मन की एकाग्रता तर्ा ध्यान के नलए अननवायथ रूप से आवश्यक हैं; क्ोंनक ध्यान-काल में मद्धस्तष्क गरम हो िाता है। गंगा िी या नमथदा का तट, नहमालय का दृश्य, सुन्दर पुष्प-वानटका, पनवत्र देवस्र्ान-ये स्र्ल धारणा और ध्यान में मन को उन्नत करते हैं। इन स्र्ानों ंमें िायें।

इसमें सन्देह नहीं ंनक सदा आदिथ अवस्ा नहीं ंनमल सकती; यह िगत् सापेक्ष है। सब स्ानों ंमें गुण और अवगुण सार्-सार् नमले हुए हैं। आपको ऐसी िगह पसन्द करनी चानहए निसमें अनधक-से-अनधक गुण और कम-से-कम अवगुण हों।ं िो-कुछ अचे्छे-से-अच्छा कर सकते हों,ं वह आपको करना चानहए। आपको र्ोडी कनठनाइयों ंको भी सहन करना चानहए और उन पर प्रभुत्व प्राप्त करना चानहए। अपने-आप अकेले रहें। बाधक कारणों ंसे अपने-आपको अलग हटा लें।

अच्छा, साद्धत्त्वक, पयाथप्त हलका और पुनष्टकारक भोिन होना चानहए। िब मन सत्त्वगुण से पररपूणथ हो तभी ध्यान हो सकता है। पेट दूँस कर न भरा हो। आहार और मन में बडा घननष्ठ सम्बन्ध है। भारी भोिन हाननकर है। नदन में ११ बिे भोिन करें और आधा सेर दूध नपये। ध्यान का अभ्यास करने वालों ंको रात को हलका भोिन करना चानहए।

साधना करने की िद्धि होनी चानहए। तभी ध्यान द्धस्रता तर्ा आनन्द से हो सकेगा। आसन िरीर को द्धस्र करता है। बन्ध और मुिाएूँ देह को दृढ़ करती हैं। प्राणायाम िरीर को हलका करता है। नाडीिुद्धि से मन की साम्यावस्ा होती है। इन गुणों ंको प्राप्त करके आपको मन को ब्रह्म में लगाना होगा।
िब सुषुम्ना नाडी कायथ करती हो अर्ाथत् श्वास दोनों ंनासारन्ध्रों ंमें बहता हो, तब ध्यान सुगमता और आनन्द से चलता है। सुषुम्ना के नक्रयािील होने से सत्वगुण की वृद्धि होती है। निस समय सुषुम्ना चलने लगे तभी ध्यान के नलए बैठ िायें।

िब मन सारी नचन्ताओं ंसे दूर होता है तभी आप ध्यान कर सकते हैं। एक िान्त कमरे में चले िायें िहाूँ आपको नकसी बाधा का भय नहीं ंहो निससे नक आपका मन सुरनक्षत और नवश्रान्त रहे। नकसी सुखासन पर बैठ िायें और िहाूँ तक हो सके, बाहरी कुप्रभाव करने वाले प्रभावों ंसे रनहत हो िायें। नकारात्मक नवचारों ंको भगा दें। सदा आस्ापूणथ बने रहें। आस्ा सदा अनास्ा पर नविय पाती है। िब आप आस्ापूणथ हों ंतो ध्यान बडे सुचारु रूप से चलता है।

िीकार, वैराग्य, ज्वलन्त मुमुक्षुत्व और दृढ़ नववेक होना चानहए। साधना में मागथ नदखाने के नलए अनुभवी गुरु होना चानहए।

आपको प्रर्म िुि बुद्धि द्वारा ब्रह्म-तत्त्व की बौद्धिक समझ, बौद्धिक सम्प्रत्यय तर्ा व्यापक ज्ञान होना चानहए।

बहुत से साधकों ंको ऊपर बतायी हुई अनुकूल पररद्धस्नतयाूँ नहीं ंप्राप्त होती हैं। यही कारण है नक वे कुछ उन्ननत प्राप्त नहीं ंकर पाते।

ध्यान के सगुण तर्ा शनगुथण रूप

िब आूँख खोल कर भगवान् कृष्ण की मूनतथ देखते हैं और ध्यान करते हैं तो यह साकार ध्यान कहलाता है। िब आूँख मीचं कर भगवान् कृष्ण की मूनतथ का ध्यान करते हैं तो भी यह साकार ध्यान ही है; परन्तु पहले से अनधक ननगुथण है। िब आप अनन्त प्रकाि का ध्यान करते हैं तो यह और भी ननगुथण ध्यान है। पहले दो प्रकार के ध्यान सगुण ध्यान कहलाते हैं और नपछले प्रकार का ननगुथण ध्यान है।

ननगुथण ध्यान में आरम्भ में भी मन को द्धस्र्र करने के नलए एक रूप अवश्य होता है। कुछ समय पीछे यह आकार हट ाता है और ध्यान तऱ् ध्येय एक हो ाते हैं। ध्यान भी केवल मन से ही होता है। नकसी पदार्थ के दिथन या ब्रह्म को समझने के नलए मन की सहायता सवथऱ् अभीष्ट है। ि ब आप कोई पुस्तक पूरे मनोननविेपूवथक पढ़ते हैं तो मन उसके नवचारों ंपर दृढ़ हो करें द्धस्र्र हो ाता है। इसी प्रकार ननगुथण ब्रह्म के ध्यान में भी मन एक ही नवचार अऱ्थत् आत्मा पर द्धस्र्र हो ाता है।

सगुण ध्यानाभ्यास

प्रारद्धम्भक साधकों ंके नलए ध्यान की एक नवनध यह है। एकान्त कमरे में पयासन पर बैठ ायें। आँखें बन्द कर लें। सूयथ के प्रकाि, चन्द्रमा की ज्योत्सना, तारागणों ंकी मनहमा, आकाि के सौन्दयथ का ध्यान करें।

दूसरी नवनध यह है। नहमालय का ध्यान करें। कल्पना करें नक उत्तरकाि़ी के ननकट गंगोत्तरी के बरफीले प्रदेि से गंगा नदी ननकलती है; ऋनषकेि, हररद्वार, वाराणसी के पास से बहती हुई बंगाल की खाडी में, गंगासागर में ा नगरती है। नहमालय, गंगा और समुि-ये ही तीन नवचार आपके मन में रहने चानहए। पहले बरफीली गंगोत्तरी पर मन को ले ायें, नफर गंगा के साऱ्-साऱ् लायें और अन्त में समुि में ले ायें। नफर दोबारा बरफीली गंगोत्तरी तक ले ायें। इसी प्रकार १५ नमनट तक मन को घुमाते रहें।

कल्पना करें नक सुन्दर फूलों ंका एक अच्छा बगीचा है। एक ओर चमेली के फूल लगे हैं, दूसरी ओर सुन्दर बडे-बडे गुलाब लगे हैं। तीसरे कोने में ूही के पेड लगे हैं। चौऱ्े कोने में चम्पक के फूल लगे हैं। अब इन चारों ंप्रकार के फूलों ंका ध्यान करें। पहले चमेली, नफर गुलाब, नफर ूही और नफर चम्पक पर मन को ले ायें। बार-बार मन को इसी प्रकार घुमाते रहें। १५ नमनट तक ऐसा करें। इस प्रकार स्ूल ध्यान मन को सूक्ष्म नवचारों ंपर द्धस्र्रता से ध्यान करने योग्य बना देता है।

समुि की नविालता और उसकी अनन्तता का ध्यान करें। समुि की तुलना अनन्त ब्रह्म से तऱ् तरंगों, ं फेन और बरफ के टुकडों ंकी अनेक नाम और रूपों ंसे करें। समुि से अपना सारूप्य बनायें। ान्त हो ायें और नवस्तार करके नविाल बनें।

शनगुछण ध्यानाभ्यास

इन सब नाम-रूपों ंके पीछे एक ीवन्त नवश्व-व्यानपनी िद्धि है। इस ननराकार िद्धि का ध्यान करें। यह आनदम ननराकार ध्यान बनायेगी और अन्त में अनन्त ननगुथण ननराकार चेतना की प्राद्धप्त करायेगी।

"संसार नहीं ंहै। िरीर और मन भी नहीं ंहै। केवल एक ही चैतन्य है और वह चैतन्य मैं हूँ।" यह ननगुथण ध्यान कहलाता है।

पद्मासन पर बैठें। आँखें खोलें। ननराकार वायु को द्धस्र्रता से देखें। ननगुथण ध्यान का यह भी एक दूसरा रूप है। वायु पर धारणा करें। यह नाम-रूप-रनहत ब्रह्म की प्राद्धप्त करा देगा।

कल्पना करें नक सारे नवश्व के पीछे नछपी हुई एक परम, अनन्त, अखण्ड ज्योनत है ो करोडों ंसूयों के ते के समान है। उसका ध्यान करें। ननगुथण ध्यान का यह भी एक रूप है।

नवसूतृत आकिा पर धारणा तर्ा ध्यान करें। यह भी ननगुथण ननराकार ध्यान का एक रूप है। पूवोि धारणा के उपायों ंसे मन पररद्धच्छन्न रूपों ंका नचन्तन छोड देगा। इसके अन्तनवथषय अर्ाथत् अनेक प्रकार के रूप क्षीण होने के कारण यह िनैःिनैः िाद्धन्त के समुि में नवलीन होने लगेगा। यह अनधकानधक सूक्ष्म भी होता ियेगा।

ॐ का ध्यान

ॐ का नचत्र अपने सामने रखें और इस पर मन को एकाग्र करें। नेत्र खोल कर त्राटक भी करें (नबना पलक झपके तब तक देखते रहें िब तक नक आँसू िोर से न बहने लगें)। यह सगुण और ननगुथण दोनों ंप्रकार का ध्यान है। अपने ध्यान के कमरे में ॐ का नचत्र रखें। ब्रह्म के इस प्रतीक की आप पूिा भी कर सकते हैं। धूप-सुगद्धन्ध िलायें। फल चढ़ायें। आिकल के निनक्षत िनों ंके नलए यह बहुत उपयुि है।

मन काध्यान

व्यि रूप ब्रह्म ही मन है। नक्रयािील परमात्मा मन है; क्ोंनक ब्रह्म को मन के द्वारा ही प्राप्त नकया िा सकता, इसनलए ब्रह्म के समान मन का ही ध्यान लगाना उनचत है। **"मनो ब्रह्मेत्युपासीतेत्यध्यात्मम्" -** 'मन ब्रह्म है', इस प्रकार उपासना करें। यह अध्यात्म-दृनष्ट है (छान्दोग्य उपननषद् ३-१८-१)। यह उपासना-वाक् है।

ध्यान का कमरा

ध्यान के कमरे को परमात्मा का मद्धन्दर मानना चानहए। उस कमरे में गन्दी बातें नहीं ंकरनी चानहए। द्वेष, लोभ आनद के दुष्ट नवचार नहीं ंआने चानहए। सदा पनवत्र और श्रिापूणथ मन-सनहत उसमें प्रवेि करना चानहए; क्ोंनक िो कुछ हम करते हैं और िो-कुछ हम सोचते हैं, वे सब अपना अंक उस कमरे के आकाि में छोड देते हैं और यनद उनसे बचने के नलए सचेष्ट नहीं ंरहा िाये, तो वे साधक के मन पर अपना प्रभाव डाल कर उसको उलट कर चंचल कर देंगे और वह उपासना करने के अयोग्य हो िायेगा। बोले हुए िब्द, नकये हुए कमथ और मन के नवचार खो नहीं ंिाते; िहाँ वे नकये िाते हैं, उस कमरे के आकाि के सूक्ष्म स्तरों ंमें उनका प्रनतनबम्ब रहता है और वे सवथर्ा मन पर अपना प्रभाव डालते हैं। उन पर अनधकार प्राप्त करने की यर्ासम्भव चेष्टा करनी चानहए। ऐसा कुछ ही महीनों ंतक करना होगा। स्वभाव बदल िाने पर सब-कुछ स्वतिः ही ठीक हो िायेगा।

ध्यान की शवशध

एकान्त स्र्ान में पद्मासन, नसिासन या सुखासन में बैठें। अपने को सारे मनोनवकारों,ं भावनाओं ंऔर वृनत्तयों ंसे रनहत कर लें। इद्धन्द्रयों ंको अपने अधीन करें। मन को पदार्ों से खीचं लें। अब मन िान्त, एकाग्र, िुि और सूक्ष्म हो िायेगा। इस प्रनिनक्षत उपकरण, प्रनिनक्षत मन की सहायता से उस अद्वय अनन्त आत्मा का ध्यान करें। अन्य नकसी वस्तु का नवचार न करें। नकसी संसारी नवचार को मन में न घुसने दें। मन को नकसी भी िारीररक या माननसक भोग का नवचार न करने दें। िब यह ऐसे नवचारों ंमें मग्न हो तो इसे खूब ठोकें। तब यह परमात्मा की ओर िाने लगेगा। निस प्रकार गंगा िी ननरन्तर सागर की ओर प्रवानहत होती हैं, इसी प्रकार परमात्मा के नवचार ईश्वर की ओर ननरन्तर िाने चानहए। िैसे एक पात्र से दूसरे पात्र में डालते समय तेल की धारा अटूट तर्ा अनवरत रहती है, निस प्रकार घण्टों ंके बिने की एकरसमय ध्वनन ननरन्तर कानों ंमें आती रहती है, इसी प्रकार मन भी

एक ननरन्तर प्रवाह से परमात्मा की ओर ाना चानहए। ननरन्तर साधना के द्वारा साद्धत्त्वक मन से दैवी-वृनत्त-प्रवाह या स्विातीय-वृनत्त-प्रवाह ईश्वर की ओर चलता रहना चानहए।

ध्यान प्रारम्भ करने के पूवथ ईश्वर या ब्रह्म का माननसक रूप (साकार या ननराकार) अवश्य बना लें। ब आप ध्यान का अभ्यास नया-नया प्रारम्भ करें तो आसन पर बैठते ही कुछ उन्नत बनाने वाले श्लोक या स्तोत्र दि नमनट तक उच्चारण करें। इससे मन उन्नत हो ायेगा। इससे मन को सांसाररक पदार्ों से सुगमता से हटाया ा सकता है। नफर इस प्रकार का नवचार भी बन्द कर दें, नफर बारम्बार दृढ़ प्रयत्न द्वारा मन को एक ही नवचार पर लगा दें। तब ननष्ठा बन ायेगी।

नननदध्यासन में आपको स्विातीय-वृनत्त-प्रवाह को बढ़ाना होगा। ब्रह्म के नवचारों ंको बडे भारी ल-प्रवाह के समान बहने दें। नविातीय वृनत्तयों ंका नतरस्कार कर दें। नवषय-पदार्ों के नवचार छोड दें। नववेक और नवचार के चाबुक से उन्हें भगा दें। प्रारम्भ में तो कनठन संघषथ करना होता है। यह बडा ही क्लाद्धन्तकर होता है; परन्तु बाद में आप ैसे-ैसे िद्धिवान् और पनवत्र होते ायेंगे और ब्रह्म-नचन्तन में आगे बढ़ते ायेंगे, साधना सुगम होती ायेगी। एकत्व के ीवन में आपको आनन्द नमलेगा। आत्मा से आपको बल प्राप्त होगा। ब सारी नवषय-वृनत्तयाँ दुबथल कर दी ाती हैं और मन एकाग्र हो ाता है, तब आन्तररक िद्धि बढ़ती है।

बि आप अनग्न लाते हैं तो पहले आप घास, फूस, कागि, लकडी के पतले टुकडों ंका ढेर करते हैं। अनग्न ीघ्र बुझ ाती है। नफर आप इसको बार-बार मुख से या फूंकनी से फूंक मार कर सुलगाते हैं। र्ोडे समय में यह प्रचण्ड अनध बन ाती है। अब आप प्रयत्न करके भी इसे कनठनाई से बुझा सकते हैं। इसी प्रकार प्रारम्भ में नवीन साधक ध्यान से अपने पुराने ही रास्तों ंमें नगर ाते हैं। उनको अपना मन बार-बार उन्नत करके लक्ष्य पर लगाना होगा। ब ध्यान गम्भीर और द्धरूर हो ाता है तो वे ईश्वर में द्धरूनत प्राप्त कर लेते हैं। तब ध्यान सहि हो ाता है और स्वाभानवक बन ाता है। तीव्र वैराग्य तर्ा उग्र ध्यान की फूंकनी से काम लें और ध्यान की अनग्न को सुलगायें।

देखें नक ध्यान में आप नकतनी देर तक संसारी नवचारों ंको रोक सकते हैं। मन को बडी सतकथता से देखें। यनद बीस नमनट तक रोक सकते हैं तो इस समय को तीस या चालीस नमनट तक बढ़ाने की चेष्टा करें। बारम्बार मन में ईश्वरीय नवचार भरें।

एक ब्रह्मभाव को धीरे-धीरे ननरन्तर बनाये रखें। ननरन्तर परमात्मा का नवचार करें। मन सदा परमात्मा की ओर ाना चानहए। मन को भगवान् निव या हरर के चरण-कमलों ंसे कोमल कौैय रज्जु द्वारा बाँध लें। नविातीय सांसाररक नवचारों ंको धीरे-धीरे बाहर ननकाल दें। बारम्बार **'अहों ब्रह्मान्'** या **'ॐ'** का माननसक प करते हुए ब्रह्माकार-वृनत्त बनाये रखें। इसके सार्-सार् अनन्त असीम का भाव, ज्योनत के नविाल सागर का भाव, अद्धखल ज्ञान और आनन्द का भाव भी बनाये रखें। यनद मन इधर-उधर भागने लगे तो ऊँचे स्वर से साढ़े तीन मात्रा का दीघथ प्रणव उच्चारण करें। इस प्रकार नवक्षेप और अन्य सभी बाधाएँ दूर हो ायेंगी।

ि कमरा छह महीने तक बन्द रहा हो ब आप उसे बुहारने लगते हैं तो उसके कोने-कोने से अनेक प्रकार की धूनल उठती है। इसी प्रकार ध्यान में योग के दबाव से ईश्वर की कृपा से अनेक प्रकार के मल मन के ऊपर तैरने लगते हैं। उनको साहस करके उपयुि उपायों ंसे और नवरोधी सद्गुणों ंसे धैयथ और प्रबल प्रयत्न द्वारा एक-एक करके ननकाल दें। ब आप पुराने बुरे संस्कारों ंको दबाना चाहते हैं तो वे बदला लेते हैं। भय न करें। कुछ समय पश्चात् उनका बल ाता रहेगा। ैसे आप ंगली हार्ी या र को सधाते हैं वैसे ही मन को भी साधना होगा। खोटे नवचार मन में न रखें। वे मन के नलए आहार का काम देते हैं। मन को अन्तमुथख कर लें। अच्छे सद्गुणमय उच्च नवचार प्रनतस्र्ानपत करें। उन्नत करने वाले लक्ष्य और आकांक्षाओं ंसे मन को पोषण दें। पुराने दुष्ट

संस्कार दुबथल हो िायेंगे और अन्त में नष्ट हो िायेंगे। अब ब्रह्माकार-वृनत्त का उदय होगा। ब्रह्मज्ञान के सार् नमल कर इससे अनवद्या का नाि होगा। इसी ब्रह्माकार-वृनत्त का प्रवाह तैलधारावत् चलने दें। इस अवस्र्ा में सारा संसार केवल सद्भिच्चदानन्द ही प्रतीत होगा। यह नवचार भी नष्ट हो िायेगा। तब आप सहिानन्द-अवस्र्ा अर्ाथत् अदै्वत-अवस्र्ा-रूप समानध में प्रवेि करेंगे।

कुर् लाभदायक सोंकेत

ध्यान के अभ्यास में आूँखों ंऔर मद्भस्तष्क पर िोर न डालें। मन के सार् खींचतान न करें। ध्यान का अभ्यास करते हुए मन के सार् िबरदस्ती झगडा मत करें। ऐसा करना भारी भूल है। बहुत से नवीन साधक यह भारी भूल करते हैं। इसनलए वे अभ्यास करते-करते र्क िाते हैं। उनके निर में ददथ होने लगता है और ध्यान के बीच में बार-बार पेिाब करने को उठना पडता है; क्ोंनक रीढ़ की हड्डी के मूत्र-सम्बन्धी ममथ में दबाव पडता है।

मन को वि में करने के नलए बलपूवथक प्रयत्न न करें। इससे बलपूवथक कुश्ती न लडें। ऐसा करना भूल है। र्ोडी देर के नलए इसे खुला छोड दें और इसे इधर-उधर भाग कर अपने प्रयत्न को समाप्त कर लेने दें। पहले तो यह मन अनिनक्षत बन्दर के समान कूदेगा। धीरे-धीरे कम होता िायेगा। तब आप इसे अपने लक्ष्य पर या तो साकार मूनतथ पर या नकसी ननराकार भाव पर िमा सकते हैं।

ब्राह्ममुहतथ में उठ िायें। पद्मासन, नसिासन, सुखासन या स्वद्भस्तकासन पर आराम से बैठें। निर, गरदन और धड को एक रेखा में सीधा रखें। नसों,ं पुट्ठों ंऔर मद्भस्तष्क को ढीला छोड दें। पदार्थभूत मन को िान्त करें। आूँखें बन्द कर लें। मन के सार् खीचांतानी न करें। नदव्य नवचारों ंको िनैः िनैः आने दें। द्भस्र्रता से लक्ष्य का नवचार करें। बीच में घुसने वाले अन्य नवचारों ंको िान-बूझ कर िोर के सार् न भगा दें। उन्नत साद्भत्त्वक नवचार रखें। खोटे नवचार स्वयं ही भाग िायेंगे।

यनद ध्यान के अभ्यास-काल में मन बाहर की ओर भागे तो नचन्ता न करें। इसे भागने दें। धीरे-धीरे इसे लक्ष्य पर ले आने की चेष्टा करें। बार-बार के अभ्यास से मन हृदय की ओर एकाग्र हो िायेगा और आत्मा में लीन हो िायेगा। प्रारम्भ में मन ८० बार बाहर को भाग सकता है, छह महीने में ७० बार, एक वषथ में ५० बार, दो वषथ में ३० बार, परनु्त ५ वषथ में वह नबलकुल दृढ़ता से परमात्मा में लग िायेगा। नफर आपके चेष्टा करने पर भी यह वैसे ही बाहर नहीं ंभागेगा िैसे नक इधर-उधर नफरने वाला साूँड िो पहले आस-पास के िमीदारों ंके बगीचों ंमें घास खाने के नलए भागा-भागा नफरता र्ा अब अपने स्र्ान पर ही तिी चने और नबनीले आराम से खाता है।

यनद ध्यान में अनधक िोर पडता हो तो कुछ नदनों ंके नलए, घण्टों ंकी संख्या कम कर दें। हलका ध्यान करें। िब आपको सामान्य िद्भि पुनः प्राप्त हो िाये तो नफर ध्यान-काल को बढ़ा दें। अपने साधना-काल में सहि बुद्भि से काम लें। मैं सदा इसी बात को दोहराता हूँ।

िो लोग लगातार चार-पाूँच घणे्ट तक ध्यान का अभ्यास करते हैं, उनें् प्रारम्भ में दो आसन रखने चानहए, या तो पद्म और वज्र या नसि और बज्रासन। कभी-कभी टाूँग के एक भाग में खून इकट्ठा हो िाता है और र्ोडी पीडा होती है। दो घणे्ट बाद पद्मासन या नसिासन को वज्रासन से बदल दें या टाूँगों ंको सीधा फैला दें। दीवार या तनकये के सहारे झुक िायें; परनु्त मेरुदण्ड सीधा रखें। यह बडा सुखदायक आसन है। दो कुरनसयाूँ नमला लें। एक कुरसी पर बैठ िायें और दूसरी पर टाूँगें फैला लें। यह भी एक उपाय है।

वास्तव में तो माननसक आसन ही सच्चा आसन है। मन में पद्मासन या नसिासन करने का प्रयत्न करें। यनद मन इधर-उधर भागता रहेगा तो िरीर भी द्धस्र्र नहीं ंरहेगा और आसन भी दृढ़ नहीं ंहोगा। िब मन द्धस्र्र अर्वा ब्रह्म में द्धस्र्त होगा तो िरीर आप-ही-आप द्धस्र्र हो िायेगा।

एक सवथव्यापी भावना बनाये रखें। अन्तवान् िरीर को आभास मात्र समझ कर इसका ननराकरण कर दें। सदा भावना को ही बनाये रखने का प्रयास करें। िो कोई भी वस्तुु आपको उन्नत करे, मन को उन्नत करने के नलए उसी को ग्रहण करें और नफर ध्यान को दीघथ काल तक िारी रखें।

आपको ननत्य अपने वैराग्य, ध्यान और धृनत, लगन, दया, प्ेरेम, क्षमा, पनवत्रता आनद सद्गुुण बढ़ाने चानहए। वैराग्य और सद्गुुणों ंसे ध्यान में सहायता नमलती है। ध्यान साद्धत्त्वक गुणों ंकी वृद्धि करता है।

िैसे आप मौन के द्वारा िद्धि-संचय करते हैं वैसे ही ननरर्थक नक्रया को बन्द करके माननसक िद्धि का भी संग्रह करें। तब आपके पास ध्यान के अभ्यास के नलए पयाथप्त िद्धि-संग्रह हो िायेगा।

इन तीन िब्दों ंको याद रखें- (१) िुद्धिकरण, (२) केन्द्रीकरण, और (३) आत्मसात्करण। यह नत्रक है। इस नत्रक को याद रखें। काम-क्रोधानद मलों ंसे मन को िुि कर लें। इच्छा-रनहत ननिःस्वार्थ बुद्धि से कमथ करें। इससे मन ननमथल हो िायेगा। उपासना, प्राणायाम, त्राटक और राियोग के नचत्त-वृनत्त-ननरोध का अभ्यास करें। इससे मन को एकाग्र करने में सहायता नमलेगी। नफर ननरन्तर गम्भीर ध्यान का अभ्यास करें। अन्त में मन मन हो िायेगा।

प्रणवो धनुिः िरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्ेतेन वेिव्यों िरवत्तन्मयो भवेत् ।।

"ओंकार धनुष है, मन तीर है और ब्रह्म लक्ष्य है। ब्रह्म को वही बींधं सकता है निसके नवचार एकीकृत हैं, नफर वह ब्रह्म के सार् तन्मय अर्ाथत् उसी स्वभाव वाला हो िायेगा। िैसे तीर लक्ष्य को बींधं कर लक्ष्य के सार् तन्मय हो िाता है" (मुण्डकोपननषद् : २-२-४)।

पद्मासन या नसिासन में बैठ िायें। आँखें बन्द कर लें। दृनष्ट को नत्रकुटी पर िमा लें। अब बल-सनहत पाँच नमनट तक दीघथ प्रणव का उच्चारण करें। यह मन का नवक्ेषेप दूर कर देगा। अब धारणा प्रारम्भ हो िायेगी। अब ब्रह्म-भावना से ओंकार का माननसक िप करें। िब कभी मन भागने लगे तो नफर ओंकार का वानचक उच्चारण करें। िैसे मन ननश्चल हो िाये नफर ओंकार का माननसक िप करने लगें। यही नक्रया सगुण ध्यान के नलए भी की िा सकती है।

मन और पाँचों ंतत्त्वों ंमें घननष्ठ सम्बन्ध है। िब नर्ुनों ंमें अनग्न-तत्त्व चलता है तो मन में अनधक उद्वेग होता है और ध्यान में प्रत्यवाय पडता है। आकाि-तत्त्व चलने में ध्यान-नक्रया अनुकूल होती है। निनको इन पाँचों ंतत्त्वों ं के चलने का ज्ञान है, वे िीघ्र ही ध्यान में उन्ननत कर सकते हैं। िो ध्यान का अभ्यास करते हैं, उनके नलए स्वर-साधन या स्वरोदय का ज्ञान अननवायथ है।

िैसे नसिहस्त तीर चलाने वाला पक्षी को तीर मारने में अपने पद-नवन्यास, धनुष, िोरी और तीर पकडने के ढंग को भली प्रकार िानता है नक 'इस प्रकार खडे हो कर, इस प्रकार धनुष ले कर, इस प्रकार िोरी खीचं कर और ऐसे तीर पकड कर मैंने पक्षी को मारा।' और इसके उपरान्त नफर भी कभी इन अवस्र्ाओं ंको पूरी करने में नहीं ंचूकेगा नक वह भी पक्षी को ननिाना लगा सके। इसी प्रकार साधक को भी सारी अवस्र्ाओं ंको याद रखना

चानहए नक ऐसा भोिन करके, ऐसे पुरुष का अनुसरण करके, ऐसे मकान में, इस नवनध से, ऐसे समय में मैंने इस ध्यान और समानध को प्राप्त नकया र्ा।

िैसे चतुर रसोइया अपने स्वामी को भोिन द्धखलाने में याद रखता है नक उसके स्वामी को नकस प्रकार का भोिन पसन्द है और नफर वही भोिन परोस कर लाभ उठाता है; उसी प्रकार साधक भी उन अवस्र्ाओं ंको याद रखता है नक निनमें उसने ध्यान और समानध प्राप्त नकये र्े और उन्ें पूरा करके बारम्बार परमानन्द प्राप्त करता है।

खुले नेत्रो ंसे ध्यान

प्रारम्भ में नवीन होने के कारण दृढ़ता नहीं ंहोती, इसनलए मन के नवक्षेप को दूर करने के नलए नेत्र बन्द कर सकते हैं; परन्तु र्ोडे समय उपरान्त आपको चलते हुए भी नेत्र खोल कर ध्यान लगाना चानहए। िहर के शोरगुल में भी आपको मन की साम्यावस्र्ा रखनी चानहए। तभी आपमें पूणथता आयेगी। आप ध्यान-काल में नेत्र क्ों ंबन्द करते हैं? आँखें खोल कर ध्यान करें। दृढ़तापूवथक नवचार करें नक संसार असत्य है, संसार है ही नहीं ंऔर केवल आत्मा ही है। यनद आँखें खुली रख कर भी आप आत्मा का ध्यान कर सकते हैं तो आप बलवान् पुरुष हो िायेंगे। आपको आसानी से कोई बाधा नहीं ंहोगी।

ध्यान से लाभ

अनग्न दो प्रकार की होती है : सामान्य और नविेष। सामान्य अनग्न सारे वृक्षों ंऔर काष्ठ में नछपी रहती है। िलाने के नलए इसका कोई उपयोग नहीं ंहै। नविेष अनग्न िो नदयासलाई के नघसने अर्वा काष्ठ के टुकडों ंको रगडने से ननकलती है, भोिन बनाने तर्ा अन्य कायों में मनुष्य के नलए उपयोगी होती है। इसी प्रकार सामान्य चैतन्य है िो सब कहीं ंव्यापक है। नविेष चैतन्य भी होता है। सामान्य चैतन्य मनुष्यों ंकी अनवद्या का नाि नहीं ंकर सकता। आत्माकार-वृनत्त या अनवद्धच्छन्न नविेष चैतन्य ही मूल अज्ञान को नष्ट कर देता है निससे नक स्वरूप नघरा हुआ रहता है। यह नविेष चैतन्य तभी नवकनसत होता है िब मनुष्य िुद्ध हृदय से अनन्त-रूप आत्मा का ध्यान करता है।

ध्यान-काल में आप अपररवतथनिील प्रकाि के आद्धत्मक संसगथ में रहते हैं। आपके सारे मल धुल िाते हैं। यह प्रकाि निस आत्मा से सम्पकथ करता है, उसे िुद्ध कर देता है। अनग्न का िीिा िब सूयथ के प्रकाि में रखा िाता है तो उसके नीचे की घास िलने लगती है। इसी प्रकार यनद आपने अपना खुला हृदय भद्धिपूवथक ईश्वरोन्मुख कर रखा है तो उसकी पनवत्र और प्रेममय ज्योनत इस आत्मा को प्रकानित करके नदव्य प्रेम की अनग्न में आपके सारे दोषों ंको भस्म कर देगी। यह ज्योनत अनधक िद्धि और सुख लाती है।

यह पावनकारी प्रनक्रया सत्य में अनधक गम्भीर अन्तदृथनष्ट प्रदान करती है। यह ध्यान करने वाली आत्मा पर भगवत्कृपा का कायथ करती है। इस अन्तवाथनहनी नक्रया में एकदम वह मन की ज्योनत उठती है निसमें ईश्वर अपनी नदव्य ननमथल भावना की एक नकरण भेिता है। यह ज्योनत परम िाद्धन्तदानयनी होती है।

यनद आप आधा घण्टे तक ध्यान कर सकें तो इसके बल से एक सप्ताह तक िाद्धन्त और आत्मबल से आप िीवन-संग्राम में लग सकेंगे। ध्यान का ऐसा लाभकारी फल है। क्ोंनक आपको अपने ननत्य के िीवन में नवनभन्न स्वभाव के मनों ंसे काम पडता है; इसनलए ध्यान के अभ्यास से बल और िाद्धन्त प्राप्त करें, नफर आपको कोई नचन्ता और दुःख नहीं ंहोगा।

सारे आन्तररक तर् बाह्य कमथ तभी नकये ि◌ा सकते हैं ि◌ब मन इद्धन्द्रयों ◌ंके सार् संयुि हो। नवचार ही सच्चा कमथ है। यनद आपने द्धस्र अभ्यास द्वारा अपने मन को वि में कर नलया है, यनद आप अपनी भावनाओं ◌ंऔर मुिाओं ◌ंको ठीक रख सकते हैं तो आप मूखथतापूणथ तर् अनैनतक कायथ नहीं ◌ंकरेंगे। नभन्न-नभन्न भावनाओं ◌ंतर् चेष्टाओं ◌ंको रोकने में ध्यान बहुत सहायता करेगा।

ध्यान एक बलकारक औषनध है। यह माननसक और स्नायनवक औषनध भी है। इसके पनवत्र स्पन्द सारे रीर में व्याप्त हो कर ि◌रीर के रोगों ◌ंको दूर करते हैं। ि◌ो ध्यान का अभ्यास करते हैं, वे ि◌ाक्टर का व्यय बचाते हैं। ि◌ो ि◌द्धििाली ि◌ाद्धन्तदायक तरंगें ध्यान-काल में उठती हैं, वे मन, नानडयों,◌ं इद्धन्द्रयों ◌ंऔर ि◌रीर के कोिाणुओं ◌ं पर लाभकारी प्रभाव ि◌ालती हैं। नदव्य ि◌द्धि भगवान् के चरणों ◌ंसे मुि स्रोत हो कर साधकों ◌ंके ि◌रीर में तैलधारावत् बहती है।

ध्यान के अभ्यास से मन, मद्धस्तष्क और नानडयों ◌ंमें अनेक पररवतथन हो ि◌ाते हैं। नये-नये नाडी-प्रवाह, स्पन्द, नये पदार्थ, नयी लीकें, नये कोिाणु, नये प्रणाल बन ि◌ाते हैं। समूपूणथ मन और नाडी–िाल नया-सा बन ि◌ाता है। आपका हृदय और मन नया-सा हो ि◌ायेगा। नये इद्धन्द्रय-ज्ञान, भाव, नवचारधारा और नक्रयाएँ तर् संसार के नलए नया दृनष्टकोण (अर्ाथत् ईश्वर का स्वरूप) बन ि◌ायेंगे।

ध्यान की अनग्न पापों ◌ंकी सारी गन्दगी नष्ट कर देती है। तब एकदम नदव्य ज्ञान आ ि◌ाता है ि◌ो सीधा मुद्धि की ओर ले ि◌ाता है।

बि वासनाएँ दुबथल हो ि◌ाती हैं और संकल्प क्षीण हो ि◌ाते हैं तभी सच्ची ि◌ाद्धन्त और आनन्द प्रकट होते हैं। पाँच नमनट के नलए भी ि◌ब आप मन को श्रीकृष्ण, निव या आत्मा पर द्धस्र करते हैं, तो मन में सत्त्वगुण भर िाता है, वासनाएँ क्षीण हो ि◌ाती हैं और संकल्पों ◌ंकी सुफुरणा कम हो ि◌ाती है। इन पाँच नमनटों ◌ंमें आपको ि◌ाद्धन्त और आनन्द प्रतीत होता है। आप ध्यान से प्राप्त इस आनन्द की तुलना नश्वर नवषय-भोगों ◌ंके आनन्द से कर सकते हैं। आपको प्रतीत होगा नक ध्यान द्वारा प्राप्त यह आनन्द नवषय-सुख से लाखों ◌ंगुणा उत्तम है। ध्यान करें और इस आनन्द का अनुभव करें, तब आपको इसका वास्तनवक मूल्य ज्ञात होगा।

बि आप ि◌ान्त ध्यान में गहरे उतर ि◌ायेंगे तभी आपको नदव्य मनहमा का पूणथ आनन्द नमलेगा। ि◌ब तक आप ईश्वर की नदव्यता के सीमा क्षेत्र, बाह्य-प्रदेि और ड्योढ़ी तक रहते हैं तब तक आपको सवाथनधक ि◌ाद्धन्त और आनन्द नहीं ◌ंनमलेगा।

योग के साधक नवनधवत् ध्यान का अभ्यास करते हैं, उन्हें ननम्न लाभ प्राप्त होते हैं–िाद्धन्त, सन्तोष, अभय, आध्याद्धत्मक आनन्द-नविेष, संसारी कनठनाइयों ◌ंमें मन का उद्वेग न होगा, ननश्चल द्धस्रनत, प्रेरणा, अन्तज्ञाथन, साद्धत्त्वक गुण, अक्रोध, अहंकार और राग-द्वेष का अभाव।

धारणा, ि◌ुद्धि और ध्यान के द्वारा प्राकाम्य नदव्य दृनष्ट, ज्ञान-चकुषु का नवकास करें।

ध्यान ि◌ारा सद्गुणो ◌ोंके शवकास की शवशध

अपने स्वभाव का ननरीक्षण करें। इसमें कोई त्रुनट पकड लें और इसका नवरोधी गुण मालूम करें। आपके स्वभाव में नचडनचडापन है। इसका नवरोधी गुण धृनत है। धृनत पर ध्यान करके इस गुण की वृद्धि करने की चेष्टा करें। प्रनतनदन प्रातिःकाल ठीक चार बिे नकसी एकान्त कमरे में नसिासन या पद्मासन में आधे घण्टे बैठ ि◌ायें और धैयथ पर नवचार करने लगें। इसका मूल्य, उद्वेग होने पर इसका अभ्यास आनद एक-एक बात प्रनतनदन ले कर दृढ़ता

से नवचार करें और िब मन इधर-उधर भटकने लगे तभी इसे वापस लौटा लें। अपने को अत्यन्त पूणथ धैयथवान् समझें, धृनत का आदिथ मानें और प्रनतज्ञा करें नक आि से मैं इसी धैयथ का अनुभव और प्रकटन करूँगा। यह धैयथ मेरा सच्चा स्वरूप है।

यिद कुछ नदनों ंतक कुछ भी अन्तर नहीं ंप्रतीत होगा। नफर भी आप नचडनचडापन अनुभव करेंगे। ननत्य प्रातिःकाल दृढ़ता से अभ्यास करते चले िायें। ज्यों ंही आप कोई नचढ़ावनी बात कहेंगे, आपके मन में स्ैवैद्धच्छक नवचार आयेगा- 'मुझे धैयथ रखना चानहए र्ा।' नफर भी अभ्यास करते चले िायें। िीघ्र ही नचडनचडेपन का बाहरी प्राकट्य रुक िायेगा। अभ्यास में लगे रहें, नचडनचडापन दुबथल होता चला िायेगा और एक नदन आप देखेंगे नक नचडनचडापन नबलकुल िाता रहेगा और धैयथ आपका साधारण स्वभाव बन िायेगा। इसी प्रकार आप सहानुभूनत, आत्म-संयम, पनवत्रता, नम्रता, दया, सौन्य, उदारता आनद अनेक गुणों ंको बढ़ा सकते हैं।

परिचे्छेद-३३

ध्यान में अनुभव तर्ा बाधाएँ

ध्यान-काल में क्या र्टत होता है

ध्यान में मद्धस्तष्क में नवीन प्रसीताएँ आकार लेती हैं तर्ा मन नवीन आध्याद्धत्मक प्रसीताओं ंके द्वारा ऊर्ध्थ गनत करता है। िब ध्यान में मन द्धस्र्र हो िाता है तो दि-गोलक भी द्धस्र्र हो िाते हैं। निस योगी का मन िान्त हो

ािा है उसकी दृनष्ट भी द्धस्र होती है। वह पलक नहीं ंझपकाता। आँखें चमकदार, लाल या नबलकुल सफेद होगी। िब आप अतीव गम्भीर िान्त ध्यान में प्रवेि कर िायेंगे तो नानसका-रन्ध्रों ंसे श्वास नहीं ंआयेगा। पेिू और फेफडों ंमें कभी-कभी मन्द गनत होगी। सामान्य श्वास लेने में वायु में सोलह मात्रा बाहर आती है। िब मन एकाग्र हो िायेगा तो यह कम होती िायेगी। तब यह १५, १४, १३, १२, १०, ८ और इसी प्रकार कम होती िायेगी। नकसी साधक के श्वास के स्वरूप से ही आप उसके ध्यान की गम्भीरता का अनुमान कर सकते हैं। श्शवषास को बडे ध्यान से देखें।

मनुष् नवचार-आकृनतयों ंके द्वारा अव्यि को ग्रहण करने का प्रयास करता है। िब मन िुि हो िाता है तो श्रवण और ब्रह्म-नचन्तन से मन में एक अव्यि आकृनत बन िाती है। यह अव्यि आकृनत कुछ काल बीतने पर नननदध्यासन में नवलीन हो िाती है। केवल **'अन्ि'** अर्वा **'शचन्मात्र'** अविेष रह िाता है।

नननदध्यासन अर्वा सतत गम्भीर ध्यान में नवचार बन्द हो िाता है। केवल एक ही नवचार **'अहों ब्रह्मान्ि'** रहता है। िब यह नवचार भी छूट िाता है तो नननवथकल्प समानध या सहि अद्वैत-ननष्ठा हो िाती है। िैसे नमक पानी में घुल िाता है, वैसे ही साद्धत्त्वक मन अपने अनधष्ठान-रूप ब्रह्म में ध्यान-काल में नमल िाता है।

ध्यान में अनुभव

नभन्न-नभन्न मनुष्ों ंके नभन्न-नभन्न प्रकार के अनुभव होते हैं। सबके नलए एक ही सामान्य अनुभव नहीं ंहो सकता। यह प्रत्येक अनुभव मनुष् के अपने स्वभाव, साधना-नवनध, ध्यान के स्र्ान और अन्य बातों ंपर ननभथर करता है। कोई मधुर स्वर सुनते हैं, कोई प्रकाि देखते हैं, नकन्ीं ंको आनन्द नमलता है और नकसी-नकसी को प्रकाि और आनन्द दोनों ंनमलते हैं। ध्यान-काल में अनुभव करेंगे नक आप अपने आसन से ऊपर उठ रहे हैं। कोई-कोई अपने को हवा में उडता हुआ भी अनुभव करते हैं।

ज्योनत

नदव्य ज्योनत खुले द्वारों ंसे नहीं,ं अनपतु संकीणथ नझररयों ंमें से आया करती है। िैसे नचक से अँधेरे कमरे में सूयथ की नकरण आती है, इसी प्रकार साधक नदव्य नकरण देखता है। यह नबिली कौंधने के समान होती है। इससे सारे िब्दों ंका स्वर बन्द हो िाता है। साधक आनन्द और दैवी नवस्मय से आश्चयथचनकत रह िाता है। वह प्रेम और भय से वैसे ही काँपने लगता है िैसे भगवान् कृष्ण के नवराट् नवश्वरूप-दिथन से अिुथन काँपने लगा र्ा। यह प्रकाि िो नदव्य मूनतथ को आवृत रखता है, इतना तीव्र होता है नक साधक चौंनधयाँ िाता है और घबराने लगता है।

ध्यान-काल में नासारन्ध्र में बहने वाले तत्त्व के अनुकूल प्रकाि का वणथ भी बदलता रहता है। अनग्न-तत्त्व हो तो रि-वणथ का, आकाि-तत्त्व हो तो नीले वणथ का, िल-तत्त्व में श्वेत-वणथ का, पृथ्वी तत्त्व में पीत-वणथ का और वायु-तत्त्व में कृष्ण-वणथ का प्रकाि नदखायी देता है। आप इस तत्त्व को अनेक उपायों ंसे बदल सकते हैं; परन्तु सवोत्तम उपाय नवचार है। "िैसा नवचार करेंगे, वैसे ही बन िायेंगे।" िब अनग्न-तत्त्व बहता हो तो इच्छापूवथक िल-तत्त्व का नचन्तन करें। िल-तत्त्व िीघ्र बहने लगेगा।

प्रहषथ

ध्यान-काल में आपको प्रहषथ नमलेगा। यह पाँच प्रकार का होता है-हलका पुलक, क्षनणक प्रहषथ, आप्लावी प्रहषथ, वाही (ले िाने वाला) प्रहषथ और सवथव्यापी प्रहषथ। हलके पुलक में केवल रोमांच होता है। क्षनणक प्रहषथ में

नबिली की चमक के समान पल-पल पर प्रहषथ आता है। ैसे सागर-तट पर लहरें टकराती हैं इसी प्रकार आप्लावी प्रहषथ ीघ्रता से िरीर में आता है और टकराता है। वाही प्रहषथ िद्धिमान् होता है और िरीर को भी हवा में उठा देता है। िब सवथव्यापी प्रहषथ आता है तो हवा से भरे फुटबाल के बै्लैर (रै्ली) के समान सारा िरीर प्रहषथ से भर िाता है।

रीर-चेतना का अनतक्रमण

साधकों ंको िल्दी आध्याद्धत्मक अनुभव देखने की उतुसुकता होती है; परनुतु िब अनुभव नमलते हैं तो वे भयभीत हो िाते हैं। िब वे िरीर-चेतना से ऊपर उठ िाते हैं तो वे अत्यन्त भयभीत होते हैं। उनें् आश्चयथ होता है नक वे ि रीर में लौट कर आयेंगे या नहीं!ं उनें् ि र क्ों ंहोना चानहए? कोई बात नहीं,ं यनद उनें् िरीर-चेतना प्राप्त
हो या न हो। हमारे सारे प्रयत्न तो िरीर-चेतना से ऊपर उठने के नलए ही होते हैं। हम पर कुछ प्रनतबन्ध लगे हुए होते हैं। बि अचानक ही ये प्रनतबन्ध नगर िाते हैं तो हमें प्रतीत होता है नक खडे होने के नलए कोई नननश्चत आधार नहीं ंबचा है। यही कारण है नक िब हम िरीर-चेतना से ऊपर उठते हैं तो हमें ि र लगता है। यह एक नवीन अनुभव होता है। साहस की आवश्यकता है। वीरता बडा आवश्यक गुण है। शु्रुनत कहती है : "नायमात्मा बलहीनेन लभ्यि:"बलहीन (भीरु) मनुष् आत्म-साक्षात्कार प्राप्त नहीं ंकर सकता। मागथ में सब प्रकार की िद्धियों ंका सामना करना पडता है। ाकू या अरािकतावादी सरलता से ईश्वर-प्राद्धप्त कर सकता है; क्ोंनंक वह ननभथय होता है। उसके नलए तो ठीक मागथ में एक धक्के की आवश्यकता होती है। बडे दुष्ट िगाई और मधाई नकस प्रकार उत्तम साधु बन गये ? उनोंनें गौरांग महाप्रभु के निष् ननत्यानन्द पर पत्थर फेंके रे्। ननत्यानन्द ने उनें् केवल िु नदव्य पे्रम से ीत नलया। ाकू रत्नाकर वाल्मीनक ऋनष बन गया र्ा।

आत्माओं ंके दिथन

कभी-कभी आपको दुष्ट आत्माएूँ दुि:ख देंगी। उनके भदे्दे िरावने मुख और लमे्ब दाूँत होंगें। अपनी दृढ़ इच्छा–द्धि से उनें् भगा दें। आज्ञा दें, 'ननकल िाओ।' वे चले िायेंगे। ये भूत हैं। ये साधकों ंकी हानन नहीं ंकरेंगे। यहाूँ आपके साहस की कसौटी है। यनद आप िरपोक हैं तो आगे नहीं ंबढ़ सकते। उस आन्तररक अव्यय स्रोत-रूप आत्मा से साहस और बल ग्रहण करें। आपको अच्छी आत्माएूँ भी नमलेंगी। वे आपको आगे बढ़ने में सहायता देंगी।

इस प्रकार का एक दृश्य ध्यान-काल में बहुधा नमलता है। आप एक तीव्र प्रकाि आकद्धस्मक गनत-सनहत देखेंगे। आपको एक नवस्मयि–नक निर ज्वाला के समान वण बाला और बडा भयावना नदखता है। इसके तीन बडे नवािल तर्ा चकाचौंधं पैदा करने बाले मेघ के सदृि श्वेेत पक्ष होते हैं। कभी-कभी वे फडफडाते हैं और नफर ान्ति हो िान हैं। निर एक भी िब्द नहीं ंबोलता और नबलकुल िान्त रहता है और इसके फैले हुए पह फडफडाते रहते हैं।

ध्यान में िो दृश्य आप देखते हैं, वह आपके अपने ही मूनतथमान् नवचार होते हैं और कुछ एक वास्तनवक पदार्ों के दृश्य होते हैं।

एक-एक करके सारे परदे तोड दें

यनद आप तीव्र ध्यान के अन्दर आत्मा की झलक देखें, तीव्र प्रकाि देखें, ऋनष, मुनन, देवता, यक्षानदकों ाके दृश्य देखें तर्ा कोई और असाधारण आध्याद्धत्मक दृश्य देखें तो भय से पीछे न हटें और उनको भूत समझ कर साधना बन्द न कर दें। आगे बढ़ते रहें। पररश्रम से लगे रहें। एक-एक करके सारे परदे तोड दें।

यनद साधना में कुछ त्रुनट हो तो तुरन्त अनुभवी संन्यानसयों,ा ईश्वर-प्राप्त आत्माओं ासे परामिथ ले कर भूल को दूर कर दें। यनद आपका स्वास्थ्य ठीक है, यनद आप प्रसन्न है और मन तर्ा िरीर से बलवान् हैं, यनद मन िान्त और उद्वेग-रनहत है, यनद ध्यान में आनन्द नमलता है, यनद इच्छा–द्धि दृढ़, पनवत्र तर्ा अबाध्य होती िाती है तो समझ लें नक आप ध्यान में उन्ननत कर रहे हैं और सब चीिें ठीक-ठीक चल रही है।

साहसपूवथक आगे बढ़ते रहें। पीछे मुड कर न देखें। नविाल िून्य और अन्धकार को पार कर लें। मोह के संस्तर को भेद दें। सूक्ष्म अहंकार को नवलीन कर दें। स्वरूप स्वयं प्रकानित हो उठेगा। आपको तुरीय (आरूढ़) - अवस्र्ा का अनुभव होगा।

ध्यान में बाधाएँ

ध्यान में बाधाएँ अन्दर से ही उठती हैं। आपकी पररद्धस्र्नतयाँ भी आपके अन्दर ही हैं। आप स्वयं ही अपनी पररद्धस्र्नतयाँ बनाते हैं। निस अवस्र्ा में भी हों,ा प्रसन्ननचत्त रहने का प्रयत्न करें। निकायत न करें। कष्ट सहन करें। आप प्रकृनत पर नविय पा सकते हैं। ब्रह्म-ज्ञानी के नलए माया तुच्छ है।

ननिा आना, कामनाएँ, मन की अस्त-व्यस्त दिा, मनोराज्य-ये बडी बाधाएँ हैं िो मन को ईश्वर अर्वा ब्रह्म में लगाने में बाधक होती हैं। ध्यान की पाँच बाधाएँ हैं-इद्धन्द्रयों ाकी वासना, दुभाथवना, आलस्य, तन्द्रा, नचन्ता और घबराहट। इनको दूर करना चानहए; क्ोंनक िब तक इनको दूर नहीं ानकया िायेगा, ध्यान नहीं ालगेगा। िो मन इद्धन्द्रय-वासना द्वारा अनेक वस्तुएँ चाहता है, वह एक पदार्थ पर एकाग्र नहीं ाहोता। वह इद्धन्द्रयों ाकी वासना से दब कर नवषयों ाको दूर करने के नलए ध्यान में उन्ननत नहीं ाकरता। िो मन नकसी नवषय के नलए दुभाथवना से पीनडत है, वह तुरन्त ही ध्यान में नहीं ालग सकता। िो मन आलस्य और तन्द्रा के वि में है, वह दूष्पररचालनीय हो िाता है। नचन्ता से दुःखी मन नवश्राम नहीं ाकरता; वरन् भागा-भागा नफरता है। घबराहट से पीनडत मन ध्यान और समानध-प्रदायक मागथ पर नहीं ाचलता। ध्यान में बाधाएँ वस्तुतः अन्दर से ही उठती हैं, बाहर से नहीं।ा मन को सम्यक् प्रनिक्षण दें।

ध्यान की चार बाधाएँ हैं लय अर्ाथत् ननिा, नवक्षेप अर्ाथत् मन का िाँवाडोल (अद्धस्र्र) रहना, कषाय अर्ाथत् नवषय-भोगों ाकी स्मृनत, और रसास्वाद अर्ाथत् सनवकल्प समानध से प्राप्त होने वाला आनन्द।

लय तर्ा मनोराज्य

िब वैराग्य और उपरनत के द्वारा मन-पदार्ों से हटा नलया िाये तो इसे ननिा या मनोराज्य में न नगरने दें। िब महावाक्ानुसन्धान की नवनध के अनुसार आप 'अहं ब्रह्माद्धस्म' या 'तत्त्वमनस' आनद महावाक्ों ाके अर्थ पर ननरन्तर नचन्तन करते हैं तो देखना, सुनना, स्पिथ करना, स्वाद लेना, सूँघना आनद सारे नवषय रुक िाते हैं; परन्तु संस्कारों ाके प्राबल्य के कारण मनोराज्य चलता रहता है। यह हवा में महल बनाता रहता है। संस्कृत में इसका नाम महोरर् है। यह ध्यान का नचन्तिनक बाधक है। नवचार द्वारा इसे बन्द कर देना चानहए। तन्द्रा और मनोराज्य के नमश्रण को भूल से साधक ध्यान और समानध मान बैठते हैं। प्रतीत होता है नक मन धारणा में संलग्न है और नवक्षेप से मुि है। यह गलती है। आलस्य तर्ा स्तब्धता (भय अर्वा आश्चयथ से मन का स्तद्धम्भत हो िाना, माननसक उत्तेिना, मन की चंचलता और मन की उदासी) ध्यान में अन्य बाधक तत्त्व हैं।

मन को अच्छी तरह देखें। इसे एकाग्र बना कर स्वरूप में द्धस्त्त करें। नवचारिील, सतकथ और सचेत रहें।
यनद तन्द्रा लगे तो दि नमनट के नलए खडे हो िायें और मुख तर्ा निर पर ठण्ेडे िल के छीटें दें। इन दोनों ंबडी बाधाओं ंको नवचार, प्राणायाम और लघु साद्धत्वक आहार द्वारा दूर करें। प्राणायाम, िीषाथसन, सवांगासन, मयूरासन और लघु भोिन से तन्द्रा और आलस्य को दूर नकया िाता है। बाधा के कारणों ंको मालूम करके उनको दूर करें। निनको आपका मन पसन्द नहीं ंकरता, उनकी संगनत से बचें। बाद-नववाद न करें। दूसरे की बात न काटें। िो लोग अनववेकी और अपररपक्व हैं, उनें् तकथ से मनवाने की कोनिि न करें। कम बोलें, मौन रहें, अकेले रहें। इस भाँनत आप सभी प्रकार की उते्तिनाओं ंसे बच सकते हैं, ननरन्तर सत्संग करें। बुद्धि को उन्नत करने वाले प्रान्य योगवानसष्ठ, उपननषदों ंआनद का मननिील अध्ययन करते रहें। ब्रह्मभावना बनायें। अवथ और भाव-सनहत ॐ का पि करें। उदासी के सारे नवचार दूर हो िायेंगे।

यनद आप सचेत रहें और दीघथ काल के प्रयत्न तर्ा अर्क िाग्रत स्वरूप-नचन्तन के द्वारा तन्द्रा तर्ा मनोराज्य-इन दोनों ंबाधाओं ंपर अनधकार प्राप्त कर लें तो र्ोडे ही समय में द्धस्र ब्रह्माकार-वृनत्त तर्ा ब्रह्म-ज्ञान का उदय होगा, अज्ञान दूर हो िायेगा, आप सहि परमानन्द-अवस्र्ा में द्धस्त्त हो िायेंगे तर्ा ज्ञानानम में सारे संनचत कमथ भस्म हो िायेंगे।

ध्यान में स्वप्न

कुछ साधकों ंको अनेक प्रकार के अद्‌भुत स्वप्न दिुःख देते हैं। कभी-कभी ध्यान और स्वप्न का नमश्रण हो िाता है। स्वप्नों ंको उपद्धस्नत से ज्ञात होता है नक अभी तक आप गम्भीर ध्यान में भली प्रकार द्धस्त्त नहीं ंहुए हैं, मन के नवक्ेषेप को दूर नहीं ंनकया है और ननरन्तर तीव्र साधना नहीं ंकी है। क्ोंनक स्वप्न की नक्रया बडी नवनचत्र होती है और समझायी नहीं ंिा सकती, इसनलए िब तक कारणि्रीर के सारे संस्कारों ंको ननकाल कर नवचारों ंका ननग्रह नहीं ंकर लेते तब तक स्वप्नों ंका संयम करना बडा कनठन है। िैसे-िैसे पनवत्रता, नववेक और धारणा बढ़ती िायेगी, वैसे-वैसे स्वप्न कम होते िायेंगे।

उदासी

नवीन साधकों ंमें पूवथ-संस्कारों ंके वि या सूक्ष्म लोक के प्रानणयों,ं दुष्ट आत्माओं,ं कुसंगनत, बादल के नदन, अपच और कोष्ठबिता के कारण बहुधा उदासी आ िाती है। इसको िल्दी आनन्दमय नवचारों,ं िुतगामी सैर, गायन, हूँसी, प्रार्थना, प्राणायाम आनद उपायों ंद्वारा हटा देना चानहए।

शवक्ेषेप

सुगद्धन्ध, कोमल िय्या, उपन्यास पढ़ना, नाटक, चलनचत्र देखना, अश्लील गीत, नृत्य, पुष्प, द्धस्त्रयों ंकी संगनत और रािनसक भोिन-ये सब नवषय-वासनाओं ंको उते्तेनित करते और मन में नवक्षोभ उत्पन्न करते हैं। अनधक नमक, नमचथ और नमठाइयाँ प्यास को भडकाती हैं और ध्यान में नवघ् िालती हैं। अनधक बातचीत, अनधक घूमने और लोगों ंसे नमलने-िुलने से भी ध्यान में नवघ् पडता है।

मन की नववेकि्ून्य नैसनगथक वृनत्तयाँ ध्यान को नवचनलत कर देती हैं। इन सबको बुद्धि और दृढ़ इच्छा द्वारा संयत करना चानहए। सम्भोग-वासना और महत्त्वाकांक्षा-ये दोनों ंध्यान में वास्तनवक बडी बाधाएँ हैं। ये सदा छापामार युि करती रहती हैं और साधक पर बार-बार आक्रमण करती हैं। कुछ काल के नलए तो ये बडी दुबथल

हो गयी-सी मालूम पडती हैं। बहुधा नफर िीवन प्राप्त कर लेती हैं। बडे प्रयत्न, नवचार, नववेक और **'शिवोऽहों'-** भावना के द्वारा इनको ननकाल देना चानहए।

ब्दि से मन गनत पाता है। िब्द ही मन को नवचार में लीन करता है। िब्द ध्यान में मन को िान्त कर देता है। सार्थक िब्द से अनधक क्षोभ होता है और ननरर्थक िब्द से कम। िो िब्द ननरन्तर होता रहे–िैसे नदी के प्रवाह का िब्द-उससे इतना क्षोभ नहीं ंहोता नितना की आकद्धस्मक तीव्र और कभी-कभी होने वाले िब्द से होता है। िब मन नकसी िब्द का अभ्यस्त हो िाता है तो उससे क्षोभ नहीं ंहोता घडी की नटक्-नटक् बन्द हो िाने पर ही आपका ध्यान उधर को द्धखंचता है।

तूष्णीमूभूत-अवस्र्ा

तृष्णीमूभूत-अवस्र्ा मन की वह िान्त दिा है निसमें कुछ र्ोडे समय के नलए पदार्ों की ओर आकषथण या नवकषथण नहीं ंहोता। यह िाग्रत अवस्र्ा में होती है। यह मन की उदासीन दिा है। यह भी ध्यान में बाधक हैं। इससे बचना चानहए। अनववेकी साधक भूल से ही इसको समानध मान बैठते हैं।

कषाय

कषाय का अर्थ रंग है। राग, द्वेष और मोह-ये मन के कषाय हैं। नवषय-भोग का िो सूक्ष्म प्रभाव मन के ऊपर रह िाता है और समय पा कर फलीभूत होता है तर्ा मन को समानध से दूर हटा देता है, वह कषाय कहलाता है। वह ध्यान में बहुत बडी बाधा है। यह साधक को समानध-ननष्ठा में प्रवेि नहीं ंकरने देता। यह नछपी हुई वासना है िो भोगों ंकी सूक्ष्म सूमृनत को उत्पन्न कर देती है। संस्कारों ंसे वासना पैदा होती है। संस्कार कारण है और वासना कायथ है। यह एक प्रकार का मल है। इस असाध्य रोग कषाय को दूर करने के नलए सतत नवचारयुि ब्रह्म-भावना ही परमौषनध है।

सान्त्त्वकवृशत्तयााँ

ध्यान-काल में, िब आपका मन साद्धत्त्वक होता है, आपको प्ेरेरणा नमलती है। मन सुन्दर कनवताएँ रचता है और िीवन की समस्याओं ंको सुलझाता है। इन साद्धत्त्वक वृनत्तयों ंको भी नमटा दें। यह सब माननसक िद्धि को भी क्षीण करते हैं। आत्मा की ओर अनधकानधक ऊँचे िायें।

सशवकल्प समाशध

सनवकल्प समानध का आनन्द भी बाधक है; क्ोंनक यह आपको ननननवथकल्प-अवस्र्ा में प्रवेि करने से रोकता है। इससे नमथ्या तुनष्ट नमलती है और आगे के नलए साधन रुक िाता है।

इन चारों ंबाधाओं ंसे मन मुि होना चानहए। तब आप िुि, अद्वैत, ननननवथकल्प-अवस्र्ा में प्रवेि कर सकेंगे। नवचार और ब्रह्म-भावना की सहायता से ही यह उच्चतम अवस्र्ा प्राप्त हो सकती है।

ध्यान और कायछ

िी मनुष् ध्यान करता है, वह काम नहीं ंकर सकता। िो काम करता है, वह ध्यान नहीं ंकर सकता। यह सनुतुलन नहीं ंहै। यह समता नहीं ंहै। ध्यान तर्ा कमथ-दोनों ंही सुसनुतुनलत होने चानहए। यनद आप ईश्वरी आज्ञा मानने को तैयार हैं तो िो-कुछ भी काम नदया िाये, चाहे वह नकतना ही भारी काम क्ों ंन हो, उसे करने के नलए आपको तैयार रहना चानहए और मौका पडने पर अगले ही नदन उसे ग्रहण करने के समय की भाँनत ही िाद्धन्तपूवथक अपना कोई उत्तरदानयत्व अनुभव नकये ही छोड देने के भी योग्य होना चानहए। संसार में आपको बडी िद्धि के सार् काम करने योग्य होना चानहए और िब कायथ समाप्त हो िाये तो िाद्धन्तयुि मन से दीघथ काल तक गुहा में एकान्त-वास करने की भी योग्यता होनी चानहए। यही सनुतुलन है, यही सच्ची सामथ्यथ और िद्धि कहलाती है। तभी आप गुणातीत समझे िा सकेंगे। गीता में भगवान् ने कहा है : "िो मनुष् सत्त्व, रिस् और तमोगुण के प्रवृत्त होने पर उनसे द्वेष नहीं ंकरता और उनके चले िाने पर उनकी इच्छा नहीं ंकरता, वह गुणातीत कहलाता है" (गीता-१४-२२)।

बि आप आध्याद्धत्मक साधन में आगे बढ़ िायेंगे तो आपके नलए ध्यान और कायाथलय का काम एक-सार् करना बहुत कनठन हो िायेगा; क्ोंनक मन पर दोगुना दबाव पडेगा। िो ध्यान का अभ्यास करते हैं, उन्ें ज्ञान होगा नक वे ध्यानाभ्यास न करने वाले लोगों ंसे अनधक संवेदनिील हैं और इसी कारण उनके स्थूल िरीर पर बडा दबाव रहता है। मन ध्यान-काल में नकन्हीं ंऔर संस्कारों ंके सार् नकसी दूसरे ही मागथ में काम करता है और नफर नभन्न-नभन्न प्रकार की अनुकूल नक्रयाओं ंके नलए अपने को समंनित करने में इसे बडी कनठनाई प्रतीत होती है। िैसे ही यह ध्यान से नीचे उतरता है तो अँधेरे में टटोलने लगता है। यह सम्भ्रान्त तर्ा नंकंकतथव्यनवमूढ़ हो िाता है। ध्यानावस्था में प्राण अत्यन्त सूक्ष्म हो कर अन्दर की ओर ननननश्चत मागथ में चलता है, उसको ही संसारी नक्रयाओं ंके काल में स्थूल बन कर अन्य मागथ में िाना पडता है। िब सायंकाल आप नफर ध्यान के नलए बैठते हैं तो नदन में नये इकट्ठे नकये हुए संस्कारों ंको नमटाने तर्ा मन को िान्त एवं एकाग्र करने के नलए आपको बडा कनठन संघषथ करना पडता है। यह संघषथ कभी-कभी सर-ददथ का कारण बनता है।

इसनलए उन्नत गृहस्थी योग-साधकों ंको उनचत है नक िब वह ध्यान में उन्ननत प्राप्त कर लें तो और भी आगे बढ़ने के नलए सारे सांसाररक कायों को बन्द कर दें। यनद उनकी लगन सच्ची है तो वे स्वयं ही बन्द करने के नलए बाध्य हो िायेंगे। उन्नत साधकों ंके नलए कायथ ध्यान में बाधक होता है। इसी कारण भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में बताया है : "भोग-प्राद्धप्त की इच्छा वाले मुनन के नलए कमथ उसका साधन होता है और िब वही मुनन योग में आरूढ़ हो िाता है तो िम या िाद्धन्त उसका साधन बन िाती है।" उस अवस्था में तीिब और खार, अनग्न और िल, प्रकाि और अन्धकार की भाँनत ध्यान और कमथ का मेल नहीं ंहो सकता।

ध्यान में असफलता के कारण

कोई-कोई पन्द्रह वषथ तक ध्यान का अभ्यास करते हैं और नफर भी कुछ उन्ननत नहीं ंकर पाते। क्ों?ं यह उनके उत्साह, वैराग्य, मुमुकुषुत्व और ननरन्तर तीव्र साधन के अभाव के कारण है। साधकों ंकी हमिा यह निकायत हुआ करती है, "मैं नपछले १२ वषों से ध्यान का अभ्यास कर रहा हूँ। मैं कुछ उन्ननत नहीं ंकर पाया। मुझे साक्षात्कार नहीं ंहुआ।" यह क्ों ंहोता है? इसका कारण क्ा है? उन्ोंनें अपनी हृदय-गुहा के अन्तरतम भाग में गम्भीर ध्यान में प्रवेि नहीं ंनकया है। उन्ोंनें ईश्वरीय नवचारों ंको सम्यक् प्रकार से आत्मसात् नहीं ंनकया है और मन को सनूतृप्त नहीं ंनकया है। उन्ोंनें ननयनमत तर्ा व्यवद्धस्त रूप से साधना नहीं ंकी है। उन्ोंनें इद्धन्द्रयों ंका पूणथ संयम नहीं ंनकया है। उन्ोंनें मन की बनहगाथमी नकरणों ंको एकत्र नहीं ंनकया है। उन्ोंनें यह आत्मननश्चय नहीं ंनकया है नक मैं

इसी क्षण साक्षात्कार प्राप्त कर लूँगा। उन्होंनें अपना पूणथ या ित-प्रनतित मन ईश्वर में नहीं ंलगाया है। उन्होंनें ईश्वरीय चेतना का बढ़ता हुआ प्रवाह तैलधारावत् िारी नहीं ंरखा है।

आपको ध्यानपूवथक देखना होगा नक क्ा आप कई वषों की आध्याद्धत्मक साधना के पश्चात् भी आध्याद्धत्मक मागथ में एक ही स्ान पर द्धस्र हैं अर्वा आप उन्ननत कर रहे है। कभी-कभी यनद आप सचेत नहीं ं रहते, वैराग्य मन्द पड िाता है या ध्यान में सुस्त हो िाते हैं, तो आप नीचे की ओर भी िा सकते हैं। प्रनतनक्रया आरम्भ हो िाती है।

िैसे कोई मनुष् मूखथताविा दो खरगोिों ंके पीछे भागे तो दोनों ंमें से एक को भी नहीं ंपकड सकता, इसी तरह िो साधक दो नवरोधी नवचारों ंके पीछे भागता है, वह उन दोनों ंमें से एक में भी सफल नहीं ंहोता। यनद वह दि नमनट तक नदव्य नवचार रखे और अगले दि नमनट तक उसके नवरोधी सांसाररक नवचार रखे तो उसे नकसी बात में भी सफलता नहीं ंहोगी और न ही दैवी ज्ञान प्राप्त होगा। आपको चानहए नक अपना पूणथ बल लगा कर एकाग्र मन से एक ही खरगोि का पीछा करें। आप उसे अवश्य ही पकड लेंगे। आपको सदा केवल नदव्य नवचार ही रखने चानहए। तब आप ननश्चय ही िीघ्र भगवत्साक्षात्कार कर लेंगे।

िब आप ध्यान का अभ्यास प्रारम्भ करें तो तुरन्त ही इसके फल की आिा करने में िल्दी न करें। एक युवती ने सन्तान प्राप्त करने की इच्छा से पीपल के वृक्ष की १०८ पररक्रमा की और तुरन्त ही यह देखने के नलए नक पेट में बच्चा आया या नहीं,ं वह अपने पेट पर हार् फेरने लगी। यह ननरी मूखथता है। उसे कई महीने तक ठहरना होगा। यनद आत्मज्ञान के प्रनतपादक ग्रन्ों ंके पाठक, निन्ें उन ग्रन्ों ंमें आनन्द नमलता है, िीघ्र ही फल-प्राद्धप्त के नलए अधीर नहीं ंहो उठते; वरन् उन उपदेिों ंपर ननयत समय पर क्रमबद्ध मनन करते हैं तो उनका मन धीरे-धीरे पररपक्व हो िाता है और अन्त में अनन्त आत्मा को प्राप्त कर लेते हैं। वे आत्म-साक्षात्कार प्राप्त कर लेते हैं।

प्रारम्भ में मन का साम्यभाव प्राप्त करने के नलए आपको प्रयास करना पडेगा। बाद में आपको स्वाभानवक ही माननसक साम्यावस्ा प्राप्त हो िायेगी। यही बात ध्यान के नवषय में भी है। कुछ वषों तक अभ्यास करने से ध्यान स्वाभानवक हो िाता है।

आत्म-साक्षात्कार की ितें

िैसे आप पानी को नमक अर्वा चीनी से सन्तृप्त करते हैं, उसी प्रकार आपको अपने मन को ईश्वर या ब्रह्म के नवचार, नदव्य मनहमा, नदव्य द्धस्नत, आत्मोद्बोधक उन्नत नवचारों ंसे सन्तृप्त करना होगा। तभी आप नदव्य ज्ञान में सदा द्धस्त रह सकेंगे। मन को ब्रह्म-नवचार से सन्तृप्त करने से पूवथ आपको नदव्य नवचारों ंको आत्मसात् करना होगा। प्रर्म आत्मसात्करण तत्पश्चात् सन्तृद्धप्तकरण। तब नबना एक क्षण की देर नकये हुए साक्षात्कार प्राप्त होता है। 'आत्मसात्करण, सन्तृद्धप्तकरण और साक्षात्कारकरण' -इस नत्रक को सदा स्मरण रखें।

अपने को मन के नीच नवचारों ंसे तर्ा अनेक ननरर्थक संकल्पों ंसे मुि कर लें। िैसे आप गूँदले पानी को पावक पदार्थ िाल कर ननमथल कर लेते हैं, इसी प्रकार वासनाओं ंऔर नमथ्या संकल्पों ंसे पूणथ इस गूँदले मन को भी ब्रह्म-नचन्तन के द्वारा पनवत्र करना होगा। यनद मन बराबर नवषय-भोगों ंमें लगा रहता है तो संसार की सत्यता का भाव ननश्चय ही बढ़ता है। यनद मन ननरन्तर आत्म-नचन्तन करता है तो संसार स्वप्नवत् प्रतीत होता है। ननरन्तर अर्क आत्म-नवचार करें। 'ननरन्तर' िब्द पर ध्यान दें। यह आवश्यक है। तभी सच्चा प्रकाि प्राप्त होगा। तभी आत्मज्ञान का उदय होगा। नचदाकाि में ज्ञान-सूयथ का प्रकाि होगा।

गीता में आपको **'अनन्यचेतिाः', 'मन्च्चत्तिाः', 'शनत्ययुक्तिाः', 'मन्मनिाः' 'एकाग्रमनिः', 'सवछभाविः'** इन ब्दिों ंका प्रयोग बारम्बार नमलता है। इनका अर्थ यह है नक आपको अपना पूणथ, ित-प्रनत–त मन भगवान् को देना होगा। तभी आत्म-साक्षात्कार प्राप्त होगा। यनद एक भी नकरण बाहर को भागेगी तो नदव्य चेतना (ईश्वरीय ज्ञान) प्राप्त करना सम्भव नहीं ंहै।

मन की नक्रयाएँ ही वास्तनवक कमथ हैं। मन को बन्धन-मुि कर देने से ही सच्ची मुद्धि नमलती है। निन्ोंनें अपने को मन के नवक्ेषेप से मुि कर नलया है, वे परम ननष्ठा प्राप्त कर लेते हैं। यनद मन के सारे मल दूर हो िायें तो यह िान्त हो िायेगा और (िन्म-मरण-सनहत) संसार का सारा मोह िीघ्र ही नष्ट हो िायेगा।

अहंभाव के कारण ही मन की सत्ता है। अहंभाव मन में केवल एक नवचार है। अहंभाव और मन अनभन्न हैं। यनद अहंभाव का लोप हो िाये तो मन का भी लोप हो िायेगा। यनद मन का लोप हो िाये तो अहंभाव भी िाता रहेगा। तत्त्व-ज्ञान के द्वारा मन का निा कर दें। 'अहं ब्रह्माद्धस्म' भावना से अहंभाव का निा करें। ननरन्तर तीव्र ननदध्यासन करते रहें। िब मन का लोप हो िाता है और नवचार भी बन्द हो िाते हैं तो नाम और रूप की भी सत्ता नहीं ंरह िाती, तब लक्ष्य की प्राद्धप्त होती है।

परररचे्छेद - ३४

समाशध

समाशध का अशभलक्षण

बि मन धे्येय पदार्थ में पूणथतिः लीन हो िाता है तो उसे समानध कहते हैं। समानध में मन धे्येय के सार्
एकरूप हो िाता है, नफर न ध्यान रहता है और न ध्याता। ध्याता और ध्यान, नवचारक और नवचार की वसु्तु तर्ा पुिारी और पूज्य एक हो िाते हैं। समानध में नत्रपुटी का लय हो िाता है, मन को अपनी चेतना नहीं ंरहती और वह ध्यान की वसु्तु से तूिप हो िाता है। ध्याता अपना व्यद्धित्व ईश्वर-रूपी सागर में नवसनिथत कर देता है और ईश्वर का नननमत्त मात्र बनने तक वहीं ंननमग्न तर्ा नवसूमृत पडा रहता है। िब उसका मुख खुलता है तो वह नबना प्रयत्न के
केवल ईश्वरीय पे्ररणा से ईश्वर के िब्द बोलता है और िब उसका हार् उठता है तो ईश्वर उसके द्वारा आश्चयथमयी घटना रचता है।

समानध में चकु्षु और कान भी काम नहीं ंकरते तर्ा िारीररक अर्वा माननसक चेतना नहीं ंरहती; केवल आध्याद्धत्मक चेतना रहती है, सत्ता मात्र रहती है। वही आपका सच्चा स्वरूप है। िब सरोवर का िल सूख िाता है तो िल में सूयथ का प्रनतनबम्ब भी समाप्त हो िाता है। इसी प्रकार िब मन ब्रह्म में लीन हो िाता है, मन-रूपी सरोवर सूख िाता है तो चैतन्य का प्रनतनबम्ब िीवात्मा भी समाप्त हो िाता है और केवल सत्ता मात्र अविेष रह िाती है।

तुरीय वह आध्याद्धत्मक अवस्र्ा है िहााँ मन की नक्रया नहीं ंरहती, िहााँ मन ब्रह्म में लीन हो िाता है। यह 'चतुर्थ आयाम' है, िहााँ अनन्त ब्रह्मानन्द है। यह अकमथण्यता, नवसूमृनत या नविा की द्धस्र्नत नहीं ंहै। यह पूणथ चेतनावस्र्ा है िो अकर्नीय है, सबका चरम लक्ष्य मोक्ष अर्वा मुद्धि है।

सामान्यतिः िब आप स्वप्न-रनहत प्रगाढ़ नविा में होते हैं तो दो में से एक बात होती है या तो आप देखे हुए स्वप्न को याद नहीं ंरख सकते या आप नबलकुल अचेत नविा में पड गयेिो मृतु्य के समान है। परनु्तु एक ओर सुषुद्धप्त की भी सम्भावना होती है निसमें आप पूणथ नीरवता, अमृतत्व तर्ा अपनी सत्ता के सभी भागों ंकी िाद्धन्त में प्रवेि कर िाते हैं और आपकी चेतना सद्धच्चदानन्द में प्रवेि कर िाती है। आप इसको नविा नहीं ंकह सकते; क्ोंनक इसमें पूणथ 'चेतना' रहती है। इस अवस्र्ा में आप कुछ नमनट या घण्टों ंया नदन तक रह सकते हैं; परनु्तु ये कुछ नमनट ही आपको इतनी नवश्राद्धन्त दे देते हैं नितनी नक घण्टों ंकी सामान्य नविा से नहीं ंप्राप्त हो सकती। यह अवस्र्ा अकस्मात् ही प्राप्त नहीं ंहोती। इसके नलए दीघथ काल तक अभ्यास की आवश्यकता है।

समानध निला के समान िड दिा नहीं ंहै, िैसा नक अनेक लोग समझते हैं। आत्ममय िीवन नविा नहीं ं है। िब तक िीव संसारी भौनतक बन्धनों ंसे नघरा रहता है तब तक ऐसी िद्धियााँ पूणथ रूप में नवकनसत नहीं ंहोतीं ं और िब वह इन भौनतक सत्ता के बन्धनों ंसे परे हो िाता है तो उसका नवश्विीवन गम्भीर और आत्मा समृि हो िाती है, उसके आन्तररक िीवन में वृद्धि होती है तर्ा उसका नवश्विीवन और अनत-नवश्विीवन भी नविाल हो िाता है।

समाशध के शवशवध भेद

रियोगी को नचत्त-वृनत्त-ननरोध द्वारा समानध, भि को भगवत्प्रेम द्वारा भाव-समानध तर् वेदान्ती को नमथ्यात्व-बुद्धि और अन्वय की रीनत से अद्धस्त-भानत- नप्रय (सद्धच्चदानन्द) के नचन्तन द्वारा भेद-समानध हो िाती है।

केवल रियोगी वृनत्तयों ंके नि, ननरोध-समानध की चेष्टा करता है- **"योगशश्चत्तवृशत्त शनरोधिः"** (पातंलि योगसूत्र : १-२) । वेदान्ती पदार्ों के सन्मुख आने पर उनमें सदा आत्म-भाव अर्वा ब्रह्म-भाव रखता है। इसनलए वह वृनत्तयों ंके नि के नलए चेष्टा नहीं ंकरता। उसके नलए प्रत्याहार नहीं ंहै और न बनहमुथख वृनत्त होती है। वह नाम-रूप का ननराकरण करके अद्धस्त-भानत-नप्रय को ग्रहण करता है (भेद-समानध)। भि सारे पदार्ों में नारायण या कृष्ण को ही देखता है। वेदान्ती की भाँनत वह भी वृनत्तयों ंका नवरोध न करके अपनी मनोवृनत्त को बदल देता है। मन ही सारे भेद और पार्थक् पैदा करता है। यनद आप अपना दृनष्टकोण और अपनी मनोवृनत्त को बदल दें तो संसार ननरनतिय आनन्द ही है। आपको पृथ्वी पर ही स्वगथ नमलेगा।

आप रियोगी या भद्धियोगी या ज्ञानयोगी को केवल उसका िरीर नहला कर या िंख बि कर उसकी समानध से सामान्य नवषयननष्ठ चेतना में ला सकते हैं। रानी चुिाला ने अपने पनत रिा निद्धखर्ध् को उसका िरीर नहला कर ही समानध से सामान्य चेतना में उतारा र्ा। भगवान् हरर ने िंख-र्ध्नन द्वारा भि प्रह्लाद को समानध से उतारा र्ा।

हियोग िारा समाशध

हठयोग का साधक सारे िरीर से प्राण को खीचं कर निर के ऊपरी भाग सहस्रार चक्र में ले िाता है। तब वह समानध में प्रवेि करता है। इसनलए केवल उसका िरीर नहला कर उसे सामान्य नवषयगत चेतना में लाना बहुत कनठन है। हठयोगी समानध में कई वषों तक पृथ्वी के नीचे दबे रहते हैं। वे खेचरी मुिा द्वारा अपनी लम्बी निह्वा से तालु के अन्दर पश्च नासारन्ध्र को बन्द कर देते हैं।

छाती में प्राण-वायु और गुदा में अपान वायु चलती है। िालन्धर, मूल और उनड्डयान-बन्ध की यौनगक नक्रया द्वारा ये दोनों ंवायु नमल िाती हैं और मेरुदण्ड की सुषुम्ना नाडी में प्रवेि करती हैं। प्राण अपने सार्-सार् मन को भी ब्रह्म-नाडी के रूप में िानी िाने वाली सुषुम्ना नाडी के अन्दर खीचं लेता है। प्राण को सुषुम्ना नाडी में चढ़ाते समय मूलाधार चक्र में ब्रह्म-ग्रद्धन् को, मनणपूर चक्र में नवष्णु-ग्रद्धन् को और आज्ञा चक्र में रुि-ग्रद्धन् को बडे प्रयत्न के सार् काट देना चानहए। ये ग्रद्धन्याँ कुण्डनलनी के उत्थान में बाधक हैं। भद्धस्त्रका प्राणायाम इन ग्रद्धन्यों ंका भेदन करता है। िब मूलाधार चक्र सनपथणी के रूप में साढ़े तीन बल खाये तर् मुख नीचे नकये हुए सोती हुई कुल-कुण्डनलनी िद्धि आध्याद्धत्मक साधना द्वारा िाग्रत होती है तो वह ऊपर सहस्रार चक्र को चढ़ती है और मन तर् प्राण को भी अपने सार् ले िाती है। िब योगी का मन सुषुम्ना के अन्दर रहता है तो उसकी भौनतक चेतना बन्द हो िाती है और उसको संसारी नवषय का ज्ञान नहीं ंरहता। वह संसार के नलए मृतप्राय हो िाता है और नचदाकाि में ही दृश्य देखता तर् गमन करता है। समानध प्रारम्भ हो िाती है।

राजयोग िारा समाशध

गम्भीर ध्यान से समानध अर्वा परमात्मा के सार् तादात्म्य हो िाता है। यनद आप अपने मन को नकसी एक वसुतु पर अर्वा मूनतथ पर दि सेकेण्ड तक द्धस्थरता से एकाग्र कर सकें तो यह धारणा होती है। ऐसी दि धारणाओं ंको ध्यान कहते हैं। दि ध्यान से समानध बनती है। मन आत्मा या ईश्वर से पररपूणथ हो िाता है। वह अपनी चेतना खो कर ध्येय के सार् तद्धच्चत्त, तन्मय अर्वा तदाकार हो िाता है। निस प्रकार नमक का बना हुआ द्धखलौना पानी में घुल िाता है उसी प्रकार मन ननननवथकल्प समानध में ब्रह्म में लीन हो िाता है। रहस्यमय ज्ञान की

एक झलक मात्र से सारी पदार्थमय सत्ता का अन्त हो िाता है और संसार का नवचार या स्मरण या इस संसार में िीवि की सत्ता का संकीणथ नवचार आत्मा को नबलकुल छोड देता है।

यह नहीं ंकहा िा सकता नक पूणथ योनगयों ंमें कब प्रत्याहार समाप्त हो कर धारणा प्रारम्भ होती है, कब धारणा समाप्त हो कर ध्यान लग िाता है और कब ध्यान समाप्त हो कर समानध लग िाती है। निस क्षण वे आसन पर बैठते हैं, ये सब नक्रयाएँ नबिली के वेग की तरह क्षण-भर में एक-सार् ही हो िाती हैं और वे अपनी सचेतन इच्छा से समानध में प्रवेि कर िाते हैं। नये साधकों ंमें पहले प्रत्याहार होता है, तत्पश्चात् धारणा प्रारम्भ होती है और तदुपरान्त धीरे-धीरे ध्यान आरम्भ होता है। उनका मन समानध के प्रकट होने से पहले ही असनुतुष्ट तर्ा क्लान्त हो कर नगर िाता है। लघु तर्ा पौनष्टक भोिन के सार् व्यवधान-रनहत तीव्र साधना द्वारा समानध प्राप्त करने में प्रत्यानित सफलता नमलती है।

यौशगक समाशध तर्ा वेदान्तक समाशध

योगी और वेदान्त की ननननवथकल्प अवस्र्ाओं ंमें अन्तर होता है। योगी की दिा का सम्बन्ध मन और वेदान्ती की आत्मा या ब्रह्म से होता है। योगी की समानध में ध्येय (ध्यान का नवषय) बना रहता है, िब नक वेदान्ती की समानध में केवल अद्धस्त िेष रहता है।

सशवकल्प समाशध तर्ा शनशवछकल्प समाशध

नवषय-रूप संसार के मकान की ननचली मंनिल नवषयी िीवन है। पहली मंनिल सनवकल्प समानध की प्रतीक है, दूसरी मंनिल ननननवथकल्प समानध के तुल्य है और तीसरी मंनिल िीवनुमुि सहिावस्र्ा की द्योतक है।
सनवकल्प समानध की तुलना चलती हुई बैलगाडी से की िा सकती है। िब गाडी रुक िाये तो ननननवथकल्प समानध
समझनी चानहए और बैलों ंको खोल नदया िाये तो सहिावस्र्ा हो गयी। िब योगी ध्यान और समानध की चरमावस्र्ा को प्राप्त हो िाता है, निसकी अनग्न से उसके अवनिष्ट कमथ ननिःसनेदेह भस्म हो िाते हैं तो उसे सद्योमुद्धि (िीवनुमुद्धि) नमल िाती है।
सनवकल्प समानध में ध्याता (ध्यान करने वाला), ध्यान और ध्येय (निसका ध्यान नकया िाये) यह नत्रपुटी रहती है; पर ननननवथकल्प समानध में यह नत्रपुटी नहीं ंरहती। ननननवथकल्प का अर्थ है नवकार तर्ा कल्पना-रनहत। सनवकल्प समानध में मन ब्रह्म में पूणथतया लीन हो िाता है। इसमें िो आनन्द प्राप्त होता है, उसे रसास्वाद कहते हैं। यह भी आध्याद्धत्मक अग्रगनत में एक प्रनतबन्ध अर्वा नवघ् होता है। यह आपको उसी स्र्ान पर रोक देता है। यह आपको मोक्ष नहीं ंदे सकता। आपको और भी अग्रसर होना चानहए और उच्चतम ननननवथकल्प समानध प्राप्त करनी चानहए निसमें आपकी मुद्धि हो।

भन्त्तयोग-साधना के लाभ

इस युग में अनधकांि लोगों ंके नलए हठयोग और राियोग का अभ्यास अनुकूल न होने पर भी प्रत्यक्षतिः ठोस तर्ा आिु । फलप्रद होने की आिा के कारण इनके प्रनत लोगों ंके मन में सदा ही अतीव सम्मोहक आकषथण रहा है। बहुत से मनुष्ों ंका िरीर-गठन अच्छा और िीलिौल हृष्ट-पुष्ट नहीं ंहोता। वे दुबथल व्यद्धि होते हैं। आि के युग में बचे्च ही बचे्च उत्पन्न करते हैं। बानलकाएँ माता बनती हैं। इसनलए भद्धियोग सुगम और सुरनक्षत मागथ है। भगवन्नाम का िप कोई भी कर सकता है। कोई भी व्यद्धि प्रभु का गुणानुवाद कर सकता है। िैसे नबना माता के

पुत्र नहीं ंहो सकता, उसी प्रकार अनन्य भद्धि के नबना ज्ञान नहीं ंहो सकता। िब भद्धि पररपूणथ और पररपक्व हो िाती है तो साधक के अनधक प्रयत्न नकये नबना ही ब्रह्म-ज्ञान का उदय स्वतिः ही हो िाता है।

मन्त्र में बडी िद्धि होती है। यह मन को िुि करता, उसमें वैराग्य उत्पन्न करता तर्ा वृनत्त को अन्तमुथखी बनाता है। प्रत्येक मन्त्र का एक मन्त्रकार ऋनष, उसका अनधष्ठाता देवता, बीि (मूल-मन्त्र), िद्धि तर्ा मन्त्र-चैतन्य को नछपाने वाला कीलक होता है। ननरन्तर तर्ा दीघथ काल तक एकाग्र मन से भाव-सनहत मन्त्रोच्चार करने से मन्त्र-चैतन्य िाग्रत हो िाता है और साधक को मन्त्र-नसद्धि प्राप्त होती है। सभी मन्त्रों ंमें आध्याद्धत्मक प्रवाह हुआ करता है। मन्त्र भि के अपने लक्ष्य अर्वा अद्धन्तम चक्र में प्रवेि तक उसकी आत्मा को एक चक्र से दूसरे चक तक ले िाता है। ध्रुव को नारद ऋनष के बताये हुए द्वादिाक्षर-मन्त्र 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' के िप से भगवान् हरर के दिथन हुए र्े। प्रह्लाद को 'नारायण-मन्त्र' के िप से महानवष्णु के दिथन हुए र्े। वाल्मीनक को 'मरा-मरा', िो िप करने से राम-नाम बन िाता है, िपने से ही ईश्वर-दिथन हो गये र्े। पण्ढरपुर के भगवान् श्रीकृष्ण की प्रनसि मूनतथ का नाम 'नवठ्ठल नवठ्ठल' पुकारते रहने से महाराष्टरीय सन्त तुकाराम श्रीकृष्ण में लीन हो गये र्े।

शचतन-पूरण-एकीकरण

ध्यान-काल में िो तीन नक्रयाएँ मन में होती रहती हैं, उन्हें देद्धखए। वे हैं: नचन्तन, पूरण और एकीकरण। यह दूसरी नत्रपुटी है। इनके तत्त्वार्थ को याद रख कर साधना-काल में मन से इनको दोहराते रहने से बडी सहायता नमलती है।

आत्मा पर नवचार करें। आत्मा से अपने मन को पूणथ कर लें। नफर भ्रमर-कीट-न्याय के अनुसार मन ब्रह्म के सार् एकाकार हो िाता है। िैसा आप नवचार करते हैं वैसा ही आप बनते हैं। नवचार करते रहें नक 'आप ब्रह्म हैं' तो आप ब्रह्म ही बन िायेंगे।

बि मन का नवषयों ंसे प्रत्याहार कर गम्भीर नचन्तन आरम्भ नकया िाता है तो नवषयपरक चेतना बन्द हो िाती है तर्ा सनवतकथ समानध प्रारम्भ हो िाती है। यौद्धिकीकरण, नवश्लेषण और संश्लेषण (पूवाथपर नवचार-प्रणाली), अनुसन्धान तर्ा ननरपेक्ष नववेचन होने लगता है। यह सनवतकथ समानध है। अब कुनवचार नहीं ंप्रवेि कर सकते। मन साद्धत्त्वक हो िाता है।

नचत्तिुद्धि के सार् दािथननक ग्रन्थों ंका गम्भीर पररिीलन समानध का ही एक रूप है। इसमें मन सांसाररक नवचारों ंसे मुि हो िाता है।

बि आपका ध्यान गम्भीर हो िाता है तो आप केवल कारणिरीर के द्वारा नक्रया करते हैं। कारणिरीर की चेतना आपकी सामान्य चेतना बन िाती है। योनगयों ंके सामान्य कारणिरीर की चेतना होती है। श्री गौरांग, तुकाराम, तुलसीदास आनद के समान भिों ंने अपने को कारण िरीर से नमला नदया र्ा और उनकी सामान्य कारणिरीर-चेतना र्ी। कारणिरीर-चेतना का भि इस मांसमय िरीर में रहते हुए ब्रह्मलोक का अनधभोग हो िाता है। वह ब्रह्म अर्वा नहरण्यगभथ के सार् नमल िाता है। उसे नदव्य ऐश्वयथ प्राप्त होता है, तो भी उसका पतला वायवीय िरीर होता है। वह अपना व्यद्धित्व रखता है। िैसे िलावतथ समूपूणथ िल-रानि में नमला हुआ भी होता है और उसकी पृर्क् सत्ता भी होती है। यही अवस्र्ा उस भि की होती है िो अपने कारणिरीर से ईश्वर में िीवन यापन करता है।

वेदात के ारा समाशध कैसे प्राप्त करें

पि, प्राणायाम, सत्संग, स्वाध्याय, दान, यज्ञ, तप और ननष्काम सेवा से मन को ि ु करें और नफर इसे ईश्वर की ओर लगायें। मन के संकल्प-नवकल्प को नष्ट करें तरा मन की गनत को आध्याद्धत्मक प्रवाह से नमला दें। 'मैं, तुम, वह, घट, पट' आनद नाना-भाव, द्वैत-भाव को छोड दें। उसके स्ान में केवल ब्रह्म-भावना रखें। तब समानध स्वयमेव प्राप्त हो ायेगी।

अहंकार को ना करने के चार उपाय हैं: दो (सकारात्मक तरा नकारात्मक) अद्वैत के, एक भिों ंका उनुमि, अबाध तरा समूपूणथ आत्म-ननवेदन और चौरा ननष्काम कमथयोनगयों ंका पूणथ आत्म-त्याग।

वेदान्त की **'नेशत-नेशत'** नवनध यह है नक "मैं िरीर नहीं ंहूँ, मैं मन नहीं ंहूँ।" **"ब्रह्म सत्यों जगन्मथ्या जीवो ब्रह्मीव नापरिः"** केवल ब्रह्म ही सत्य है। िगत् नमथ्या है। िीव तरा ब्रह्म एक ही हैं। िरीर भी िगत् के अन्तगथत ही है। इसी नवचार पर नचन्तन करें। अहं लुप्त हो ायेगा। सकारात्मक नवनध यह है नक आत्मा ही सब-कुछ है : "सवथ खद्धिदं ब्रह्म" सब-कुछ ब्रह्म है। ब्रह्म के अनतररि और कुछ नहीं ंहै।

समाशध के शलए साधना में बुन्मित्तापूणछ शमताचार अपररहायछ

शभद्यते हृदयग्रन्थन्द्यिते सवछसोंयािः।
क्षीयते चास्य कमाछशण तन्नि् दृषे्टे परावरे ।।

(मुण्डकोपननषद्-२-२-८)

उस कायथ और कारण-स्वरूप परात्पर ब्रह्म का साक्षात्कार कर लेने पर इस िीव की हृदय-ग्रद्धन् टूट ाती है, समस्त संयि नष्ट हो ाते हैं और समस्त कमथ क्षीण हो ाते हैं।

एक बुद्धिहीन मक्खी यह ानती है नक अमुक वृक्ष में फूल द्धखल रहे हैं, बडी तीव्र गनत से चलती है और उस वृक्ष से आगे ननकल ाती है, उलटी नफर कर िब तक वह फूलों ंके पास पहुँचती है, उनका रस समाप्त हो चुकता होता है। दूसरी मूखथ मक्खी मन्द गनत से चलती है और िब तक फूलों ंके पास तक पहुँचती है, उनका रस समाप्त हो चुका है। दूसरी तरफ, एक चतुर मक्खी एक-सी गनत से चलती हुई पुष्प-समूह के पास पहुँच कर उनके रस से अपने हृदय को तृप्त कर लेती है, उसका मधु बनाती है और उसके स्वाद से सुख पाती है।

इसी प्रकार िल्य-नचनकत्सा के नवद्यानर्थयों ंमें, ो िल के पात्र में रखी हुई कमल की पत्ती पर काम कर रहे हैं, एक मूखथ नवद्यारी चाकू ती से चलाता है और या तो पत्ती के दो टुकडे कर देता है या उसे िल में ुबा देता है। दूसरा मूखथ नवद्यारी उसको काटने या ुबा देने के भय से पत्ती को चाकू से छूने का साहस तक नहीं ंकरता। चतुर नवद्यारी एक-से बल से पत्ती पर चाकू चलाता है; अपना पाठ्यक्रम पूरा करता है और अवसर नमलने पर इसी प्रकार अपने व्यवसाय में काम करके धनोपाथन करता है।

एक और उदाहरण लीनिए-राा की आज्ञा ननकलती है, "ो कोई ४० गि लम्बा मकडी का ाला लायेगा, उसे पुरस्कार-स्वरूप ४००० मुाएँ नमलेंगी।" एक मूखथ मनुष् ीघ्रता से ालों ंको खीचंता और उसे स्ान-स्ान पर तोड देता है। दूसरा मूखथ मनुष् उसके टूट ाने के भय से ाले को अपने हार् से छूने तक का साहस नहीं ंकरता। दूसरी ओर चतुर मनुष् एक-से बल से लकडी के नसरे पर ाले को लपेट लेता है, उसे ले आता है और पुरस्कार प्राप्त कर लेता है।

एक चौरा उदाहरण है। एक मूखथ नानवक प्रबल वायु चलने पर अपनी नाव की पतवार खोल देता है निससे वायु के बल से नाव अपने मागथ से भ्रष्ट हो ाती है। दूसरा मूखथ नानवक मन्द वायु में भी पतवार समेट लेता

है और नाव िहाँ र्ी, वहीं ंरह िाती है। दूसरी ओर चतुर नानवका मन्द वायु में पतवार खोल देता है और तीव्र वायु में पतवार नगरा देता है और सुरनक्षत रह कर अपने स्ान पर पहुुँच िाता है।
इसी प्रकार िब गुरु िी अपने छात्रों ंको सूनचत करते हैं नक िो कोई इधर-उधर तेल नगराये नबना नली में भर देगा, उसे पुरस्कार नमलेगा तो मूखथ नवद्यार्ी पुरस्कार के लोभ में िल्दी–ल्दी तेल भरता है और तेल नगरा देता है। दूसरा मूखथ नवद्यार्ी तेल नगरने के भय से उसे भरता ही नहीं।ं चतुर नवद्यार्ी हार् साध कर तेल भरता है और पुरस्कार प्राप्त कर लेता है।
इसी प्रकार िब साधना में सफलता का लक्षण प्रकट होता है तो एक साधक कहता है, “मैं िीघ्र समानध प्राद्धप्त कर लूँगा।" और प्रबल प्रयत्न करता है; परनुतु उसका मन िल्दी र्क कर निनर्ल हो िाता है निससे वह समानध नहीं ंप्राप्त कर सकता। दूसरा साधक प्रबल प्रयत्न में दोष देखता है, वह प्रयत्न छोड देता है और सोचता है, "समानध से मुझे क्ा लाभ है?" उसका मन अत्यनधक िद्धि-मन्दता के कारण आलसी हो िाता है और वह भी समानध प्राप्त करने में असफल रहता है। परनुतु िो मनुष् समझ तर्ा िाद्धन्त के सार् समान िद्धि से इस आलसी मन को आलस्य से, इस नवनक्षप्त मन को नचन्तन-नवक्ेषेप से मुि कर र्ोडा-र्ोडा लक्ष्य की ओर ले िाता है, वह अपने लक्ष्य ब्रह्म पर पहुुँच कर नननवथकल्प समानध अद्ैवैत-ननष्ठा प्राप्त कर लेता है। आप भी ऐसे ही साधक बनें।

मौन हो िायें। अपने-आपको िान लें। उस ब्रह्म को िान लें। मन को उसी में घुला दें। सत्य बहुत पनवत्र और सीधाहै।

पररचे्छेद-३५

मनोनिा

अज्ञान और अनववेक के कारण मन अपने नमथ्या व्यद्धित्व को सत्य िानता है तर्ा अपने को सारे कमों का कताथ मान लेता है और इस भ्ाँनत अहंकारी बन िाता है। वह कल्पना करता है, "मैं बन्धन में हूँ।" वह अपने को िीवात्मा से अनभन्न मानता है और स्वयं िीवात्मा बन िाता है तर्ा अचे्छे-बुरे कमथ करने और उनका फल भोगने का उत्तरदानयत्व अपने ऊपर ले लेता है। मन ही कमों का कताथ है, अतिः कमों का दानयत्व उस पर ही रहता है।

मन आत्मा को चुराने वाला चोर है। यह चोर है। मन िीवात्मा को नवषयों ंमें घसीटता है। िीवात्मा आभास चैतन्य है। मन और िीवात्मा सदा सार्-सार् रहते हैं। एक को दूसरे से पृर्क् नहीं ंनकया िा सकता। आत्मा को चुराने वाले मन को नवचार, मनन और ब्रह्म पर ननदध्यासन द्वारा मार दें।

एक पल में समग्र संसार को बनाने या नमटा देने की िद्धि मन में है; इसनलए इस आत्महन्ता मन का निा वासनाओं ंका क्षय करके या प्राणायाम से या ब्रह्म-नवचार तर्ा महावाक्-नचन्तन से करें। सबको दुिःख में िालने वाली इस माया के संकट को दूर करने का सबसे उत्तम उपाय मन को निा कर देना है। मनोनिा के सार्-सार् काल-त्रय-भूत, वतथमान तर्ा भनवष्–न्य में नवलीन हो िाते हैं और आत्मतत्त्व का उदय प्रारम्भ हो िाता है।

बि दीघथ काल तक वासना-क्षय, मनोनिा और तत्त्वज्ञान का सार्-सार् अभ्यास नकया िाये तो ये फलदायक होते हैं। इनका अभ्यास एक-सार् ही करना चानहए। िब तक इनका अभ्यास बारम्बार एक-सार् नहीं ं
नकया िाये तो सौ वषथ तक भी परम पद प्राप्त नहीं ंनकया िा सकता। दीघथ काल तक इन तीनों ंका अभ्यास करते
रहने से हृदय की सुदृढ़ ग्रद्धन्यााँ ननिःसन्देह कट िाती हैं िैसे कमल की िण्डी को तोडने से उसके अन्दर के तनुतु भी टूट िाते हैं।

मनोनिा का अर्छ

मनोनिा का तात्पयथ अपना निा नहीं ंहै। वेदान्ती मन का नवभाग उच्च और नीच (उत्तम और ननकृष्ट) दो प्रकार का करते हैं। इनमें से ननकट मन का ही, िो वासनाएाँ, उत्पन करता है, निा करने को कहा गया है। वासनाओं,ं संकल्पों ंऔर अहंकार का निा करने का तात्पयथ मनोनिा अर्वा अपनस्कता है। अहंकार, राग-द्वेष और समूपूणथ वासनाओं ंको क्षय कर देना ही मनोनिा है। बासनाओं ंके निा से मनोनिा होता है। मनोनिा का अनभप्राय यह नहीं ंहै नक आप तलवार ले कर मन के टुकडे-टुकडे कर िालें।

मनोनिा से अर्थ है-मन के इस वतथमान रूप (भावुक तर्ा कामुक नैसनगथक मन) को भार देना िो अभेद होते हुए भी भेद देखता है और िो िरीर तर्ा आत्मा को अनभन्न धानता है। यधार्थ में इसके निा से अर्थ है-इसका समनष्ट चेतना में रूपान्तरण तर्ा हत्पररणाम-स्वरूप समनष्ट चेतना का उदय।

बहुसंख्यक मनुष् केवल अन्नमय-किो में ही रहते हैं। उनके नवचार िरीर धोने में, छाने और पहनने में ही लगे रहते हैं। यहीं ंतक उनका कायथ सीनमत रहता है। निनक्षत कहलाने वाले लोग भी अन्नमय किो में रहते हैं। कभी-कभी वे मनोमय-किो में रहते हैं। आध्याद्धत्मक साधक और नववेकी नवज्ञानमय किो में रहते हैं। नवज्ञानमय-किो का नवकास अमूतथ नचन्तन तर्ा तकथ, ननयनमत ध्यान, ब्रह्मनचन्तन तर्ा उपननषद्, योगवानसष्ठ और ब्रह्मसूत्र के स्वाध्याय द्वारा होता है। वेदान्त-सानहत्य के स्वाध्याय और िुि नवचार गुण आपको अपने नवज्ञानमय-किो का नवकास करना चानहए। तब आप सुरनक्षत हो िायेंगे। मन आपको धोखा देना और दुिःख पहुाँचाना बन्द कर देगा।

अतिःकरण का लय-शचतन

मन महत् या बुद्धि में लय होता है। व्यनष्ट बुद्धि समनष्ट बुद्धि में लय होती है। समनष्ट बुद्धि अव्यि में लय होती है और अव्यि ब्रह्म में लय होता है। यह अन्तिःकरण का तप-नचन्तन है।

िाम्भवी मुिा, भृकुटी-दृनष्ट, नानसकाग्र-दृनष्ट, नादानुसन्धान-ये सब लययोग के िग हैं। इनके अभ्यास से मन का लय िीघ्र हो िाता है और उन्मनी अवस्र्ा ऊपर आ िाती है। लययोनगयों ंकी उन्मनी अवस्र्ा वही होती है िो भिों ंकी भाव-समानध है। िाम्भवी मुिा में नेत्र खुले रहते हैं; परनुतु मन ध्यान के लक्ष्य पर एकाग्र नकया िाता है। आाँखें बाहरी पदार्ों को नहीं ंदेखतीं।ं

बि मन और इद्धन्द्रयााँ दुबथल और अन्ततिः संयत हो िाती हैं तो अन्तिःकरण का व्यापार भी बन्द हो िाता है। िीवत्व (अर्ाथत् दिथन और गनत) का भी लोप हो िाता है। और ब्रह्मत्व अविेष रह िाता है। यह केवल अद्धस्त है।

मनोनिा के दो प्रकार

मनोनिा दो प्रकार का है -(१) स्वरूप मनोनिा, तर् (२) अरूप मनोनिा। पहला िीवनुमुिों ंमें पाया िाता है और दूसरा नवदेहमुिों ंमें।

मनोनिा की शवशध

मनोनिा के पाँच उपाय हैं: दो योग-मागथ के हैं और तीन ज्ञान-मागथ के। (१) िब कोई नवचार पैदा हो, उसे भगा दें। अपने मन से कहें, 'नेनत-नेनत' - यह नवचार नहीं,ं यह नवचार नहीं।ं मुझे यह नवचार नहीं ंचानहए। (२) प्रनतपक्ष-भावना। िो नवचार मन में उठे, उसके प्रनतकूल नवचार उपद्धस्त करें िैसे घृणा के प्रनतपक्ष में प्रेम, भय के प्रनतपक्ष में साहस आनद। (३) ब्रह्म-भावना बनाये रखें। सारे संकल्प स्वयं मर िायेंगे। (४) आप केवल मन को साक्षी-रूप से देखें। उदासीन बने रहें। (५) सदा इस बात की निज्ञासा करते रहें नक 'मैं कौन हूँ?' सारे नवचार मर िायेंगे। नवचारिील व्यद्धि का मन क्षीण हो कर िून्य बन िाता है। यह 'नेनत-नेनत' या प्रनतपक्ष भावना से सुगमतर उपाय है।

संकल्प, इच्छा, राग, द्वेष, अहंकार और मन-ये िीव-रूपी प्रासाद की छह ईंटे हैं। ये िीव-रूपी ििीर की छह कनडयाँ हैं। एक भी ईंट या कडी का नाि कर देने से सारे प्रासाद या ििीर का नाि हो िाता है।

इसनलए ननत्य इस मन-रूपी वृक्ष की संकल्प-नामक िाखाएँ काटते रहें और अन्त में इस मन-रूपी वृक्ष को भी आमूल उखाड फेंकें। िाखाओं ंकाटना गौण कायथ है। मुख्य काम तो 'मैं' को हटा कर इस वृक्ष का ही नाि कर देना है; इसनलए यनद सत्कमों द्वारा इस मनो-वृक्ष की िड अहंभाव को नमटा देंगे तो यह वृक्ष नफर उत्पन्न नहीं ं होगा।

िद्धि, सम्पनत्त, धन और नवद्या अनभमान को दृढ़ कर देते हैं और मन को भी स्थूल बना देते हैं। अनभमान और मन को दुबथल करने के नलए इनका त्याग करना चानहए। वैराग्य और त्याग के द्वारा मन को दुबथल कर देना होगा। िब मन धागे के समान तनु (क्षीण) हो िाये तो इसे तनुमानसी अवस्था कहते हैं।

प्राणायाम (हठयोग-मागथ) के द्वारा या नचत्तवृनत्त-ननरोध-'योगनश्चत्तवृनत्त- ननरोधः' (महनषथ पतंनिल के राियोग-मागथ) के द्वारा मनोनिा नकया िा सकता है। मन के संयम से प्राणावरोध होता है और प्राण के संयम से मन का ननरोध होता है; क्योंनक प्राण और मन का एक ही सम्बन्ध हैं। ध्यान के समय श्वास की गनत बहुत मन्द हो िाती है। िो ध्यान का अभ्यास करते हैं, उन्हें यह बात मालूम है। इससे पता चलता है नक मन की धारणा (एकाग्रता) होने से प्राण स्वयं ही नबना नकसी प्रयत्न के रुक िाता है। प्राणायाम से मनोनिा नहीं ंहो सकता, कुछ समय के नलए वृनत्तयाँ िान्त हो िाती हैं।

नचत्त में परमात्मा का ननरन्तर और िुद्ध नवचार प्राकृनतक कुम्भक कर देगा और मन हृदय में लय हो िायेगा। यही वह परम गनत है निसकी कामना ऋनष-मुनन करते हैं। मन का लय हो िाना परमानन्द या मोक्ष है। आत्मा के साक्षात्कार द्वारा मनोनिा हो िायेगा और अनन्त सुख उत्पन्न करेगा। इस साक्षात्कार में द्रष्टा, दृनष्ट और दृश्य एक हो िाते हैं।

मनोनिा और मनोलय

ध्यान के पदार्थ में मन का तात्कानलक लीन हो िाना मनोलय कहलाता है। िब आप भगवान् श्रीकृष्ण की मूनतथ का ध्यान करते हैं तो कुछ समय के नलए मन भगवान् श्रीकृष्ण की मूनतथ में लीन हो िाता है।

ननिा में मनोलय हो िाता है और मन अपने कारण मूल अनवद्या में प्रवेि कर िाता है।

ब्रह्मज्ञान-प्राद्धप्त के नलए मनोलय पयाथप्त नहीं ंहै, अनपतु मनोनिा आवश्यक है। मनोलय में मन नफर
िीनवत हो िाता है; परनु्तु मनोनिा में मन नफर िीनवत नहीं ंहो सकता। मनोलय आपको बन्धन से नहीं ंछुडा सकता, न ही यह आपको मुद्धि ही नदला सकता है। केवल मनोनिा ही मोक्ष नदला सकता है। मनोनिा ब्रह्मज्ञान के द्वारा होता है।

परिच्छेद - ३६

मन की तुलना

मन भूत के समान है

मन एक अिान्त भूत के समान है। एक समय एक ब्राह्मण पद्धण्डत ने मन्त्र-नसद्धि के द्वारा एक भूत को वि में कर नलया। भूत ने पद्धण्डत से कहा-'मैं आपके नलए कोई भी काम एक नमनट में कर सकता हूँ। आप मुझे सदा कुछ-न-कुछ काम बताते रहें। यनद आप एक सेकेण्ड के नलए भी मुझे नबना काम के रखेंगे तो मैं आपको तत्काल खा िाऊँगा।" पद्धण्डत सहमत हो गये। भूत ने पद्धण्डत के नलए एक तालाब खोदा, उसके खेतों ंमें हल चलाया और र्ोडे समय में अनेक प्रकार के काम कर नदये। अब पद्धण्डत िी भूत को कुछ और काम नहीं ंदे सके। भूत ने उनें् धमकाया, "अब मेरे नलए कुछ काम नहीं ंहै। मैं तुम्हें ननगल िाऊँगा।" पद्धण्डत िी बहुत घबरा गये। उनकी समझ में नहीं ंआया नक क्ा करना चानहए। वे अपने गुरु िी के पास गये और उनको सारी बात बतायी। उनके गुरु ने कहा- "हे चेले! अपनी बुद्धि का प्रयोग करो। अपने घर के सामने एक बडा, दृढ़, नचकना लकडी का
खम्भा गाड दो। उस पर तेल, मोम और दूसरे नचकने पदार्थ लगा दो। भूत से कहो नक नदन और रात इस खमे्भ पर चढ़े और उतरे।" चेले ने ऐसा ही नकया और भूत का ननग्रह कर नलया। अब भूत नबलकुल ननरुपाय हो गया। इसी प्रकार आपको उनचत है नक मन को सवथदा कुछ-न-कुछ काम-यर्ा िप, ध्यान, स्वाध्याय, सेवा, कीतथन, प्रार्थना,
प्राणायाम देते रहें। इसको सदैव पूरी तरह काम में लगाये रखें। तभी मन सुगमता से वि में हो सकता है। आप िारीररक और माननसक ब्रह्मचयथ में द्धस्र्त हो सकते हैं।

पारे की भााँशत शबखर जाता है

मन की नक्रया की गनतिील पारे से तुलना की िा सकती है। यनद आप र्ोडा-सा पारा भूनम में रख दें तो
यह छोटे-छोटे टुकडे हो कर इधर-उधर फैल िायेगा। आप उन टुकडों ंको समेट नहीं ंसकते। इसी प्रकार मन की नकरणें भी अनेक नदिाओं ं(नवषय-भोगों)ं में नबखरी हुई हैं। इनको इकट्ठा करना कनठन हो िाता है। वैराग्य और अभ्यास मन को एकाग्र करने में सहायक होते हैं।

गली के कुते्ते के समान शनलछज्ज है

मन की तुलना गनलयों ंमें नफरते हुए उस ननलथज्ज कुते्ते से की िा सकती है निसके िरीर पर अनेक घाव हो गये हैं। कुत्ता एक घर के द्वार पर िाता है। कोई इसे पत्थर मारता है और यह भाग िाता है। यह नफर दूसरे घर
पर िाता है। वहाँ भी इसकी खूब मार-नपटाई होती है। नफर यह पहले ही घर पर आ िाता है, िहाँ इसे पत्थर मारा गया र्ा। अब की र कोई बडा-सा पत्थर मार देता है और इस पर दूसरा घाव हो िाता है। बार-बार बार प्रचण्ड
घाव लगते रहने पर भी कुत्ता अपनी घूमने की आदत को कभी नहीं ंछोडेगा। इसी प्रकार मन भी नवषय-भोगों ंकी ओर दौडता है यद्यनप इसको बडे-बडे कष्ट, दुिःख, िोक और वेदनाएँ नमलती हैं। यह अपनी पुरानी आदत को कभी नहीं ंछोडेगा। आपको इस ननलथज्ज मन को पीटना पडेगा और बारम्बार भाव-सनहत ओंकार उच्चारण के सनहत इसको अपने स्रोत (ब्रह्म) में लौटा कर ले िाना होगा। इसे आत्मा का अनन्त आनन्द चखने दें। तभी यह अपने ननत्य िाद्धन्त के ननवास ॐ में नवश्राम पायेगा।

टेशनस के गेंद के समान कूदता है

बि आप टेननस खेलते हैं तो गेंद आकाि में बहुत ऊँचा चला िाता है और दूसरे क्षण यह भूनम पर आ नगरता है। इसी प्रकार नवीन साधकों ंमें ध्यान के प्रारम्भ में बहुत र्ोडे काल तक मन नदव्य महत्त्व तक ऊँचा िाता है, नंकनचत् काल तक साद्धत्त्वक गुणों ंमें रहता है और तुरन्त ही नीचे नगर कर अपने पुराने गने्दे रास्तों ंपर पड कर ननरर्थक घृणास्पद नवचारों ंमें संलग्न रहता है। उन्ननतिील आत्मा की नयी ज्योनत इन वीभत्स नवचारों ंपर काँप

उठती है। कोई बात नहीं ं है। आपको नचन्ता नहीं ंकरनी चानहए। ि ैसे अचे्छे हार् के प्रहार अर्वा मोड से गेंद को नफर आकाि में चढ़ा देते हैं इसी प्रकार आपको भी प्रयत्न करके मन को नफर से नदव्य महत्त्व और नदव्य चेतना के उच्च निखर पर चढ़ाना होगा।

दपछण के समान प्रशतशबन्म्बत करता है

मनुष् के मन की तुलना दपथण से की िाती है निसमें ब्रह्म-तत्त्व का प्रनतनबम्ब झलकता है। इस तत्त्व का नितना नवस्तार आप िानते हों, ं वह आपके मन की अवस्र्ा पर ननभथर होता है नक वह तत्त्व के पूणथ नवकास के अनुकूल है या नहीं। ं अने्धे पर रंग प्रकट नहीं ंहोते, बहरे को गायन का सार मालूम नहीं ंहोता और दुबथल मन-युि मनुष् पर दाथननक नसिान्त प्रकट नहीं ंहोते- "नायमात्मा बलहीनेन लभ्यिः।" यनद मन में कोई धब्बा या त्रुनट रहे तो तत्त्व का प्राकट्य भी नवकृत और अपूणथ होगा। स्वार्थपूणथ कामनाएँ मन-रूपी करण और प्रकट होने वाले तत्त्व के बीच में अड िाती है। गुप्त वासनाएँ साधक पर नवनवध प्रकार से आक्रमण करती हैं। साधकों ंको बडे गम्भीर अन्तननथरीक्षण द्वारा सवथदा मन पर दृनष्ट रखनी चानहए। िब कताथ का व्यक्तित्व करण की प्रकृनत को प्रभानवत करता है तो तत्त्व का प्रनतनबम्ब धुँधला पडता है।

यनद आप नकसी कुत्ते के सामने एक दपथण और एक रोटी रख दें तो कुत्ता दपथण में अपना प्रनतनबम्ब देख कर तत्काल भौंकता है। मूखथतावि वह समझता है नक वहाँ एक दूसरा कुत्ता है। इसी प्रकार मनुष् अपने ही मन-मुकुर में सारे मनुष्ों ंमें अपना ही प्रनतनबम्ब देखता है; परनु्त कुत्ते के समान मूखथता से समझता है नक वे सब उससे नभन्न है और घृणा, ईष्ाथ तर्ा द्वेष से उनसे झगडा करता है।

लोंगर केसमान

दीवार घडी में लगा हुआ लंगर दानहने और बायें चलता रहता है। िब बचे्च झूले पर झूलते हैं तो झूला कभी एक ओर को ऊँचा उठ िाता है और कभी दूसरी ओर को। इसी प्रकार िो साधक गम्भीर ध्यान में द्धस्र्त नहीं ंहुए हैं, उनके मन भी लंगर या झूले के समान होते हैं। वे कभी कमथयोग का नवचार करते हैं, संसार में आ कर कमथ करते हैं और कभी वे ध्यानपरायण िीवन यापन करने के नलए नहमालय को भागते हैं। एक आन्तररक संघषथ हुआ करता है नक कमथयोग ग्रहण करें या ध्यानयोग। आपको इसका ननश्चय सदा के नलए करना होगा और कमथयोग अर्वा कुछ वषों तक ध्यानाभ्यास के नलए एक कमरे में अर्वा गुहा में अपने को बन्द करने में से निसका भी ननश्चय करें, उसी के अभ्यास में दृढ़ता से िुट िाना होगा। छह महीने तक संसार में कमथयोग का अभ्यास और नफर छह महीने तक अरण्य में ध्यानयोग का अभ्यास करने से कुछ लाभ नहीं ंहोगा। एक ओर का ननश्चय कर लें।
संिय की गाँठ को काट िालें। िब तक नचत्त-िुद्धि न हो तब तक कमथ करते रहें। तत्पश्चात् साक्षात्कार प्राप्त होने तक ध्यान करें। यही सबसे उत्तम मागथ है।

टेशनस के गेंद के समान नीचे शगरता है

यनद आप टेननस के गेंद को सबसे ऊँची सीढ़ी पर से नीचे नगरा दें तो वह बीच में नकसी सीढ़ी पर नहीं ं रुकेगा। वह तुरन्त ननचली मंनिल में आ नगरेगा। इसी प्रकार यनद आप उपयुि बचाव नहीं ंकरेंगे, यनद आप संसारी मनुष्ों ंसे ज्यादा नमलेंगे तो टेननस के गेंद के समान आपका पतन होगा। निस मन को आपने आध्याद्धत्मक

अभ्यासों ंद्वारा छह या आठ वषथ में ऊँचा चढ़ाया ग्ा, उसे नवनवध मनलनताओं ंके धब्बे लग िायेंगे। इसनलए, हे साधको! सचेत रहो।

शवशवध तुलनाएँ

मन की तुलना छोटी वस्ुतुओं ंको ढोने वाले एक छोटे िलपोत से की िा सकती है; क्ोंनक मन में वासनाएँ, तृष्णाएँ, संस्कार, वृनत्तयाँ, नवचार, गुण आनद भी होते हैं।

मन की तुलना एक धमथिाला से की िा सकती है; क्ोंनक काम, क्रोध, अनभमान, दम्भ, अहंकार आनद वृनत्तयाँ मन में नवश्राम करती हैं। मन उन वृनत्तयों ंकी धमथिाला है।

मन की तुलना रािपर् से की िा सकती है। रािपर् पर कोई भी व्यद्धि चल सकता है। सभी प्रकार के लोग रािपर् पर चलते रहते हैं। इसी प्रकार सभी प्रकार के नवचार मन में नवचरण करते रहते हैं।

मन की तुलना वेश्या-गृह से की िाती है; क्ोंनक यह वेश्या की भाँनत एक क्षण एक पदार्थ से तो दूसरे क्षण दूसरे पदार्थ से आसि रहता है, एक क्षण एक पदार्थ से तो दूसरे क्षण दूसरे पदार्थ से राग रखता है।

मन की तुलना मृग से की िाती है; क्ोंनक यह अद्धस्थर है। इसकी तुलना मकथट से की िाती है; क्ोंनक यह एक पदार्थ से दूसरे पर कूदता नफरता है। इसकी तुलना पक्षी से की िाती है; क्ोंनक यह पक्षी की भाँनत उडता रहता है। इसकी तुलना वायु से की िाती है; क्ोंनक यह वायु के समान प्रचण्ड है। मन की तुलना नपिाच से की िाती है; क्ोंनक यह नपिाच की भाँनत व्यवहार करता है।

मन की तुलना बच्चे से की िाती है; क्ोंनक इसे छडी से पीटने की आवश्यकता होती है। मन की तुलना इंिन से की िाती है; क्ोंनक यह आहार-ईंधन-प्रदान करने पर ही कायथ करता है।

मन की तुलना उद्यान से की िाती है। उद्यान में पुष्प होते हैं। आप उद्यान में अनेक प्रकार के पुष्प उगा सकते हैं। इसी प्रकार आप मन-रूपी उद्यान में िाद्धन्त, समदृनष्ट, सन्तोष आनद के पुष्प उगा सकते हैं।

मन की तुलना मद्धन्दर से की िाती है। िब मन िुद्ध होता है, िब काम, लोभ आनद कुवृनत्तयाँ नष्ट हो िाती है, तब प्रभु मन में आसन ग्रहण करते हैं और इस भाँनत यह प्रभु के मद्धन्दर का रूप ले लेता है।

मन की तुलना पुष्प से की िाती है; क्ोंनक भि इसे प्रभु को अनपथत करता है।

उपननषद् के अनुसार मन की तुलना लगाम से की िाती है। िो मन की लगाम कस कर पकडे रखता है, वह आनन्द-धाम को प्राप्त कर सकता है।

पररचे्छेद - ३७

ज्ञानयोग का सार

ज्ञान क्या है?

तत्त्व-ज्ञान मनुष् के अपने ही मन के दुिःखों ंसे छुटकारा पाना है िो उसे मोक्ष की ओर ले िाता है। आध्याद्धत्मकता की ओर की हुई चेष्टाओं ंके द्वारा मन ज्ञान-स्वरूप हो िाता है; परनु्तु अज्ञान के द्वारा यह सांसाररक स्वभाव का हो िाता है। यनद मन को ज्ञान-रूपी िल से स्नान कराया िाये और इसकी सारी मनलनता धो िाली िाये तो मोक्ष के नलए प्रयत्न करने वालों ंके नलए यह अपने स्वाभानवक तेि से प्रकाि करेगा। िब मन ज्ञान के द्वारा सारी कामनाओं ंसे रनहत हो कर अपने सूक्ष्म रूप का भी नाि कर देता है, तब िो आनन्द उत्पन्न होता है, वही सच्चा आनन्द है।

ज्ञानयोग की मशहमा

हठयोगी अपनी साधना अपने िरीर और प्राण से, राियोगी अपने मन से तर्ा ज्ञानयोगी अपनी बुद्धि और इच्छा से आरम्भ करता है। वसु्तुतिः ज्ञानयोगी अपनी साधना सीधे ब्रह्म से आरम्भ करता है। वह बराबर कहता रहता है : "अहं ब्रह्माद्धस्म ।" िो ब्रह्म पर अपना मन द्धस्थर करने का प्रयत्न कर रहा है, वह सबसे ऊँचा कमथयोग, सबसे ऊँचा यज्ञ, सबसे ऊँचा धमथ और सवोत्तम दान कर रहा है। उसे न तीर्ों में िाने की और न दान देने की आवश्यकता है।

ज्ञानयोग के साधक के शलए अहछताएँ

आध्याद्धत्मक साधक या सचे्चे निज्ञासु से बाह्य पदार्ों से, नवनवध ऐद्धन्द्रक नवषयों ंसे उपरनत के सार्-सार् आध्याद्धत्मक तन्मयता तर्ा आभ्यन्तर नवषयों ंपर एकाग्रता की क्षमता की अपेक्षा की िाती है। िब तक आपकी इद्धन्द्रयाँ अपनी नक्रया बन्द न कर दें, तब तक िुि आत्मा की वाणी सुनायी नहीं ंदे सकती।

ज्ञानयोग के पर् के साधकों ंके नलए वेदान्त की प्रारद्धम्भक साधना के रूप में चार साधन-साधन-चतुष्टय-बताये गये हैं। मुद्धि के इन चार साधनों ंमें से एक षट्-सम्पत् है। इन छह सम्पनत्तयों ंमें िम, दम और समाधान वास्तव में मन के ननग्रह करने के नलए यौनगक साधन हैं। रािोनगयों ंका वासना-त्याग के द्वारा नचत्त-वृनत्त-ननरोध

मि है, वही वेदाद्धन्तयों ंका िम है, प्रत्याहार ही दम है। समाधान योनगयों ंकी एकाग्रता है। हंस पक्षी मोक्ष के योग और ज्ञान दो पंख हैं।
मि और दम-ये दोनों ंषट्सम्पत् के महत्त्वपूणथ नवषय हैं। ये वसुतुतिः योग की नक्रयाएूँ हैं। िब इनकी साधना पूरी हो िाती है तो श्रवण और मनन का आश्रय लेना होता है। गम्भीर ननननदध्यासन आरम्भ करने पर तीन वषथ तक एकान्त-वास आवश्यक होता है।

मन को ििु करने से ही ब्रह्म-ज्ञान नहीं ंनमलता। ििु मन अलौनकक ज्योनत और आनन्द को प्राप्त करने योग्य हो िाता है। मन को ििु करने के उपरान्त श्रवण, मनन और ननननदध्यासन का आश्रय लेना होता है।

श्रवण, मनन और ननननदध्यासन-ये वेदान्त की तीन प्रनक्रयाएूँ ज्ञानादै्वैत-ननष्ठा के नलए हैं। यह तीन िण्डों ं वाली सीढ़ी है निसके द्वारा वेदान्ती ब्रह्म तक चढ़ िाता है। यनद आप शु्रुनत (वेदों ंऔर िास्त्रों)ं का श्रवण एक बार करें तो मनन दि बार करें और उसका ननननदध्यासन सौ बार अर्वा हिार बार करें। तभी सच्ची फल-प्राद्धप्त होती है।

अन्तमुथख वृनत्त, पररवनतथत दृनष्टकोण, वैराग्य और मुमुकुषुत्व वाला मनुष् ही वेदान्त के स्वाध्याय, ॐ के अभ्यास और ज्ञान-योग के नवचार का अनधकारी होता है। ऐसा ही मनुष् सच्चा लाभ प्राप्त कर सकता है। िब मनुष् को दृढ़ ननश्चय हो िाये नक नाम और रूप नमथ्या हैं और उनके पीछे अनधष्ठान ही सत्य है, तब कहा िाता है नक उसका दृनष्टकोण बदल गया है।

आप अपनी ननभीक िुद्धि और अर्क प्रयत्न के द्वारा ही ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। गुरु और िास्त्र आपको मागथ नदखा कर आपकी िंकाओं ंका ननवारण कर सकते हैं। अपरोक्ष अनुभव तो स्वयं आप ही कर सकते हैं। भूखे मनुष् को अपने-आप ही खाना पडेगा। निसे बडी तीव्र खुिली हो, उसे अपने-आप ही खुिलाना पडेगा।

मन और ब्रह्म

मन में नवचार की िुद्धि है, क्ोंनक उसे अन्तरात्मा या ब्रह्म से प्रकाि प्राप्त होता है और उसके द्वारा ही मन नक्रयािील होने में समर्थ बनता है। निन्ें आत्म-साक्षात्कार हो चुका है, वे बताते हैं नक मन ब्रह्म से व्याप्त है। "िो मन में रहने वाला मन के भीतर है, निसे मन नहीं ंिानता, मन निसका िरीर है और िो भीतर रह कर मन का ननयमन करता है, वह तुम्हारा आत्मा, अन्तयाथमी अमृत है" (बृहदारण्यकोपननषद् ३-७-२०)। "निसे ज्ञानयोग का सार मनुष् मन के द्वारा सोच नहीं ंसकता; परन्तु निसे ज्ञानीिन बताते हैं नक उसके द्वारा मन सोचने लायक बनता है, केवल उसको ही ब्रह्म िानो" (केनोपननषद् १-५)। मन तो नभखारी है। यह स्वयं-ज्योनत आत्मा से अपना प्रकाि और बुद्धि प्राप्त करता है। िैसे चुम्बक के आगे लोहे का टुकडा चलता है, वैसे ही इस अन्तयाथमी के आगे यह मन चलता है। िैसे रािा के रहते हुए प्रधान मन्त्री खेलता और काम करता है, ठीक उसी प्रकार यह मन भगवान् की उपद्धस्थनत में खेलता, सोचता, अनुभव करता और कल्पना करता है। मन तो माूँगे हुए गुणों ंसे ही प्रकाि करता है। यह चैतन्य-सा प्रतीत होता है; पर िो अन्धकार में टटोलता है, प्रनतपल बदलता रहता है, महत् तत्त्व से निसकी उत्पनत्त है और प्रकृनत में निसका क्षय है, वह (मन) चैतन्य कैसे कहा िा सकता है?

नवचार अनेक होते हैं और पररवनतथत होते रहते हैं। अभी सनद्धचार प्रकट होते हैं। पाूँच नमनट बाद कुनवचार आ िाते हैं। मन बडा चंचल और पररवतथनिील है, इसनलए यह ननननवथकार आत्मा या कूटस्थ् ननननवथकल्प ब्रह्म नहीं ंहो सकता।

जड और चैतन्य

मन, बुद्धि, इद्धन्द्रयाँ तर्ा अन्य सब वसुतुएँ िड हैं। निस वसुतु को अपना ज्ञान नहीं ंहोता और दूसरी वसुतुओं ं का भी ज्ञान नहीं ंहोता, वह िड कहलाती है। केवल ब्रह्म ही चैतन्य-वसुतु है। चैतन्य या नचत् या चेतन स्वयंप्रकाि तर्ा सवथप्रकाि होता है। यह अन्दर तो मन, बुद्धि और सभी इद्धन्द्रयों ंको और बाहर सूयथ, चन्द्र, तारागण, नवद्युत्, अनग्न आनद को प्रकानित करता है।

ब्रह्म चैतन्य है

सूयथ में यह दोष कौन देखता है नक वह तेिी से चमकता है या बादलों ंसे ढका हुआ है? यह नेत्र का काम है। नेत्र का दोष कौन देखता है नक इसमें नतनमर रोग है या नहीं?ं यह बुद्धि देखती है। बुद्धि का दोष कौन देखता है नक उसमें स्पष्टता है या भ्राद्धन्त है? बुद्धि को कौन प्रकाि देता है? यह अहं (अनन्त मैं) है। यह अहं अर्वा कूटस्र् अर्वा आत्मा या ब्रह्म है िो सब पदार्ों को प्रकाि देता है।

स्वप्न में कौन प्रकाि करता है? वहाँ कोई दूसरा प्रकाि नहीं ंहोता। मन तो स्वयं-प्रकाि नहीं ंहै। यह िड है। ब्रह्म ही स्वप्न में सारे पदार्ों को प्रकाि देता है।

मान लीनिए नक रानत्र में बडा तेि प्रकाि हो रहा है। आप कुछ दूरी पर खडे हैं। आपके और प्रकाि के मध्य में कुछ अवरोध है निससे आप प्रकाि को नहीं ंदेख सकते; नकन्तु आप प्रकाि द्वारा पदार्ों को स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। यद्यनप आप अपरोक्ष रूप से ज्योनत को नहीं ंदेख सकते; परन्तु पदार्ों को देख कर ही आप यह स्पष्ट ननष्कषथ ननकाल लेते हैं नक कोई बडा प्रकाि अवश्य होगा। इसी प्रकार इस प्रकृनत के पीछे भी कोई स्वयं-प्रकाि ज्योनत अवश्य होगी। वह 'ज्योनतषामनप तज्ज्योनतः' (ज्योनतयों ंकी ज्योनत) इस िगत् का अनधष्ठान है।

यनद आप ननश्चल बैठ कर अनुभव करें नक आप केवल एक ही सत्ता के बल से नवचार कर सकते हैं और मन िो नक उसी एक सत्ता से अनुप्रानणत हो कर नवचार नकया करता है, उसी समनष्ट सत्ता ब्रह्म का अंि है तो आप इस उद्धि पर पहुँचेंगे नक आपके मन की नभन्न सत्ता ही नहीं ंहै और इसका फल यह होगा नक िरीर और मन स्रू ल रूप से लुप्त हो िायेंगे और केवल सत् रूप ही अविेष रह िायेगा, निसका वणथन िब्दों ंमें नहीं ंहो सकता।

ब्रह्म िन्क्त है

राग, द्वेष, सुख और दुिःख, कताथपन और भोिापन-ये सब केवल मन के धमथ हैं। आत्मा साक्षी और असंग है। िैसे स्फनटक में सातों ंरंग भासते हुए भी वह उनसे नननलथप्त रहता है, इसी प्रकार आत्मा मन की नक्रयाओं ंसे नननलथप्त रहता है।

रचना का भाव ही बताता है नक कोई रचने वाला अवश्य होगा। िड पदार्ों का भाव बताता है नक आत्मा अवश्य होगी। पररवतथन का भाव बताता है नक कोई अनवकारी वसुतु अवश्य होगी। नवकारयुि मन का अद्धस्तत्व ही अनवकारी साक्षी और मन के ननयामक के अद्धस्तत्व को बताता है। वह कूटस्र् ब्रह्म है िो प्रत्येक वसुतु को स्पष्ट रूप से समझता है और िीव तर्ा उसकी प्रवृनत्तयों ंका साक्षी है।

आप केवल पदार्ों को देख सकते हैं; परन्तु साक्षी अर्वा कूटस्र् ब्रह्म मन तर्ा इसके नवकारों,ं िीवात्मा और संसार के नभन्न-नभन्न पदार्ों को देखता है।

ब्रह्म अखण्ड है

काल, दिे और वसुतु-ये मन के तीन वैचाररक रूप हैं। प्रते्येक पदार्थ के तीन पररचे्छेद हुआ करते हैं। िैसे अंगूर एक ऋतु-नविेष में ही नमल सकते हैं और नननश्चत स्र्ानों ंमें ही नमलते हैं। यह अंगूर का दिे-काल-पररचे्छेद हुआ। इसका वसुतु-पररचे्छेद भी होता है। आपको आम के वृक्ष में अंगूर नहीं ंनमल सकते। परनुतु सद्धच्चदानन्द ब्रह्म की सत्ता नत्रनवध-पररचे्छेद-रनहत है; क्ोंनंक ब्रह्म ननत्य, अनन्त और सब वसुतुओं ंका सार तर्ा अनधष्ठान है।

एक अूँगरिे भारतीय से नभन्न होता है। यह स्विातीय-भेद है। वृक्ष पत्थर से नभत्र होता है। यह नविातीय-भेद है। वृक्ष के फल, फूल और पनत्तयों ंमें भेद होता है। हार्, पैर, बाहु, टाूँग आनद में भेद होता है। यह स्वगत-भेद होता है। ब्रह्म में ये तीन प्रकार के भेद नहीं ंहैं। कोई दूसरा ब्रह्म नहीं ंहो सकता है; क्ोंनंक अनन्त वसुतु एक ही है, इसनलए ब्रह्म में स्विातीय-भेद नहीं ंहै। संसार ब्रह्म से ननकला है। यह भ्रामक है, इसनलए ब्रह्म में नविातीय-भेद नहीं ंनदखा सकता। संसार स्वयं ब्रह्म है। सत्-नचत्-आनन्द तीन वसुतु न हो कर एक ही है। पानी और िल के समान यह िब्द-भेद ही है। सत् नचत् है। नचत् सत् है। नचत् आनन्द है। इसनलए स्वगत-भेद ब्रह्म में नहीं ंहै। भेद एक माननसक रचना है िो दिे, वणथ, आकार आनद से उत्पन्न होता है।

यनद कोई वसुतु ऊपर कहे हुए दिे, काल और वसुतु-इन तीनों ंप्रकार के पररचे्छेदों ंऔर तीनों ंप्रकार के भेदों ंसे रनहत हो तो वह अखण्ड कहलाती है। आप उसको अखण्डत्व-लक्षण दे सकते हैं। यह लक्षण केवल ब्रह्म पर ही आरोनपत हो सकता है।

'मैं कौन हाँ' का पररप्रश्न

ज्ञान के द्वारा मोक्ष नमलता है। 'मैं कौन हूँ' के नवचार अर्वा उपननषदों ंके महावाक् **'तत्त्वमनस'** (तुम वही हो) के यर्ार्थ तात्पयथ के बोध से ज्ञान नमलता है। 'मैं कौन हूँ' का पररप्रश्न तर्ा **'तत्त्वमनस'** - ये दोनों ंएक ही हैं।

ब्रह्म-ज्ञान, िो नक 'अहंभाव' के स्वरूप का अनुसन्धान करता है, वह अनग्न है िो मन का नाि कर देती है। भगवद्गीता में बतायी हुई ज्ञानानग्न यही है। **"ज्ञानानग्नः सवथकमाथनण भस्मसात् कुरुते तर्ा"** - ज्ञानानग्न कमथ रानि को भस्मीभूत कर िालती है (गीता : ४-३७)।

िब मन में कोई नवचार उठे तो पता लगायें नक यह वृनत्त क्ों ंउठी है? इसका सम्बन्ध नकससे है? अन्ततः अन्य सारे नवचार िान्त हो िायेंगे, सारी माननसक नक्रयाएूँ बन्द हो िायेंगी तर्ा मन अन्दर की ओर मुड िायेगा और आत्मा में नवश्राम करेगा। यह बेदान्त की साधना है। िब कभी इधर-उधर के नवचार उठने लगें तो आपको ननरन्तर इसी साधना में िटे रहना होगा। 'मैं कौन हूँ?' इसी एक नवचार से अन्य सारे सांसाररक नवचार नष्ट हो िाते हैं। यह एक नवचार भी स्वयं ही नष्ट हो िाता है। अद्धस्मता नष्ट हो िाती है। िो अविेष रहता है, वह केवल अद्धस्त, नचन्मात्र, केवल िुद्ध चैतन्य, नचदाकाि मात्र है िो नाम-रूप-रनहत है, व्यवहार-रनहत, मल-वासना-रनहत, ननद्धिय तर्ा ननरवयव है, िो माण्डूक्ोपननषद् का िान्त-निव-अद्वैत है। वह आत्मा है। उसे ही िानना चानहए।

साक्षी-भाव

वृनत्त ही आपको नवषय के सार् बाूँधती है। आपका सारूप्य वृनत्त के सार् और वृनत्त के द्वारा पदार्थ के सार् होता है। यही रहस्य है। मन की वृनत्तयों ंके साक्षी बन िायें: नफर बन्धन नहीं ंरहेगा। मन के नाटक के साक्षी मात्र रहें और मन के सार् नलप्त न हों।ं

बि आप नकसी मनुष् को उदरर्ूल से पीनडत देखते हैं तो आपको पीडा का अनुभव नहीं ंहोता; परनु्त बि आपको ही वह उदरर्ूल होता है तो आपको तीव्र वेदना और दुिःख होता है तर्ा आप नचल्लाते हैं। क्ों? ं क्ोंनक अहंकार के कारण आप अपने िरीर के सार् सारूप्य बना लेते हैं। यनद अहंकार न हो तो आपको दुिःख का अनुभव नहीं ंहोगा। यह अहंकारहीनता तभी आ सकती है, िब आप व्यद्धित्व छोड कर साक्षी बन िायें और अपना सारूप्य ब्रह्म के सार् बना लें।

"मैं न प्राण हूँ और न इद्धन्द्रयाूँ। मैं इनसे ननराला हूँ। मैं इनका और इनकी नक्रयाओं ंका साक्षी हूँ। मैं सत्-नचत्-आनन्द-स्वरूप हूँ।" वेदान्ती ननगुथण ध्यान के नलए यही पयाथप्त है। आप तुरन्त ही मनहमा के उन्नत निखर पर उठ िायेंगे। यह सबसे उत्तम सूत्र है।

यनद उपयुथि सूत्र पर आपका दृढ़ ननश्चय हो िाये तो यह 'परोक्ष ज्ञान' कहलाता है। यनद ज्ञान के द्वारा आप वास्तनवक अनुभव प्राप्त कर लें तो यह 'अपरोक्ष ज्ञान' कहलाता है।

यनद आप िरीर-चेतना से ऊपर उठ िायें, िरीर-भाव को त्याग दें और यनद मन आत्म-द्धस्त हो िाये तो आप ननिःसने्दह सुखी, िान्त और मुि हैं।

मन में एक प्रनतके्षपण की िद्धि होती है निससे यह अपनी ही गहराइयों ंमें देख सकता है। राियोगी इस िद्धि का नवकास करता है। अन्तननथरीक्षण इस यौनगक िद्धि के नवकास में सहायता देता है। एक ननस्ति अूँधेरे कमरे में आूँ से ही चले िायें। सतकथ हो कर मन पर दृनष्ट रखें। धैयथवान् बनें। अपने मन के सार् तादात्म्य न करें। साक्षी रहें। अपने को पृर्क् रखें। आप नवनवध माननसक अवस्ाओं ंको अपरोक्ष में देख सकते हैं।

सोऽहम् ध्यान

मन को सदा आत्मा अर्वा ब्रह्म पर एकाग्र करने के प्रयत्न को आत्म-नवचार कहते हैं। िब तक आनन्दपूणथ ज्ञान का उदय न हो, आपको ननरन्तर और तीव्र साधना करनी चानहए। आप आधे क्षण, ननननमष-मात्र के नलए भी ब्रह्म-नचन्तन को बन्द न करें। आप ननदध्यासन-परायण हो िायें अर्ाथत् आपका एकमात्र आश्रय प्रणव का अर्थ और भाव-सनहत ध्यान होना चानहए। तभी ब्रह्म-ज्ञान का होना सम्भव है।

'अहों ब्रह्मान्ि'-भावना को धारण करके आपको िीव-भावना का नाि कर देना होगा। िीव-भावना व्यावहाररक बुद्धि से बनती है। िुद्ध बुद्धि का नवकास करके आपको इस व्यावहाररक बुद्धि का नाि करना होगा।

यद्यनप आप अपने िरीर और इस संसार को देखते हैं; परनु्त वास्तव में इनकी सत्ता नहीं ंहै। अपनी आत्मद्धस्नत से तननक भी नवचनलत न हों।ं ननरन्तर यही नवचार करें नक आप सवथव्यापी आत्मा (नचदाकाि) हैं। यनद आप िेरनगन के सामने भी खडे हों ंतो भी '**सोऽहम्-सोऽहम्', 'अहों ब्रह्मान्ि'** का उच्चारण करें। नसंह के समान गिथना करें। भय केवल उसी समय आता है िब आप अपने को इस नश्वर मांस के िरीर से अनभन्न मानते हैं। यनद आप अपने को उन्नत, ननत्य, अमर आत्मा से एकरूप मानें तो तुरन्त ही नबलकुल ननभथय हो िायेंगे। भय अज्ञानी के मन का एक काल्पननक नवकार है।

अपने केन्द्र को मालूम कर लें। उसी में द्धस्र रहें। वह केन्द्र आत्मा अर्वा ब्रह्म है या वह एक ही सत्य है िो अनन्त काल से आपके हृदय में प्रकाि कर रहा है। यनद आप अपने केन्द्र में द्धस्त रह सकते हैं तो कोई कष्ट या दुिःख, हानन या ननरािा, िोक या खेद आप पर प्रभाव िाल कर आपको अपनी साम्यावस्ा से नहीं ंहटा सकता।

यनद आप अपने को उस अनन्त के सार् नमला कर रख सकें तो आपका मन सनुतुनलत तर्ा साम्यावस्र्ा में रहेगा। कोई वसुतु आपको चोट नहीं ंपहुूँचा सकती। आप सदा प्रसन्न रहेंगे; क्ोंनक आप आत्मा से अनभन्न बने रहेंगे। आप सवोच्च आत्मा में द्धस्र्त होंगे। यद्यनप महान् सूफी ज्ञाननयों ंमंसूर और िम्सतवरेज़ की िीनवत ही खाल द्धखंचवायी गयी र्ी, उनको कोई पीडा नहीं ंमालूम हुई। 'अनलहक' (अर्ाथत् मैं वही हूँ) का उच्चारण नकया। उनके रि की िो एक-एक बूँद नगरी, उससे भी 'अनलहक' की र्ध्नन आती र्ी। वे सदैव आत्मानन्द में रहते र्े। इस चमत्कार को देखें। वे सच्चे ज्ञानी हैं। उन्ोंने अपनी ि्धि और आत्म-ज्ञान नदखाया र्ा।

एक छोटा-सा िलपोत नदी की साधारण लहरों ंमें भी बडी बुरी तरह इधर-उधर पटका िाता है; परनुतु बडा धूमपोत उत्ताल तरंगों ंके वेग से टकराने पर भी अचल खडा रहता है। इसी प्रकार चंचल मन वाला संसारी मनुष् राग-द्वेष की छोटी-छोटी लहरों ंसे भी इधर-उधर आलोनडत होता रहता है, िब नक एक साम्ययुि िान्त मन बाला सन्त या वाला सन्त या िीवनुमुि संसार में नबलकुल अचल रहता है और रोग तर्ा क आपनत्त तर्ा नवपनत्त आनद की प्रचण्ड लहरों ंसे तननक भी प्रभानवत नहीं ंहोता। वह सदैव िाद्धन्तपूवथक आत्मा की ननरन्तर प्रिान्तता में नवश्राम करता है।

बि कभी आपको बडी नचन्ता हो, आपके मन में नवषाद हो, बडा दुिःख ह नवचार करें नक आप आत्म-स्वरूप आनन्द के भण्डार हैं। मन को सांसाररक वस् और नवचारों ंसे हटा कर आत्मा पर लगा दें। एकान्त कमरे में ाि कर कहें, आनन्दमय आत्मा हूँ। मुझे दुिःख कैसे हो सकता है? दुिःख तो मन का लक्षण है। मैं तो से ऊपर हूँ। आत्मा आनन्द-सागर है। आत्मा आनन्द, ि्धि और ज्ञान का भण्डार है अनुभव करता हूँ नक मैं इन सब रूपों ंके पीछे नछपी हुई, मन के पीछे नछपी हुई: चैतन्य, व्यापक चेतना हूँ। मैं आत्मा हूँ। मैं आनन्द ही आनन्द हूँ।" इस अभ्यास आपको असीम आनन्द, उल्लास और बल प्राप्त होगा।

तुरुनट, अपूणथता, दुबथलता और हीनता के प्रत्येक नवचार को हटा दें। यनद भोिन नमले, पहनने को कपडा न नमले, असाध्य रोग से भी ग्रनसत हों ंतो भी दृढ़ता से इन भ से नचपके रहें नक 'मैं ब्रह्म हूँ। मैं पूणथ हूँ। मेरे पास सारे पदार्थ हैं। मैं पूणथ स्वस् हूँ। मैं आनन्द हूँ।' याद रखें, यह आपका ठीक माननसक भाव होना चानहए। स्वभावतिः िै आप सोचते हैं, वह एक नमूना बना देता है, निसे िीवन की प्रनक्रयाएूँ बुनती रहती बाहर नचनत्रत करती रहती हैं।

'मैं वह आत्मा या ब्रह्म हूँ िो एक, नचदाकाि, अखण्ड और सवथभूतों ंका अन्तरात्मा है।' इस भाव में सारे प्रयत्नों ंसे द्धस्र्त होने की चेष्टा करें। तभी मन क चंचलता दूर होगी। तब आपको पूणथ सुख नमलेगा। आप िीवनुमुि हो िायेंगे। इस तननक भी सन्देह नहीं ंहै।

कल्पना करें नक सारा संसार आपके गभथ में है और यह सब आपके नचन्मय िर (ज्ञान-नवग्रह) में द्धस्र्र है। तब बाहरीपन और पार्थक् के भाव दूर हो िायेंगे। आप बाहर कोई वसुतु नहीं ंहै। ब्रह्म से बाहर कुछ नहीं ंहै।

वेदात की अपवाद-युन्क्त

बि आप लकडी का बना हुआ द्धखलौना हार्ी देखते हैं और उसे हार्ी मानते हैं तो उस द्धखलौने ने लकडी-रूप तत्त्व को ढक नलया होता है। उसी प्रकार इन नाम औ रूपों ंके पीछे असली तत्त्व ब्रह्म को नाम और रूपों ंने ढक नलया है। िो भ्राद्धन्त मन मे अनानदकाल से िमी हुई है, उसको दूर कर दें। यह लकडी है, हार्ी नहीं।ं इसी प्रकार यह ब्रह्म है, संसार नहीं।ं यह आत्मा है, िरीर नहीं।ं वेदान्त में यह अपवाद-युद्धि कहलाती है। हार्ी, संसार, िरीर आनद नमथ्या वसुतुओं ंको त्यागने के उपरान्त िो िेष रहता है, उसे ग्रहण कर लें।

द्वैत में नवचार करना मन का स्वभाव है। यह एकता के भाव में नवचार नहीं ंकर सकता। नचत्तिुद्धि और वेदाद्धन्तक साधना के द्वारा मन को एकता के भाव में सोचना नसखाना चानहए।

तीनों ंकालों ंमें भी नमट्टी सत्पदार्थ है, घडा आदि वसुतु है। "वाचारम्भणं नवकारो नामधेयं मृनत्तकेत्येव सत्यम्" अर्ाथत् घट, ि◌ार आनद नवकार केवल वाणी के आश्रयभूत नाम-मात्र हैं। सत्य तो केवल मृनत्तका ही है (छान्दोग्योपननषद् ६-१-४)। इसी प्रकार केवल ब्रह्म या आत्मा ही सत्य वसुतु है, वही ननत्य वसुतु है ि◌ो आनद, अन्त और नवकार से रनहत है। ि◌रीर, मन, इद्धन्द्रयाूँ और संसार-ये सब नवकार ननतान्त नमथ्या हैं। ये केवल नाम-मात्र हैं। सारे नमट्टी के बरतनों ंमें नमट्टी ही देखें। सारे पदार्ों में आत्मा ही देखें (आत्म-दृनष्ट)।

गायें नभन्न-नभन्न होती हैं। वे रंग और अन्य नविेषताओं ंमें नभन्न होती हैं; परनुतु दूध एक-समान होता है। यनद रीनत, आचार, वेि-भूषा और भोिन के भेद को ननकाल नदया ि◌ाये तो संसार में सारे मनुष् समान हैं। उनके भाव और वासनाएूँ संसार-भर में समान होती हैं। अनेक देिों ंऔर क्षेत्रों ंमें भाषा की नभन्नता होती है; परनुतु इन भाषाओं ंके पीछे नछपा हुआ नवचार एक-समान ही होता है। यह नवनवधता, द्वैत और अनेकता में एकत्व है। ननिा में एक रस होता है, निसका अनुभव सब समान रूप से करते हैं। ननिा में नानाभाव नहीं ंहोता। इसी प्रकार पदार्ों के पीछे भी एक सिातीय तत्त्व है। वह आत्मा है। वह ब्रह्म है। वही आपका सच्चा स्वरूप है।

केवल चीनी का बना एक नाररयल होता है। उसमें ननिान, रेखाएूँ, बाहर की खोपडी, नकनारे, आूँखें और सब वसुतुएूँ बनी होती हैं। लेनकन, आपके मन में आन्तररक भाव होता है नक यह केवल चीनी ही है। इसी प्रकार यद्यनप आप संसार के नवनभन्न पदार्ों को देख सकते हैं, तो भी आपको एक भाव और ननश्चय आत्मा का होना चानहए नक सारे पदार्ों के मूल में यही है, अद्धन्तम और प्रत्येक वसुतु का सार यही है।

आप आम के वृक्ष की पनत्तयों,ं टहननयों,ं फूलों ंऔर फलों ंको क्ों ंदेखती हैं? उसके स्रोत बीि को देखें। वस्त्र भी केवल कपास और धागा है। वस्त्र को कपास समझें। इसी प्रकार, संसार को आत्मा या ब्रह्म ही समझें।

िब आप नकसी मनुष् या पदार्थ को देखें तो अनुभव करें नक यह आत्मा या नारायण है। अनवरत अभ्यास से नाम और रूप की उपानध ि◌ाती रहेगी। आत्मा अर्वा नारायण ही प्रकाि करेगा। संसार का नवचार नमट ि◌ायेगा। इसके नलए कनठन पुरुषार्थ और दीघथ काल की आवश्यकता है। आप सवथत्र आत्मा या नारायण को ही देखेंगे और अनुभव करेंगे। इस अभ्यास-काल में आपके पुराने संस्कार आपको कष्ट देंगे। वे आपके वास्तनवक ित्रुु हैं। साहस के सार् इनसे युद्ध करते रहें। यह सम्यक् ज्ञान का अभ्यास है। आपको आत्मा या सम्यक् दिथन हो िायेगा। आप सारी वसुतुओं ंको आत्मा ही देखने लगेंगे। नवचार और अनुभव करें नक सारे कमथ आत्म-पूिा हैं। ि◌ब आप सवथत्र नारायण या आत्मा के ही दिथन करेंगे तो हीनता तर्ा अधम सेवा का नवचार ि◌ाता रहेगा।

ज्ञानोदय

िैसे आम के वृक्ष में मंिरी के लगने से आप ि◌ान लेते हैं नक आपको आम के फल ि◌ीघ्र ही नमलेंगे, इसी प्रकार ि◌ब आपके मन में ि◌ाद्धन्त-रूप पुष्प द्धखलें तो ि◌ान लें नक आपको अभेद-ज्ञान (आत्मा और परमात्मा की एकता का ज्ञान) प्राप्त होने वाला है।

िैसे ि◌ब स्वाद की ि◌िद्धियाूँ और मन परस्पर सद्धम्मनलत होते हैं तभी षट्-रस-मधुर, लवण, नति, कटु, कषाय और अम्ल-का पूणथतिः उपभोग नकया ि◌ा सकता है। इसी प्रकार ि◌ब उपासना के सारे साधन ि◌ैसे सन्तोष, सम-दृनष्ट आनद ि◌ाद्धन्त के सार् नमलते हैं-तब ही पररपूणथ ब्रह्म का उद्भव होता है।

मन की िाद्धन्त दो प्रकार की होती है-साधारण िाद्धन्त और परम िाद्धन्त। साधारण िाद्धन्त वृनत्तयों ंके संयम तरा् नवक्ेषेप के दूर होने पर आती है तरा् परम िाद्धन्त ज्ञानोपलद्धि के अनन्तर प्रकट होती है।

ज्ञानावस्रा् का वणछन

ज्ञानावस्रा् को समझना बडा कनठन है। यह बडी उन्नत अवस्रा् है निसमें सारे तत्त्व स्वयं ही नगर िाते हैं और अनन्त गगन तरा् व्योम की भाूँनत केवल नचदाकाि ही भासता है। यह चैतन्य अवस्रा् है िो प्राकृनतक दृश्यों ंऔर सौन्दयथ के आनन्द से भी अतीत है। नवहारोद्यानों,ं सरोवरों,ं नहमाच्छानदत पवथतों,ं हरे वनों ंआनद का सौन्दयथ माया की सृनष्ट है। यह हमारी आूँखों ंपर परदा िाल देता है और हमें आत्मा के अनन्त, सहि सौन्दयथ की अनुभूनत
में बाधक होता है। पनक्षयों ंका मधुर गान भी माया की ही रचना है। यह हमें सहि प्रणव-नाद मधुरतम प्रणव-ध्वनन सुनने से रोकता है। सभी प्रकृनत-सौन्दयों ंसे परे ननवाथण-दिा ही ज्ञानावस्रा् है।
ज्ञान-मौन वह अवस्रा् है निसमें मन ब्रह्म या आत्मा या स्वरूप में लीन रहता है। इस अवस्रा् में 'मैं'-पन का नंकंनचन्मात्र नचह्न अविेष नहीं ंरहता; क्ोंनंक इस अवस्रा् में कोई नक्रया नहीं ंहोती और न कोई कताथ ही होता है। अतिः सारे कमथ ज्ञानानध में भस्म हो िाते हैं। िीव को प्रतीत होता है नक वह पंचकोिों ंसे नबलकुल नभन्न है; क्ोंनंक वह आत्मा से तादात्म्य अनुभव करता है।

ज्ञान में पूवथ या पनश्चम, उदय और अस्त, वृद्धि और क्षय, बैठना या खडे होना, िीवन या मृत्यु, कायथरत चेतना या स्वप्नावस्रा्, बोलना या भाषण देना, नवचार करना या िानना, प्रकाि या अन्धकार कुछ नहीं ंहै। ज्ञाननयों ंके आत्मा में कताथ, कमथ और करण-तीनों ंएक ही रूप भासते हैं। यह नकतनी उन्नत अवस्रा् है। यह बडी अद्भुत और नवस्मयिनक है। व्यद्धि अवाक् रह िाता है। यह अकनीय है।

मैं पद्मासन पर बैठ गया और आत्मा का ध्यान करने लगा। मैं अपने को और वातावरण को भूल गया। मैंने कोई वस्तु ऐसी देखी िो पहले कभी नहीं ंदेखी री्। मैंने ऐसा नाद सुना से िो इससे पहले कभी नहीं ंसुना रा्। ऐसे संवेदन और ज्ञान हुए नक मैं सभी प्रकार की आसद्धियों ंसे सवथरा् मुि हो गया। मुझे नवीन ज्ञान का अनुभव हुआ। आत्मा का नवचार कुछ काल तक बना रहा। मुझे िुि आनन्द का भी नवलक्षण अनुभव हुआ। यह इस संसार के प्रत्यावतथनों ंसे रनहत प्रकाि, ज्ञान और आनन्द से पूणथ आकाि है।

िब आत्मा का एक बार साक्षात्कार कर नलया िाये तो यह कभी नहीं ंभूला िा सकता। आत्मा के अनभज्ञान की छाप यनद एक बार बन िाये तो नफर मन से कभी नहीं ंनमटायी िा सकती। यह सदैव मन में बनी रहती है।

मुन्क्त

मुद्धि केवल मन के नलए होती है। यह मुद्धि प्रकृनत के नलए होती है; िीव के नलए नहीं ंहोती। िीव तो पहले से ही ब्रह्म है। वह तो ननत्य मुि है। उसका ब्रह्म के सार् सारूप्य है। िब पानी सूख िाता है तो पानी में सूयथ की छाया का भी लोप हो िाता है। इसी प्रकार िब सारे संकल्पों ंऔर वासनाओं ंके क्षीण हो िाने से मानस सरोवर सूख िाता है तो नचदाभास और चैतन्य की छाया भी लुप्त हो िाती है। 'िीवात्मा' नाम चला िाता है। अहंभाव भी िाता रहता है।

परररचे्छेद-३८

जीवनुमुक्त पुरुष में मन

देहाशभमाने गशलते शवज्ञाते परमात्मशन।
यत्र यत्र मनो याशत तत्र तत्र समाधयिः ।।
-देहाध्यास के दूर हो िाने पर और परमात्मा का ज्ञान हो िाने पर निस पदार्थ की ओर भी मन को कर नदया िाये, वहाँ ही समानध का अनुभव होता है।

'अमना' एक संसूकृत िब्द है निसका अर्थ है- 'मन से रनहत।' 'अमनस्कता' वह अवस्ा है निसमें मन नहीं ं रहता। यह मन-रनहत अवस्ा है िो िीवनुमुिों ंमें पायी िाती है।

अवशिष्ट सत्त्व

न्मि-मृतुयु के दुिःखों ंसे रनहत सन्त को िीवनुमुि कहते हैं। िीवनुमुिावस्ा में नैसनगथक प्रवृनत्तपरक मन नष्ट हो िाता है; परनुतु साद्धत्त्वक मन नष्ट नहीं ंहोता। निस प्रकार बीि में फूल और फल नछपे रहते हैं, उसी प्रकार सत्त्व का अविेष, िो बुद्धि का भी कारण है, सदा हृदय में रहता है। यनद आप कहें नक व्यद्धि के ज्ञान प्राप्त करते ही उसके मन का पूणथ नाि हो िाता है तो िीवनुमुिावस्ा असम्भव है। वह मन-रूपी करण के नबना व्यवहार कैसे कर सकता है? ज्ञानी सवथव्यापक ब्रह्म से अपना अभेद समझता है और व्यवहार के नलए अपने िरीर और मन को उस ब्रह्म के उपकरण के रूप में काम में लाता है। अज्ञानी अपने को िरीर से अनभन्न मानता है। रािा िनक
के समान िीवनुमुिों ंके उदाहरण नवद्यमान हैं निन्ोंनें ज्ञान प्राप्त नकया तर्ा मनुष् िानत के उपकार और नहत के नलए अपने िरीर और मन को कारण बना कर कायथ नकया र्ा।

श्रीराम और श्रीकृष्ण अपने राज्य पर िासन करते हुए भी ब्रह्म में द्धस्त रहते रे्। उन्ोंनें मनुष्-रूप
धारण नकया र्ा, नफर भी वे अपने मूलभूत सद्धच्चदानन्द ब्रह्म-स्वरूप को सदा ध्यान में रखते रे्। नभन्न-नभन्न
नक्रयाओं ंको करते समय वे अपने िरीर और मन को उपकरण के रूप में प्रयोग करते रे्।

व्यावहाररक सत्ता तर्ा पारमाशर्थक सत्ता

िीवनुमुिावस्ा में यह िगत् भी वैसा नष्ट नहीं ंहोता िैसा माना िाता है। व्याहाररक िगत् में सत्ता वास्तव में नहीं ंरहती; परनुतु इसका अर्थ नाि नहीं ंहै। इसका अर्थ तो केवल यही है नक सत्ता का रूप और रंग परम तत्त्व में रूपान्तररत हो िाता है। व्यावहाररक सत्ता, न नक अद्धखल सत्ता, लुप्त होती है। पारमानर्थक सत्ता रहती है; परनुतु उसके परररद्धच्छन्न रूप िाते रहते हैं। बाहरीपन, दिे-काल-सम्बन्धी दृनष्टकोण, कायथ-कारण-सम्बन्ध,

एकता तर्ा अनेकता के भाव अवश्य दूर हो िाते हैं। इनका दूर होना अननवायथ है; परन्तु मुि आत्मा के नलए भी नवश्व और इसका अद्धस्तत्व दूर नहीं होता। केवल इसका स्वरूप, अर्थ और महत्त्व बदल िाता है। नमथ्या दृनष्ट, ज्ञान की सीमा, र्िुि नवचार तर्ा पररसीनमत दृनष्ट के अनतररि कुछ भी लुम नहीं होता है। तथ्य, तत्त्व तर्ा सत्ता सदा की भाँनत मौनलक रूप से बने रहते हैं, केवल दृनष्टकोण रूपान्तररत हो िाता है।

ज्ञाननयों के मन को मन नहीं, बद्धि सत्त्व कहते हैं। िो नाना प्रकार के पदार्ों द्वारा अपनी दिा बदलता रहता है, वह मन है। ज्ञानी का मन कीनमयाई प्रनक्रया से ताँबे से रूपान्तररत स्वणथ की भाँनत ननदोष होता है। ज्ञानी का मन स्वयं सत्त्व है, िब नक अज्ञानी िन अपने मन द्वारा ननधाथररत पर् का अनुसरण करते हैं। ज्ञानी िब बाहर देखता है, तब वह केवल देखता ही है; उसकी वृनत्त संसारी मनुष्ों की वृनत्त के समान नवषयाकार नहीं बनती। िैसे सभी व्यद्धियों का मन गहन ननिावस्र्ा में नवषयाकार वृनत्त से सवथर्ा रनहत होता है, इसी प्रकार ज्ञानी का मन िाग्रतावस्र्ा में भी नवषयाकार वृनत्त से रनहत होता है। उसे िगत् स्वप्नवत् भासता है। वह कायथ करता हुआ भी ब्रह्म में ही द्धस्र्र रहता है। आत्म-साक्षात्कार-प्राप्त व्यद्धियों की वे र्िु वासनाएँ, निनसे नक वे कमथ करते हैं, उन्ें पुनिथन्म में नहीं िालतीं। ऐसे ज्ञानी का मन साद्धत्त्वक कहलाता है; परन्तु नबना ज्ञान के वह प्रायिः मानस कहलाता है।

पूणछतिः सतुशलत मन

अब, िीवन्मुि के मन के लक्षण देद्धखए। यह सब पररद्धस्र्नतयों में पूणथतया सन्तुनलत रहता है। उसका मन सदैव िान्त तर्ा द्वन्द्वों से अप्रभानवत रहता है, हषथ तर्ा िोक से मुि होता है अर्ाथत् वह न सुखों से उल्लनसत और न िोक तर्ा नवषाद से द्धखन्न होता है तर्ा सुख-दुिःख के भोगों में रहते हुए उनसे प्रभानवत न हो कर उनका अभ्यस्त हो िाता है। आन्तररक तृद्धप्त और दुिःख-रनहत होने के कारण ज्ञानी में सवथत्र तर्ा सभी पररद्धस्र्नतयों में मन का समत्व बना रहता है। िरीर में अनुलग्न सुख-दुिःख आनद के भाव उसके मुख पर प्रकट होने पर भी उसका मन उनसे अर्वा उनकी नवपरीत अवस्र्ाओं से व्याकुल नहीं होता। वह र्िुि वासनाओं से मुि होता है। उसमें काम अर्वा क्रोध नबलकुल नहीं होते। ऐसे मन में काम का आवेग नहीं उठता और न नवषयों की नंकंनचत् कामना ही रहती है। उसका मन सांसाररक वस्तुओं से ऊपर उठ िाता है, निस पर संसार का कोई प्रभाव नहीं पडता। उसको पृर्क् कमरे या आसन की आवश्यकता नहीं होती। उसे न तो आँख बन्द करने की आवश्यकता होती है और न इद्धन्द्रयों के प्रत्याहार करने की ही आवश्यकता है।

र्ि मन नानानवध पदार्ों का प्रतीयमाननतिः भोग करता हुआ भी वास्तव में उन्ें नहीं भोगता, वह ब्रह्म-रूप ही कहा िा सकता है।

यिात्मकचेतना

ताद्धन्त्रक आत्म-ननग्रह और संयम के द्वारा एक ही समय में दो स्तरों पर काम करना सीख लेता है। िब वह भौनतक स्तर में कायथ करता है तो वह एक अंि में अपने िरीर से बाहर भी रहता है, िैसे निस समय वह नलखता या बोलता है, उस समय वह अपने सूक्ष्म िरीर द्वारा अन्य कायथ भी करता रहता है। िब ताद्धन्त्रक की यह द्धस्र्नत है तो नसि ज्ञानी का तो कहना ही क्ा है, िो सदा अपने स्वरूप में द्धस्र्त रहता है! ज्ञानी को द्वयात्मक चेतना होती है अर्ाथत् उसे ब्रह्म-चेतना के सार्-सार् संसार की चेतना भी होती है। वह संसार को अपने ही अन्दर

स्वप्नवत् देखता है। ज्ञानी सदा समानध में रहता है। उसे ऐसा नहीं ंहोता नक वह रियोगी के समान कभी समानध में और कभी समानध से बाहर रहे।

बि आप हारमोननयम बिाते हैं तो पहले रानगनी ठीक करते और स्वर नमलाते हैं। आपकी वाणी की
ध्विि के अनुसार इसे दूसरी या चौरी् कद्धम्पका (री) पर रखा िा सकता है। तब आप नभन्न-नभन्न कद्धम्पकाओं ंको बिाने लगते हैं। अब सप्त-स्वरों ंका उच्चारण होता है निससे आप नभन्न-नभन्न राग-रानगननयों ंको ननकाल सकते हैं। िो मुख्य शुरुनत-स्वर से अवगत है, उसकी तुलना उस ज्ञानी से की िा सकती है िो आत्मा या िगत् के अनधष्ठान को िानता है; परन्तु िो मुख्य शुरुनत को िाने नबना केवल सप्त-स्वरों ंको िानता है, वह उस अज्ञानी के समान है िो आत्मा को िानता नहीं, ं पर निसको नवषय-भोगों ंका ज्ञान है।

बि आप कोई वस्तु अपनी आँखों ंसे देखते हैं, तब आप िानते हैं नक आप सूयथ के प्रकाि के द्वारा उसे देख सके हैं। आपके दो दृनष्टयाँ होती हैं। इसी प्रकार िब ज्ञानी व्यवहार करता है तो उसके दो दृनष्टयाँ होती हैं। वह काम करता हुआ भी िानता है नक वह कुछ नहीं ंकरता, वह अनासि है। संसार को देखता हुआ भी केवल ब्रह्म ही देखता है। उसके नलए यह सब-कुछ ब्रह्म ही ब्रह्म है।

सम-भाव और सम-दृशष्ट

सम-भाव और सम-दृनष्ट में रो्डा-सा अन्तर है। पूविो सम-भाव माननसक दिा है (यरा् सुख-दुिःख में, हानन-लाभ में, गरमी सदी में तरा् िय और परािय में समान रहना)। उत्तरिो सम-दृनष्ट ज्ञान की अवस्रा् है। ज्ञानी
भंगी और रािा में केवल एक ही आत्मा देखता है।

बि आप रेलवे से्टिन पर अपने नकसी नमत्र से नमलने की आिा में होते हैं तो आपका मन सदृि आकृनत वाले कई अन्य पुरुषों ंमें उसे देखने की चेष्टा करता है; क्ोंनक वह एक ननननदथष्ट समय पर एक नमत्र-नविेष से नमलने के एक ही नवचार में संलग्न होता है। मन उसको देखने को बडा उत्सुक होता है। एक कामुक युवक स्तम्भ पर स्त्री के वस्त्र नलपटे होने पर उसमें और वस्तुतिः सवथत्र ही स्त्री को ही देखता है। उसका मन बडे प्रबल कामुक नवचारों ंसे पररपूणथ होता है। इसके नवपरीत भगवत्प्रेम में उन्मत्त व्यद्धि वृक्ष, पत्थर, बालक, लडका, लडकी, गाय आनद सब वस्तुओं ंमें परमात्मा के ही दिथन करता है-**"सवथ खल्विदं ब्रह्म।"**

यद्यनप िीवन्मुि में अनन्त सिद्धियाँ होती हैं, तो भी अपने पररद्धच्छन्न मन के द्वारा वह अपनी उन सब नसद्धियों ंको प्रकट नहीं ंकर सकता।

परिच्छेद - ३९

एक योगी की िन्क्तयााँ

शसन्यिााँ और ऋन्यिााँ

नौ प्रकार की ऋद्धियाँ और आठ मुख्य नसद्धियाँ तर्ा अठारह गौण नसद्धियाँ होती हैं। आठ नसद्धियाँ ये हैं : अनणमा (अणु के समान सूक्ष्म िरीर धारण करना), मनहमा (नविाल रूप होना), गररमा (गुरु-भारी होना), लनधमा (लघु-हलका हो िाना), प्राद्धप्त (वांनछत वसुतु प्राप्त कर लेना), प्राकाम्य (बेरोक-टोक इच्छा–द्धि होना), ईत्वि (अनधकार) और वनित्व (सभी इद्धन्द्रयों ंपर अनधकार होना)। ऋद्धि का अर्थ है समृद्धि। ऋद्धि नसद्धि से ननम्नतर है।

भूतजय

रियोगी को नननवथकल्प अर्वा ननबीि समानध के द्वारा मनिोय प्राप्त होती है और मनिोय के द्वारा भूतिय प्राप्त होती है। ऐसे रियोगी को न अनग्न िलाती है और न पानी िुबाता है। वाराणसी के स्वगीय त्रैनलंग स्वामी, िो ८० वषथ पूवथ िीनवत र्े और आलन्दी (पूना के ननकट) के श्री ज्ञानदेव को नवनभन्न नसद्धियाँ प्राप्त र्ीं। ज्ञानदेव से नमलने के नलए चांगदेव नसंह की पीठ पर चढ़ कर आया, तो ज्ञानदेव ने उसके स्वागत के नलए अपने घर को चला नदया। मसनिद भी चलने लगी र्ी। त्रैनलंग स्वामी छह मास तक गंगा िी के नीचे रहा करते र्े।

अतीत काल का ज्ञान

योगी को िद्धि प्राप्त होती है नक वह अपने अवचेतन मन के अन्दर गहराई में उतर कर अनेक पूवथ-न्मों ंके संस्कारों ंको देख तर् समझ लेता है। 'संस्कार- साक्षात्करणातूपूवथिानतज्ञानम्' (पातंलियोगसूत्र : ३-१८)। वह इन गुप्त संस्कारों ंपर यौनगक संयम (धारणा, ध्यान और समानध) का अभ्यास करता है। इससे वह अपने पूवथ-न्मि का ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

अष्टावधान और ितावधान

अप्रनिनक्षत मन एक समय में या तो देख सकता है या सुन सकता है। परनुतु पूणथ रूप से पररषृकृत मन एक ही समय में देख भी सकता है और सुन भी सकता है। इसे एक अर्वा अनेक इद्धन्द्रयों ंके सार् संयिु नकया
ा सिकता है और सबसे अलग भी नकया िा सकता है। इस मन को योगी िैसा चाहे उसी प्रकार चला सकता है। यह एक समय में आठ काम कर सकता है। यह अष्टावधान कहलाता है। यह एक समय में सौ काम भी कर सकता है। यह तिावधान है।

स्रूल िरीर से सूक्ष्म िरीर का शवयोजन

योगी अपने सूक्ष्म िरीर को स्रूल िरीर से अलग कर लेता है, नननमष मात्र में संसार के नवनभन्न भागों ंतर् ऊपरी लोकों ंमें भ्रमण कर लेता है और नफर स्रूल िरीर में उसी प्रकार लौट आता है, निस प्रकार पक्षी अपने नपंिरे रूप कारागार में वापस आ िाता है। प्राण का एक क्षीण सूत्र सूक्ष्म िरीर और स्रूल िरीर को संयिु करता है। योगी निस क्षण अपने िरीर से ननकलता है, तो वह अपनी सूक्ष्म दृनष्ट से स्रूल िरीर को ऐसा ही देखता है िैसे साँप अपनी त्यि केंचुली को। िब आप स्रूल िरीर से अपने को पृर्क् करने की योग की प्रनवनध िान लेंगे, तो आपको यह प्रनक्रया बडी सुगम प्रतीत होगी।

अतीन्यि शसन्यिााँ : आध्यान्त्मक साधको ोंके शलए महान् सोंकट का मूल कारण

मन की धारणा के द्वारा नकसी मनुष् को अतीद्धन्द्रय िद्धि और नसद्धियाँ भले ही प्राप्त हो िायें; परनुतु इससे उसके मन की िुद्धि भी हो, यह आवश्यक नहीं।ं आत्म-साक्षात्कार के नलए मन की िुद्धि अत्यन्त आवश्यक है।

अतीद्धन्द्रय नसद्धियों ंको अनधक महत्त्व न दें। परोक्ष अतीद्धन्द्रय-श्रवण तर् अतीद्धन्द्रय-दृनष्ट की िद्धि प्राप्त करने योग्य नहीं ंहैं, िब नक नबना नसद्धियों ंके ही इनसे अनधक मूल्यवान् िाद्धन्त और ज्ञान का प्रकाि नमल सकता है।

आप अतीद्धन्द्रय नसद्धियों ंको क्ों ंचाहते हैं? वे नबलकुल ननरर्थक हैं। यनद वे प्रकट होने की चेष्टा करें भी, तो ननदथयतापूवथक उनसे दूर रहें। वे आपको पर्भ्रष्ट करेंगी तर् आपके अधिःपतन का कारण बनेंगी। सावधान रहें। भगवान् बिु ने मार (प्रलोभनों ंतर् नसद्धियों)ं की उपेक्षा ही की र्ी। ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करें। तब आपको सब-कुछ प्राप्त हो िायेगा। सारी आध्याद्धत्मक नसद्धियाँ हार् फैला कर आपका स्वागत करेंगी। उस द्धस्नत में आपका अध:पतन नहीं ंहो सकता।

ज्ञाननयों ंको इन ऋद्धियों–ंनसद्धियों ंकी अपेक्षा नहीं ंहोती; क्ोंनंक ननत्य व्यवहार में उनें् इनकी आवश्यकता नहीं ंपडती। अपने सत्संकल्प से ज्ञानी वह सब-कुछ कर सकता है िो रियोगी अपने योग-संयम द्वारा करता है। वह केवल इच्छा मात्र करता है; पर वह िो भी इच्छा करता है, वही पूणथ हो िाती है।

परररचे्छेद-४०

गुरु की आवश्यकता

"यह ज्ञान तुम प्रनणपात (प्रणाम), पूछ-ताछ और सेवा द्वारा सीखो। तत्त्वदिी ज्ञानी तुम्हें ज्ञानोपदेि करेंगे।" (गीता : ४-३४)

साधकों ंके नलए गुरु आवश्यक है। कोई-कोई कुछ वषों तक स्वतन्त्र रूप से अभ्यास करते और नफर गुरु की अत्यन्त आवश्यकता अनुभव करते हैं। उनके मागथ में कुछ बाधाएँ आती हैं। वे इन बाधाओं ंका ननवारण करना और आगे बढ़ना नहीं ंिानते। तब वे गुरु को खोिने लगते हैं। योग के अभ्यास में ऐसा नविेषकर होता है।

गुरु का धमथ है नक प्रत्येक निष् को आध्याद्धत्मक साधना के उसी मागथ पर लगाये, निसके नलए वह उपयुि पात्र हो। गुरु अपनी अन्तदृथनष्ट से निष्-नविेष की रुनच को िान कर उसके अनुसार एक निष् को एक मागथ पर और दूसरे को दूसरे मागथ पर चलाये।

ईश्वर गुरुओं ंका गुरु है। वह िीवों ंपर अनुग्रह करता है और अनवद्या का आवरण हटाता है। साधक को उनचत है नक वह अपने िरीरधारी गुरु को उसी ईश्वर का अवतार समझे और उसकी भद्धि भी ईश्वर के समान ही करे। स्थूल देहधारी गुरु निष् को प्राप्त होने वाले सभी सुख तर्ा कल्याण का आधार तर्ा मूतथ रूप होता है। निष् को गुरु के आदेिों ंतर्ा आज्ञाओं ंके पालन की परम आवश्यकता समझनी चानहए और उसमें अपनी दृढ़ ननमथल श्रिा रखनी चानहए।

अपने गुरु के सामने हृदय के रहस्य खोल कर रख दें। और नितना ही अनधक आप ऐसा करेंगे, उतनी ही सहानुभूनत और सहायता आपको गुरु से प्राप्त होगी। इस सहानुभूनत का अर्थ पाप और प्रलोभन के नवरुि संघषथ करने के नलए अनधक िद्धि की प्राद्धप्त है।

िन्क्ति-सोंचार

िैसे आप नकसी मनुष् को एक सन्तरा दे सकते हैं और उसे वापस भी ले सकते हैं, उसी प्रकार आद्धत्मक िद्धि भी हस्तान्तररत की िा सकती है और नफर वापस ली िा सकती है। आध्याद्धत्मक िद्धि के हस्तान्तरण की इस नवनध को िद्धि-संचार कहते हैं। पनक्षयों, ं मछनलयों ंऔर कछुओं ंकी भाँनत गुरु आध्याद्धत्मक िद्धि का संचार स्पिथ, दृनष्ट या केवल इच्छा अर्वा नवचार द्वारा कर सकता है। िद्धि-संचार करने वाला व्यद्धि कभी-कभी निष् के सूक्ष्म िरीर में प्रवेि करके उसके मन को अनधक िद्धि के द्वारा उन्नत कर देता है। वह उसे अपने सामने नबठा कर उसे आँखें बन्द करने को कहता है और नफर उसमें आत्म-िद्धि का संचार करता है। निष् वास्तव में नवद्युत् प्रवाह को मूलाधार चक्र से ऊपर को ग्रीवा और निर तक चढ़ता हुआ प्रतीत करता है। वह प्रेरणा द्वारा

नबना नकसी निक्षा के आसन, प्राणायाम, बन्ध, मुिा आनद हठयोग की नवनवध नक्रयाएूँ स्वयं कर लेता है। यहाूँ प्रकृनत स्वयं कायथ करती है। निष् को अपनी इच्छा–द्धि का ननरोध नहीं ंकरना चानहए। उसे आन्तररक प्रकिा के अनुकूल कायथ करना चानहए। मन अत्यन्त उन्नत हुआ होता है। निस क्षण साधक अपने नेत्र बन्द करता है, ध्यान स्वयमेव लग िाता है। िद्धि संचार के द्वारा गुरु-कृपा से निष् में कुण्डनलनी िद्धि िाग्रत हो िाती है।

गुरु वसुतुतिः अपनी आध्याद्धत्मक िद्धि निष् में संचाररत करता है। एक नविेष आध्याद्धत्मक स्पन्दन सद्गुरु की ओर से निष् के मन को हस्तान्तररत नकया िाता है श्री रामकृष्ण परमहंस ने वसुतुतिः अपनी आध्याद्धत्मक िद्धि स्वामी नववेकानन्द को हस्तान्तररत की री्। ईसामसीह ने भी अपने निष्ों ंके सार् ऐसा ही नकया र्ा। समर्थ रामदास के एक निष् ने एक वेश्या-पुत्री में, िो उन पर कामातुर हो रही री्, इसी प्रकार िद्धि संचाररत की री्। निष् ने उस पर दृनष्ट िमा कर समानध प्राप्त करा दी। उसकी कामवासना िाती रही री्, वह बहुत धानमथक तर्ा आध्याद्धत्मक बन गयी। महाराष्टरीय सन्त मुकुन्दराय ने बादिाह को समानध प्राप्त करा दी री्।

गुरु की कृपा से ही भि को अष्टांगयोग की प्राद्धप्त होती है तर्ा भगवान् िंकर की कृपा से वह योगों ंमें नसद्धि अर्ाथत् पूणथता प्राप्त करता है िो अनानद और अनन्त है।

परररचे्छेद-४१

साधको ोंको सोंकेत

योग के साधक तीन प्रकार के होते हैं: (१) आरुरुक्ष, ि◌ो योग के सोपान पर आरूढ़ होने का प्रयत्न कर रहा है; (२) गुंनि, ि◌ी योगाभ्यास में उत्साह-सनहत लगा है, और (३) योगारूढ़, ि◌ो योग के उन्नत निखर पर पहुँच चुका है।

आतररक ि◌ुशचता की अपररहायछ

साधक आत्म-साक्षात्कार के बहुत उतुसुक होते हैं; परनुतु ि◌ब साक्षात्कार होता है, तब वे काँपने लगते हैं, भयभीत हो ि◌ाते हैं। वे ईश्वर के प्रकायिु ति को सह नहीं ◌ंसकते। वे इतने तुच्छ, मनलन और दुबथल होते हैं नक महान् आभा के सामने, नदव्य ति के सामने नहीं ◌ंरह सकते। इस नदव्य प्रकाि को धारण करने के नलए उन्होंने पात्र को तैयार नहीं ◌ंनकया है। देद्धखए, नवराट् के नवश्व-रूप को देख कर अिुथन कैसे भय से काँप गया र् और भगवान् श्रीकृष्ण से नवनय करने लगा र् नक वे अपना वही सामान्य चतुभुथि-रूप नफर नदखायें। इन चतुभुथि से एकरसता, पूणथता, ि◌द्धि और ज्ञान इंनगत होते हैं।

ब्रह्म की चचाथ करना कनठन है, उसे समझना और भी कनठन है तर् आध्याद्धत्मक साधना का अभ्यास करना तो इससे भी कनठन है। इसी से नमलतेि◌ुलते नवचार गीता अध्याय २, श्लोक २९ में नमलते हैं। यर् :

आश्चयछवत्पश्यशत कशश्चदेन-
माश्चयछविदशत तरै्व चान्यिः।
आश्चयछवच्चैनमन्यिः शृणोशत
ुत्वाप्येनों वेद न चैव कशश्चत्।।

"कोई मनुष् उस परमात्मा को आश्चयथ-सा देखता है, कोई उसे आश्चयथ-सा बताता है, कोई उसे आश्चयथ-सा सुनता है, नफर भी सुन कर भी उसे कोई नहीं ◌ंसमझता।"

ब्रह्म-प्राद्धप्त के नलए सूक्ष्म, ि◌ि◌ु और ननमथल मन, दृढ़ ननश्चय, धैयथ, लगन और उत्साह की आवश्यकता हुआ करती है।

नैशतक ि◌न्क्त तर् साहसकी अशनवायछ आवश्यकता

आध्याद्धत्मक साधक को साहस के सार्-सार् अन्यर्-कर्न, नमथ्या अपवाद तर् अनबन का सामना करना पडेगा। निन्होंने अपने सानयों ◌ंसे ऊँचा उठने की चेष्टा की है, उन् सदा ऐसा ही प्रारि नमलता है। व्यद्धि को इसका सामना करने, अपनी द्धस्र्नत बनाये रखने और उसके चतुनदथक् के लोग उसके सम्बन्ध में भले ही कुछ भी सोचें, कहें या करें; पर निसे वह ठीक समझता है, उस पर नटका ही रहने के नलए नैनतक बल और साहस की आवश्यकता होती है। ि◌ो साधक समाि के ननयमों ◌ंका अनतक्रमण कर चुका है, उसे अपने अन्तिःकरण और ि◌ि◌ु बुद्धि की आज्ञा के अनुसार चलना चानहए। तभी वह आध्याद्धत्मकता में उन्ननत कर सकता है।

बि नकसी का यि और अनधकार फैलता है तो ि◌तुरु भी आन-ही-आप बन ि◌ाते हैं। श्री ि◌ंकराचायथ के भी अनेक ि◌तुरु रे्। ि◌ंगलों ◌ंमें बसने वाले संन्यानसयों ◌ंके भी ि◌तुरु हो ि◌ाया करते हैं। समृद्धिाली और यिस्वी ि◌नों ◌ंके

नवरुि ईष्याथलु और कुषिु मन के मनुष् अनेक प्रकार के उत्पात खडे कर देते हैं। साक्षी-भाव रखें और ितुरु तरा् नमत्र के भाव से ऊपर उठें। उदासीन बन िायें। सहनि–द्धि को बढ़ायें। तभी आप इस संसार में सुखी रह सकते हैं।

नितने व्यनष्ट मन हैं, उतने ही आध्याद्धत्मक साधन हैं। िो साधन एक मन के अनुकूल होता है, वह दूसरे मन के अनुकूल नहीं ंहोता है। एक व्यद्धि के नलए रियोग सुगम होगा, तो दूसरे के नलए ज्ञानयोग। एक को एक प्रकार का िप अच्छा लगेगा, तो दूसरे को दूसरे प्रकार का।

दैशनक आध्यान्त्मक कायछक्रम

पूणथकानलक साधकों ंके नलए आध्याद्धत्मक नदनचयाथ दी िाती है। िो कायाथलयों ंऔर व्यापार-घरों ंमें काम करते हैं, वे अपनी सुनवधा और समय के अनुसार इसमें आवश्यक पररवतथन तरा् हेर-फेर कर सकते हैं।

पि	प्रातिः	४ घण्टे
ध्यान	रानत्र	४ घण्टे
स्वाध्याय		३घण्टे
साक्षात्कार (यनद आवश्यक हो)		१ घण्टा
आसन तरा् प्राणायाम	प्रातिः	१ घण्टा
	रानत्र	१ घण्टा
भ्रमण		१ घण्टा
ननिा		५ घण्टे
सेवा		१ १/२ घण्टा
स्नानानद		१घण्टा
भोिन		१ घण्टा
नवश्राम		१/२ घण्टा
	योग : २४ घण्टे	

शकोंशचत् शभन्न सारणी

प्रारम्भ में चौबीसों ंघण्टे परमात्मा में मन लगाना कनठन होता है। ध्यान समाप्त होते ही मन भागने लगेगा और यर्ासम्भव अपनी पुरानी आदत के अनुसार कायथ करने की चेष्टा करेगा। इसकी चेष्टा रोकने के नलए आप क्ा करेंगे? आप इसे ग्रहण करने के नलए अन्य सात्त्विक पदार्थ दें। इसे नभन्न-नभन्न प्रकार के पदार्थ चानहए। अब कुछ घण्टों ंके नलए दिाथननक पुस्तकें पढ़ें। िैसे की स्वाध्याय समाप्त हो, िो-कुछ आपने पढ़ा है, उसे अंनकत कर लें। इसमें भी र्ोडा समय लगा सकते हैं। यह मन को निनर्ल कर देगा। यह मनोरंनि का साधन बनेगा। आप दररिों ंतर्ा रोनगयों ंकी सेवा में यर्िाक् समय लगा सकते हैं।
आपकी नदनचयाथ के नलए कायथक्रम नीचे देते हैं-

ध्यान	८ घण्टे
स्वाध्याय	४ घण्टे
लेखन	२ घण्टे
सेवा	२ घण्टे
भोिन, स्नान, व्यायाम	२ घण्टे
ननिा	६ घण्टे
	योग : २४ घण्टे

सबसे अधमी मनुष् भी सच्ची लगन से परमात्मा की भक्ति करके परमानन्द को प्राप्त कर सकते हैं। भगवान् ने (गीता : ९-३० में) कहा है, "यनद सबसे अनधक पापकमथ करने बाला भी अनन्य भाव से मेरी उपासना करता है, तो उसे साधु ही समझना चानहए; क्ोंनक उसने ठीक-ठीक ननश्चय कर नलया है।" "तू ननश्चय करके समझ नक मेरा भि नष्ट नहीं ंहोता-प्रनतिानीनह न मे भिः प्रणश्यनत" (गीता : ९-३१)। नफर ननरिा होने का क्ा कारण है? इसनलए उठो और कतथव्य करो। ईश्वर ननस्सन्देह ही आपके प्रयत्न में सफलता देगा। हममें से दुष्टतम व्यक्ति भी मोक्ष प्राप्त कर लेगा।

ॐ पूणथमदः पूणथतमदं पूणाथत्पूणथमुदच्यते।
पूणथस्य पूणथमादाय पूणथमेवावतिष्यते ।।
।।ॐ िान्तिः िान्तिः िान्तिः ।।

ॐ वह (परब्रह्म) पूणथ है और यह (कायथब्रह्म) भी पूणथ है, क्ोंनक पूणथ से ही पूणथ की उत्पनत्त होती है। उस पूणथ (परब्रह्म) में से यह (कायथब्रह्म) ननकाल लेने पर भी वह पूणथ (परब्रह्म) ही बचा रहता है।

ॐ िान्तिः िान्तिः िान्तिः ।। हरर ॐ तत्सत् ।।

पररनिष्ट-१

मन के प्रशत

जीवन-वृत्त

हे मन! हे माया की सन्तान !
आश्रय लेने के नलए
तुम सदा कोई आधार चाहते हो।
तुम्हारे दो रूप हैं :
िुि मन और अिुि मन।
नदक्काल और कारणत्व
तुम्हारे वैचाररक रूप हैं।
तुम साहचयथ ननयम के द्वारा
कायथ करते हो;
तुम सोचते, अनुभव करते और िानते हो।

तुम आत्म-िुद्धि हो।
तुम मनोमय-कोि हो।
तुम दपथण-सदृि हो,
ब्रह्म तुममें प्रनतनबद्धम्बत होता है।
तुम्हारी तुलना वृक्ष से की िाती है :
अहंकार उस वृक्ष का बीि है,
संकल्प उसकी िाखाएँ हैं,
बुद्धि उसका प्रर्म अंकुर है।

तुम्हारे अन्य तीन रूप हैं-
चेतन मन,
अवचेतन मन,

तर्ा अनतचेतन मन।

तुम्हारी रचना
भिोन के सूक्ष्म अंिसे हुई है।
तुम स्वभावों,ं संस्कारों ंऔर वासनाओं ंके
समूह हो।
तुम चतुष्टय हो;
मन संकल्प-नवकल्प करता है,
बुद्धि ननश्चय करती है,
नचत्त सम्पादन करता है,
अहंकार अहमन्यता करता है।
नचत्त मन के अन्तगथत है।
बुद्धि अहंकार के अन्तगथत है।
यह वृनत्त-भेद है।

तुम्हारा जन्म

तुम्हारे नपता परब्रह्म ने
एक बार एकाकीपन अनुभव नकया।
वह अकेले र्े, एक र्े, अद्वय र्े।
उन्ोंनें बहुनलत होना चाहा,
सोचा, "एकोऽहं बहु स्याम्।
- एक हूँ अनेक बन िाऊँ।"
एक स्पन्दन हुआ
तुम्हारी माता में,
अनभन्न, अव्यि प्रकृनत में,
सनुतुलन नवकुषि हो उठा।
तत्काल तुम्हारा िन्म हुआ।
तुम्हारा िरीर िुि सत्त्व से ननननमथत र्ा,
तुम 'मन' के नाम से नवख्यात हुए।
नवधाता ने तुम्हें चार कायथ नवनहत नकये
अतिः तुम चतुष्टय बने-
मन, नचत्त, बुद्धि तर्ा अहंकार।
तुमने 'मैं' की अहमन्यता से,
प्रभु से अपने को नवयुि कर नलया।
तुम इद्धन्द्रयों ंकी संगनत में पड कर
ऐद्धन्द्रक पदार्ों में मगषन हुए
और अपने नदव्य स्रोत को नवसूमृत कर नदया।
तुम पुत्र, सम्पनत्त, नाम, उपानध तर्ा प्रनतष्ठा में
आसि हुए,

पूणथतया सांसाररक बन गये।
तुमने अनवद्या के कारण
रीर, पुत्र, पत्नी, गृह तर्ा सम्पनत्त से
अपना दातात्म्य स्र्ानपत नकया।
यही तुम्हारे पतन का,
सभी प्रकार की नवपनत्तयों ाें और कष्टों ाें का
कारण है।
यही, संके्षेप में तुम्हारा ाीवन-वृत्त है।
राग तर्ा ािरीर के सार्
अपनी तादात्म्यता त्याग दो।
ब्रह्म-ज्ञान की प्राद्धप्त द्वारा
अनवद्या का नवनाा करो;
तुम ब्रह्म से तूप बन सकते हो,
और अपना नदव्य स्वरूप पुनः प्राप्त कर सकते हो।

तुम्हारा शनवास-स्र्ान

हे भ्रमणील मन !
तुम्हारे तीन ननवास स्र्ान हैं।
ाग्रितावस्र्ा में
तुम्हारा ननवास-स्र्ान दनक्षण नेत्र
और मद्धस्तष्क है;
स्वप्नावस्र्ा में तुम
कण्ठ की नहता-नाडी में ननवास करते हो।
गम्भीर ननिावस्र्ा में तुम
हृदय की पुरीतत्-नाडी में ननवास करते हो।
हठयोनगयों ाें के मान्यतानुसार
तुम्हारा स्र्ान आज्ञाचक्र है।
यनद व्यद्धि आज्ञा चक्र पर ध्यान केद्धन्द्रत करता है
तो तुम सहि ही ननयद्धन्त्रत नकये ाा सकते हो।
साधकों ाें को अब
तुम्हारा नवश्राम-स्र्ल ज्ञात है;
वे ननश्चय ही तुम तक पहुँच ाायेंगे
और तुम्हें ननष्ठुरतापूवथक ननष्कानसत कर देंगे।
इन ननवास-गृहों ाें को खाली करो।
और ससीम ब्रह्मपुरी के
अपने आद्य गृह,
'ओंकार-भवन' को वापस चले ााओ।

तुम्हारा स्वरूप

तुम्हारी तुलना पारद से की िाती है;
क्ोंनक तुम नबखरे रहते हो।
तुम्हारी तुलना मृग से की िाती है;
क्ोंनक तुम अद्धरूर हो।

तुम्हारी तुलना मकथट से की िाती है;
क्ोंनक तुम एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर कूदते रहते हो।
तुम्हारी तुलना पक्षी से की िाती है;
क्ोंनक तुम पक्षी के सदृ उडते रहते हो।

तुम्हारी तुलना प्ेरेतात्मा से की िाती है;
क्ोंनक तुम नर-नपाच की तरह व्यवहार करते हो।
तुम्हारी तुलना वायु से की िाती है;
क्ोंनक तुम वायु के तुल्य प्रचण्ड हो।

तुम्हारी तुलना यन्त्र से की िाती है;
क्ोंनक तुम तब काम करते हो
बि आहार-ईंधन तुम्हें प्रदान नकया िाता है।
तुम्हारी तुलना िंतु से की िाती है;
क्ोंनक तुम्हें ताडन की आवश्यकता होती है।

कठोपननषद् में तुम्हारी तुलना
बािीर से की िाती है;
क्ोंनक िो बािीर को कस कर पकडता है,
वह आनन्द-धाम में पहुँच सकता है।

तुम्हारी तुलना श्वान से की िाती है
िो गनलयों ंमें मटरगश्ती करता है
तुम्हारी तुलना पुष्प से की िाती है;
क्ोंनक भि तुम्हें भगवान् को समनपथत करता है।
यही तुम्हारे नलए अच्छी प्रिंसोद्धि है।

तुम्हारे र्शनष्ठ शमत्र

हे मन! हे िाद्धन्त के ितुरु !
तुम्हारे अनेक नमत्र हैं।
वे नवनवध प्रकार से
तुम्हारी सहायता करते हैं।
अतएव तुम बहुत ही िद्धििाली हो।
अहंकार तुम्हारा सवोत्तम नमत्र है,
वह बहुत प्रभाविाली भी है।
वह तुम्हारा प्रधान सेनापनत है।

काम तुम्हारा घननष्ठ यार है,
वह तुम्हारा दनक्षण हार् है,
वह सदा तुम्हारे सार् रहता है,
वह तुम्हारा एकननष्ठ सार्ी है,
तुम उससे अनुरि रहते हो।
क्रोध तुम्हारा सौम्य नमत्र है;
वह तुम्हारा यिु-मन्त्री है;
वह तुम्हारा वाम हार् है;
वह तुम्हारी अत्यनधक सहायता करता है।
राग-द्वेष तुम्हारे पूणथ पररनचत हैं;
वे तुम्हें अतीव नप्रय हैं;
वे तुम्हारी महती सेवा करते हैं।
लोभ तुम्हारा सवोत्तम सुहृद है;
वह तुम्हारी छाया की भाूँनत
तुम्हारा अनुसरण करता है;
वह तुम्हारा आज्ञाकारी सेवक है।
अनभमान तुम्हारा पोषण करता है;

दम्भ तुम्हें मन्त्रणा देता है;
मोह तुम्हें परामिथ देता है;
ईष्ाथ तुम्हें प्ेररत करती है;
धूतथता तुम्हें अनुप्रानणत करती है:
वह तुम्हारी प्रचार-मन्त्री है।
कुनटलता तुममें ि्द्धि-संचार करती है;
अहंकार तुम्हें स्र्ूल बनाता है;
कपट तुम्हें पुनयोवन प्रदान करता है।

तुम्हारे ितु्रु

हे मन! तुम भयभीत क्ों ंहोते हो?
अब अपनी ि्द्धि नदखाओ।
अब तुम नटक नहीं ंसकते।
अब आत्म-समपथण करो
अन्यर्ा मारे िाओगे।
'वैराग्य', 'त्याग', 'संन्यास',
'सत्संग', 'साधना', 'योग'
ब्दिों ंको िब तुम सुनते हो,
तब तुम र्रर्रा उठते हो।
वैराग्य तुम्हारा कट्टर ितु्रु है;
यह तुम्हें काटने के नलए कुठार है।
तुम्हारा गला काटने को
त्याग खि्ग है।

तुम्हें भस्मीभूत करने को
संन्यास अणुबम है।
ध्यान तुम्हें भून िालेगा।
समानध तुम्हें तलेगी
हे मन! नौ दो ग्यारह हो िाओ;
तुरन्त यहाँ से पलायन करो
यहाँ से चले िाओ।
रुको मत,
अपनी नवध्ंस-लीला रोको।
अब तुम कुचल नदये िाओगे।
तुम्हारे दाँत ननकाल नदये िायेंगे।
तुम उडा नदये िाओगे।
तुम चकनाचूर कर नदये िाओगे।
पि और कीतथन भी
सैन्य-दल में सद्धम्मनलत हो गये हैं।
प्राणायाम पररश्रमी है,
नवचार उग्र है।
नववेक अध्यवसायी है।
तुम्हारी सफलता की नंकंनचत् आिा नहीं ंहै।
अपने मूल ननवास-गृह में वापस चले िाओ
और िाद्धन्तपूवथक नवश्राम करो।

तुम्हारी चालें

हे मन! हे आवारा!
इस दारुण संसार में
मैंने तुम्हारी चालें िान ली हैं,
अब तुम मुझे धोखा नहीं ंदे सकते हो।
तुम कल्पना के द्वारा
सांसाररक लोगों ंको प्रलोनभत करते हो।
तुम उन्माद तर्ा माननसक आिद्धन्त उत्पन्न करते हो।
तुम परदा भी िालते हो।
पदार्ों में कुछ भी नहीं ंहै
तर्ानप तुम लोगों ंको ऐसा नवश्वास कराते हो
नक ऐद्धन्द्रक नवषयों ंमें
तुम सदा नवनवधता चाहते हो।
तुम नववेक नष्ट करते हो।
आसद्धि, अनुराग, तुम कपटी हो।
मैं नववेकी हूँ।
मैं ब्रह्म में नवश्राम करूँगा।
अत्यनधक सुख है।

तुम लोगों ंमें नवसूमृनत उत्पन्न करते हो।
तुम बौद्धिक नवकार उत्पन्न करते हो।
तुम ललचाते, प्रलोनभत करते तर्ा मोनहत करते हो।
तुम एकरसता में ििुगुिा उत्पन्न करते हो।
तुम सदा नवनवधता चाहते हो
तुम मनोनवकार उत्ेतेनित करते हो।
तुम सहि-वृनत्तयों ंके द्वारा चाल चलते हो।
तुम इद्धन्द्रयों ंको उत्ेतेनित करते हो।
तुम नववे नष्टष करते हो
आसद्धि, अनुराग,
प्रिंसा, सम्मान, नाम और यि
तुम्हारे लुभावने चारे हैं।
हे मन! मैं तुम्हारे सार् नहीं ंरह सकता हूँ।
मैं अब तुम्हारा संग सहन नहीं ंकर सकता हूँ।
तुम नवश्वासघाती, कूटनीनतज्ञ हो।
तुम कपटी हो
तुम अब मेरे सार् खेलवाड नहीं ंकर सकते हो।
तुम्हारी चालें पयाथप्त हो चुकीं।ं
मैं नववेकी हूँमैं ब्रह्म में नवश्वास करूँगा
मैं ननत्य आनन्दमय हूँ।

तुम्हारे रहस्य

हे मन! हे आत्मघाती !
मैं अब तुम्हारे रहस्य िानता हूँ।
तुम्हारी कोई वास्तनवक सत्ता नहीं ंहै।
तुम मृग-मरीनचका की भाँनत नदखायी पडते हो।
तुम ब्रह्म से, सवाथधार से
अपनी िद्धि उधार लेते हो।
तुम केवल िड हो;
नकन्तु बुद्धिमान् से प्रतीत होते हो।
बि तुम्हारा स्वरूप ज्ञात हो िाता है,
तो तुम चोर की भाँनत नछप िाते हो;
बि तुम्हें फुसलाया िाता है;
तब तुम ननश्चय ही प्रसन्न होते हो;
बि तुम पर सीधे आक्रमण नकया िाता है,
तब तुम फुत्कार करते और अपना फण उठाते हो। तु
म पर प्रनतपक्ष-भावना-नवनध से
सहि ही आक्रमण नकया िा सकता है।
तुम संस्कारों ंको
अवचेतन में सुरनक्षत रखते हो;

वही तुम्हारी ि द्धि है,
यही तुम्हारा सुदृढ़ गढ़ है।
तुम अपने दुगथ से बाहर आ कर
ीवि पर आक्रमण करते हो
और तब अवचेतन में
अपने-आपको नछपा लेते हो
तुम गुणों ंके सार् खेलवाड करते हो।
तुम्हारे तीन रंग हैं-
श्‍वेत, रि तऱ् श्याम।
बि तुम साद्धत्त्वक होते हो,
तब तुम्हारा रंग श्‍वेत होता है;
बि तुम रिनसक होते हो,
तब तुम रिभ हो िाते हो;
बि तुम तामनसक होते हो,
तब तुम्हारा वणथ श्याम होता है।
वासना और संकल्प
तुम्हारी प्राणाधार ि द्धि हैं,
उनके ही कारण
तुम्हारा अद्धस्तत्व है।
यनद इन्ें नष्ट कर नदया िाता है
तब तुम कहीं ंके नहीं ंरह िाते;
अब मैं तुम्हें परानित करूँगा
तऱ् िाश्वत आनन्द प्राप्त करूँगा।

तुम्हारी बडी भूलें

हे मन! तुम्हारी मनहमा वणथनातीत है।
तुम्हारा सत्स्वरूप पूणथ आनन्द है।
तुम सत्त्व से उत्पन्न हुए हो।
तुम स्फनटक तऱ् नहम के समान ि ु हो।
तुम्हारी ि द्धि अननवथचनीय है।
तुम कुछ भी कर सकते हो।
तुम वसुतुओं ंको बना तऱ् नबगाड सकते हो।

रि और तम की संगनत में पड कर
इद्धन्द्रयों ंतऱ् नवषयों ंसे मैत्री कर
तुमने अपने को नबगाड िाला है।
तुम अपने नदव्य स्वरूप को पूणथतिः
नवसमृत कर चुके हो।
कुसंग ने तुम्हें दूनषत कर िाला है।
कुवृनत्तयों ंने तुम्हें भ्रष्ट कर नदया है।

तुम एक बार काम से प्रलोनभत हुए रे्; अ
ब तुम काम के दास बन चुके हो।
तुम बहुत ही प्रिान्त, ननश्चल तर्ा अनवकुषि रे्;
कामनाओं ंने अब तुम्हें अिान्त बना िाला है।
तुम एक बार परम प्रभु के बहुत ही सनन्नकट रे्;
सांसाररकता ने तुम्हारे हृदय को अन्धा बना िाला है
और तुम्हें प्रभु से दूर ले गयी है।
सन्त-महात्माओं ंकी संगनत करो;
रि, तम और इद्धन्द्रयों ंकी संगनत से दूर रहो।
कामनाओं ंके दूषणों ंसे अपने को मुि करो।
तुम अपनी आद्य द्धस्र्नत को पुनिः प्राप्त कर सकते हो;
तुम अपने मूल मधुर घर को पहुँच सकते हो।

तुम्हारी दुबछलताएँ

रे मन! तुम इस भूलोक में सवाथनधक मूखथ हो!
तुम सुस्त, िडमनत तर्ा दुराग्रही हो;
तुमने ज्ञानीनों ंकी वाणी कभी नहीं ंसुनी;
तुम्हारे अपने ही मूखथतापूणथ ढंग हैं;
तुम सन्तों ंके सत्संग में सद्धम्मनलत होना नहीं ंचाहते हो;
तुम महात्माओं ंको नापसन्द करते, उनसे घृणा करते
और उनकी ननन्दा करते हो;
तुम समाि के तलछट हो;
तुम सदा गन्दगी में रंगरनलयाँ करना चाहते हो।
तुम अपने दोषों ंका कभी पता नहीं ंलगाते,
नकन्तु तुम दूसरों ंके दोषों ंको अनतरंनित करते हो;
तुम उन दोषों ंको अध्यारोनपत भी करते हो।
तुम दूसरों ंकी प्रिंसा कभी सुनना नहीं ंचाहते हो,
तुम आत्मश्लाघा चाहते हो।
तुम चतुराई से अपने दोषों ंको नछपाना चाहते हो।
तुम भगवान् के यिस्वी चरणों ंका नचन्तन कभी नहीं ंकरते हो,
नकन्तु तुम सभी प्रकार की ननकम्मी चीिों ंके नवषय में सोचते हो।
तुम िानते हो नक परम प्रभु के ध्यान द्वारा
तुम परमानन्द प्राप्त कर सकते हो;
तर्ानप तुम मटरगश्ती करने वाले गली के श्वान की भाँनत
इतस्ततिः मारे-मारे नफरते हो।
मैंने तुम्हें नझडका और फटकारा;
मैंने तुम्हारी भत्सथना की;
मैंने तुम्हें चेतावनी दी;
तर्ानप तुम अपनी ही आदतों ंसे नचपके रहते हो।

तुम्हारीन्क्त

मन! तुम िअि नहीं ंहो।
तुम क्लीव नहीं ंहो।
तुम नभकुषुक नहीं ंहो।
तुम नवषयों ंके दास नहीं ंहो।
तुम ििुि नहीं ंहो।
तुम नलनपक नहीं ंहो।
तुम ननधथन नहीं ंहो।
तुम सवथिद्धिमान् हो।
तुम ज्योनतयों ंकी ज्योनत हो।
तुम सूयों के सूयथ हो।
तुम रााओं ंके राा हो।
भगवान् की समस्त सम्पनत्त तुम्हारी है।
तुम अमृत-पुत्र हो।
तुम अमरत्व की सन्तान हो।
तुम उपननषद् के 'अमृतस्य सूनुः' हो।
तुम साक्षात् िििुता हो।
तुम साक्षात् बल हो।
तुम आनन्द के स्रोत हो।
तुम आनन्द-सागर हो।
तुम अमरता के सरोवर हो।
तुम सुखि–ाद्धिन्त की सररता हो।
तुम िाद्धिन्त का आवास हो।
तुम मधुर सुमेल हो।
िओद्धिन्त तुम्हारा स्वरूप नहीं ंहै।
तुममें अतीद्धिन्द्रय-दृनष्ट है।
अष्ट नसद्धियाँ तुम्हारी हैं।
नवनननधयाँ तुम्हारी हैं।
ननणथय की िद्धियाँ
नववेक, नवचार,
नचन्तन, ध्यान,
परनवचार-ज्ञान, दूरसंवेदन,
नत्रकाल-ज्ञान-
ये सब तुम्हारी ही हैं।
ब्रह्माकार-वृनत्त
तुमसे ही उद्भूत होती है।

अन्तिःप्रज्ञा का द्वार तुममें है।
ज्ञान की कुंिी तुम्हारे पास है।
तुम प्रभुओं ंके प्रभु हो।

आनन्द का मागछ

हे मन!
मैं तुम्हें
िाश्वित आनन्द का पर् प्रदनिथत करूँगा।
इस पर् पर ननभीकतापूवथक प्रयाण करो
और अपने आवास को सीधे चले िाओ।

अब नवषय-पदार्ों का नचन्तन न करो।
इद्धन्द्रयों ंकी संगनत न करो।
रि और तम से अपने को मुि कर लो।
वासनाओं ंऔर लालसाओं ंको मार िालो।
अहंता और ममता त्याग दो।
तुम्हारा आचरण पनवत्र हो।
तुम्हारा व्यवहार भि हो।
तुम्हारी ननष्ठा द्धस्र्र हो।
अपने संकल्पों ंमें दृढ़ रहो।
सद्गुणों ंका पोषण करो।
दैननक आध्याद्धत्मक ननत्यक्रम में लगे रहो।
'बीस आध्याद्धत्मक ननयमों' ं का पालन करो।
प्रनतनदन दो घण्टे मन्त्र नलखो।
सत्यननष्ठ तर्ा अनहंसक रहो।
दो सौ माला िप करो।
प्रनतनदन एक घण्टे तक कीतथन करो।
गीता, भागवत,
उपननषद् तर्ा योगवानसष्ठ का स्वाध्याय करो।
एकादिी को उपवास करो।
सरल साद्धत्त्वक भोिन करो।
सभी नवषयों ंमें नमताचारी रहो।

प्रर्म सगुण साक्षात्कार करो।
यह तुम्हें 'साधन-चतुष्टय' से सम्पन्न बनाने
तर्ा ननगुथण साक्षात्कार करने में समर्थ बनायेगा।
एकमात्र भद्धि ही ज्ञान प्रदान करेगी।

शदव्य जीवन की मशहमा

हे मन! नदव्य िीवन की मनहमा,
नंकंनचत् सुनो।
तुम इसे अत्यनधक पसन्द करोगे;
तुम आनद्धन्दत होगे और नृत्य करोगे।
नदव्य िीवन की मनहमा
नपता की, तुम्हारे सृनष्टकताथ की,
तुम्हारे प्रभु की, तुम्हारे मूल कारण और आधार की,
मनहमा है।
तुम सदा िाद्धन्तमय रहोगे।
तुम सदा आनन्दमय रहोगे।
तुम प्रभु के सार् एक बन िाओगे।
कोई नचन्ता, परेिानी और उत्सुकता
तुम्हें प्रभानवत नहीं ंकरेगी
तुम क्षुधा तर्ा नपपासा से
असूपृष्ट रहोगे।

तुम भय, क्लाद्धन्त और रोग से
मुि रहोगे।
कोई ित्रु तुम पर आक्रमण नहीं ंकरेगा।
अणुबम तुम्हें स्पिथ नहीं ंकर सकेगा।
उष्णता तुम्हें उत्पीनडत नहीं ंकरेगी।
िीत तुम्हें संवेदनिून्य नहीं ंबनायेगा।
तुम गहरी ननद्रा लोगे।
तुम ननद्राहीन ननद्रा का आनन्द प्राप्त करोगे।
तुम समानध अनुभव करोगे।
वहााँ मत्कुण, वृनश्चक, सपथ, मिक नहीं ंहैं।
तुम अमरत्व-सुधा पान करोगे।

वहााँ न कोई िल-प्लावन है, न भूकम्प है,
वहााँ महामारी भी नहीं ंहै।
वहााँ कोई साम्प्रदानयक संघषथ नहीं ंहै।
वहााँ गुण्डानगरी नहीं ंहै।
वहााँ दंगा अर्वा हडताल नहीं ंहै।

वहााँ मधु की सररताएाँ प्रवानहत होती है।
तुम स्वनगथक नदव्यान्न
तर्ा समस्त ऐश्वयों का आनन्द भोगोगे।
तुम परम प्रभु के सार्
अपना एकात्म्य अनुभव करोगे।
इस पानर्थव लोक में
तुम्हारा कभी भी पुनिथन्म नहीं ंहोगा।
तुम अमर हो िाओगे।

नामामृत-पान करो

हे िडमनत मन!
प्रमाद को दूर फेंको।
भगवान् हरर का ध्यान करो।
हे मन! भिों ंको सुखप्रद
भगवान् हरर के नाम के
उस आयुवधथक अमर रसायन को,
उस भेषि को पान करो
िी मनुष् के भव-भय
और उसकी समस्त भ्राद्धन्तयों ं
को नष्ट करती है।

हे मन! श्रीकृष्ण के नाम की
नदव्य औषनध को पान करो,
िी निदव्य भाव-समानध के
प्रवाह को उद्दीप्त करती है,
िी कुिण्डनलनी िाग्रत करती
उसे सुषुम्ना नाडी से ऊपर उठाती है।
िी सिहस्रार चक्र से
अमृत-स्राव में सहायक होती है।

हे मन!
नवष्णु के नामामृत को पान करो।
भगवन्नाम-स्मरण के
अमृत से बढ़ कर
कोई रसायन नहीं ंहै।
नाम तुम्हें उस पार
ननभथयता और अमरता के तट पर
पहुँचायेगा।

मन-मन्न्दर

हे मन! प्रभु का पावन-नाम पान करो।
कुसंगनत से बच कर रहो।
चाय, मनदरा और धूम्रपान का पररत्याग करो।
तम्बाकू तर्ा मूल्यवान् वस्त्र पहनना छोड दो।
साधारण वस्त्र पहनो। 'सादा िीवन उच्च नवचार' रखो।

सन्त-महात्माओं ंऔर भिों ंका
सत्संग करो।
भगवच्चचाथ सुनो।
काम, क्रोध और लोभ को दूर भगा दो।
अपने आवास को पनवत्र रखो।
तभी भगवान् तुम्हारे मन-मद्धन्दर में ननवास करेंगे।
िुि मन
प्रेम-गृह है।
ईष्ाथ और अनभमान के
बिी ननकाल दो।
तभी मेरे प्रभु
तुममें ननवास करेंगे।
प्रेम-ज्योनत को प्रज्वनलत कर
उनके रािप्रासाद को प्रकानित करो।

सतो ोंकी सेवा करो

हे मूखथ मन!
तुम नवषय-पदार्ों में
कण-मात्र सुख की आिा नहीं ंरख सकते हो।
यनद तुम अब भी आिा रखते हो
तो सभी व्यर्थ की आिाएँ, त्याग दो।
यह िल को मन्न कर
नवनीत प्राप्त करने का सा-प्रयास है।
यह चातक पक्षी का
धूम से िल पाने का प्रयत्न है;
उसके नेत्र नबगड िायेंगे।
यह मृगमरीनचका से िल पीने का-सा
अर्वा सीपी से रित प्राप्त करने-सा प्रयत्न है।
हरर के चरणों ंका नचन्तन करो,
उनके नाम का िप करो,
सन्तों ंऔर भिों ंकी संगनत में रहो।
ननयनमत कीतथन करो,
प्रभु के रूप का ध्यान करो,
सन्तों ंकी सेवा करो,
तुम आनन्द का उपभोग करोगे।

चेतावनी

हे मन! भद्धि-मागथ तर्ा भिों ंकी संगनत का आश्रय लो।
तब श्री हरर तुम्हारे अन्तिःकरण में अपना

पनवत्र आवास बनायेंगे।
मनुष् तऱ् पुिओं ंके दुरुपयोग को सदा के नलए त्याग दो;
महत्तम से ले कर कुषुितम तक सभी से प्ेरेम करें,
उनकी प्रिंसा करें।
प्रभात-वेला में, हे मन! राम का दत्तनचत्तता से नचन्तन करें;
तब धीमी नकनुतु श्रव्य वाणी से राम के मधुर नाम का उच्चारण करें।
सदाचार तऱ् श्ेरेय को कभी एक क्षण के नलए भी न त्यागें;
भूलोक के सभी मानव धमथपरायण व्यद्धि को
परम भाग्यिाली घोनषत करते हैं।
हे मन! कुवासनाओं ंको कभी प्रश्रय न दो।
हे मन! इसी प्रकार पापमयी मनोवृनत्त कभी न रखो।
मन! नैनतकता तऱ् सदाचार का कभी पररत्याग न करो;
तऱ् सदा अन्दर ही अन्दर सत्य के सार का अनुभव करो।
हे मन! तुम्हें सभी पापमय उद्देश्यों ंको त्याग देना चानहए;
िुि तऱ् सच्ेचे उद्देश्यों ंमें िीवन ननष्ठा रखो।
ऐद्धन्द्रक सुखों ंकी व्यर्थ कल्पना को त्याग दो;
इसमें आसद्धि िीवन-भर के नलए लज्जा
तऱ् अनन्त ननन्दा लाती है।
हे मन! क्रोध न करो, यह अकर्नीय हाननयों ंसे भरा हुआ है;
रंग-नवरंगी मोहकता से अपनी कामनाओं ंको
कभी भी नवकृत न करो।
तुम अपने िीवनपयथन्त
अनभमान और ईष्ाथ को कभी भी, नंकंनचत् भी
प्रवेि-मागथ न दो।
िीवन में उदात्त आदिथ की कल्पना करो,
नवश्व के सभी दुव्यथवहारों ंको धैयथपूवथक स्वीकार करो।
तुम मधुर वाणी सदा बनाये रखो,
क्ोंनक मधुरता मनुष् के हृदय के अन्ततथम
प्रकोष्ठ तक पहुूँचती है।
हे मन, ऐसे भि तऱ् पनवत्र कायथ ही करो;
िी तुम्हारे यि को मरणोपरान्त भी सदा बनाये रखें।
चन्दन की भाूँनत ननिःस्वार्थ सेवा में अपने को क्षीण कर िालो;
अपने अन्ततथम हृदय में नवश्व-कल्याण के नलए प्रार्थना करो।
हे मन! पानर्थव सम्पनत्त तऱ् नननध का लोभ न करो;
स्वार्थपरायण प्रकृनत को,
हे मन! अत्यनधक ननदथयतापूवथक बनहष्कृत कर दो।
मन के लोभ की यनद पूनतथ न हुई तो वह महान् िोक लाता है;
पापमय कमों से बाद में तीव्र पश्चात्ताप के कारण
हृद्-दाह उत्पन्न होता है।
अपने प्ेरेम को कभी-कभी भगवान् पर प्रवानहत करो;
िीवन के उतार-चढ़ाव को

ाद्धिन्त तर्ा ननभीकता से स्वीकार करो।
भौनतक िरीर की वेदनाओं ंको नगण्य समझो;
क्ोंनंक तुम अपने सत्स्वरूप में प्रकृनत के अनधपनत हो।

हरर के चरणो ोंमें शविाम करो

हे मन! तुम्हारा सदा ही यह सोचने का स्वभाव रहा है
नक पत्नी, सन्तान तर्ा बूँगले
तुम्हारी परम सम्पनत्त हैं।
तुम परम प्रभु तर्ा सन्तों ंके समु्मुख
नत-मस्तक होने में असफल रहे हो।
हे मेरे मन! हरर के चरणों ंमें नवश्शश्राम करो।
हे मन! यह िरीर ननश्चय ही भूलुद्धण्ठत होगा।
ीिन प्रनतक्षण क्षीण होता िा रहा है;
काल सपथ उसे ननगल रहा है।
प्राण नकसी भी क्षण नवदा हो सकते हैं।
तुम ननननश्चन्त तर्ा नवनोदिील हो।
तुम मूखथ और िडमनत हो।
हे मन! तुम अने्धे हो।
तुम केवल वसु्तुओं ंके आिम्बर को देखते हो।
तुम नहीं ंदेखते नक िीवन का अवसान ननकट आ रहा है।
मृतुयु प्रच्छन्न रूप से ननकट आती िा रही है।
हे मन! अपनी अज्ञान-ननिा से िग िाओ
और परम कृपालु हरर का स्मरण करो।
वैभवपूणथ हरर के अनतरर
तुम्हारे नलए कोई आिा नहीं ंहै।
भ्राद्धन्त के आवरण को नवदीणथ कर दो
और हरर की िरण लो।
निवानन्द कहते हैं नक
तभी तुम भाग्यिाली होंगें।

तुम क्यो ोंशविरण करते हो ?

हे मन! साधना करने पर भी
और महात्माओं ंके सत्संग-लाभ उठाने पर
तुम अब भी भ्राद्धन्त में ही पडे हो।
हे मन! तुम यह क्ों ंभूलते हो
नक यह िगत् भगवान् हरर की अनभव्यद्धि है?
यद्यनप तुम िानते हो
नक सभी प्रभु हरर के रूप हैं नफर तुम क्ों
ंकु्रि होते हो?

तुम हरर को पयुथनषत कदली-फल अनपथत करते हो
िो समस्त नवश्व को
सभी प्रकार के खाद्य-पदार्ों को देता है।
तुम प्रभु हरर को व्यर्थ ही
नमष्ठान्न, फल आनद नैवेद्य अनपथत करते हो।
उन्ें भद्धि-सुधा का भोग चढ़ाओ
और सदा-सवथदा के नलए सुखी हो िाओ।

कामवासना का बशलदान चढाओ

हे मन! तुम इतना क्ों नचद्धन्तत होते हो? सभी
नचन्ताओं का पररत्याग करो।
भगवान् हरर के नाम का िप करो।
एक नीरव स्र्ान में ध्यान में बैठो। एकान्त में भगवान्
की पूिा करो,
निससे नक कोई भी िान न सके।
पूिा की सब धूमधाम से तुम अनभमानी बनोगे।
तुम पुिओं की बनल क्ों देते हो?
अहंकार, राग-द्वेष और कामवासना की बनल दो।
ढोलक, मृदंग और घण्टे की क्ा आवश्यकता है?
अपने हार्ों से तानलयाँ बिाओ
और अपने मन को उनके चरणों में लगा दो।
तुम दीप, बत्ती और नवद्युज्ज्योनत से
उन्ें ज्योनतत करने का क्ों प्रयास करते हो?
मन-रूपी रत्निनटत दीप को िलाओ
और इसकी द्युनत को अहननथि प्रसाररत होने दो।

मन तर्ा इन्द्रियों के प्रशत-१

हे मन! तुम मूखथ हो। तुम मुझे इद्धन्द्रयों की वीनर् में घसीट लाये हो और कलंनकत बनाया है। मैं भनवष् में तुम्हारी संगनत नहीं करूँगा।

तुम आवारागदथ हो। तुम नटखट मकथट हो। तुम गनलयों में नफरने वाले श्वान हो। तुम गन्दगी में रंगरनलयाँ मनाने वाले िूकर हो। तुम चररत्रहीन नीच हो। तुम घुमक्कड हो।

तुम आनन्द से उत्पन्न हुए हो। तुम्हारा कुल बहुत ही उच्च है। तुम्हारे नपता ब्रह्म हैं। तुमने एक बहुत ही उदात्त, प्रख्यात तर्ा सभ्य पररवार में िन्म नलया है, तर्ानप तुमने अपने को और अपनी ननकम्मी संगनत से मुझे भी भ्रष्ट कर िाला है। तुम्हारी माँ माया भी बहुत ही उच्च पररवार में उत्पन्न हुई है। वह ब्रह्म की पत्नी है।

तुम्हारा स्वभाव ही बाह्य ऐद्भिन्द्रक नवषयों ंकी ओर भागना है। निस प्रकार िल अपने स्वभाववि नीचे की ओर अप्रयास ही प्रवानहत होता है, वैसे ही तुम भी अपने स्वभाववि नविनिील सांसाररक पदार्ों की ओर भागते हो। तुम्हें धक्के, पेंडे तर्ा ठोकरें लगती हैं, तर्ानप तुम उन्हीं ंपुरानी चिीों ंको बार-बार दोहराते रहते हो। तुम अभ्यानसक अपराधी के समान बन गये हो। नकतनी ही मात्रा में परामिथ तर्ा भत्सथना से तुम्हें कुछ लाभ नहीं ंहुआ है और न उससे तुम्हारा स्वभाव तर्ा आचरण ही सुधरा है। तुम्हें नधक्कार है।

अब मैं तुमसे अपने को पूणथतया असम्बि बना दूँगा। मैं तुम्हें अकेला छोड दूँगा। तुम िैसा भी चाहो वैसा कर सकते हो। तुमसे नवदायी लेता हूँ। मैं अपने अमरत्व तर्ा िाश्वत आनन्द के मूल परम धाम को िा रहा हूँ।

हे कणथ! तुम भी मन की संगनत से नबगड चुके हो। तुम्हें दूसरों ंकी ननन्दा तर्ा संसार के सभी प्रकार के समाचार सुनने में अत्यनधक आनन्द नमलता है; नकन्तु तुम भगवान् की लीला तर्ा कीतथन, धानमथक प्रवचन तर्ा उपदिे सुनने में इतना अनधक आनन्द नहीं ंलेते।

हे नेत्र! तुम्हें भगवान् के नचत्रों,ं मद्धन्दर में प्रभु की मूनतथयों,ं सन्तों ंतर्ा महात्माओं ंके दिथन करने में रुनच नहीं ंहै; नकन्तु तुम द्धस्त्रयों ंको देखने में पूणथतया तल्लीन रहते हो।

हे नानसके! तुम इत्रों,ं आमोहन (लैवेण्डर) आनद की सुगन्ध सूँघने में बहुत ही प्रसन्न होती हो; नकन्तु तुम भगवान् को अनपथत पुष्पों ंआनद के मधुर सौरभ को सूँघने में कोई रुनच नहीं ंप्रदनिथत करतीं।ं

हे निह्वे! तुम नमष्ठान्न, फल तर्ा अन्य सब स्वानदष्ट पकवान खाने में प्रसन्नता से नाचने लगती हो; नकन्तु मद्धन्दर में भगवान् का चरणामृत तर्ा प्रसाद ग्रहण करने में तुम्हें प्रसन्नता नहीं ंहोती।

हे त्वचे! तुम द्धस्त्रयों ंतर्ा अन्य कोमल पदार्ों को स्पिथ करने में आनद्धन्दत होती हो; नकन्तु तुम्हें भगवान् तर्ा महात्माओं ंके चरण स्पिथ करने में आनन्दानुभूनत नहीं ंहोती।

हे वाग्-इद्धन्द्रय! तुम प्रनतनदन सभी प्रकार का अनापिनाप बकती हो। तुम दूसरों ंको गाली देने, अपवाद फैलाने तर्ा पैिुन्य में आह्लानदत होती हो; नकन्तु तुम्हें भगवन्नाम लेने, िप करने तर्ा गीता और अन्य पनवत्र ग्रन्ों ं का स्वाध्याय करने में कुछ आनन्द नहीं ंनमलता।

हे हार्! तुम उत्कोच लेने, दूसरों ंको मारने, दूसरों ंकी सम्पनत्त चुराने तर्ा द्धस्त्रयों ंको स्पिथ करने में बहुत प्रसन्न होते होः नकन्तु तुम दान करने, ननधथनों ंतर्ा साधुओं ंकी सेवा करने, भगवान् की पूिा करने तर्ा उन्ें पुष्प अनपथत करने में आनद्धन्दत नहीं ंहोते।

हे पाँव! तुम चलनचत्रों,ं गोष्ठी-गृहों,ं आहार-गृहों ं(रेस्तराँ) तर्ा आवास-गृहों ंमें िाने में आनन्द मानते हो; नकन्तु तीर्थस्र्ानों,ं मद्धन्दरों ंतर्ा आश्रमों ंमें िाने में तुम्हें आनन्द नहीं ंनमलता।

हे इद्धन्द्रयो ! भनवष् में समुनचत व्यवहार करो। यह तुम्हारे नलए अद्धन्तम अवसर है। अपने को सुधारो तर्ा सुयि कमाओ। यनद तुम भगवान् के नलए िीवन नबताओगी और उनकी पररचयाथ करोगी तो तुम सुखी रहोगी। सभी दुिःख समाप्त हो िायेंगे।

तुम सबको अद्धन्तम नमस्कार!

मन तरा् इन्यियो ोंके प्रशत-२

हे मन!
सदा भगवान् हरर का स्मरण करो।
हरर के नाम का िप करो।
उनके चतुभुथि रूप का ध्यान करो।
अपने मन को उनके चरण-कमलों ंमें द्धस्र्र करो।

हे निह्वे!
सदा अचु्युत के नाम और मनहमा का गान करो।
कीतथन और भिन करो। उनके प्रसाद तरा् चरणामृत ग्रहण करो।

हे श्रोत्रो !
किव की लीला
तरा् हरर-कीतथन श्रवण करो।

हे नेत्रो!
मुकुन्द की मूनतथ के दिथन करो।

हे नानसके!
श्रीकृष्ण की पूिा में उपयुि
तुलसी-पत्र तरा् पुष्पों ंकी गन्ध लो।

हे हार्ो!
गोनवन्द को पुष्प अनपथत करो।
श्रीराम की आरती उतारो।
मद्धन्दर में झाड दो।
मद्धन्दर के दीपकों ंको साफ करो।
पूिा के नलए पुष्प तरा् तुलसी-पत्र लाओ।
पाण्डुरंग की पूिा में
दान करो और सेवा करो।

हे पाँव!
मद्धन्दर के चतुनदथक् प्रदनक्षणा करो।
नवषु्णु के मद्धन्दरों ंकी तीर्थयात्रा करो।

हे िरीर!
भिों, ं सन्तों ंऔर गुरु की सेवा करो।
ननधथनों ंऔर रोनगयों ंकी सेवा करो।

भगवान् से प्रार्छना

हे करुणामय प्रभो!
नंकंनचत् मेरी प्रार्थना सुननए।
मन बहुत ही नटखट है।
यह अवज्ञाकारी है।
मैंने मन को फटकारा।
मैंने उसे चेतावनी दी।
मैंने उसे सपरामिथ नदया।
नकन्तु उसके अपने ही ढंग हैं।
मैंने मन को स्पष्ट रूप से
अनतसार होने पर
लिाूनि खाने के नलए कहा।
प्रसव पीडा से पीनडत मनहला की तरह
उसने कहा, 'बहुत अच्छा।'
नकन्तु वह पुनिः लिाूखिाता है।
मैंने मन को
दूसरों ंकी ननन्दा न करने को कहा।
नकन्तु वह अपना यह स्वभाव नहीं ंछोडता।
मैंने कुरुि न होने को
मन को बार-बार कहा।
नकन्तु वह कभी साधारण-सी बात पर
रुष्ट हो उठता है।
मैं मन को ननयद्धन्त्रत नहीं ंकर सकता।
आप अन्तयाथमी
और मन के प्ेरेरक हैं।
एकमात्र आप ही उसे ननयद्धन्त्रत कर सकते हैं,
कृपया आप इसे मेरे नलए करें।

परररनिष्ट-२

अतीन्यि-सोंवेदन

व्यन्क्तत्व

सामान्य बोलचाल में िब कोई व्यद्धि यह कहता है नक ि. टैगोर का व्यद्धित्व अच्छा है तो उसके कहने का यह ओिय होता है नक ि. टैगोर के बलवान्, हट्टा-कट्टा लम्बा आकार, सुन्दर रूप-रंग, मनोहर नानसका, ति
तरा् चमकदार नेत्र, नवसूतृत वक्षिःस्र्ल, हृष्ट-पुष्ट िरीर, सुिौल अंग, घुूँघराले बाल आनद-आनद हैं। एक व्यद्धि को दूसरे व्यद्धि से िो प्रभेद करता है, उसे व्यद्धित्व कहते हैं। वास्तव में, व्यद्धित्व इससे कुछ अनधक होता है। इसमें व्यद्धि के चररत्र, बुद्धि, उदात्त गुण, नैनतक आचरण, बौद्धिक उपलद्धियाूँ, कुछ प्रभाविाली योग्यताएूँ,
नविेष अनभलक्षण, मधुर ओिस्वी वाणी आनद का समाविे है। ये सब वसुतुएूँ नमल कर नकसी व्यद्धि का व्यद्धित्व संघनटत करती हैं। इन सब वसुतुओं ंके योग से व्यद्धि का व्यद्धित्व बनता है। केवल िारीररक अनभलक्षण व्यद्धित्व नहीं ंबना सकते।

निसे आप छाता कहते हैं, वह वसुतुतिः एक लम्बी छडी तरा् काला कपडा और लोहे के पतले टुकडे हैं।
इसी भाूँनत निसे आप 'व्यद्धित्व' कहते हैं, वह वसुतुतिः बाह्य भौनतक िरीर, मद्धस्तष्क, स्नायु-तन्त्र तरा् मन है निसका अनधष्ठान मद्धस्तष्क है।

यनद कोई व्यद्धि अनेक लोगों ंको प्रभानवत कर सकता है तो हम कहते हैं नक उस व्यद्धि का व्यद्धित्व चुम्बकीय है। पूणथ नवकनसत योगी अर्वा ज्ञानी इस संसार का महत्तम व्यद्धित्व है। भले ही उसकी लम्बाई छोटी

हो, यह कुरूप भी हो और उसने नचर्डे पहन रखे हों;ं पर वह महान् व्यद्धित्व वाला है, महात्मा है। सहस्रों ंलोग उसे घेरे रहते हैं और सम्मान देते हैं। निस व्यद्धि ने सदाचार अर्वा यम-ननयम के ननरन्तर अभ्यास द्वारा नैनतक पूणथता प्राप्त कर ली है, उसका भी व्यद्धित्व चुम्बकीय होता है। वह करोडों ंलोगों ंको प्रभानवत कर सकता है; नकनुतु वह उस ज्ञानी अर्वा योगी से ननम्न है निसे पूणथ आत्म-ज्ञान प्राप्त है।

ाा. सैमुअल िान्सन की आकृनत भद्दी री, उनके तोंदं री तरा उनके अंग कुिौल रे; नकनुतु वह उस युग के महत्तम व्यद्धित्व रे। वह न तो योगी रे और न ज्ञानी ही; नकनुतु उनमें बौद्धिक योग्यताएँ रीं।ं वह महान् ननबन्धकार रे। अँगरेिी भाषा पर उनका पूणथ अनधकार रा। वह अपनी िब्दािम्बर िैली के नलए प्रख्यात है, यह ान्सिोननयन अँगरेिी कहलाती है। िरा, उनकी कुछ पंद्धियों ंको देखें: "क्ा आप मेरी उँगनलयों ंको अपनी सुगद्धन्धत अवतलता में प्रवेि करने और वहाँ उन कुछ चूनणथत परमाणुओं ंको ननकाल लाने देने की कृपा करेंगे िो मेरे नासा-प्रोतुंग में आरोहण कर मेरे सभी प्राण-स्नायुओं ंमें बडी गुदगुदाहट उत्पन्न कर रहे हैं?"

धनाढ्य व्यद्धियों ंमें भी कुछ व्यद्धित्व होता है। यह 'घनि–द्धि' के कारण होता है। वे व्यनभचारी हो सकते हैं। व्यद्धि के व्यद्धित्व के ननमाथण में धन का भी अपना भाग होता है। यह उसमें एक प्रकार से रंग भरता है। उनकी दानिील प्रकृनत उनकी व्यनभचारी प्रकृनत को आच्छानदत कर देती है तरा चारों ंओर से सौरभ नबखेरती है। प्रभु यीिु कहते हैं: "दानिीलता पाप-रानि को आच्छानदत कर देती है।"

चररत्र व्यद्धि को सुदृढ़ व्यद्धित्व प्रदान करता है। लोग सच्चररत्रवान् व्यद्धि का सम्मान करते हैं। नैनतक व्यद्धि सवथत्र ही सम्मान के अनधकारी होते हैं। िो ईमानदार, ननष्कपट, सत्यिील, दयालु तरा उदार हृदय होता है, वह सदा लोगों ंके सम्मान का अनधकारी होता है तरा उन्हें प्रभानवत कर सकता है। सत्त्वगुण व्यद्धि को नदव्य बनाते हैं। िो सत्य बोलता तरा ब्रह्मचयथ का पालन करता है, वह महान् तरा गनतिील व्यद्धित्व वाला बन िाता है। यनद वह एक िब्द भी बोले तो उसमें िद्धि होती है तरा लोग चुम्बनकत हो िाते हैं। यनद व्यद्धि अपने व्यद्धित्व का नवकास करना चाहता है तो चररत्र-ननमाथण उसके नलए परम आवश्यक है। ब्रह्मचयथ चुम्बकीय व्यद्धित्व का मूल है। ब्रह्मचयथ के अभाव में िसि व्यद्धित्व का नवकास सम्भव नहीं ंहै।

व्यद्धित्व का नवकास नकया िा सकता है। इसके नलए सद्गुणों ंका अभ्यास अपररहायथ है। व्यद्धि को सदा प्रफुल्ल रहने का प्रयास करते रहना चानहए। एक रूखा तरा नवषण्ण व्यद्धि लोगों ंको आकनषथत तरा प्रभानवत नहीं ंकर सकता है। वह समाि में संसगथि पररीवी है। वह सवथत्र नवषण्णता ही फैलाता है। सेवाभाव, नम्रता तरा आज्ञाकाररता से युि प्रफुल्ल प्रकृनत वाला व्यद्धि लाखों ंलोगों ंको प्रभानवत कर सकता है। 'सिातीय वसुतु सिातीय वसुतु को ही आकनषथत करती है' - यह ननयम भौनतक तरा माननसक िगत् में कायथ करता है। िसि व्यद्धित्व वाले व्यद्धि को लोगों ंको आमद्धन्त्रत करने की आवश्यकता नहीं ंहोती है। पुष्पों ंके द्धखलते ही िैसे मधुमद्धक्खयाँ आ कर बैठ िाती हैं; वैसे ही लघुतर मन वाले लोग स्वेच्छा से ही िसि व्यद्धित्व वोले मनुष्यों ं की ओर आकनषथत होते हैं।

िसि मधुर वाणी, संगीत, फनलत ज्योनतष, गनणत-ज्योनतष, हस्तरेखा–ास्त्र, कला आनद का ज्ञान मनुष्य के व्यद्धित्व को बढ़ाते हैं। व्यद्धि को दूसरों ंके सार व्यवहार करने तरा अपने को उनके अनुकूल बनाने का ज्ञान होना चानहए। आपको मधुर तरा धीरे से बोलना चानहए। इसका बहुत भारी प्रभाव पडता है। आपको भि, निष्ट तरा सुसभ्य होना चानहए। आपको दूसरों ंके सार सम्मान तरा ध्यान के सार व्यवहार करना चानहए। िो दूसरों ंका सम्मान करता है, उसे सम्मान नमलता है। नवनम्रता स्वयं ही सम्मान लाती है। नवनम्रता एक ऐसा गुण है िो दूसरों ंके हृदय को अपने वि में कर लेती है। नवनम्र व्यद्धि एक िद्धििाली चुम्बक है।

आपको लोगों ंसे नमलने का ढंग मालूम होना चानहए। आपको मालूम होना चानहए नक उनसे कैसे बातचीत की ाये तरा उनके सार कैसा व्यवहार नकया ाये। व्यवहार बहुत ही महत्त्वपूणथ है। एक उित, निद्दी तरा हठधमी व्यद्धि कभी भी ििि व्यद्धित्व वाला व्यद्धि नहीं ंबन सकता है। उसे सभी नापसन्द करते हैं।

आनन्दपूणथ प्रकृनत का नवकास करें। सदा प्रफुद्धल्लत तरा द्धस्मनतत मुखमुिा बनाये रखें। इससे आपको सुन्दर व्यद्धित्व प्राप्त होगा। लोग आपको बहुत पसन्द करेंगे। आपके वररष्ठ आपसे अत्यनधक प्रसन्न रहेंगे। सौम्य प्रकृनत तरा ालीन और ननरहंकारपूणथ स्वभाव रखें। आप सभी महत्त्वपूणथ व्यद्धियों ंके सार अपने समालाप में सफल होंगें। आप अपने समालाप-काल में उनके सार ो वाताथ करना चाहते हों, ं उसका नववरण नलख लें। एक छोटा स्मरण-पत्र अपनी िब में रखें, नवषय को भली-भाँनत स्मरण रखें तरा धीरे-धीरे और नरमी से बोलें। तब वह व्यद्धि आपकी बातें धैयथपूवथक सुनेगा। अपनी वाताथ में उते्तेनित न हो उठें। घबडायें नहीं। ं ननभीक रहें। व्यद्धि से ििि ही नमलें, उसे ननष्कपट भाव से सम्मान दें। नववाह की ोभायात्रा में गैस-बत्ती पकडने वाले लोकप्रनसि व्यद्धि की भाँनत सीधे न खडे हों। ं धीरे से भावपूवथक नतमस्तक हों। ं वह व्यद्धि अत्यनधक प्रसन्न होगा। उसे गम्भीर भाव के सार आपका स्वागत करने में प्रसन्नता होगी तरा आपको अपने समालाप में सफलता प्राप्त होगी। महत्त्वपूणथ नवषयों ंके सम्बन्ध में पहले वाताथ करें और पुनरीक्षण कर लें नक क्ा निन आठ नवषयों ंपर आप वाताथ करना चाहते रे, वे सभी समाप्त हो गये हैं। पाश्चात्य िगत में लोग व्यद्धित्व को पसन्द करते हैं; नकनुतु भारत में लोग वैयद्धिकता पसन्द करते हैं और ननश्चयपूवथक कहते हैं: 'अहं अद्धस्म' - निसका अर्थ है 'मैं अद्धस्तत्ववान् हूँ"। वे आत्म-साक्षात्कार के नलए व्यद्धित्व को नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं।

चुम्बकीय व्यद्धित्व से सम्पन्न बनने का प्रयत्न करें। उस नवलक्षण तरा रहस्यमय वैयद्धिक चुम्बकत्व से सम्पन्न बनने का प्रयास करें ो लोगों ंको आकनषथत तरा मोनहत करता है। वैयद्धिक प्रभाव के रहस्य को समझें। अपनी संकल्प–िद्धि नवकनसत करें। स्रनवत होने वाली िद्धि को सुरनक्षत रखें। दृष्ट-पुष्ट तरा फूलता-फलता स्वास्थ्य तरा उच्च मानदण्ड के बल तरा िौ का उपभोग करें तरा प्रते्येक व्यवसाय में सामानिक और नवत्तीय सफलता प्राप्त करें। यनद आप वैयद्धिक प्रभाव के आश्चयथिनक रहस्य को समझ सकते हैं तो आप अपने उपािथन की क्षमता की वृद्धि कर सकते हैं तरा अनधक व्यापक और सुखमय ीवन यापन कर सकते हैं।

ििि व्यद्धित्व आपकी अत्यनधक मूल्यवान् सम्पनत्त है। यनद आप चाहें तो इसका नवकास कर सकते हैं। लोकोद्धि है, "िहाँ चाह है, वहाँ राह है।" यह िौ भी उतनी ही सत्य है नितनी नक आनदम काल में री। नाम और यि का नविय-पत्र प्राप्त करें और गनतिील व्यद्धित्व के द्वारा ीवन में सफलता उपलि करें। इसे आप सम्पन्न कर सकते हैं। आपको इसे अवश्य सम्पन्न करना चानहए। अब आप नवज्ञान को ान गये हैं। मैं आपकी सहायता करूँगा।

सुझाव की िन्क्त

आपको सुझावों ंतरा मन पर पडने वाले उनके प्रभावों ंका सुस्पष्ट ज्ञान होना चानहए। आपको सुझावों ंके प्रयोग में सावधान रहना चानहए। कभी भी ऐसा अनुपयुि सुझाव न दें निसका नकसी व्यद्धि पर नवनािकारी पररणाम हो। इससे आप उस व्यद्धि को सवाथनधक क्षनत पहुँचायेंगे और उसका अपकार करेंगे। बोलने से पूवथ भली-भाँनत सोचें। अध्यापकों ंतरा प्राध्यापकों ंको सुझाव तरा आत्म-संसूचन का पूणथ ज्ञान होना चानहए। तभी वे छात्रों ंको सफल ढंग से निक्षा दे सकते हैं और उनें उन्नत बना सकते हैं। दनक्षण भारत में िब बचे्चे घर में रोते हैं तो माता-नपता उनें यह कह कर िराते हैं, "देखो बालू! दो आँखों ंवाला मनुष आ गया है। चुप रहो, नहीं ंतो मैं तुम्हें उस व्यद्धि को सौंप दूँगा।" "भूत आ गया है।" इस प्रकार के सुझाव बहुत ही नवनािकारी हुआ करते हैं। बालक भीरु बन ाता है। ििुओं ंके मन लचीले, सुकुमार तरा नमनीय हुआ करते हैं। इस आयु में संस्कार अनमट रूप से अंनकत हो ाते हैं। िब वे बडे होते हैं तो संस्कारों ंको पररवनतथत करना अर्वा उनें नमटाना असम्भव हो

ािा है। िब िनिु बढ़ कर पूणथ मनुष् बन िाता है तो वह कायरता प्रदनिथत करता है। माता-नपता को चानहए नक वे अपने बचे्चे के मन में साहस अनुप्रानणत करें। उन्ें कहना चानहए: "यहाँ एक नसंह है। इस नचत्र में नसंह को देखो। नसंह की भाँनत दहाडो। साहसी बनो। निवािी, अिुथन अर्वा क्लाइव के नचत्र को देखो। िूर-वीर बनो।" पाश्चात्य िगत् में अध्यापक बच्चों ंको युि-क्षेत्र के नचत्र नदखलाते हैं और कहते हैं: "िेम्स! इधर देखो। नेपोनलयन का नचत्रदेखा। उसकी अश्वारोही सेना को देखो। क्ा तुम प्रधान सेनापनत अर्वा पृतनापनत बनना नहीं ंचाहते हो ?" वे िनिुओं ंके मन में िैिवावस्र्ा से ही साहस अनुप्रानणत करते हैं। िब वे बडे होते हैं तो अनतररि बाह्य उद्दीपनों ं द्वारा ये संस्कार और िद्धििाली बन िाते हैं।

नचनकत्सकों ंको सुझाव-नवज्ञान का पूणथ ज्ञान होना चानहए। ननष्कपट, सहानुभूनतिील नचनकत्सक दुलथभ हैं। निन नचनकत्सकों ंको सुझाव का ज्ञान नहीं ंहै, वे भलाई की अपेक्षा हानन ही अनधक पहुँचाते हैं। वे रोनगयों ंको अनावश्यक भयभीत करके कभी-कभी उन्ें मार िालते हैं। यनद साधारण प्रकार की र्ोडी खाँसी हुई तो नचनकत्सक कहता है: "मेरे नमत्र, आपको क्षय रोग हो गया है। आपको भुवाली, द्धस्वट्ज़रलैण्ड या नवयना िाना चानहए। आपको टूयूबरकुनलन अन्तःक्षेपण का क्रम चलाना चानहए।" बेचारा रोगी भयभीत हो िाता है। उसमें यक्ष्मा का कोई भी लक्षण नहीं ंहै। साधारण रोग है। यह िीत के प्रभाव से छाती का सामान्य प्रनतश्याय रोग है। रोगी नचनकत्सक के अनुपयुि सुझाव के कारण भय तर्ा नचन्ता से वास्तव में यक्ष्माग्रस्त हो िाता है। नचनकत्सक को कहना चानहए र्ा: "कुछ नहीं ंहै। यह साधारण िुकाम है। कल तक आप नबलकुल ठीक हो िायेंगे। रेचक औषनध लें तर्ा गन्ध सफेदा के तेल का कि लें। अनुकूल भोिन करें। अच्छा होगा नक आि उपवास रखें।" ऐसा नचनकत्सक भगवान् ही है। उसकी पूिा करनी चानहए। नचनकत्सक कहेंगे: "श्रीमान् ! यनद मैं ऐसा कहूँ तो मेरा व्यवसाय िाता रहेगा। मैं इस संसार में कैसे ननवाथह कर सकता हूँ?" यह भूल है। सत्य सदा नवियी होता है। आप सहानुभूनतिील तर्ा दयालु हैं; लोग आपके पास भागे आयेंगे। आपका व्यवसाय तेि होगा।

सुझाव से भी उपचार होता है। यह ननरौषध नचनकत्सा है। यह सुझाव का नचनकत्सा नवज्ञान है। अचे्छे तर्ा िद्धििाली सुझाव से आप कोई भी रोग ठीक कर सकते हैं। आपको यह नवज्ञान सीखना होगा तर्ा इसका अभ्यास करना होगा। नवषम-नचनकत्सा (ऐलोपैर्ी), सम-नचनकत्सा (होनमयोपैर्ी), आयुवेनदक और यूनानी नचनकत्सा पिनत के सभी नचनकत्सकों ंको इस नवज्ञान को िानना चानहए। वे इस पिनत को अपनी पिनत से संयुि कर सकते हैं। इस उपयुि संयोग से उनका व्यवसाय तेि होगा।

दूसरों ंसे सुझावों ंसे सहि ही प्रभानवत न हो िायें। अपनी वैयद्धिकता का भाव बनाये रखें। एक िद्धििाली सुझाव यद्यनप प्रयोग-पात्र को तत्काल प्रभानवत नहीं ंकरता, तर्ानप यह यर्ा-समय नक्रयािील होता है। यह कभी व्यर्थ नहीं ंिाता है।

हम सब सुझावों ंके संसार में रह रहे हैं। दूसरों ंके साहचयथ से हमारे चररत्र में ननत्य अनिाने ही नकंनचत् पररवतथन होता रहता है। हम निनकी प्रिंसा करते हैं, अनिाने में ही हम उनके व्यवहार का अनुसरण करते हैं। हम प्रनतनदन निन लोगों ंके सम्पकथ में आते हैं, उनके सुझावों ंको नदन-प्रनत-नदन आत्मसात् करते रहते हैं। ये सुझाव हम पर प्रभाव िालते हैं। दुबथल मन वाला व्यद्धि सबल मन वाले व्यद्धि के सुझावों ंको स्वीकार करता है।

सेवक सदा अपने स्वामी के सुझावों ंसे प्रभानवत रहता है। पत्नी अपने पनत के सुझावों ंसे प्रभानवत रहती है। रोगी नचनकत्सक के सुझावों ंसे प्रभानवत रहता है। छात्र अध्यापक से प्रभानवत रहता है। प्रर्ा सुझावों ंकी उपि ही है। िो वस्त्र आप धारण करते हैं; रीनत, आचरण यहाँ तक नक िो भोिन आप ग्रहण करते हैं ये सब केवल सुझावों ंके पररणाम हैं। प्रकृनत अनेक प्रकार के सुझाव देती है। िुत गनत से प्रवानहत हो रही सररताएँ, द्युनतमान् सूयथ, सुरनभत पुष्प, उगते हुए वृक्ष-ये सब आपके अनवरत सुझाव दे रहे हैं।

प्राचीन काल के सभी ईदूित (पैगम्बर) सम्मोहन-नवद्या के ज्ञाता रे्। वे संसूचन-नवज्ञान से भली-भाँनत अवगत रे्। उनके ब्दिों ं में आश्चयथिनक ि द्धि होती री्। उनके उच्चाररत नकये हुए प्रते्येक ि ब्द में मायावी ि द्धि तरा् नवलक्षण आकषथण होता रा्। सभी श्रोता मन्त्र-मुग्ध हो िाते रे्। आध्याद्धत्मक उपदेिक दूसरों ंके मन में एक प्रकार का सम्मोहन उत्पन्न करता है। श्रोता उसके सुझावों ंके प्रभाव में आ िाते हैं।

प्रते्येक मुखररत िब्द में िद्धि होती है। िब्द में दो प्रकार के वृनत्तयाँ होती हैं : िद्धि-वृनत्त तरा् लक्षणा-वृनत्त। उपननषदों ंमें लक्षणा-वृनत्त स्वीकायथ है। 'वेदस्वरूपोऽहम्' का अर्थ यहाँ 'वेदों ंका मूतथ रूप' नहीं ंहै। यहाँ लक्षणा-वृनत्त 'ब्रह्म' को अनभव्यि करती है िो एकमात्र उपननषदों ंके स्वाध्याय द्वारा, एकमात्र िब्द-प्रमाण द्वारा उपगम्य है।

यहाँ िब्दों ंकी िद्धि पर ध्यान दें। यनद कोई व्यद्धि नकसी दूसरे व्यद्धि को 'साला' अर्वा 'बदमाि' अर्वा 'मूखथ' कहता है तो वह तत्काल क्रोधाविे में आ िाता है। लडाई नछड िाती है। यनद आप नकसी को 'भगवान्' अर्वा 'प्रभु' अर्वा 'महारािा' कह कर सम्बोनधत करें तो वह अत्यनधक प्रसन्न हो उठता है।

सम्मोहन-शवद्या

महत्तर मन लघुतर मन को प्रभानवत कर सकता है। यह सम्मोहन-नवद्या है। यह नंकंनचत् भी नया नवज्ञान नहीं ंहै। यह अनानद है। यह अनानद काल से वतथमान है। मेस्मर तरा् बे्रि ने ही इसका पनश्चमी देिों ंमें प्रचार नकया। नहन्दू ऋनष अनत-नवगत काल से ही इस नवज्ञान को िानते रे्। िमारुनीज़ तरा् सुकरात, नवश्वानमत्र तरा् पतंनिल महनषथ प्राचीन काल में ही सम्मोहन नवद्या का प्रयोग करते रे्। मैनचेस्टर के िल्य नचनकत्सक िेम्स बे्रि ने इस नवज्ञान का नाम नहप्नोनटज़्म (Hypnaotism) रखा तरा् पनश्चम में इस नवज्ञान की स्ापना की। नहप्नोनटज़्म िब्द की उत्पनत्त यूनानी भाषा से हुई है निसका अर्थ ननिा होता है।

मेस्मर दािथननक, नचनकत्सक तरा् ज्योनतषी रा्। उसका िन्म १७८४ में हुआ और उसकी मृतु्य १८१५ में हुई। उसने प्राणी-चुम्बकत्व का नसिान्त प्रवनतथत नकया। उसका नवश्वास रा् नक मनुष् में अलौनकक चुम्बकीय िद्धि है, निससे वह दूसरे व्यद्धियों ंको स्वस् तरा् प्रभानवत कर सकता है। उसने इस िद्धि का उपयोग अनेक रोगों ंके उपचार में नकया, मेस्मररज़्म (सम्मोहन नवद्या) उसके ही नाम से ज्ञात है।

सभी वाद्धियों ंके पास सम्मोहन िद्धि होती है। वे िाने अर्वा अनिाने में श्रोताओं ंके मन को वि में कर लेते हैं। श्रोतागण वाद्धियों ंके िद्धििाली भाषणों ंसे प्रभानवत हो िाते हैं। वे सब अस्ायी रूप से सम्मोनहत से हो िाते हैं। संसार के सभी धमोपदेिकों ंतरा् पैगम्बरों ंमें यह िद्धि असाधारण मात्रा में री्।

सुझाव सम्मोहन की सवथकुंिी है। सम्मोहक सुझाव देता है और प्रयोग-पात्र ननननवथवाद रूप से व्यवहार करता है। लघुतर मन बृहत्तर मन की आज्ञाओं ंका असद्धन्दग्ध रूप से पालन करता है। सुझाव वह नवचार है निसे प्रयोगकताथ प्रयोग-पात्र को सूनचत करता है। सुझाव नवज्ञान है। व्यद्धि को कौिलपूणथ ढंग से सुझाव देने में बहुत ही ननपुण होना चानहए। हम सुझावों ंके िगत् में तरा् सम्मोहन के मायावी आकषथण तरा् प्रभाव के के्षत्रों ंमें रहते हैं। सम्मोहन इस संसार में महान् िद्धि है। हम सब माया के िादू से सम्मोनहत हैं। हमें आत्म-ज्ञान प्राप्त करने के नलए अपना सम्मोहन दूर करना होगा। वेदान्त सम्मोहन दूर करने के नलए िद्धििाली सुझाव देता है। सम्मोहन मन की एक अवस्ा है निसमें वानचक तरा् चाकु्षष सुझाव, चाहे सच हों ंअर्वा न हों,ं सच के रूप में स्वीकार नकये िाते हैं। इन सुझावों ंको कायाथद्धन्वत करने की अप्रनतरोध्य इच्छा होती है। संकल्प-िद्धि तरा् संसूचन िद्धि का परस्पर बहुत ननकट का सम्बन्ध है।

प्रयोगकताथ स्फनटक पर एकटक देखने तर्ा धारणा की अन्य नवनधयों ंकी साधना द्वारा अपनी सम्मोहन ि्द्धि नवकनसत करता है। प्राणायाम भी इस िद्धि के नवकास में बहुत सहायक होता है। ब्रह्मचयथ भी बहुत आवश्यक है। लम्पट व्यद्धि िद्धिाली सम्मोहक नहीं ंबन सकता है।

व्यद्धि टकटकी लगा कर देखने अर्वा सुझाव अर्वा हस्त-लाघव से सम्मोनहत नकया िा सकता है। प्रयोगकताथ पात्र के समुमुख कुछ हस्तलाघव करता है और पात्र सम्मोनहत अवस्र्ा में चला िाता है। नवपरीत नदिा में हस्तलाघव पात्र को सामान्य चेतना की दिा में ला देता है। यनद सम्मोहक िद्धिाली व्यद्धि है तो कभी-कभी वह टोली अर्वा समूह के बहुत से लोगों ंको सम्मोनहत कर सकता है। िो व्यद्धि सम्मोहक के सुझावों ंका प्रनतरोध करता है, वह सहि में सम्मोनहत नहीं ंनकया िा सकता। यनद व्यद्धि सम्मोहक में नवश्वास करता है और सोचता है नक वह सम्मोनहत नकया िा सकता है तो वह उसके सम्मोहन तर्ा प्रभाव में िीघ्र आ िाता है।

एक दूसरे प्रकार का भी सम्मोहन होता है निसे मंच-सम्मोहन कहते हैं। इसमें सम्मोहक सारे श्रोताओं ंको सम्मोनहत करता है तर्ा अनेक हस्तलाघव नदखाता है। वह एक स्त्री को एक छोटे से तंग सन्दूक में खडी हुई दिा में रखता है, उसके हार्ों ंको बाँध देता है और सन्दूक को बन्द कर देता है और तब एक आरी से सन्दूक को काटता है। तत्पश्चात् वह टूटे हुए सन्दूक को खोलता है और वह स्त्री नबना नकसी क्षनत के बाहर आती है। इंग्लैण्ड में एक प्रख्यात फकीर अपने हार् में रजु्जु ले कर सभामंच पर चढ़ गया। उसने रजु्जु को आकाि में फेंक नदया, उसके द्वारा आकाि में चढ़ गया और अदृश्य हो गया। यह मंच-सम्मोहन है। यह फकीर का प्रनसि रजु्जु हस्तलाघव है। कैमरे की पनट्टका में कोई छाप नहीं ंर्ी। तर्ानप यह हस्तलाघव ही है। एक सम्मोहक एक बालक को सम्मोनहत कर उसके निर और पाँवों ंको दो कुनसथयों ंपर रख देता है। तत्पश्चात् वह उसके िरीर पर भारी भार रखता है। बालक का िरीर नहीं ंझुकता। वह श्रोताओं ंको अपने दोनों ंहार्ों ंकी उँगनलयों ंको िकडने के नलए कहता है और नवद्युत् की प्रबल धारा उनसे प्रवानहत करता है। वे सब धारा के धक्के को वास्तव में अनुभव करते हैं। वह पहले अपने ही हार्ों ंमें नवद्युत्-धारा उत्पन्न करता है और पूरी िद्धि से सोचता है नक धारा दूसरों ंके हार्ों ं में प्रवानहत हो।

सम्मोहन बालकों ंके बुरे स्वभावों ंके सुधार तर्ा वातोन्माद तर्ा अन्य स्नायनवक रोगों ंके उपचार में बहुत ही लाभदायक है। इससे अफीम तर्ा मद्यपान की आदत भी दूर की िाती है। सम्मोहन की इस िद्धि का गलत मागों में दुरुपयोग नहीं ंकरना चानहए। इससे उसका अप्रत्यानित पतन होगा। िहाँ कहीं ंभी िद्धि होती है, उसके सार्-ही-सार् उसके दुरुपयोग का अवसर भी रहता है, प्रलोभन भी होते हैं। व्यद्धि को बहुत ही सावधान रहना चानहए।

सम्मोहक घडी की सेकेण्ड की सुई को देखता है और सेकेण्ड की सुई तुरन्त रुक िाती है। वह प्रयोग-पात्र को घडी की सेकेण्ड की सुई को देखने को कहता है और उसके नचन्तन को बन्द कर देता है। उसके नेत्र ननिीव से हो िाते हैं। सम्मोहक सम्मोनहत पात्र के िरीर को हवा में उठाता है और एक बडे लौह-चक्र के मध्य से उसे आकाि में चलाता है। सम्मोनहत व्यद्धि की आँखों ंमें पट्टी बाँध दी िाती है। वह भूनम पर टेढ़ी-मेढ़ी रीनत से फैलायी हुई रजु्जु पर चल सकता है। वह मोहरबन्द पत्र के अन्तनवथषय को पढ़ सकता तर्ा प्रश्नों ंके उनचत उत्तर दे सकता है। यहाँ पात्र का अचेतन मन कायथ करता है। वह अपारदिी दीवाल से देख सकता है। सम्मोहन-नवज्ञान के रहस्य चमत्काररक हैं। इसका श्रेय प्रातिःस्मरणीय श्री िेम्स ब्रेि को है।

दूर-बोध या दूर-सोंवेदन

दूर-बोध एक व्यद्धि से दूसरे व्यद्धि को नवचार समेप्रेषण है। निस प्रकार ध्वनन वायवीय आकाि में गनत करती है, उसी प्रकार नवचार नचदाकाि में गनत करता है। चतुनदथक् आकाि का सागर है। चतुनदथक् मन का भी

सागर है। नवचार का आकार, रंग, भार तर् रूप होता है। यह वैसे ही एक भौनतक पदार्थ है िैसे नक पेद्धन्सल। िब आपके मन में कभी उन्ननतकारी स्वरूप का कोई सनद्धचार उठता है, तब यह बतलाना कनठन हो िाता है नक वह आपका अपना नवचार है अर्वा नकसी अन्य व्यद्धि का नवचार। दूसरे व्यद्धियों ंके नवचार आपके मन में प्रवेि करते हैं।

दूर-बोध योनगयों ंका बेतार का तार र्। योगीिन दूर-बोध के द्वारा अपना सन्देि प्रेनषत करते हैं। नवचार नवद्युद्गनत से संचरण करते हैं िो अकल्पनीय है। कभी-कभी आप सायंकाल को अपने नमत्र के नवषय में इतनी तीव्रता से सोचते हैं नक आपको बडे प्रातिः ही उससे एक पत्र प्राप्त हो िाता है। यह अनिाना दूर-बोध है। आपके िद्धििाली नवचार ने यात्रा की और वह आपके नमत्र के मद्धस्तष्क में तत्काल पहुँच गया और उसने तुरन्त और वहीं ं पर आपको उसका उत्तर दे नदया। इस भाँनत नवचार–गत् में अनेक रोचक तर् आश्चयथिनक बातें होती रहती हैं। सामान्यतया निन लोगों ंने दूर-बोध की िद्धि का नवकास नहीं ंनकया है, वे अन्धकार में टटोलते रहते हैं।

दूर-बोध एक मन का दूसरे मन के सार् संलाप है। िंकुरूप ग्रद्धन्, निसे ताद्धन्त्रक िीव का अनधष्ठान मानते हैं, की दूर-बोध में महत्त्वपूणथ भूनमका होती है। वास्तव में यह िंकुरूप ग्रद्धन् ही सन्देि ग्रहण करती है। वह (िंकुरूप ग्रद्धन्) मद्धस्तष्क अर्वा पश्च-मद्धस्तष्क में मन-ननलय के फिथ में अन्तिःस्रानपत स्नायनवक िव्य है। अन्तिःस्रावी ग्रद्धन् वानहनी-हीन है। इसका एक आन्तररक स्राव होता है िो सीधे रुनधर में उँडेल नदया िाता है।

आरम्भ में दूर-बोध का अभ्यास र्ोडी दूरी से करें। रानत्र में अभ्यास करना प्रारम्भ में अनधक अच्छा होता है। अपने नमत्र से रानत्र के १० बिे ग्रहणिील अनभवृनत्त तर् एकाग्र मन रखने के नलए कहें। उससे कहें नक वह वीरासन अर्वा पद्मासन में नेत्र बन्द कर एक अन्धकारपूणथ कक्ष में बैठे। ठीक ननयत समय पर अपना सन्देि समेप्रेनषत करने का अभ्यास करने का प्रयास करें। आप िो नवचार प्रेनषत करना चाहते हैं, उन पर मन को संकेद्धन्द्रत करें। अब पूरी िद्धि से इच्छा करें। नवचार आपके मद्धस्तष्क से ननकल कर आपके नमत्र के मद्धस्तष्क में प्रवेि करेंगे। प्रारम्भ में इतस्ततिः कुछ भूलें हो सकती हैं। िब आप अभ्यास में उन्ननत करेंगे और प्रनवनध को भली-भाँनत िान िायेंगे तो सन्देिों ंके समेप्रेषण तर् अनभग्रहण में आप सदा ठीक ननकलेंगे। बाद में आप नवश्व की नवनभन्न नदिाओं ंमें सन्देि अग्रेनषत कर सकेंगे। नवचार तरंगें तीव्रता तर् सामथ्यथ में परस्पर नभन्न होती हैं। प्रेषक तर् अनभग्राहक को अनधक तर् तीव्र एकाग्रता का अभ्यास करना चानहए; तब सन्देिों ंके समेप्रेषण में िद्धि तर् अनभग्रहण में स्पष्टता तर् पररिुद्धि होगी। आरम्भ में दूर-बोध का अभ्यास करना एक ही घर के एक कक्ष से ननकटतम कक्ष में करें। यह नवज्ञान बहुत ही नप्रयकर तर् रोचक है। इसके नलए अध्यवसायी अभ्यास की आवश्यकता है। ब्रह्मचयथ बहुत ही आवश्यक है।

आप अन्य व्यद्धि को नबना नकसी श्रव्य भाषा के ही प्रभानवत कर सकते हैं। इसमें आवश्यकता है इच्छा-िद्धि द्वारा ननननदथष्ट नवचारों ंके केन्द्रीकरण की। यह दूर-बोध हैं। यहाँ आपके दूर-बोध के अभ्यास के नलए एक प्रयोग नदया िा रहा है। दूर देि में रह रहे अपने नमत्र अर्वा चचेरे भाई का नचन्तन करें। अपने मन में उसके मुख का सुस्पष्ट रूप लाये। यनद आपके पास उसका छायानचत्र हो तो उस पर देखें और श्रवणीयता से उससे बातें करें। िब आप सोने िायें तो तीव्र एकाग्रता से नचत्र का नचन्तन करें। वह आगामी नदन अर्वा उसके लगभग आपको आकांनक्षत पत्र नलखेगा। इसका प्रयोग स्वयं करके देखें। सन्देह न करें। आप आश्चयथचनकत रह िायेंगे। आपको दूर-बोध-नवज्ञान में सफलता तर् दृढ़ नवश्वास प्राप्त होगा। िब आप कुछ नलख अर्वा समाचार-पत्र पढ़ रहे होते हैं तो कभी-कभी आपको अपने घननष्ठ नमत्र अर्वा सम्बन्धी से सन्देि प्राप्त होता है। आप सहसा उसके नवषय में सोचने लगते हैं। उसने आपको सन्देि भेिा है। उसने आपके सम्बन्ध में गम्भीरता से नचन्तन नकया है। नवचार-स्पन्दन प्रकाि अर्वा नवद्युत् से भी अनधक तीव्र गनत से यात्रा करते हैं। ऐसे उदाहरणों ंमें अवचेतन मन सन्देिों ं अर्वा नवचारों ंको ग्रहण करता और उन्हें चेतन मन को समेप्रेनषत करता है।

महानसि पुरुष अर्वा महात्मिान ि◌ो नहमालय की कन्दराओं ◌ंमें रहते हैं, दूर-वोध के द्वारा संसार में अनधकारी साधकों ◌ंअर्वा योनगयों ◌ंको अपने सने्दि पे्रेनषत करते हैं। निज्ञासु या योगी उनकी आज्ञाओं ◌ंका पालन करते हैं तर्ा चारों ◌ंओर उनके ज्ञान का प्रसार करते हैं। यह आवश्यक नहीं ◌ंहै नक महात्मा मंच पर आयें तर्ा प्रवचन करें। वे प्रवचन करते हैं अर्वा नहीं,◌ं इसका कोई महत्त्व नहीं ◌ंहै। उनका ि◌ीवन ही उपदि◌े का मूतथरूप है। वे भगवत्साक्षात्कार की ि◌ीवन्त प्रनतभूनत हैं। मंच पर प्रवचन करना नद्वतीय कोनट के लोगों ◌ंका कायथ है निन्हें दूर-बोध का ज्ञान नहीं ◌ंहोता है। प्रच्छन्न योगी अपने आध्याद्धत्मक स्पन्दन तर्ा चुम्बकीय प्रभामण्डल से मंच के योनगयों ◌ं की अपेक्षा संसार की अनधक सहायता करते हैं। आिकल के लोग आिा करते हैं नक संन्यासी लोग मंच पर कायथ करें। वे उन्हें बाध्य भी करते हैं। चूँनक उनके मन कमथ-संस्कार से समूपृ होते हैं, अतिः वे ध्यानयोगी की िि◌ु ननवृनत्त के वैभव, उपयोनगता तर्ा उदारता को ि◌ान तर्ा समझ नहीं ◌ंपाते हैं। संन्यानसयों ◌ंका कायथ क्ेषेत्र अर्वा अनधकार क्ेषेत्र सवथर्ा नभन्न है। वे सभाओं ◌ंतर्ा मण्डलों ◌ंके सभापनत नहीं ◌ंबन सकते हैं। उनके क्ेषेत्र का स्वरूप ब्रह्माण्डीय होता है। उनका क्ेषेत्र आध्याद्धत्मक है निसका सम्बन्ध आत्म-नवज्ञान से है। मैं भगवान् श्रीकृष्ण के ि◌ब्दों ◌ं को उद्धृत करता हूँ:

लोकेऽन्मि्न्विशवधा शनष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानर्।
ज्ञानयोगेन सांोंख्यानांों कमछयोगेन योशगनाम्।।

"हे पूतात्मा! इस संसार में ननष्ठा दो प्रकार की है, इसे मैंने पूवथ में बतलाया है अर्ाथत् ज्ञानानधकाररयों ◌ंके नलए सांख्ययोग तर्ा कमी लोगों ◌ंके नलए ननष्काम कमथयोग" (गीता : ३-३)। यनद संन्यानसयों ◌ंका लोप हो ि◌ाये तो भारत का गौरव ि◌ाता रहेगा। वे भारत से कभी भी नवलुप्त नहीं ◌ंहो सकते हैं। उनके कोिों,◌ं स्नायुओं ◌ंतर्ा ऊतकों ◌ंमें त्याग तर्ा संन्यास के संस्कार अनधद्धश्लष्ट हैं। बौिों ◌ंके यहाँ नभकु्षु होते हैं। मुसलमानों ◌ंके यहाँ फकीर होते हैं। ईसाइयों ◌ंके अपने पुरोनहत, पादरी तर्ा श्रिय आचायथ (फादर) होते हैं। संसार के प्रत्येक धमथ में त्याग-भावना वाले लोग होते हैं। प्रत्येक धमथ में लोगों ◌ंका एक समूह ऐसा होना चानहए ि◌ो भगवद्-ध्यान के नलए पूणथतया समनपथत हो।

गृहस्र्ों ◌ंका यह कतथव्य है नक वे उनकी आवश्यकताओं ◌ंका ध्यान रखें। उन्हें उनके आिीवाथद प्राप्त होंगें। ये ही लोग हैं ि◌ो ननवृनत्त मागथ का ि◌ीवन यापन करते, योग में खोि कर सकते तर्ा नवश्व को नवीन सने्दि दे सकते हैं। ये ही लोग सामान्य रूप से नवश्व की वास्तनवक सहायता तर्ा लोक-कल्याण-कायथ कर सकते हैं।

अतीन्यि-दृशष्ट

अतीद्धन्द्रय-दृनष्ट अन्त सूक्ष्म नेत्र अर्वा अतीद्धन्द्रय नेत्र के द्वारा सुदूर के पदार्ों का अवलोकन है। ि◌ैसे आपके भौनतक िरीर में भौनतक नेत्र हैं, वैसे ही सूक्ष्म नलंग-देह में इन इद्धन्द्रयों ◌ंके सूक्ष्म प्रनतरूप हैं। योगी अर्वा ताद्धन्त्रक इन आभ्यन्तर इद्धन्द्रयों ◌ंको धारणा के अभ्यास द्वारा नवकनसत करता है। वह अतीद्धन्द्रयदिी दृनष्ट नवकनसत करता है। वह सुदूर दिों ◌ंके पदार्ों को देख सकता है। यह नसद्धि या ि◌द्धि दूर-दृनष्ट कहलाती है।

ि◌ैसे प्रकाि की रद्धश्मयाँ काँच में प्रवेि कर ि◌ाती हैं, वैसे क्षरद्धश्मयाँ ठोस अपारदिी पदार्ों में प्रवेि कर ि◌ाती हैं उसी प्रकार योगी अपने आभ्यन्तर अतीद्धन्द्रय नेत्र से ठोस दीवार से पदार्ों को, मोहरबन्द नलफाफे की तर्ा भूनम के नीचे गुप्त नननध की अन्तवथसुतु को देख सकता है। यह अतीद्धन्द्रय-दृनष्ट अन्तिःप्रज्ञा की दृनष्ट अर्वा नदव्य दृनष्ट या ज्ञान-चकु्षु है। व्यद्धि को इस आभ्यन्तर दृनष्ट को धारणा द्वारा नवकनसत करना होता है। ि◌ैसे अणुवीक्षण यन्त्र छोटे कोिाणुओं,◌ं ि◌ीवाणुओं ◌ंआनद को आवनधथत करता है, उसी भाँनत वह योगी भी अपने आभ्यन्तर नेत्र से सूक्ष्म ि◌गत् के पदार्ों को बडी स्पष्टता से देख सकता है तर्ा आभ्यन्तर सूक्ष्म वीक्ष के नविेष संकेन्द्रीयकरण द्वारा उन्हें आवनधथत भी कर सकता है।

वह संकल्प-बल, दृढ़ इच्छा–द्धि तऱ् नवचार द्वारा एक सूक्ष्म नली की रचना करता है और इस सूक्ष्म नली के द्वारा वह दूर के पदार्ों को देखता है। ऐसा हो सकता है नक प्रारम्भ में दृश्य सुस्पष्ट न हो। ैसे नवात नि ु सीखता है, वैसे ही वह भी प्रारम्भ में सीखता है। वह अपने अभ्यास में ज्यों–ंज्यों ंप्रगनत करता है, त्यों–त्यों ं उसकी आभ्यन्तर दृनष्ट सुस्पष्ट होती ाती है। एक अन्य नवनध भी है। योगी सूक्ष्म लोक की यात्रा करता है और अपने इस सूक्ष्म लोक के यात्रा-काल में वह पदार्ों को अनिाने में ही देखता है।

ैसे सूयथ-रद्धश्मयाँ आकिा में यात्रा करती हैं, वैसे ही सूक्ष्म प्रकिा की नकरणें आश्चयथिनक वेग से यात्रा करती हैं। वे सूक्ष्म नेत्रों ंद्वारा पकडी ाती हैं। आपमें से प्रत्येक के पास ये सूक्ष्म इद्धन्द्रयाँ हैं; नकनु्त कुछ ही लोग बोधपूवथक इनका नवकास करते हैं। अतीद्धन्द्रयदिी आकिीय अनभलेखों ंकी ाँच-पडताल करके अतीत की घटनाओं ंको देख सकता है और उसे नत्रकाल ज्ञान भी हो सकता है। द्धि की मात्रा पृर्क् पृर्क् व्यद्धियों ंमें नभन्न-नभन्न होती है। उन्नत अतीद्धन्द्रयदिी बहुत ही दुलथभ हैं।

अतीन्यि–वण

अतीद्धन्द्रय-श्रवण सूक्ष्म श्रोत्रों ंद्वारा सूक्ष्म लोक के िब्दों ंका श्रवण करना है। इसकी प्रनक्रया अतीद्धन्द्रय-दृनष्ट की प्रनक्रया के समान ही है। सूक्ष्म िब्द-प्रकम्पन सूक्ष्म श्रोते्रद्धन्द्रय द्वारा पकडे ाते हैं। अतीद्धन्द्रयदिी का अतीद्धन्द्रय श्रोता होना आवश्यक नहीं ंहै। ये दो नभन्न द्धियाँ हैं।

महनषथ पतंनिल इस दूर-श्रवण की द्धि को नवकनसत करने की नवनध बतलाते हैं। "श्रोत्राकाियोः सम्बन्धसंयमानद्दवं्य श्रोत्रम् - श्रोत्र और आकिा के सम्बन्ध में संयम करने से नदव्य श्रोत्र होता है" (पातंलि योगसूत्र : ३-४१)। धारणा तऱ् ध्यान का एक नवषय में होना संयम कहलाता है।

सभी नपतृलोकवानसयों ंको यह नसद्धि प्राप्त है। उनके वंि िब इस लोक में श्रा और तपथण करते हैं तो वे इन िब्दों ंअतीद्धन्द्रय-श्रवण की द्धि के द्वारा श्रवण करते और अत्यन्त प्रसन्न होते हैं।

ये अतीद्धन्द्रय-संवेदन की नसद्धियाँ धारणा के उप-फल हैं। ैसे अनेक प्रकार के तारकोल वुयुत्पन्न और अनेक प्रकार के भूतेल सम्पाक होते हैं, वैसे ही ये नसद्धियाँ योगी के धारणा करने पर उसमें अनभव्यि होती हैं। ये सब अध्यात्म-पर् में बाधाएँ हैं। साधक को इनकी उपेक्षा करनी चानहए और वैराग्य नवकनसत करना चानहए। तभी वह लक्ष्य तक पहुँच पायेगा।

अतीत के सभी िब्द-कम्पन आकिीय अनभलेख में नवद्यमान है। योगी इन िब्दों ंको भली प्रकार सुन सकता है। वह िेक्सनपयर, ान्सन, वाल्मीनक, नवश्वानमत्र आनद के िब्दों ंको सुन सकता है। ैसे आप पचास वषथ पूवथ मृत गायक के संगीत और गायन को अब भी ग्रामोफोन रेकिाथ से सुन सकते हैं, वैसे ही योगी भी सूक्ष्म श्रोत्र तऱ् आकिीय अनभलेख के सम्बन्ध में संयम करके अतीत के उन व्यद्धियों ंके िब्दों ंको सुन सकता है। ैसे आपके बालकपन के संस्कार आपके मद्धस्तष्क तऱ् अवचेतन मन (नचत्त) में बने रहते हैं, वैसे ही प्राचीन काल के िब्दों ंके नचह्न आकिीय अनभलेख में बने रहते हैं। व्यद्धि को केवल योनगयों ंकी प्रनवनध ज्ञात होनी चानहए। ैसे

कायाथलय में एक अनुभवी अनभलेख-पाल कोई भी पुराना अनभलेख अल्पकाल में ही ननकाल लाता है, वैसे ही योगी भी पयाथप्त प्राचीन काल के िब्द पल-भर में सुन सकता है।

परररनिष्ट-३

मनोनिा

मन आत्म–द्धि है। मन वासनाओं ंऔर संकल्पों ंका समूह है। मन राग-द्वेष का समूह है। मन का नविा ही मनोनिा है।

मनोलय मन का अस्र्ायी नवलयन है। यह मोक्ष प्रदान नहीं ंकर सकता है। मन पुनः वापस आ सकता है और ऐद्धन्द्रक नवषयों ंमें नवचरण कर सकता है। एकमात्र मनोनिा ही मोक्ष प्रदान कर सकता है।

शवचार

मन को कैसे िि तर्ा ननयद्धन्त्रत नकया िाता है और इसकी गनत-नवनधयों ंको कैसे रोका िाता है तर्ा इसका नविा कैसे नकया िाता है? यहाँ कुछ लाभदायक तर्ा व्यावहाररक सूत्र हैं। मन को नवचार अर्वा 'मैं कौन हूँ' की निज्ञासा से ननयद्धन्त्रत तर्ा नष्ट नकया िा सकता है। यह सवोत्तम तर्ा सवाथनधक प्रभाविाली नवनध है। यह मन को नष्ट करेगी। यह वेदान्त की नवनध है। दािथननक नचन्तन के द्वारा मन की अवास्तनवकता का अनुभव करें।

अहों को मारें

अहंकार-भावना का उन्मूलन करें। अहं मन-रूपी वृक्ष का बीि है। 'अहं' का नवचार सभी नवचारों ंका स्रोत है। सारे नवचार इस कुनि 'मैं' पर केद्धन्द्रत हैं। पता लगायें नक यह िुद्धि 'अहं' क्या है? यह कुनि 'अहं' असार अनद्धस्तत्व में क्षीण हो िायेगा। यह अनन्त 'मैं' अर्वा अहंकार के स्रोत परब्रह्म में नवलीन हो िायेगा।

अहंकार-रूपी मेघ के नतरोभाव होने पर आत्म-साक्षात्कार का सूयथ पूणथ रूप से दृनष्टगोचर होता है।

वैराग्य

वैराग्य मनोनिा की दूसरी नवनध है। यह वैषनयक िीवन के दोषों ंसे अवगत होने पर ऐद्धन्द्रय भोग-पदार्ों के प्रनत अरुनच है। नवषय नविनिील हैं। इद्धन्द्रय-भोग क्षनणक तर्ा भ्रामक हैं।

अभ्यास

अभ्यास एक अन्य नवनध है। मन को ब्रह्म पर केद्धन्द्रत कर उसे एकाग्र करें। उसे द्धरूर करें। अभ्यास अनवरत ध्यान है। इससे समानध अनधगत होती है।

असोंग

असंग मन को नष्ट करने के नलए ख्ग है। मन को पदार्ों से दूर हटा लें। नवलग करें। संलग्न करें। इसे नवषयों ंसे नवलग करें और प्रभु में संलग्न करें। इसे बारम्बार करें। संसार की अनुभूनत के बीि अर्वा अंकुर की सत्त्व-रूपी वासना असंग-रूपी अनग्न से ही नष्ट की िा सकती है।

वासना-क्षय

वासना-क्षय एक अन्य नवनध है। वासना कामना को कहते हैं। कामनाओं ंके त्याग से वासना-क्षय होता है। इससे मनोनिा होता है। नवषय-सुख की कामना बन्धन है, उसका त्याग मोक्ष है। वासना मन का सवाथनधक सारभूत स्वरूप है। मन और अहंकार पयाथयवाची है।

प्राणायाम

प्राण के स्पन्दन से मन में गनत होती है। यह मन को िीवन प्रदान करता है। प्राण मन के कायथकलाप को रोकता है; नकन्तु यह नवचार की भाँनत मन को समूल नष्ट नहीं ंकरता है।

शवचारो ोंका शनयन्त्रण

नवचारों ंअर्वा संकल्पों ंका ननयन्त्रण करें। कल्पना अर्वा नदवास्वप्न का पररहार करें। मन नष्ट हो िायेगा। संकल्पों ंका उन्मूलन ही मोक्ष है। कल्पना के अभाव में मन नष्ट हो िाता है। संसार-भ्राद्धन्त की अनुभूनत आपकी कल्पना के कारण ही होती है। िब कल्पना को पूणथतया रोक नदया िाता है तो यह लुप्त हो िाती है।

त्याग

सम्पनत्त का माननसक त्याग अन्य नवनध है। नवचार-ननलम्बन समानध की अवस्र्ा में रहना यनद आप सीख िायें तो परमानुभूनत का भी साक्षात्कार नकया िा सकता है।

सतुशलत रहें

समनचत्तता की प्राद्धप्त अन्य नवनध है। सुख-दुिःख, िीत-उष्ण आनद में सनुतुनलत रहें।

ीि मिन का अनतक्रमण कर चुका है और अपने सद्धच्चदानन्द आत्मा में नवश्राम लेता है, एकमात्र वह ही नचरन्तन िाद्धन्त और िाश्वत आनन्द का उपभोग कर सकता है।

भन्क्त तरा् सेवा

पि, कीतथन, प्रार्थना, भद्धि, गुरु की सेवा तरा् स्वाध्याय भी मनोनिा के साधन हैं।